श्री हंसराज वच्छराज नाहटा
सरदारशहर निवासी
द्वारा
जैन विश्व भारती, लाडनूं
को सप्रेम भेंट –

श्रों अर्हन्

शुक्ल जैन रामायण

(उत्तरार्द्ध)

लेखक

जैन मुनि श्री पं० शुक्लचन्द्र जी महाराज

प्रकाशक

भीमसेनशाह रावलपिंडी वाले

सदर बाजार, देहली

द्वितीयवार २००० वीर संवत् २४८० मूल्य ४)

मुद्रक—जगदेवसिंह शास्त्री, सम्राट् प्रेस, पहाड़ी धीरज देहली।

विषय सूची

श्री वीतरागाय नमः

रामायण-उत्तरार्द्ध

[तृतीय भाग]

अष्टम त्रिक महापुरुष चरित्र

दोहा

जिन वाणी नित्य दाहिने, अरिहन्त सिद्ध जगदीश।
परमेष्ठि रक्षा करें, त्रिपद धार मुनीश।
वाग्देवी वरदायिनी, कविजन केरी माय।
कृपा करी मोहे दीजियो, सुमति बुद्धि सुखदाय॥
पास जिस समय लखन के, पहुंचे राम नरेश।
रणभूमि में शूर थे, लड़ते रोष विशेष॥
सम्बोधन कर अनुज को, यों बोले भगवान्।
अय भ्राता घबरा मति, करो चौपट मैदान॥

चार बार सिंह नाद शब्द कर, तुमने मुझे बुलाया है।
पर देखा मैंने आन यहाँ पर, तेरा पक्ष सवाया है॥
अब जल्दी अमोघ शस्त्र धारो, शत्रु को मार भगाना है।
क्योंकि पीछे सिया अकेली, शीघ्र वहाँ पर जाना है॥

दोहा

सुने राम के जिस समय, अनुज वीर ने वैन।
कुछ तेजी में आनके, लगे इस तरह कहन॥

यह सरलपना अय भ्रात कभी, ना मन से आपके जाता है।
सिंहनाद मैं किया नहीं, प्रपंच कोई दिखलाता है॥

यह वियावान उद्यान फेर, शत्रु चहुं ओर घूमते हैं ।
पता सिया का लो जल्दी, वनचर जन फिरें सूंघते हैं ॥

दोहा

रामचन्द्र वापिस चले, पहुँचे निज स्थान ।
सिया नजर आई नहीं, लगे अति पछतान ॥

उड़ गये अक्ल के सब तोते, हृदय पर वज्रापात हुआ ।
वह दुःख कहा नहीं जा सकता, जिस काठिन्य से दिल में घात हुआ ॥
इधर उधर को रहे घूम, नैनों से, नीर बरसता है ।
बिना नीर मछली जैसे, सीता विन राम तरसता है ॥

दोहा

पंख विना पक्षी पड़ा, देखा जव सुखधाम ।
सीता को कोई ले गया; यही विचारा राम ॥

बना सहायक ये सीता का, इस कारण यह हाल हुआ ।
टूटे पंख तभी हैं समझो, इसका भी अन्त काल हुआ ॥
फिर राम ने मूल मंत्र सुना. पक्षी का कार्य संवारा है ।
कर्त्तव्य पाल अपना पक्षी, फिर चौथे स्वर्ग सिधारा है ।
यदि भक्ति हो तो ऐसी हो, प्राणों को अर्पण कर डाला ।
स्वामी हों तो ऐसे हों, जिन विहङ्ग का भी दुख टारा ॥
राम ढूंढ रहे सीता को, पक्षी स्वर्गो में जा पहुँचा ।
वीर विराध भी मौके का, इच्छुक रण में आ पहुँचा ॥

दोहा

रणभूमि में त्रिशिरा, लक्ष्मण ने दिया मार ।
वीर विराध ने लखन को, आकर किया जुहार ॥

चन्द्रेश्वर का पुत्र हूँ, अनुराधा अंगजात।
खरदूषण शत्रु मेरे, करी पिता की घात ॥
पाताल लंक को छीन लिया, अब शरण आपकी आता हूँ।
आज्ञा दो मुझ सेवक को, कुछ सेवा करना चाहता हूं ॥
महाराज इशारा कर दीजै, दो हाथ यहाँ पर दिखलाऊँ।
कुछ सेवा आपकी हो जावेगी, पिता का बदला मैं पाऊँ ॥

दोहा

इसी काम के वास्ते, संग्रह किया सामान।
प्रभु हमारे पर करो, आप यही अहसान ॥
कुछ मुस्कराय लक्ष्मण बोले, सुन योद्धा वीर विराध जरा।
जो रहे भरोसे औरों के, वह आज नहीं तो काल मरा ॥
अपने बल से बलवन्त कहावे, पर बल नित्य अधूरा है।
जो कष्ट पड़े पर घबरावे, विद्वान् नहीं ना शूरा है ॥

दोहा

भाव आपके हृदय के, मैंने लिए पहचान।
आराम जरा यहाँ पर करो, देखो रण मैदान ॥
यदि राज की इच्छा आपको है तो, राम पास जा अर्ज करो।
वह तुम्हें औषधि देवेंगे, जैसी भी जाहिर मर्ज करो ॥
विषधर नाग समान विराध की, खर के दल पर नजर पड़ी।
हथियारबंद यहाँ विराध की सेना, जितनी थी सब तनी खड़ी ॥

दोहा

देख विराध को विरोधी खर, भभक उठा तत्काल।
शक्ति जो थी लगा दई, नेत्र करके लाल ॥
गरज मेघ समान घोर कर, शक्ति वार भरपूर किया।
पर एक सुमित्रानन्दन ने, बहु दल का चकनाचूर किया ॥

फेर झपट कर खर मारा, दूषण ने कदम वढ़ाया है।
वस एक वाण से लक्ष्मण ने, उसको परभव पहुंचाया है ॥

दोहा

ज्यों सहस्रांशु केउदय से, तारागण छिप जाय।
ऐसे ही वाकी शूरमा, भागे जान वचाय ॥
प्राचीपति निज मार्ग पूर्ण कर, अस्ताचल पर जाने लगा।
इधर सहित विराध अनुज भी, पास राम के आने लगा ॥
अव चलत समय श्री लक्ष्मण जी का, वाँया नेत्र फड़क रहा।
यूं समझ लिया हो गया विघ्न, कोई दिल अन्दर से धड़क रहा ॥

दोहा

रामचन्द्र को आनकर, करी अनुज प्रणाम।
रंग फीका श्रीराम का, मन में आर्तध्यान ॥
भाई के दुःख को देख लखन, नेत्रों में जल भर लाया है।
श्रीराम के चरणों में गिर कर, लक्ष्मण ने वचन सुनाया है ॥
यह तो मुझको सूझ गया कि, सिया नजर नहीं आती है।
और देख तुम्हारा अशुभ ध्यान, मेरी तवियत घवराती है ॥

दोहा

यदि और कोई वात है, सो भी कहो उचार।
जिस कारण से आपको, आर्तध्यान अपार ॥
अय भ्राता कैसे कहूँ, दुःख मेरु आकार।
पता नहीं कैसे कहाँ, समा गई सिया नार ॥

(श्री राम व० त०)

आज भाई कहूँ क्या मैं दिल की व्यथा,
न इधर का रहा न उधर का रहा।

शरणागत सिया पक्षी की रक्षा न की,
अब यह तू ही बता मैं किधर का रहा ॥१॥
वन में दिल को जटायु से बहलाती थी,
ना तमन्ना उसे राजधानी की थी।
अब खबर ना कहाँ वह मुसीबत में है,
मैं इधर का रहा न उधर का रहा ॥२॥
मुझे यह तो है निश्चय ना तोड़े धरम,
कर दे प्राणों का त्याग न मुझे यह भ्रम।
कहाँ क्षत्रापन है मेरा शर्म है शर्म,
मैं इधर का रहा न उधर का रहा ॥३॥
सम्मुख लाखों के उसने वरा था मुझे,
रक्षा करना उमर भर कहा था मुझे।
कैसे दुनियां में मुख अपना दिखलाऊंगा,
ना इधर का रहा ना उधर का रहा ॥४॥
अय कर्म तूने कब का यह बदला लिया,
इस विपिन में प्यारी जुदा कर दई।
मेरी इज्जत तो खाक क्या गर्द कर दई,
ना इधर का रहा न उधर का रहा ॥५॥
अय भ्राता यही कारण अशुभ ध्यान का,
कोई ग्राहक बना सिया की जान का।
बस मैं इच्छुक सिया के शुक्ल ध्यान का,
मैं इधर का रहा ना उधर का रहा ॥६॥

दोहा (लक्ष्मण)

भाई क्या तुमको कहूँ, अपनी खोल जबान।
गई ना जायगी कभी, सरल नरम की बान ॥

आपकी नरमी से मिथिला में, जनक भूप के वचन सुने ।
फेर आपकी नरमी से, सीता ने वन में दुःख चुने ॥
कई वार नरमाई से, जानी शत्रु तक छोड़ दिये ।
सब विजय किये वह राज पाट, तुमने निज कर से मोड़ दिये ॥

दोहा

अब उसी सरल स्वभाव का, मिला नतीजा आन ।
नीति के प्रयोग बिन, सिया गई और शान ॥
जो होना था सो हो गुजरा, अब दिल में जरा विचार करो ।
सर्वज्ञ देव का कथन जरा, उस पर भी तो कुछ ध्यान धरो ॥
सोच गये का आगम वाञ्छा, शूर वीर नहीं करते हैं ।
यदि वर्तमान पर ही पुरुषार्थ, करें तो कार्य सरते हैं ॥

दोहा

समय देख कर विराध ने, करी सेव चित्त लाय ।
वन खंड में चारों तरफ, दिये सवार दौड़ाय ॥
जितने कितने जवान दिली, सब सेवा करना चाहते हैं ।
वे बुद्धिमान बलवान सभी, वन खण्ड छानते जाते हैं ॥
महा गिरि गुफा दुर्गम नदियाँ, सब तरफ झांकते जाते हैं ।
अपनी अपनी तुलना करके, फिर उसी जगह पर आते हैं ॥

दोहा

युवक सभी कहने लगे, निज बुद्धि प्रमाण ।
इस वन में तो है नहीं, सिया का नामोनिशान ॥
फिर बोले लक्ष्मण वीर विराध की, भाई अर्जी सुन लीजे ।
जो आशा करके आया है, पहले इस पर करुणा कीजे ॥
जो वीर विराध का शत्रु है, बस वही हमारा भी होगा ।
यह आया शरण लेने को, इसको शरण देना होगा ॥

दोहा

देख इशारा लखन का, बोले वीर विराध ।
प्रभु अर्ज सुन लीजिये, फिरूँ हुआ बरबाद ॥
घाव लगा जो हृदय में, सो आपको चीर दिखाऊं क्या ।
अब दुखित हुआ खुद के दुख से, मैं सो रघुवीर सुनाऊं क्या ॥
मार पिता को लंक लई, माता ने यह दरसाया है ।
ले बदला तब हूं पुत्रवती, यदि नहीं बाँझ फरमाया है ॥

दोहा

बहुत आप से क्या कहूं, आप हैं बुद्धिमान ।
मैं चरणों का दास हूं, करूं जो हो फरमान ॥
ढूंढ लिया वन खंड गहन भी, सिया का पता न पाया है ।
यह काम नीच शत्रु का अन्तिम, यही समझ में आया है ॥
इक सिर्फ आपके चरणों से, निज राज ताज पा सकता हूँ ।
फिर नभ तो क्या पाताल तलक, सीता की सुध ला सकता हूं ॥
जहाँ गिरे पसीना आपका, वहां मैं अपना खून बहाऊंगा ।
आयु पर्यन्त करूं सेवा, उपकार ना कभी भुलाऊंगा ॥
महान् पुरुष ही दुनिया में, दुःखियों के दुःख को हरते हैं ।
चाहे अपना काम बने न बने, दूजे का कार्य करते हैं ॥

दोहा

वृक्ष नदी गौ सन्त पुरुष, इनका यही है सार ।
अपने पर सब दुख सहें, करते पर उपकार ॥
वह कल्प वृक्ष सम रामचन्द्र, दुख सह सह कर फल ही झरते ।
फिर यह तो था सच्चा सेवक, क्यों नहीं काम इसका करते ॥
सत्य पक्ष के पालन में, तल्लीन हर समय रहते थे ।
उनके लिये वैसा करते थे, जैसा कि मुख से कहते थे ॥

दोहा

दुखिया के दुःख को सुना, दुखिया ने ला कान ।
संतोष दिलाने के लिये, बोले खोल जबान ॥
अय विराध मनोरथ जो तेरा, उसको हम पूरा कर देंगे ।
पाताल लंक का राज्य दिलाकर, ताज शीष पर धर देंगे ॥
अब रात रही थोड़ी बाकी, कुछ देर यहाँ आराम करें ।
अर्चिमाली के चढ़ते ही, सब लड़ने का सामान करें ॥

दोहा

पा आज्ञा श्री राम की, पहुंचे निज निज धाम ।
निद्रा मोचने के लिए, करने लगे आराम ॥
सुख निद्रा चिन्तातुर को कहां, यूं बुद्धिमान् फरमाते हैं ।
हाँ जिस्म रहे शय्या ऊपर, मन घोड़े दौड़ लगाते हैं ॥
फिर सर्द श्वास भर उठ बैठे, श्रीराम को अति बेचैनी है ।
इस समय कहां दुःख भोग रही, होगी हा ! कोकिल बैनी है ॥

दोहा

देखा हाल श्रीराम का, बोले लक्ष्मण लाल ।
अय भाई तुम किस लिए, होते यूं बेहाल ॥

गाना—(लक्ष्मण का व० त०)

अय भाई जरा दिल सबर कीजिए,
तेरी बातें ये मुझ को सुहाती नहीं ॥
क्या कहूँ अपने दिल की व्यथा इस घड़ी,
होना जाहिर जबाँ पर वो चाहती नहीं ॥१॥
देख हालत तुम्हारी फटे है जिगर,
क्या करूं इस समय पेश जाती नहीं ।

धीरज धरके उपाय कहो सो करूं,
क्योंकि मेरी अक्ल काम आती नहीं ॥२॥
आज असह्य कष्ट है छाया मुझे,
मैं कहूँ क्या अक्ल मेरी मारी गई ।
दई छोड़ अकेली वियावान में,
अबला इतनी न मुझ से विचारी गई ॥३॥
जिस पुरुष ने दिया धोखा सिंहनाद का,
बस उसी कर से है सिया नारी गई ।
कैसे दुनिया में अपना दिखाऊंगा मुंह,
एक औरत न मुझ से संभारी गई ॥४॥
[लक्ष्मण]—तुमको अब तक पता ना है अफसोस ये,
जीते लक्ष्मण को दुनिया में नर ही नहीं ।
फिरते लाखों दनुज इस वियावान में,
जीती है या कि मुरदा खबर ही नहीं ॥५॥
माता पूछेगी मुझको कहां है सिया,
क्या बताऊंगा दिल को सबर ही नहीं ।
मेरे होते हो ऐसी तुम्हारी दशा,
मुझसा पापी भी कोई बशर ही नहीं ॥६॥
[राम]—जब से भाई सुना शब्द सिंहनाद का,
तब वह नैनों से आंसू बहाने लगी ।
आज शत्रु की सेना ने घेरा लखन,
जावो जावो ये हरदम सुनाने लगी ॥७॥
मैंने समझाई लेकिन वह मानी नहीं,
उलटे ताने फिर मुझको लगाने लगी ।
तुम हो लक्ष्मण के विश्वास घाती बलम,
मैं चला जब वह आखिर सताने लगी ॥८॥

अय भाई अगरचे ना सीता मिली,
तो मरने में मेरे न समझो भ्रम ।
शरणागत फिर सीता का मैं दुःख न हरूं,
तो फिर क्षत्रिय का भाई कहाँ है धर्म ॥९॥
इसमें नहीं है दोष किसी का विरन,
कोई पिछला उदय आया खोटा करम ।
क्षत्रापन भी गया और धर्म भी गया,
कैसे दिखलाऊंगा मुख मुझे ये शरम ॥१०॥

दोहा

लक्ष्मण जी कहने लगे, भाई दिल मत गेर ।
जनक सुता मिल जायगी, है कोई दिन का फेर ॥
जिसने की अपहरण सिया, यह समझ काल ने घेरा है ।
शत्रु के प्राण सहित सीता. लाऊं यह प्रण बस मेरा है ॥
माता सुमित्रा का नन्दन, अय भ्रात तभी कहलाऊंगा ।
यदि नहीं तो फिर धिक्कार मुझे, जीते मुख ना दिखलाऊंगा ॥

दोहा

दृढ़ प्रतिज्ञा अनुज ने, लई इस तरह धार ।
यदि यह पूरी ना करूं, तो मुझ नाम निस्सार ॥
इधर प्रतिज्ञा करी उधर, रजनी ने पीठ दिखाई है ।
दिनकर ने जब फेंकी मरीचि, तो फौजी बिगुल बजाई है ॥
सदा सुनी जब बाजे की, आ जमा झुण्ड के झुण्ड हुये ।
और सेनापति के पद पर भी, श्री लक्ष्मण जी आरूढ़ हुये ॥

दोहा

पाताल लङ्क को चल दिये, कर धावा तत्काल ।
शूरवीर योद्धा बली, रूप अति विकराल ॥

पाताल लङ्क में खर के पद पर, सुन्द नरेश सुहाया है।
पर चैन कहां था उसको भी, दल बल ले सम्मुख आया है॥
जब आन अनी से अनी मिली, तब शूरवीर ललकारे हैं।
तब वीर विराध ने भी अपने, दिल के गुब्बारे निकाले हैं॥

दोहा

फौरन ही रणभूमि में, हुआ रक्त का कीच।
कायर जन गश खा गिरे, लिए नैन दो मीच॥

टङ्कार शब्द जब किया अनुज ने, मानो विद्युत कड़क पड़ी।
फिर बाण बरस रहे लक्ष्मण के, जैसे श्रावण की लगी झड़ी॥
कइयों ने शस्त्र डाल दिये, कुछ वीर विराध से आन मिले।
और सुन्द भाग लंका पहुंचा, सब छोड़ दिये सामान किले॥

दोहा

शूर्पणखा ने यूं किया, श्वसुर गृह का नाश।
अब पहुंची लंकापुरी, करने कुमति प्रकाश।
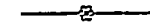
विराध को ताज

दोहा

अधिकार जमाया सब जगह, रामचन्द्र ने आन।
जो मुख से कहा विराध को, पूरी करी जबान॥

अनुराधा रानी के दिल में, खुशी का ना कुछ पार रहा।
मनोकामना सिद्ध हुई, गद्दी पर शांभ कुमार रहा॥
मात-पुत्र ने रामचन्द्र की, सेवा खूब बजाई है।
हम रहें बने चाकर इनके, सबके दिल यही समाई है॥

दोहा

औदार चित्त ने कर दिया, दूजे का उद्धार।
अब सीता का हुआ, दिल पर दुःख सवार॥
इस तरफ राम को सीता विन, खाना पीना नहीं भाता था।
उस तरफ लंका में रावण भी, वैदेही का गुण गाता था॥
अब सुनो हाल किष्किन्धा का, जहाँ नया माजरा और हुआ।
असली नकली दो सुग्रीवों का, रियासत भर में शोर हुआ॥

दोहा

रूप धरा सुग्रीव का, सहसगति ने आन।
पार कहो कैसे पड़े, दो खाँडे एक म्यान॥
चित्रांग भूप का राजकुंवर, जो सहसगति कहलाता था।
ज्वलनसिंह की पुत्री तारा को, तन-मन से चाहता था॥
सहसगति को ज्योपियों ने, स्वल्पायु वतलाई थी।
इस कारण ज्योतिप पुरपति ने, सुग्रीव नरेश को व्याही थी॥

दोहा

सहसगति को था लगा, यही नशैला तीर।
मन वाञ्छित औपधि विना, मिटे ना मन की पीर॥
जिसने पुरुपार्थ किया अति, फिर उसको था सन्तोप कहां।
जहां तारा थी सुग्रीव के यहां, था सहसगति का मन भी वहां॥
पर जोर नहीं कुछ चलता था, तव यही समझ में आया था।
रूप परिवर्तन विद्या साधन, प्रारम्भ लगाया था॥
थी रावण को जैसे सीता, यहां सहसगति को तारा थी।
नेक को देवी माता सी, कामी को काम कटारा थी॥
थी सीता यदि धर्म शशि, तो ये भी नेक सितारा थी।
थी सहसगति को ये विजली, रावण को सीता आरा थी॥

असली नकली सुग्रीव

दोहा

रूप परिवर्त्तन लई, शक्ति जिस दम साध ।
तारा ही तारा रहा, हृदय में कर याद ।।

अब चला वहां से खुशी खुशी, किष्किन्धा में जा कयाम हुआ ।
सुग्रीव चला वन सैर काल, जब समझा शोभन श्याम हुआ ।।
यहां सहसगति ने भी अपना, सुग्रीव रूप झट धारा है ।
असली से पहिले आकर के, नकली ने वचन उचारा है ।।

दोहा

सावधान होकर रहो, जितने पहरेदार ।
यदि शिथिलता कुछ हुई, लेऊं शीश उतार ।।

समय आजकल ऐसा है, कई रूप बदल आ जाते हैं ।
हैं डाकू चोर उच्चके सब, राजाओं तक बन जाते हैं ।।
फिर आगे बढ़ के महलों का, जो था नकशा सब खेंच लिया ।
ऊपर से प्रेम दिखाता था, पर अन्दर से था कैंची लिया ।।

दोहा

नकली बैठा असल के, शयन महल में जाय ।
चाह जिसकी थी मन बसी, करने लगा उपाय ।।

इतने में आगया असली, तो संतरियों ने रोक दिया ।
और भाग भी ये न जाय कहीं, चहुँ ओर से पहरा ठोक दिया ।।
सुग्रीव और सब अधिकारी, यह बात देखकर घबराये ।
यह रचा किसी ने षड्यन्त्र, लक्षण ये सभी नजर आये ।।

दोहा

देख हाल कपि पति किये, अपने नेत्र लाल।
गर्जे तर्जे कहने लगे, मस्तक पर बल डाल ॥

बने बावले सबके सब, क्या नशा आज कोई पिया है।
या काल ने परभव में जाने का, आज सन्देशा दिया है ॥
या पागलखाने में तुम, निज को जकड़ाना चाहते हो।
या तुम आयु पर्यन्त जेल में, पड़कर सड़ना चाहते हो ॥

दोहा

देख तेज सुग्रीव का, गये बहुत से काँप।
कई होगये सामने, जैसे फणिधर साँप ॥

बोले बस ज्यादा बक बक न कर, क्या भेप बदल कर आया है।
महाराज महल में विराजमान, तैंने प्रपञ्च रचाया है ॥
जो कष्ट हमें बतलाता है, तेरे ऊपर ही बरसेगा।
और याद रहे स्वतन्त्रता को, स्वप्नमात्र में तरसेगा ॥

दोहा

यदि है तू बहुरूपिया, सो भी दे बतलाय।
बदले कभी इनाम के, जान मूल की जाय ॥

यह हाल देख कर भूपति का दिल, उथल-पुथल सा होने लगा।
जो साथ गये थे सैर करन, फिर उनके दिल को टोहने लगा ॥
वे सबके सब अपने पाये, उनके कारण कई आन मिले।
असली की ओर होगये बहुत, कुछ नकली के संग जाय रले ॥

दोहा

नकली को असली कहें, असली को नक्काल।
मति ज्ञान में पड़ गया, सबके भरम कमाल ॥

प्रसंग देख हर एक विचारों का, सागर बन जाता था।
किये उपाय अनेक परन्तु, पता नहीं कुछ पाता था॥
रंग ढंग यहां तक बिगड़ा, सेना तक भी यह हाल हुआ।
आधीन बनाऊं परिस्थिति, यह चन्द्ररश्मि का ख्याल हुआ।

दोहा

वाली सुत बलवान था, चन्द्ररश्मि तसु नाम।
आधीन किये अधिकार सब, मुख्य मुख्य जो काम॥

महल चची के सबसे पहले, पहरा दृढ़ लगाया है।
यह झगड़ा दो सुग्रीवों का, महारानी ने सुन पाया है॥
जब खबर एकदम फैल गई, तो उसी समय दरबार हुआ।
असली से पहिले नकली आ, सिंहासन पर असवार हुआ॥
उस तरफ से आ पहुंचा असली, था मस्तक पर बल पड़ा हुआ।
वह तेज प्रताप महाराजा का, देख सभी दल खड़ा हुआ॥
अनिमेष दृष्टि से रहे देख, कुछ फर्क नजर नहीं आता है।
जो कुछ पूछें असली से बात, नकली भी वही बताता है॥

दोहा

भेद कुछ भी नहीं खुला, हो अन्तिम लाचार।
बुद्धिमान एकत्र हो, करने लगे विचार॥

अन्तिम निश्चय किया यही, कि जब तक यह न भेद मिले।
तब तक हैं बन्द लिये दोनों के, महल हकूमत फौज किले॥
सब राज्य काज का अधिकारी, चन्द्ररश्मि होना चाहिये।
और इन दोनों को पृथक्-पृथक्, रखकर रहस्य टोहना चाहिये॥
वहां नियत किया जो भी कुछ था, सब अमल उसी पर होने लगा।
और सहसगति प्रतिकूल कपि, के बीज फूट का बोने लगा॥

दोनों ही थे आर्तध्यानी, करते थे ढेर विचारों का ।
तारा का दुःख था नकली को, असली को दुःख था सारों का ॥

दोहा

एक बार सुग्रीव ने, बुलवाया हनुमान ।
अंजनीसुत का बहु किया, नकली ने सम्मान ॥
पवनकुंवर की अक्ल भी, देख हुई हैरान ।
हस्ताक्षर तक तुल्य हैं, एक बाण एक शान ॥

भूतकाल की बात सभी, दोनों इकसार बताते हैं ।
अपने अपने अनुकूल सही, सब तुल्य भाव दर्शाते हैं ॥
जैसे तैसे किया परन्तु, असली रहस्य न पाया है ।
फिर परीक्षा कारण दोनों का, आपस में युद्ध कराया है ॥

दोहा

डट गये दोनों शूरमा, क्रोध हृदय में धार ।
दांव पेंच करने लगे, इक दूजे पर वार ॥

वह दोनों ही बलवीर शूरमा, दोनों ही विद्याधर थे ।
और दोनों ही उस समय, समझलो एक म्यान के अन्दर थे ॥
अनुमान से आयु में सम थे, थे बबर शेर नहीं कायर थे ।
शस्त्र कला के जानकार क्या, बहत्तर कला में माहिर थे ॥

दोहा

नकली कुछ हँसकर लगा, असली को यूं कहन ।
शाबाश तुझे बहुरूपिया, स्वाँग उतारा अयन ॥
अब तक मैं देखा नहीं, तेरे जैसा स्वाँग ।
देऊँगा वो ही तुझे, जो ले मुख से माँग ॥

मांगो मुख से दान, रही ना कसर तेरे इस फन में ।
अब आगे मत तान, क्योंकि मुश्किल होगी फिर रण में ॥
यह सर धड़ का खेल, खेलते क्षत्रिय खेल मगन में ।
क्या तेरी औकात तीर से, फेंकूं तुझे गगन में ॥

सहसगति का गाना

समर का खेल मत हाँसी गिनों बहुरूपिया भाई ।
मैं अब भी तरस खाता हूँ सुनो बहुरूपिया भाई ॥१॥
किया अनुचित भी जो तूने उसे मैं माफ करता हूँ ।
झुकाओ शीश मत ज्यादा तनो बहुरूपिया भाई ॥२॥
प्राण अपना गंवा करके, करावोगे मेरी निन्दा ।
मिलो वचों से ताना मत बुनों, बहुरूपिया भाई ॥३॥
अभी तो शांत कर रक्खा है, मैंने अपने गुस्से को ।
एक सौ एक यह मुहरें, चुनो बहुरूपिया भाई ॥४॥

दोहा

नकली का व्याख्यान सुन, जल बल हो गया ढेर ।
कपि पति बोला गर्ज कर, जैसे बन में शेर ॥
दम्भी प्रपञ्ची यहां, करता क्या खर नाद ।
भेष बनाने का अभी, तुझे मिलेगा स्वाद ॥

अभी मिलेगा स्वाद काल, भक्षण तुझ को आता है ।
नकली बनकर आप धौंस, खर हम को दिखलाता है ॥
अवकाश नहीं है बचने का, क्या मन में पछताता है ।
मरने के डरसे अब, क्यों पीछे हटता जाता है ॥

सुग्रीव का गाना

काल तेरा उठा लाया, तुझे मैं आज कहता हूं ।
न छोड़ूं अब तुझे चिड़िया, आगया बाज कहता हूं॥१॥

कहाँ आकर के फैलाई है, तूने अपनी यह माया ।
चलेगी पेश न तेरी सरे, सामाज कहता हूँ ॥२॥

चला जा अब भी सम्मुख से, फटक ना सामने मेरे ।
नहीं तो मौत का तुझ को, मिलेगा ताज कहता हूं ॥३॥

सम्भल कर आ खड़ा होजा, देख यह चोट क्षत्रिय की ।
भँवर में डूबने वाला तेरा, है जहाज कहता हूं ॥४॥

दोहा

फिर जुट गये मैदान में, होकर के विकराल ।
शस्त्र कला में शूर में, सम विद्या सम काल ॥

था यही दाव और यही ध्वनि, इसको किस पेंच से मार धरू ।
जो काँटा है मिट जायेगा, निष्कंटक हो आराम करूं ॥

था सहसगति अतुलित योद्धा, सुग्रीव भूप जग जाहिर था ।
एक था नीति के अन्दर, दूजा नीति के बाहिर था ॥

दोहा

लड़ते लड़ते हो गये, थक कर दोनों चूर ।
पास उपस्थित थे उन्हें, किये हटा कर दूर ॥

देख असल के जौहर को, नकली दिल घबराय ।
मन ही मन में सोचता, फँसा कहां पर आय ॥

मैं राज पाट को छोड़, विपत्ति, महा कठिन में आन फँसा ।
वह सुख कहां स्वतन्त्रता के, वर्त्तमान कहां आज दशा ॥

कष्ट सहे जिस कारण इतने, उस प्यारी के दर्शन कहां ।
और प्रेम बदरियां बरसे बिन, फिर यह हृदय भी सर्द कहां ॥

दोहा

मैंने भी तेरे लिए, धुनी दई रमाय।
घर बेघर तो हो गया, प्राण रहे चाहे जाय॥

सहसगति का गाना (स्वगत)

प्यारी सितारा तूने मुझको रुला के मारा,
फिरता हूं तेरे दर पै, दिन रात मारा मारा ॥१॥
भाता न खाना पीना, उस राग के नशे में।
इक तीर से ही तूने, मेरा कलेजा फारा ॥२॥
परवश हुआ हूँ लेकिन, मुझ को ये गम नहीं है।
असली को अपने जैसा नकली बना ही डारा ॥३॥
अर्पण यह अपना सिर धड़, सब तुझको कर चुका हूं।
इस भव नहीं तो परभव, होगा हिसाब सारा ॥४॥
वर्षों तलक तो मैंने, पर्वत पै दुःख उठाया।
तेरे लिए ही प्यारी, ये रूप आके धारा ॥५॥

दोहा

सहसगति यूं कर रहा, आर्तध्यान अपार।
वानरपति भी सुस्त हो, करने लगा विचार॥

वार सभी खाली गयें, मुश्किल बनी लाचार।
दुष्ट आत्मा ये कोई, है पूरा मक्कार॥

क्या दोष किसी का बतलावें, जब अपनी किस्मत लौट गई।
मात-पिता और भ्रात बली, बाली की सर से ओट गई॥
करे न्याय जो यथा तथ्य, ना कोई नजर के अन्दर है।
यदि है तो कुछ रावण समझो, पर सो भी कामी बन्दर है॥

दोहा

मुर्दे को मुर्दा कहें, सब अनादि की रीत ।
मैं जिन्दा मुर्दा बना, है कैसा विपरीत ॥

कैदी मुझ से अच्छे क्योंकि, सजावार दुःख भरते हैं ।
रोगी जन भी मुझसे बेहतर, अपना इलाज तो करते हैं ॥
पर यह व्याधि ऐसी चिपटी, जिसकी कोई दवा न पाई है ।
अब यही नहीं या मैं ही नहीं, अन्तिम दिल बीच समाई है ॥

सुग्रीव जी का गाना

अय कर्म क्या तुझको, अभी आया सबर नहीं ।
क्या क्या दिखायेगा, मुझे कोई खबर नहीं ॥१॥
माता-पिता की अय कर्म, तूने जुदाई कर दई ।
शरणा वली वाली का भी, आता नजर नहीं ॥२॥
खो दई सारी हकूमत, तूने मेरे हाथ से ।
यह जान भी जाने में, अब कोई कसर नहीं ॥३॥
करके मुकाबला कर्म, दुनिया में सारे देखले ।
दुखिया हमारे जैसा, कोई बशर नहीं ॥४॥
अनन्त शक्ति आत्मा, अरिहन्त ने तुझ में कही ।
कर हौसला तुझ से कर्म, कोई जबर नहीं ॥५॥
हर चीज की सिद्धि लिये, उद्यम ही सब का मूल है ।
निश्चय 'शुक्ल' मुझको हुआ, अब इसका सिर नहीं ॥६॥

दोहा

हाँ एक और उपाय है, आया मुझ को ख्याल ।
जो कि लंक पाताल में, हुआ माजरा हाल ॥

दशरथ नन्दन राम लखन, जो महापुरुष कहलाते हैं ।
लेख और भाषण द्वारा, हम भी ऐसा सुन पाते हैं ॥

सत्य पक्ष के हैं पालक, और काल रूप दुश्मन के हैं।
निग्रन्थ गुरु के हैं सेवक, जो कि प्यारे सुर जन के हैं॥

दोहा

खरदूषण ने था लिया, चन्द्रोदर का राज।
वापिस वीर विराध को, दिलवा या वही ताज॥

अब वही कृपानिधान कृपा, कुछ मेरे ऊपर भी कर देंगे।
अब उन्हें दिखाऊं यह नाड़ी, दे औषधि व्याधि हर लेंगे॥
क्या अच्छा हो रहस्य पुरुष से, पहिले पता मंगालूं मैं।
और वीर विराध के द्वारा ही, अपना सब काम बनालूं मैं॥
रहस्य पुरुष को भूप ने, समझाया सब हाल।
लंक पाताल में जा सभी, करो काम तत्काल॥
उसी समय कर जोड़ उठा, और खुशी से चेहरा लाल हुआ।
करके प्रणाम बोला स्वामी, अब शत्रु का भी काल हुआ॥
किष्किन्धा से चले आय, झट लङ्क पाताल में आया है।
श्रीराम लखन के सहित. विराध को झुककर माथ नवाया है॥

दोहा

वीर विराध ने अति किया, स्वागत और सत्कार।
समय देखकर दूत ने, खोला दुःख पिटार॥

शायद आपको मालूम हो, जो हाल हुआ किष्किन्धा में।
वह सारा हाल बयान करूं, ना समय ना शक्ति वन्दा में॥
महाराजा ने फरमाया है, बस नैया है मझधार पड़ी।
इस समय आपके चप्पू से, है पार नहीं निराधार खड़ी॥
आयु पर्यन्त आपका यह, उपकार रहेगा मेरे पर।
अब क्या वृत्तान्त कहूँ अपना, बन बैठा हूं बेघर बेजर॥

बस एक आप की कृपा से, श्रीराम यहां आ सकते हैं।
जो उलट पेच यह आन फंसा, वो ही आ सुलझा सकते हैं ॥

दोहा

रहस्य पुरुष से जब सुनी, कपि पति की अरदास।
सन्तोष जनक श्री विराध जी, बोले नम्र सुभाष ॥

जो सेवा मुझको फरमाई, उनका कहना सिर मस्तक पर।
श्रीराम का वहां आना होगा, तो होगा आपके आने पर ॥
जो व्याधि तुमको चिपटी है, उन पर भी इक दुख आन पड़ा।
सिया जनक दुलारी को बन से, कोई दुष्ट पुरुष ले गया उड़ा ॥
इस समय अर्ज पर अर्ज करें, सो भी बुद्धि से बाहिर है।
कभी लेने के पड़ जायें देने, यह भी मिसाल जग जाहिर है ॥
हाँ इतना निश्चय है मुझको, यदि आप यहाँ पर आ जावें।
और इनके दुःख में हो शामिल, अपना भी दुःख मिटा जावें ॥

दोहा

रहस्य पुरुष ने जा कहा, बीतक मालिक पास।
उसी समय कपि पति चला, करने को अरदास ॥

वीर विराध किष्किन्धा पति, श्रीराम पै कर के आश गये।
फिर करी चरण प्रणाम सामने, बैठ पास ही पास गये ॥
सुग्रीव बड़ा ही दाना था, नीतिज्ञ और मरदाना था।
अब उसी तर्ज पर चला जिस, तरह अपना काम बनाना था ॥

दोहा

दुखिया के जिस दम उठे, दुखित भरे दो नैन।
देख नैन श्रीराम ने, मन में सोचा ऐन ॥

है यह भी दुखिया कोई, कुछ शरण लेने आया है ।
पर आप ही रसना खोलेगा, जो भी कुछ कहने आया है ॥
जब नेत्र मिले फिर बात चलन में, कहो देर क्या लगती है ।
जैसे ग्रीष्म के लगते ही, पर्वत पर हिम पिंघलती है ॥

दोहा

दया दृष्टि के जिस समय, देखे नृप ने नैन ।
सोच सोच श्रीराम से, लगा इस तरह कहन ॥
किस्मत ने मुझको दिया, धोखा दीनानाथ ।
रत्न और राढा मणि, एक समान दिखलात ॥

क्या कहूं व्यथा अपनी तुमको, सो यहीं छोड़ना चाहता हूं ।
कुछ सेवा मुझको फरमाइये, तन-मन से करना चाहता हूं ॥
यह सोच लिया कि चन्द दिनों का, दुनिया रैन बसेरा है ।
जो भी कुछ तन से बन आये, सेवा का ही फल मेरा है ॥

दोहा

दुख में दुख यह और भी, हुआ मुझे महाराज ।
इस कारण मैं क्या कहूं, अपने दिल का राज ॥

सीता का पता लगाने में, जैसा हूँ वैसा हाजिर हूँ ।
कैसा भी क्यों ना हूँ चश्मों का, दुख हरने में काजर हूँ ॥
मैं सेवक हूं तैयार खड़ा, प्रभु सेवा कोई बता दीजे ।
जो व्याधि मुझको लगी हुई, फिर उसको आप हटा लीजे ॥

दोहा

देख चतुर की चतुरता, बोल उठे श्रीराम ।
अपनी आप बताइये, दुख की व्यथा तमाम ॥

यही फरक इन्सानों में, जो महापुरुष कहलाते हैं।
वह अपना दुख कहें ना कहें, दूजे का दुख मिटाते हैं॥
अपना उदर कहो दुनिया में, कौन नहीं भर लेते हैं।
बला दूसरों की अपने सिर, महापुरुष धर लेते हैं॥

दोहा

सुने जिस घड़ी राम के, अमृत झरते वैन।
लगा कहन सुग्रीव तब, गीले करके नैन॥

महाराज कहूं क्या आपसे मैं, इक उलट पेच में आन फंसा।
है एक और सुग्रीव बना, और इसी म्यान में आन धंसा॥
क्या कहूं शर्म आती कहते, बिन कहे वि रहा न जाता है।
दिन रात यही दुःख लगा हुआ, खाना पीना नहीं भाता है॥
हो गया मुझे विश्वास आपकी, कृपा मेरे ऊपर होगी।
निज अहोभाग्य समझूंगा, आपकी इस तन से सेवा होगी॥
कुछ रहा नहीं अधिकार मुझे, फिर कहो तो क्या कर सकता हूँ।
इस व्याधि से निवृत्त होकर, सीता की सुध ला सकता हूं॥

दोहा

वीर विराध कहने लगा, सुन सुग्रीव सुजान।
इसी वचन पर आपको, रखना होगा ध्यान॥

प्राण तलक चाहे अर्पण हों, यह काम अवश्य करना होगा।
यदि काम कहीं पर आन पड़ा, तो समझो वहां सिर ना होगा॥
अब सेवक हो तो सच्चा हो, सर्वस्व तलक लाना होगा।
तुम निश्चय करलो मित्र, भार अपने शीश उठाना होगा॥

दोहा

उत्तर में कहने लगे, किष्किन्धा नृप राय।
अपने मुख से क्या कहूं, देऊं कर दिखलाय॥

हम वह बादल हैं मौके पर, गड़बड़ बिन किये बरसते हैं।
आपत्ति हजारों हों तो भी, सेवा के लिए तरसते हैं॥
तीन खंड में फिरा हुआ, फिर विद्याधर कहलाता हूं।
आप देखते रहें सिया का, कैसे पता लगाता हूं॥
सर्वस्व लगा कर भी सीता, माता का पता लगा दूंगा।
मैं गुप्तचरों का भूमण्डल पर, मानो जाल बिछा दूंगा॥
नगर नगर क्या गिरि गुहर, सब जगह विमान दौड़ा दूंगा।
राष्ट्र भर का बच्चा बच्चा, इस काम में सभी लगा दूंगा॥

दोहा

परोपकारी चल दिये, किष्किन्धा की ओर।
धन्यवाद की ही सदा, गूंज रही बाजोर॥

देख दृश्य किष्किन्धा का, श्रीराम लखन हर्षाये हैं।
सामन्त मंत्री अधिकारी सब, स्वागत करने आये हैं॥
था दृश्य एक अद्भुत सुन्दर, आवास जहां पे उतारे हैं।
असली नकली सुग्रीव यहां, फिर दोनों आन पुकारे हैं॥

दोहा

करी परीक्षा राम ने, मिला नहीं कुछ भेद।
तन मन में होने लगा, जरा जरा सा खेद॥

फिर समझ लिया कि इन, दोनों में है कोई एक दुराचारी।
यह भेद प्रकट करने को फिर, वज्रावर्तज पर दृष्टि डारी॥
उधर जुटा दिये वह दोनों, और इधर धनुष लिया कर धारी।
टङ्कार शब्द घनघोर किया, लरजाया फलक जमीं सारी॥

दोहा

इश्क, मुश्क, खांसी, खुरक द्वेष खून मद पान।
अष्ट छिपाये ना छिपे, प्रकट होंय मैदान॥

सब नीर क्षीर का भेद खुले, जब हँस चोंच अपनी डारे।
शुद्ध हेम पिछाना जाता है, जिस समय कसौटी हो प्यारे॥
सच्चे जौहरी के आगे, क्या लाल रलाये रलता है।
बबर शेर का चर्म पहन, कभी गधा सिंह नहीं बनता है॥

दोहा

सहसगति की टंकार से, विद्या हुई काफूर।
चित्रांग पुत्र पर उस समय, लगी बरसने धूर॥

यह हाल देख श्रीरामचन्द्र को, रोष एक दम आया है।
धिक्कार शब्द चहुं ओर, महल क्या भूमण्डल गुञ्जाया है॥
बोले राम अहो सहसगति, क्यों आर्तध्यान लगाया है।
यह फल तेरे दुष्कर्मों का, अब सम्मुख तेरे आया है॥

दोहा

सहसगति कहने लगा, अर्ज सुनो महाराज।
दर्श उसी का चाहिये, जो दिल रही विराज॥

मात पिता रानी जिस कारण, छोड़ दिये सब राज किले।
कष्ट सहे गिरि उद्यानों में, दर्श मिले तो वही मिले॥
निर्मल व्योम शशि जैसे, मुख मुद्रा शोभा पाता है।
सहसगति भी अन्त समय, तारा का दर्शन चाहता है॥

दोहा

सहसगति के वचनसुन, क्रोधित हुये रघुराय।
बोले बस अब चुप रहो, आगे सुना न जाय॥

जल्दी अब संभल खड़ा होजा, मम इषु सम्मुख आता है।
ऐसे पापी हृदय का यह रक्त, शोषण चाहता है।
जो जो तूने कर्त्तव्य किये, वे चित्र बाण की बन आये॥
इसमें दोष क्या बता मेरा, तेरे दुर्भाग्य उदय आये।

दोहा

सहसगति के राम ने, मारा कस कर तीर।
इसी बाण ने दुष्ट का, दिया कलेजा चीर।
चक्कर खा धरणी गिरा, सहसगति मुरझाय॥
नर नारी चहुँ ओर से, झूम झाम गये आय।
चित्रांग सुत को रघुपति, लगे इस तरह कहन।
अंत समय सुनले जरा, शिक्षाप्रद दो वैन॥

जो खिला बाग में फूल समझ, वह भी इक दिन कुंमलायेगा।
जो जन्मा सो भी मनुष्य मात्र, क्या इन्द्र भी मर जायेगा॥
जो अंत गति सो मति, श्री अरिहंत देव फरमाते हैं॥
कान लगा कर सुनो जरा, उसका भी रहस्य सुनाते हैं।

दोहा

सुमति छोड़ कुमति ग्रहे, फेर सुमति ले धार।
उसका भी संसार से, होता बेड़ा पार॥

अब तजो सभी दुर्ध्यान, जिन्हों ने यह दुर्दशा कराई है।
जो होना था सो हो बीता, समता में तेरी भलाई है॥
यदि इसी ध्यान में प्राण गये, तो नीच गति जा परना है।
अनमोल रत्न नर-तन खोकर, चौरासी का दुख भरना है॥

दोहा

इतना कह सीता पति, बैठ गये निज स्थान।
सहसगति के भी जरा, दिल में आया ध्यान॥
बिना पुण्य कैसे गहे, ठीक-ठीक सब वैन।
पर कुछ दिल में सोचकर, लगा इस तरह कहन॥

गाना (सहसगति का)

चलना जरा संभल कर, पर नारी नागिनी है।
मेरी तरफ ही देखो, हालत ये क्या बनी है॥
रखती हजारों फन ये, रग रग में गरल कातिल।
खावे जिगर को पहिले, ऐसी ये डाकिनी है॥
चलती है चाल बांकी, लहरा के जब जमीं पर।
सुध-बुध सभी भुलावे ऐसी यह शाकिनी है॥
पड़ता नहीं है दिल में, दिन रात चैन उसके।
जिसके चश्म कटारी, मारे यह पापिनी है।
किंपाक फल के सदृश लगती, मनुष्य को प्यारी।
विष से मिली मिठाई नित्य चाहिये त्यागिनि है॥
इस लोक हो ख्वारी पर नरक देने हारी।
नर-जन्म को है आरी ऐसी अभागिनी है॥
लख कर के हाल मेरा, शिक्षा ग्रहो अय मित्रो।
नर भव वृथा गँवाया, पर नारी वाघिनी है॥
परभव को यह पखेरू लेता है अब उडारी।
शुभ 'शुक्ल' ध्यान ध्याओ कह कर यह रागिनी है॥

दोहा (राम)

सहसगति यह वचन कह, परभव गया सिधार।
कपिपति के होने लगा, आनन्द मंगलाचार॥

पूर्ववत् निज पाट पर, कपिपति रहा विराज।
शूरवीर बांका बली, चन्द्ररश्मि युवराज॥

रामचन्द्र से कपिपति, लगा कहन यूं बात।
पुत्री ब्याहने की प्रभो, मेरी है दरख्वास्त॥

कहा श्री रघुराय ने, कपिपति वचन संभाल ।
जनक सुता की सुध बिना, दिल का हाल बेहाल ॥

अब इधर सिया के शोधन में, हुए एकत्र परामर्श करने को।
उस तरफ लंका में शूर्पणखा, पहुंची अपना दुख रोने को ॥
पर वहां रंग कुछ और खिला, था नशा भूप को चढ़ा हुआ ।
जिस भंवर से कोई बचा नहीं, था उसी चक्कर में फँसा हुआ ॥

दोहा

जो विलासिता में पड़ा, गया मनुष्य भव हार ।
चार गति मनुष्यत्व बिन, मिले दुःख संसार ॥

लग रही ध्वनि एक सीता की, कुछ खान-पान नहीं भाता है ।
बस नाम एक सीता के बिन, कुछ और न सुनना चाहता है ॥
निदान कर्म के उदय कोई, चारित्र पाल नहीं सकता है ।
विषयानुरागी परोपकार की, शक्ति कभी न रखता है ॥

शूर्पणखा का जाल

दोहा

शूर्पणखा कहने लगी, अय बन्धु जगताज ।
प्रीतम सुत देवर मरे, गया हमारा राज ॥

तुम देख रहे दुर्दशा हमारी, यही तो सबसे दुःख बड़ा ।
जिस तख्त पै तेरा बहनोई था, उस पर वीर विराध चढ़ा ॥
अब सुंद की आप सहाय करें, इस समय यदि ना ध्यान दिया ।
तो यही नजर में आता है कि, गढ़ लंका भी आन लिया ॥

दोहा

रावणके था चढ़ रहा, इश्क मजीठी रंग।
विचार शक्ति रहती कहाँ, जिसको डसे भुजंग ॥

वह बना असन्नी बैठा था, मन सीता में था लटक रहा।
या यों कहिये कि मन भंवरा था, इसी फूल पर भटक रहा ॥
फिर बोला बेमन होकर बस इस, व्याख्या को रहने दे।
और चन्द दिनों तक उनको भी, इस बात का लावा लेने दे।
अब किष्किन्धा में निश्चय, उनको काल बुला कर लाया है।
जो खरदूषण को मार विराध को, राज ताज दिलवाया है ॥
क्या हैं वन के दो भील विचारे, महादुःख में पड़े हुए।
इस दशकन्धर के सन्मुख तो, महायोद्धा भी ना खड़े हुए ॥

दोहा

शूर्पणखा कहने लगी, रावण को यूं भाप।
कभी कभी वह ले रही, लम्बे लम्बे श्वास ॥

शूर्पणखा का गाना—रावण के प्रति

आपकी भूल है भाई, समझते उनको विचारे।
सहस्र चौदह समर में एक ने, सब खाक कर डारे ॥१॥
क्या शक्ति दामिनी की, भ्रात उनके धनुप के आगे।
हाय देवर पति सुत के, कलेजे तीर से फारे ॥२॥
असर करता नहीं उन पर, कोई भी अस्त्र या शस्त्र।
खबर नहीं कैसे वज्र के, बने हैं गजब के मारे ॥३॥
सबर तब ही मिले मुझको, उन्हों का सिर कतर लाओ।
मार कर विराध शत्रु को, सुन्द फिर ताज सिर धारे ॥४॥
बने हो शून्य चित्त क्योंकर, करो ये काम जल्दी से।
नहीं तो 'शुक्ल' यहाँ पर भी, वजेंगे उनके नक्कारे ॥५॥

रावण का गाना—भगिनि के प्रति

बहिन जो ख्याल है तेरा, वही मैं कर दिखाऊंगा ।
इसी शमशेर से दोनों का, सिर धर से उड़ाऊँगा ॥१॥
बहुत कहने से क्या मतलब, क्योंकि खद ख्याल है मेरा ।
विराध को मार कर ले ताज, सुन्द के सिर सजाऊंगा ॥२॥
चाहे हो धनुष बिजली सा, चाहे खुद भी हों वज्र के ।
स्वाद इस बात का अच्छी तरह, उनको चखाऊंगा ॥३॥
जो होना था सो हो बीता, तजो ये ख्याल अब मन से ।
उन्हीं की तो है शक्ति क्या, जमीं तक को हिलाऊंगा ॥४॥
जमाना थरथराता है, नाम सुनकर के रावण का ।
चन्द दिन ठहर जा तुझको, सभी कुछ कर दिखाऊंगा ।

दोहा

टालमटोला कर दई, शूर्पणखा को धीर ।
उसी ध्वनि में फिर लगा, जो बैठा दिल तीर ॥

सीता आत्म-निन्दा

रागान्धा वहाँ से चला, पहुँचा सीता पास ।
जनक सुता थी ले रही, गम में लम्बे श्वास ॥

सिर हिला हिला अपने मस्तक, पर हाथ मारती जाती थी ।
निज आत्म निन्दा कर करके, नैनों से नीर बहाती थी ॥
कभी मन में ऐसा आता था, इस तन से अभी विहार करू ं ।
यह सोच सोच रह जाती थी, थोड़ा सा और विचार करू ं ॥

दोहा

क्या आज्ञा सर्वज्ञ की, कौन गुरु महाराज।
किसकी हूँ मैं कुलवधू, कौन मेरे सिरताज ॥

सिद्धान्त कौनसा है मुझको, जिसने यह ज्ञान बताया है।
और धर्म कौनसा है मेरा, जिसने बलवान् बनाया है॥
किसकी राजदुलारी हूँ, और क्या मुझको करना चाहिये।
बेशक ये प्राण रहें ना रहें, परमेष्ठी का शरणा चाहिये॥

दोहा

तन की खातिर धन तजो, दोनों तज रख लाज।
धर्म हेत तीनों तजो, कहा श्री जिनराज॥

शिष्य पांच सौ खंदक के, सब धर्म हेतु बलिदान हुए।
सम दम खम हृदय में धारा, दुख चक्र छोड़ निर्वाण हुए॥
वह चीज कौन-सी दुनिया में, जा संग जीव के जाती है।
बस एक शुभाशुभ करनी है, जो संग न तजना चाहती है॥
निष्कलंक हैं देव गुरुजन, पांच महाव्रत के धारी।
सर्वज्ञ कथित शास्त्र होता, प्राणी मात्र को हितकारी॥
दया धर्म में श्रद्धा है, कुलवधू मैं दिवाकर वंश की हूं।
हरिवंशी वास व केतुजनक, नृप मुख्य मैं पुत्री उसकी हूं॥
निष्कलंक जैसे ये सब, मैं भी निर्मल कहलाऊंगी।
शील धर्म नहीं जाने दूँ, इस तन की बलि चढ़ाऊंगी॥
महा शक्तिमान् उसे जग में, अरिहन्त देव फरमाते हैं।
जो धर्म बलि देने के लिये, मस्तक सहर्ष चढ़ाते हैं॥
जो रागद्वेष के वशीभूत हो, मरे तो आत्म-हत्या है।
फिर अज्ञानी दो अशुभ ध्यान, ना धर्म की जिसमें सत्ता है॥

अन्तिम शस्त्र शील रत्न का, रक्षक यह बतलाया है।
जिसने भी इसको दिया अंग, इसने वह पार लगाया है॥

दोहा

यही नियत मैंने किया, अपने दिल दरम्यान।
यदि समय कोई आ गया, तज देऊंगी प्राण॥

दुःख में दुःख है मुझे कोई, तो दुख एक श्रीराम का है।
श्री रामचरण की रज बिन, मेरा जीना भी किस काम का है॥
उधर कहाँ फिरते होंगे, प्रीतम हा मेरी तलाशी में।
इस तरफ विरहनी चकवीवत्, प्रीतम दर्शन की प्यासी मैं॥

दोहा

इतने में ही आ गया दशकन्धर भूपाल।
पीठ फेर बैठी सिया नीची गर्दन डाल॥
सीता के थे बह रहे जल झरने दो नैन।
देख हाल ये भूपति लगा इस तरह कहन॥

प्रलोभन

दोहा

अय सीता कुछ तो करो, दिल में सोच विचार।
किस कारण तन खो रही, रो रो गुले अनार॥

रोकर क्यों विष घोल रही, ये दिन हैं आनन्द मंगल के।
कहाँ ये स्वर्णमयी लंका, और कहां वे सुख थे जंगल के॥
जंगली सा भेष बना करके, फिरती थी संग अधीरों के।
यह हेम जड़ित साड़ी आभूषण, पहिनो सच्चे हीरों के॥
दाने दाने पर हीरा है, यह चम्पाकली निहारो तो।

बिछियों का तो क्या कहना है, यह हार गले में डारो तो ॥
यह सुन्दर कर्ण फूल देखो, कुण्डलों की झलक निराली है।
और सच्चे मोती जड़े हुए, नथ भी यह मछली वाली है ॥
यह कड़े तोड़िये छैल कड़े, झांझन पहनो सब चरणों में।
क्या देख आरसी बाजूबन्द, पौंहची पहिनो कर कमलों में ॥
ये शीर्षमणि देखो अद्भुत, है जवाहरात से जड़े हुए।
मनमोहन माला पंचरंगी, दाने जिसमें हैं अड़े हुए ॥
ये देवरमण उद्यान अहो, दुनिया में ऐसा और नहीं।
सब तरह की मेवा लगी हुई, तुम खाती हो किस तौर नहीं ॥
फिरते-फिरते उस जंगल में, भीलों के पीछे मर जाती।
गुलबदन मुझे तू बता, फेर कैसे ये ऋद्धि सब पाती ॥
देखो क्या शोभन जलाशय, वृक्षों की पंक्ति लगी हुई।
और मन्द मन्द सुगन्ध मरुत, शोभन क्या लेकर बगी हुई ॥
क्या वर्णन करूं आवासों का, चित्राम जवाहिर के सारे।
हैं फर्श सब जगह रत्नों के, और झाड़ फानूस सजे भारे ॥
अब त्रिखंडी नृप की पटराणी, सीता तुम कहलावोगी।
यह राजपाट सब कुछ तेरा, मनमानी मौज उड़ावोगी ॥
पुण्य सितारा उदय हुआ, ऊपर को नजर उठावो तो।
जैसा भी दिल में ख्याल, और सो भी मुख से फरमावो तो ॥

दोहा

रावण का व्याख्यान सुन, बोली सीता नार।
जैसे गर्जे शेरनी, गिरी गुफा मंझार ॥

सीता जी का गाना

बसी है मेरे हृदय में भानुकुल राम की सूरत।
बिसर गई सुध सभी जो, देखी शोभाधाम की सूरत ॥१॥

वह अद्भुत गुण भरी सूरत, मेरे नेत्रों में फिरती है।
समाई सारी रग रग में, मेरे पति राम की सूरत ॥२॥
रूप क्या सद्गुणों का सौन्दर्य है, त्रिलोकी का जिसमें।
कि लज्जा से मलिन हो जाय, कोटी काम की सूरत ॥३॥
देवगण नाचते हैं मगन होकर, प्रेम से जिनके।
दुःखीजन ढूंढते फिरते, छवि श्री राम की सूरत ॥४॥
तेरी तो हस्ती क्या है, सुरपति अन्तक को ले आवें।
विसारूँगी नहीं मन से, मैं अपने स्वामी की सूरत ॥५॥
'शुक्ल' अज्ञान में फँसकर, फिरें भवचक्र में प्राणी।
खरों को क्या खबर, होती कहाँ आराम की सूरत ॥६॥

दोहा

दुष्ट अश्व को चाहिए, कांटेदार लगाम।
मूढ़ काल खर नीच से, नरमी का क्या काम ॥

हृदय आँख दोनों के अन्धे, चपर चपर क्या लाई है।
मानिन्द भांड दुर्भापण की, किसने यह तर्ज सिखाई है ॥
अदर्शनीक बस पीठ दिखा, यह पाप जनक व्याख्यान न कर।
आभूपण वस्त्र फूक सभी, निर्लज्ज कहीं जाकर के मर ॥
मुझ पुत्री सम जो पुत्री तेरे, उसको पटनार बना रावण।
यह हीरे पन्ने जवाहरात के, आभूपण पहना रावण ॥
उन सबको महलों देवरमण, बागों की सैर करा रावण।
एक रामचन्द्र से अन्य मनुष्य, सब पिता भ्रात मेरे रावण ॥
यह स्वर्णमयी लंका मुझको, मरघट मानिन्द दिखाती है।
श्री राम चरण रज वन में मेरा, हृदय कमल खिलाती है ॥
यह क्षत्रिय का कर्त्तव्य नहीं, तू मुझे चुराकर लाया है।
निष्कारण अय नीच सती को, और सताने आया है ॥

दोहा

सती शील भुजंगमणि, शेर मूंछ ऋपि शाप ।
आयु तक देते नहीं, अन्त न कछु संताप ॥

शुद्ध देव गुरु और धर्म शास्त्र के, जो प्राणी विपरीत चले ।
तो समझ लेवो कि उसके, उड़ने वाले हैं सब कोट किले ॥
श्रेष्टों को वही सताते हैं, अवसान जिन्हों के पुण्य हुए ।
फिर नीच गति जा पड़ते हैं, शुभ ज्ञान ध्यान से शून्य हुए ॥

दोहा

कान लगा करके सुना, सीता का व्याख्यान ।
कुछ तेजी में आन यों, बोला खोल जबान ॥
करुणा आती है मुझे, देख सौम्य मुख दीन ।
नहीं तो कर देता अभी, टुकड़े तेरे तीन ॥

दुष्ट शब्द कहना यह सब, बुद्धिमानी से बाहर हैं ।
सब तीन खंड में तेज मेरा, बाकी दुनियाँ सब कायर हैं ॥
कुछ दोप नहीं इसमें तेरा, क्योंकि शिक्षा जब ऐसी है ।
और जैसी थी संगति तुझको, चतुराई भी तुझको वैसी है ॥
इसलिए मुझे कुछ खेद नहीं, जो भी कुछ मर्जी सो कहले ।
अवशेप और दुःख रोने का, बाकी कुछ है सो भी रोले ॥
कई भाग्यहीन अच्छी वस्तुके, प्राप्त होने पर रोते हैं ।
और दुष्ट शब्द कहने से अपना, रहा सहा भी खोते हैं ॥
हीरे और पत्थर में तुझको, रंचक ना पहचान रही ।
यह सुने वचन तेरे कोई तो, बता मेरी क्या शान रही ॥
बस छोड़ो पिछला ध्यान सिया, अब भी मन को समझालो तुम ।
जो भी कुछ गुब्बार खुशी से, सारा आज सुनालो तुम ॥

दोहा

ऐसा कह दशकन्धर ने, लिया मौन कुछ धार।
सीता ने फिर इस तरह, दई उसे फटकार॥
धन्य तुझे शिक्षा मिली, धन्य विद्या अरु ज्ञान।
धन्य तेरी यह शूरता, मात किया हैवान॥

धन्य तेरी यह जीभ श्वान के, मानिन्द भौंक रहा है।
गपड़ सपड़ कर मान बड़ाई, अपनी ठोक रहा है॥
अति आश्चर्य इतर लगाना, खर को भी शौक रहा है।
किस कारण यह जान, काल के मुख में झोंक रहा है॥

दौड़

बताता है त्रिखंडी, मगर तू है पाखंडी,
याद रख वचन हमारा।
इस लंका में राम लखन का, बजेगा तेग दुधारा॥

सीता का गाना (रावण के प्रति)

किसी कुगुरु कुसंगत से, यही तालीम पाई है।
चुरा कर और की नारी, खौफ से दुम दबाई है॥१॥
करेगा क्या मेरे टुकड़े, तू अपने ही करायेगा।
चन्द दिन में ही लंका की, देख होगी सफाई है॥२॥
तेरी ऋद्धि को काटन में, करूंगी काम आरी का।
मुझे क्या धौंस अबला को, यहाँ आकर दिखाई है॥३॥
मैं उस केहरी की नारी हूं, जिन्हों की तेग जग जाहिर।
तेरा यह सिर उड़ाने को, उन्हों संग अनुज भाई है॥४॥
दिखाता भय क्या मरने का, मैं खुद मरना ही चाहती हूं।
करो उपकार मेरे पर यह, लो गर्दन झुकाई है॥५॥

गधों को भी सुंघाते हैं, कोई क्या इत्र फुलवाड़ी ।
उन्हों के वास्ते कुदरत ने, इक कुरड़ी बनाई है ॥१॥
वचन पटुता इशारे सब, लिये हैं बुद्धिमानों के ।
गधे, सूअर व मूर्ख को, अक्ल सोटे से आई है ॥२॥

दोहा

रावण को वे वचन थे, जैसे तीक्ष्ण शूल ।
किन्तु रागान्धा भ्रमर, काट सके ना फूल ॥
बस बस बस अब चुप रहो, लम्बा करके हाथ ।
बड़े जोश में आन के, बोल उठे नरनाथ ॥
आशायें तेरी सभी, व्योमकुसुमवत् जान ।
क्या शक्ति उनकी यहां, काँपे सकल जहान ॥

काँपे सकल जहान सिया तुम आप समझ जावोगी ।
अब आयु पर्यंत राम के, दर्शन नहीं पावोगी ॥
देख रहा मैं हाल सभी क्या, करके दिखलावोगी ।
सता सता इस भँवरे को, अयि कामिन पछतावोगी ॥

दौड़

जले को और जलाले, दुखी को और सताले ।
क्या उलट पुलट बकती हो, बन्दे के फन्दे से,
अब क्या सहज निकल सकती हो ॥

गाना (रावण का)

खुल गये भाग्य तेरे क्यों, आज ठोकर लगाती है ।
तरसती है जिसे दुनियाँ, उसे तू क्यों ना चाहती है ॥१॥
तेरा यह निष्ठुर भाषण तो, मुझे फूलों बराबर है ।
मगर बेहाल तन का कर मुझे, तू क्यों दिखाती है ॥२॥

बात वो ही करी तूने; डराती ऊंट छन्ने से।
यहाँ तो बज चुके धौंसे, मुझे तू क्यों डराती है ॥३॥
किया है नियम उसका जो, मुझे दिल से नहीं वाँछे।
इसलिए दीन वन कहता, मुझे तू क्यों सताती है ॥४॥
तेरे रोने के पानी से, कभी मैं वह नहीं सकता।
प्रेम तजदे सभी पिछला, उसे तू क्यों दौहराती है ॥५॥
खूब सोचें जरा मनमें, समय कुछ और देते हैं।
भुला बैठा खुदी को मैं, संग दिल क्यों बनाती है ॥६॥

दोहा

जनक सुता तैयार थी, कुछ कहने को और।
रावण लंका को चला, उदय कर्म का जोर ॥

प्रकरण मंदोदरी

था नशा भूप को चढ़ा हुआ, कुछ खान पान नहीं भाता था।
दिन रैन मन्दोदरी राणी के भी, महल तलक नहीं जाता था॥
मन्दोदरी ने एक समय, चपला दासी बुलवाई है।
एकान्त पास बैठा उसको, यों कोमल गिरा सुनाई है॥

दोहा

अय चपला सुन तो जरा, मेरे दिल का राज।
किस कारण आते नहीं महलों में महाराज ॥

कई दिवस बीते महलों में, महाराज कभी नहीं आये हैं।
तरस रहे हैं नैन युगल, नहीं दर्श पिया के पाये हैं॥
क्या है उसका हाल बता, जो नई नार वे लाये हैं।
और महलों में अब तक उसको, क्यों नहीं लाना चाहे हैं॥

दोहा

जैसा तुमको ज्ञान है, वैसा मुझको ज्ञात।
मगर एक अफवाह जरा, सुनी आज की रात॥

दशरथ नृप की कुलवधू जानकी, रामचन्द्र की नारी है।
दण्डकारण्य में देख अकेली, दशकन्धर अपहारी है।
तज देवेगी प्राण तजे ना, सत को जनक दुलारी है।
इस कारण महाराणी जी, लाये नहीं महल मंझारी है॥

दौड़

हर घड़ी समझाते हैं, बाग नित्य प्रति जाते हैं,
बात यह ठीक कही है।
प्रेम तमाचा लगा जिन्हों के, सुध बुध कहाँ रही है॥

दोहा (मन्दोदरी)

अच्छा तुम जाओ अभी, महाराज के पास।
महल बुलाने की करो, प्रीतम से अरदास॥

गाना राणी का (दासी के प्रति)

जा चली जा अभी देर लाना मती,
साथ महलों में लेकर के आना बहन।
इन्हीं बातों में सारी उमर खो दई,
अपना दुखड़ा ये किसको सुनाऊं बहन॥१॥
हाय गजब है. सितम कैसा अंधेर है,
पर नारी चुरा करके लाना बहन।
रो रो तन को यह खोती ननद सामने,
इसका दुख भी जरा न पिछाना बहन॥२॥

(दासी)

तो मैं जल्दी से जाकरके महाराज को,
राणी साहिबा बुलाकर के लाऊं अभी।
जैसी आज्ञा है वैसी मैं पालन करूं,
चाहे खाने तलक को भी खाऊं कभी ॥३॥
आना जाना तो उनके ही स्वाधीन है,
मैं तो आने की बातें बताऊं सभी।
कहीं देरी यदि मुझको लग भी गई,
सजा उल्टी न तुमसे मैं पाऊं कभी ॥४॥

दोहा

ऐसा कह दासी चली, करने को यह काज।
पहुँची बंगले में जहां; लेट रहे महाराज॥

मन में अति उचाट लगा, शय्या पर पड़े हुए हैं।
ध्यान प्रथम दो पायों में, और नेत्र चढ़े हुए हैं॥
मुरझा रहा बदन मस्तक, पर बल कुछ पड़े हुए हैं।
कुछ ऐसे कि रोगग्रस्त, कुछ मानो लड़े हुए हैं॥

दौड़

देख दासी घबराई, आज आपत्ति आई,
करूं क्या सोच रही है, पराधीन स्वप्ने।
सुख नाहीं, सत्य यह बात कही है।

दोहा

अनुमान नजर यह आ रहे, यदि बोली इस बार।
गुस्से में गुस्सा चढ़े, लेवें शीश उतार॥

क्षुधातुर शठ और तीसरा, जो गुस्से में भरा हुआ।
दस अन्धों में अन्धा चौथा, पंचम हो जो लड़ा हुआ॥

सब शिक्षक रागी के शत्रु, बुद्धिमानों का कहना है।
इसलिये इसे कुछ कह करके, क्यों कष्ट मौत का सहना है ॥

दोहा

यही सोच वहाँ से चली, पहुंची राणी पास।
मन्दोदरी कहने लगी, चेहरा देख उदास ॥

(मन्दोदरी का गाना)

अरी क्यों क्यों दासी क्या हालत है तेरी,
छवि तन की सब मुर्झाई हुई है।
खिलखिलाती हुई तू गई थी यहां से,
बता क्या किसी की सताई हुई है ॥१॥
बता कहाँ प्रीतम पता क्या तू लाई,
उदासी क्यों चेहरे पर छाई हुई है।
हो करके निर्भय कहो सब कहानी,
सुना सुनने की दिल में समाई हुई है ॥२॥

दोहा (चपला)

महारानी के हुक्म से, गई मैं थी जिस काज।
बंगले में थे पलंग पर, पड़े हुए महाराज ॥

(चपला का गाना)

बताऊँ मैं क्या तुमको वहां की कहानी,
खबर किस मर्ज के सताये हुए हैं ॥१॥
न था सेवक ही कोई देखा पास उनके,
खड़े सब बाहर घबराये हुए हैं ॥२॥
बिना नीर मछली तड़फते थे ऐसे,
कहीं अपने मन को फँसाये हुए हैं ॥३॥

कहाँ मेरी शक्ति करूं उनसे बातें,
चश्म दोनों मस्तक चढ़ाये हुए हैं ॥४॥

दोहा

दासी के जिस दम सुने, मन्दोदरी ने बैन ।
यान बैठ पति पास जा, लगी इस तरह कहन ॥
तल्लीन आप किस ध्यान में, हुए पति महाराज ।
मुझको भी बतलाइये, दुःख का कारण आज ॥

दुःख का कारण कहो आपके, मन में कौन फिकर है ।
दिल में अति उचाट उदासी, कैसी चेहरे पर है ॥
हाल आपका देख मेरे, इस दिल में नहीं सबर है ।
पल पल में शय्या पर पलटे, खाते इधर उधर हैं ॥

दौड़

छीन छवि हुई तुम्हारी, कौन दुःख ऐसा भारी,
भेद सब ही बतलाइये, अर्धाङ्गी से
प्राणनाथ ना बात छिपानी चाहिए ॥

दोहा

प्राण प्रिया मैं क्या कहूँ, अपने दुःख की बात ।
पराधीन तन मन हुआ, नींद नहीं दिन रात ॥

नींद नहीं दिन रात हो सके, तो यह दुःख मिटादे ।
देवरमण उद्यान अभी जा, सीता को समझादे ॥
यही रोग बस जनक सुता से, प्रेम औषधि लादे ।
या इस तन से छुटा, जीव नाता परभव पहुंचादे ॥

दौड़

तुम बनो सहायक मेरी, करो मत इसमें देरी,
तुम्हें यदि प्रेम हमारा । प्रथम करो यह काम,
नहीं बस यहां से करो किनारा ॥

दोहा

हैं हैं हैं महाराज ये, फेर ना लेना नाम ।
तीन खण्ड के ताज बन, क्या करते हो काम ॥

हे नाथ आप कुछ सोच करो, क्या नीच कर्म चित्त लाते हो ।
है निर्मल कुल ये कीर्ति धवल से, बट्टा आज लगाते हो ॥
यहाँ एक एक से बढ़ करके, राणी है आपके कमी नहीं ।
जो परनारी से राग करे, उसकी जड़ जग में जमी नहीं ॥
पाताल लंक खुस गई हाथ से, जिस दिन से यह लाये हो ।
नित्य शूर्पणखा रोती फिरती, उसका ना हित कर पाये हो ॥
खरदूषण चौदह हजार, खेचर जिनसे रण में हारे ।
यदि आ पहुंचे वे लंका में, कबहूं ना टरेंगे फिर टारे ॥
क्या लाभ उठाया बतलाइये, सुन्दर तन का क्या हाल हुआ ।
सूर्य की तरह चमकता था, वह काला आज निडाल हुआ ॥
परनारी विष बेल पिया जिसने, अपने घर बोई है ।
क्या राजपाट ऋद्धि सम्पत्ति, निश्चय सब उसने खोई है ॥

दोहा (रावण)

वाह वाह वाह बस पंडिता, रहने दे उपदेश ।
ढाई अक्षरी बात थी, खोले ग्रन्थ विशेष ॥

दोहा (मन्दोदरी)

प्राणनाथ यह आपको, दिया नहीं उपदेश ।
देखो तो इसमें नहीं, नीति का लवलेश ॥

हे नाथ ध्यान धर सुन लीजे, इक बात और बतलाती हूं ।
अविनय न कहीं आपकी हो, कहती कहती रुक जाती हूँ ॥
जिस देश या घर क्या नगरों में, सत्पुरुष सताये जाते हों ।
जहां मांस मद्य चोरी यारी, पतिव्रता नार सताते हों ॥
जिस जगह शील का लेश नहीं, उस जगह दरिद्रता वास करे ।
जहाँ मुनि सताये जाते हों तो, कुल का सत्यानाश करे ॥
कामाग्नि यदि शान्त न हो तो, राजकुमारी और वरो ।
हे नाथ हमारे कहने से तुम, इस व्याधि को दूर करो ॥

दोहा (रावण)

वस वस वस चल हट परे, रसना करले बन्द ।
ऐसे वचन विशेष का, यहां कौन सम्बन्ध ॥

हम चलते हैं पूर्व को तो, यह पश्चिम को जाती है ।
हम कहते हैं तू ऐसे कर, यह उल्टे गीत सुनाती है ॥
चल तू अपने रस्ते लग, क्यों मुझे सताने आई है ।
गुद्दी पीछे मति जिसकी, वह अक्ल बताने आई है ॥

दोहा (मन्दोदरी)

वार वार कहती पिया, पछतावोगे फेर ।
एक नार के वास्ते, कटें शूरमे ढेर ॥

हे नाथ जरा सी कांजी रत्न, पदार्थ पय का नाश करे ।
सिक्के की संगति से सोना, क्या गौरव की आश करे ।
विगड़े गति दुष्ट विचारों से, पद उच्च कुसंगति से विगड़े ।
ग्रन्थों में ऐसा लिखा हुआ, जगताज अनीति करे विगड़े ॥

दोहा (रावण)

समझ लिया हमने सभी, लाज विनय दई तार ।
गुरुणी वन कर आगई, करने को प्रचार ॥

चाहे सर्वस्व हो नष्ट मेरा, मुझको इस बात का ध्यान नहीं।
इक प्राण प्यारी सीता बिन, इस तन में बाकी जान नहीं॥
खरदूषण की बात ही क्या, चाहे सारा जग मारा जावे।
यह प्राण जायें तो जायं मगर, नहीं जनक सुता जाने पावे॥
जब सुर सुन्दर आदि विद्याधर, राजे मिलकर आये थे।
वह समय याद होगा तुमको, मैंने सब मार भगाये थे।
वैदेही तो एक ही है, वे कितनी राजकुमारी थीं।
और सहस्रांशु इन्द्र नरेश की, कैसी गति कर डाली थी॥

दोहा

क्या मेरा वह कर सकें, दुखिया बन के भील।
अष्टापद के सामने, कौन विचारी चील॥

बड़े-बड़े रण जीते हम एक, बबर सिंह वह बन्दर हैं।
दोनों को नाच नचाने में, हम भी तो गुरु कलन्दर है॥
क्यों समय नष्ट करती ज्यादाह, सब कुछ निस्सार ही बकती है।
हृदय में जिसने वास किया, अब निकल नहीं वह सकती है॥

दोहा

जो इच्छा मुझको कहो, दो सौ सौ धिक्कार।
पुण्य हमेशा जीव का, रहे नहीं इकसार॥

अनुमान हमारे में स्वामी, वह समय वही था बीत गया।
सब राजों को जो जीत गया, वह पुण्य आपका जीत गया।
वह काम तुम्हारा कुछ नीति के, अन्दर बहुता बाहिर था।
और पुण्योदय से सर्व जगत्, दृष्टि गोचर में कायर था॥

दोहा

इसमें तो प्रीतम कहीं, नीति का नहीं अंश।
गंज छिपे कैसे जहाँ, नहीं केश का वंश॥

किस कुल की वह वधू सिया, और किसकी राजदुलारी है।
राज्य महल के सभी सुखों पर, बांई ठोकर मारी है॥
जिन पिता वचन पूरा करने को, आपत्ति सिर धारी है।
हे नाथ हृदय में सोच करो, यह उसी पुरुष की नारी है॥

दोहा

भानु-पश्चिम को चढ़े, भूले अपनी राह।
सीता सत को ना तजे, पड़े लंक पर आह॥

किस लिये लंक में अय प्रीतम, बारूद लगाना चाहते हो।
क्यों गौरव हीन वंश को करके, दुर्गति बँध लगाते हो॥
जिस जगह उपद्रव होते हैं, समझो कि वहां का पुण्य घटे।
वह देश दुखी हो जाता है, जिस जगह पिया व्यभिचार वढ़े॥

दोहा

सुन करके व्याख्यान ये. जल बल हो गया ढेर।
भृकुटि सहित निडाल कर, बोला जैसे शेर॥
तू है कायर की सुता, बोल रही जिम श्वान।
अब यदि कुछ आगे कहा, लेऊं खेंच जबान॥

लेऊं रसना खींच किसलिये, तू मरना चाहती है।
चपर-चपर चल रही जीभ, सिर पर चढ़ती आती है॥
क्या चरित्र फैलाया और, हमको छलना चाहती है।
किस लिये बनी शत्रु मेरी, तू जला रही छाती है॥

दौड़

पेच क्या चला रही है, दुखी को सता रही है।
आई क्या प्रेम दिखाने मारूँ चाबुक चार,
अक्ल सारी आजाय ठिकाने॥

दोहा

या तो यहाँ से अलग हट, या कर यह दो बात ।
समझा दे जाकर सिया, या कर मेरी घात ॥

रावण का गाना

उसी के तीर का मारा बना बीमार बैठा हूँ ।
औषधि ना दई उसने बहुत सिर मार बैठा हूं ॥१॥
राज परिवार गौरव अथ प्रिया, सब जीते जी के हैं ।
किन्तु अब देखले, जीने से ही लाचार बैठा हूँ ॥२॥
बना यांचक मैं भिक्षा मांगता हूँ आज सीता की ।
सदारा सुन्द को क्या दूं, सभी कुछ हार बैठा हूँ ॥३॥
घुमेरी चढ़ रही सिर में, ना खाना पीना भाता है ।
उसी के नाम का गल में, मैं डाले हार बैठा हूँ ॥४॥
जमाने भर में ना देखी, मैं ऐसी संगदिल कोई ।
नर्म क्या गर्म जैसे तैसे, कर सब वार बैठा हूं ॥५॥
मेरे नजदीक तुम तो क्या, चाहे उजड़े बसे लंका ।
मैं केवल एक सीता का ही, पहरेदार बैठा हूँ ॥६॥
तेरी तकदीर ने राजा, तुझे धोखे में डाला है ।

[मन्दोदरी]

दमकता था जो लाली से, वह चेहरा आज काला है ॥१॥
भाव से तो बने अन्धे, किन्तु आँखें तो खुल्ली हैं ।
मोतिया बिन्द होने से, नहीं सूझे उजाला है ॥२॥
तुम्हारी शक्ति से गूञ्जता था, सदा आलम ।
बहेगा नाम अब दुनियाँ में, बन गंदा सा नाला है ॥३॥
आपके दर्श करने को, तरसती है सभी दुनियाँ ।
हाय देखेगी घृणा से, इसे नैनों की माला है ॥४॥

खैर मैं जाती हूं वहाँ पर, मगर मस्तक ठिनकता है।
पता नहीं आज होनी ने, यह क्या शस्त्र सम्भाला है ॥५॥

दोहा

इधर चली मन्दोदरी, देवरमण उद्यान ॥
उधर सिया श्री कर रही, अपने दुःख का गान ॥

आज सुनाऊँ कैसे, अपना किस को ये हाल।
कहाँ पिता माई, कहाँ भामंडल भाई।
आज विपदा के मांही, मेरे कोई नहीं नाल ॥
कहां प्रीतम प्यारे, कहां देवर हमारे,
आज सम्बन्धी सारे कोई पूछे ना हाल ॥२॥
कहना सासु का ना माना, अपने हठ को ही ठाना।
आज यह देश विराना, फिरते शत्रु ले भाल ॥३॥
पहले छूटी राजधानी, धूलि वन वन की छानी।
अब की कहूं क्या कहानी, बन गई बिल्कुल मुहाल ॥४॥
अशोक शोक मिटादे, अपना गुण दिखला दे।
मुझको कालिब से छुड़ादे, नहीं तो देऊँगी आल ॥५॥
रक्ता शोक कहाता, अपना नाम लजाता।
मुझको क्यों ना जलाता, डारूं बोलिन की भाल ॥६॥
'शुक्ल' ध्यान कवि का, शोभन कुल है रवि का।
छोड़ ख्याल सभी का, जपूं परमेष्ठी माल ॥७॥

दोहा

मूल मन्त्र सत्य शील जिस, हृदय लिया जमाय।
उस व्यक्ति से मनुष्य क्या, देवनपति थराय ॥

इधर लगी यह जाप जपन, उस तरफ मन्दोदरी आ पहुँची।
बात परस्पर करने की, नीति कुछ अन्तर में सोची॥

जब दृष्टि पड़ी मुखमण्डल पर, दाँतों में अंगुली दबाती है।
क्या कहूँ उपमा दुनियाँ में, कोई मुझे नजर नहीं आती है॥
यदि है तो कुछ, चन्द्रमा की, सो भी यहाँ लज्जा खाती है।
वोसंस्थान है झलरी का, यह सम चौरस कहाती है॥
उसमें तो कुछ भी सुगन्ध नहीं, इसमें शुभ खुशबू आती है।
वह कुछ ग्रहों का अधिपति है, यह जगदम्बा कहलाती है॥
वह गौरव पर चढ़े एक रोज ही, फिर नित्य राहु ढकता है।
यह सदा प्रकाशित रहती है, उल्टा नित्य प्रति गुण बढ़ता है॥
फिर उसे ग्रहण भी लगता है, दिन में शक्ति रवि मन्द करे।
पर इसका तेज एकसा, नित्य दिल में सब के आनन्द करे॥
है निश्चय वह भी एक रत्न, किन्तु उसमें कुछ स्याही है।
वह स्फटिक रत्नमयी हृदय, वाली देती दिखलाई है॥
वह कुमुदिनियों को सुखदाई, तो अन्य पंकज को दुःखदाई है।
मैं जान लिया आकृति से, सीता सबको सुखदाई है॥
धर्म रूप अनमोल मनुष्य तन, वैदेही ने पाया है।
वह अति तुच्छ निर्जर पति का, इक चन्द्र विमान कहाया है॥
यह सम्यग्धारी शील रत्न क्या, सब रत्नों की आगर है।
इसलिए साफ जाहिर चन्द्रमा, इसके नहीं बराबर है॥
उसमें तो अति श्वेतता है, यह लिए गुलाब की लाली है।
वह ज्ञान रहित एक जड़ वस्तु, यह चेतन ज्ञान उजाली है॥
उसका कुछ आदि अन्त नहीं, यह शान्त कभी हो जावेगी।
वह भ्रमण करेगा इसी तरह, यह मोक्षधाम को जावेगी॥

दोहा

रोना आता है मुझे, कहूं क्या उसे उचार।
आई हूं किस काम को, मुझको है धिक्कार॥

क्या अच्छा होता इसके, चरणों में अपना सिर धरती ।
इस धर्म रूप देवी की सेवा, कर आत्मा निर्मल करती ॥
हा फूट गई किस्मत मेरी, जो इसे सताने आई हूँ ।
क्या पता मुझे किस खोटी गति का, बन्ध लगाने आई हूं ॥
इस तरफ यह मरने को बैठी, तैयार उधर वह मरने को ।
इसलिए कोई तजवीज करूं, जो भी कुछ आई करने को ॥
समझाऊँ इसे यदि समझ गई, फिर तो सब कुछ बन सकता है ।
कम से कम उत्तर देने को, व्यवहार मार्ग बन सकता है ॥

दोहा

निश्चय ऐसा कर गई, राणी सीता पास ।
मिष्ट वचन कहने लगी, मन्द मंद कुछ भाष ॥
अहोभाग्य मेरे बहन, तेरे भी अहोभाग्य ।
आ परस्पर आज यह, तेरा मेरा राग ॥

पटराणी जी का ताज मिलेगा, तुमको खुशी सुनाती हूं ।
दिन रात करूंगी मैं सेवा, दासी बनकर यह चाहती हूँ ॥
जितनी हम हैं राणी, सब तेरी दासी कहलावेंगी ।
कर जोड़ सामने खड़ी रहें, जो भी हो हुक्म बजावेंगे ॥
अहोभाग्य तेरे सीता, दशकन्धर, जैसा पति मिला ।
वह तीन खंड का नाथ लंक में, स्वर्णमयी सब कोट किला ॥
क्या वर्णू शोभा महलों की, सारे रत्नों से जड़े हुए ।
और तीन खंड के सभी भूप, सेवक चरणों के बने हुए ॥
जो ऋद्धि सिद्धि सभी विराजे, पुण्य सितारा चढ़ा हुआ ।
थर्राती है दुनियाँ सारी, वह तेज सुलक्षण पड़ा हुआ ॥
वह सूक्ष्म कटि देख रावण की, बबर शेर शर्माता है ।
सुर नर कुबेर भी देख, मलूकाई को लज्जा खाता है ॥

उस रूप तेज को देख ईर्षा, रवि शशि को आती है ।
और नेत्र कटीलों की शोभा, मृगों का मान गलाती है ॥
नेत्रों में स्वभाविक सुरमाँ, रंग जैसा कपोत की गर्दन में ।
मतवाली छवि निराली है, वह आज अद्वितीय नर तन में ॥
फिर भी सरल स्वभावी ऐसे हैं, जो भी मर्जी कुछ करवालो ।
त्रिखंडी है पर मान नहीं, चाहे चरणों में सिर धरवालो ॥
यह लो कुछ खाना खालो, फिर चलेंगी दोनों महलों में ।
यह राजपाट सब कुछ तेरा, नित्य रहो बहन आवासों में ॥

छन्द

मन्दोदरी ने टहलनी को, कुछ इशारा कर दिया ॥
थाल भर पकवान का, दासी ने लाकर धर दिया ।
सब तरह के मिष्ट और, नमकीन खुशबूदार थे ॥
फल फूल मेवादिक वहाँ, पहले से ही तैयार थे ।
मौन बैठी थी सिया, पाँचों पदों में ध्यान था ॥
उसके लिए वह बाग क्या, इक शोक का स्थान था ।
सीता सती को बात ये, तलवार सी लगने लगी ॥
कुछ कर वदा मन्दोदरी, सीता को यों कहने लगी ।

दोहा

रहो सिया रस रंग में, भोगो सुख भरपूर ।
तू सबकी सरदार है, मैं चरणों की धूर ॥
बुद्धिमान् वह नर नारी जो, द्रव्य काल अनुसार चले ।
शुभ धन्य घड़ी धन्य भाग्य, सिया तुमको यह पूर्ण सुख मिले ॥
अब छोड़ो पिछला ख्याल, जरा ऊपर को मुख उठावो तो ।
स्वीकार विनती कर मेरी, फल फूल मिठाई खावो तो ॥

दोहा

कायर जन व दिल गिरें, औरों की ले ओट।
शीलवान दृढ़ शूरमा, करें लखों में चोट ॥
अनुचित्त इस वर्ताव का, सुनना भी महापाप।
गर्ज तर्ज बोली सिया, रह न सकी चुपचाप ॥
हट पीछे को दूतिया, विछा रहो क्या जाल।
कूदलालिका यहाँ तेरी, गलेना विल्कुल दाल ॥

गले ना तेरी दाल, किसलिये बातें बना रही है।
जली हुई को क्यों आकर, अब वृथा जला रही है ॥
मानिन्द विष्टा सम्मुख मेरे, जो कुछ दिखा रही है।
क्यों दुर्गति का बन्ध पापिनी, अपने लगा रही है ॥

दौड़

मिलाई कुदरत ने जोड़ी. तू अन्धी रावण कोढ़ी।
भांड था पहले आया, उसी तर्ज का, अय भांडन
तैंने भी राग सुनाया ॥

(सीता का गाना)

बड़ी निर्लज्ज तू ने, लाज सारी बेच खाई है।
रागान्धी तू कामान्धे की, क्या कीर्ति सुनाई है ॥१॥
चोर कामी है गौरव हीन, वो रावण दुराचारी।
किया सिंहनाद का धोखा, मुझे लाया चुराई है ॥२॥
तुझे मैं रांड करने को, यहां आई न मिलने को।
मिलाऊं धूल में लंका, करूँ सबकी सफाई है ॥३॥
पीठ यहां से दिखा जल्दी, सूरत तेरी ना भाती है।
दनादन देखना यहाँ पर, अभी देगा सुनाई है ॥४॥

दोहा

देख तेज उस सती का, विस्मित हुइ अपार ।
दशकन्धर आया तभी, उसी बाग मंझार ॥

सीता के सुन वचन मन्दोदरी, लज्जित होकर बैठ गई ।
चक्षु रोगी ने मानों निज, दृष्टि सूर्य से खींच लई ॥
कर पाँच पदों में ध्यान सिया ने, मौन वृत्ति मन लाई है ।
यह ध्यान देख दशकन्धर ने, फिर ऐसे बात चलाई है ॥

दोहा

अब दृष्टि ऊंची करो, छोड़ो आर्तध्यान ।
क्या सोचा फिर आपने, सत्य करो व्याख्यान ॥

अय सीता किसलिये मुझे तू, सता सता कर मार रही ।
यह मेरा रक्त बरसता है, जितने तू आँसू डार रही ॥
घाव लगा कर हृदय में, क्यों ऊपर नमक लगाती है ।
कर शान्त हृदय औषधि यही, क्यों नहीं किंचित मुस्काती है ॥
यह देख मन्दोदरी रानी भी, तेरी दासी है बनी हुई ।
और कैसा प्रेम दिखाया इसने, फिर भी तू है तनी हुई ॥
एक यही इच्छा मेरी हँसने का, दृश्य दिखा दे तू ।
हृदय की तप्त बुझे ऐसा कोई, शीतल वचन सुनादे तू ॥
यह दासी और मैं दास तेरा, बस और बता क्या चाहती है ।
सारांश सोच इन बातों का, फिर क्यों नहीं भोजन पाती है ॥
और बता क्या कहूं आसरा, इन प्राणों का तू ही तो है ।
राजपाट क्या महल कोष, इन सबकी मालिक तू ही तो है ॥

दोहा

देख ढीठ की ढीठता, बोली हो लाचार ।
वचन तीर सम भूप पर, बरसन लगे अपार ॥

ऐ मूढ़ कमलिनि दुनिया में, सूर्य के दर्शन चाहती है।
पर जुगनु चाहे हजार चढ़े, फिर भी नहीं दर्श दिखाती है ॥
और देख पुरुष के दर्शन को, लज्जावन्ती मुरझाती है।
शुद्ध कुलवन्ती परपुरुषों की, छाया से लज्जा खाती है ॥
जिस समय चढ़ेंगे राम रवि, लंका रजनी पै आकर के।
उस समय कमलिनी आँख मेरी, खुल जायेंगी स्वामी पा कर के ॥
वे प्रबलसिंह हैं रामलखन, तू कायर दुर्बुद्धि खर है।
क्या मान करे ये लंका तुझको, होने वाली यम घर है ॥
कुरीति तुम्हारे कुल में ये, प्रत्यक्ष आज दिखलाती है।
जो बहन तुम्हारी शूर्पणखा, वह पति दूसरा चाहती है ॥
व्याधि जो उसको लगी हुई, सो ही तुमको बीमारी है।
क्या नुस्खा वैद्य सभी, घर में कट जाये मर्ज तुम्हारी है ॥
क्या ठीक ऊंट की शादी में, खरदेव ने शङ्ख बजाया है।
आपस में ध्वनि रूप दोनों ने, मिलकर खूब सराहया है ॥
यह देख इशारा शुनी ने भी, सुरसांगीत उचारा है।
कौवों ने बांधा अलंकार, सब आकर राग सुधारा है ॥
यह सभी तुम्हारे पर घटता, आपस में सोच समझ लेवो।
जो काल बुलावा दे आये, पैयार चबीना कर लेवो ॥
आज नहीं तो कुछ दिन में, यह सिर भी उड़ने वाला है।
फिर सोचो एक चिता में, किस किस का सिर जुड़ने वाला है ॥

—※※※—

क्रुद्ध रावण

दोहा

सुना काट करता हुआ, सीता का व्याख्यान।
रावण को भी चढ़ गया, गुस्सा बे प्रमान ॥

पर शीलवान का मस्तक भी, कुछ जादू का सा होता है।
और बुन्दवा असली चन्दन का, तैजस शक्ति* को खोता है॥
दशकंधर ने लिया खैंच, शस्त्र और हाथों पर तोला।
भय दिखलाता हुआ सिया को, लंकापति ऐसे बोला॥

दोहा

बस बस बस अब चुप रहो, बोलो वचन सम्भाल।
दुष्ट शब्द कह कर वृथा, बजा रही क्यों गाल॥

अब याद रहे तू इस फन्दे से, निश्चय निकल नहीं सकती।
क्यों खाली गाल बजाती है, तू मुझको निगल नहीं सकती॥
हम जितनी करते नरमाई, तू उतनी सिर पर चढ़ती है।
हम हृदय से हित चाहते हैं, तू उलटी और अकड़ती है॥
यदि अबके अनुचित कहा तो, निश्चय धड़ से शीश उड़ा दूंगा।
जो आशा करके बैठी है, मिट्टी में उसे मिला दूंगा॥
बस बहुत सुनी मैंने तेरी, अब जल्दी मान वचन मेरा।
नहीं तो काल बली ने, अब तेरे सिर पर लाया डेरा॥

दोहा

कहते कहते भूप ने, शस्त्र लीना हाथ।
मन्दोदरी तब यूं लगी, कहन जोड़ कर हाथ॥

(मन्दोदरी का गाना)

त्रिखंडी नाथ यों ही क्रोध में आया न करें।
निर्बलों को प्रबल शक्ति दिखाया न करें॥१॥
तेज प्रतापी नहीं आप सा जग में कोई,
अपनी कृपा से इन्हें दूर हटाया न करें॥२॥

---

*तेजु लेश्य

दोऊ कर जोर के नम्र विनती यही है मेरी,
कभी निर्दोषों पै तलवार उठाया न करें ॥३॥
पति विरहिनी पतिव्रता विदेशिनी दुखिया,
शस्त्र अबला को दिखा पाप कमाया न करें ॥४॥
क्षत्रिय का धर्म ही नहीं स्त्री वध करने का,
"शुक्ल" कर्मों से डरो पाप कमाया न करें ॥५॥

दोहा (सीता)

समझ लिया मैंने सभी, है तू प्राणी नीच ।
फँसे चोरवत् म्यान से, शस्त्र दिखाया खींच ॥
ज्ञान शून्य तू हो रहा, बुद्धि महा मलीन ।
प्रकट वीरता हो गई, अय ढोंगी मति हीन ॥

धिक्कार तेरी शूरम्ताई, किस पै तलवार उठाई है ।
भगिनी भ्राता की कुदरत ने, जोड़ी क्या खूब बनाई है ॥
वह अन्य पुरुष को ले भागे, यह परनारी ले दौड़ता है ।
गीदड़ छिपकर खेले शिकार, और मूछें बहुत मरोडता है ॥
कायर पिंजरे में फंसी शेरनी, को तलवार दिखाता है ।
क्या यही शौर्य शक्ति तुझ में, जिस पर गाल बजाता है ॥
इस मेरी अमर आत्मा को, तलवार काट नहीं सकती है ।
देवेन्द्र कुछ नहीं कर सकता, क्या तुच्छ तुम्हारी शक्ति है ॥
इस कलधौत की लंका पर, जूती की ठोकर लाती हूँ ।
यह शक्ति एक शील की है, जिससे उत्साह बढ़ाती हूँ ॥
सर्वज्ञ देव ने धर्म बली पै, सिर देना बतलाया है ।
और धन्य घड़ी धन्य भाग्य, आज यह समय अपूर्व पाया है ॥
उपकार आपका मानूंगी, मुझको परभव पहुंचा रावण ।
तलवार जो हाथ में तेरे है, ग्रीवा पै शीघ्र चला रावण ॥

पहले इसे रक्त पिला मेरा, फिर खून आपका पीवेगी।
जब तक दुनिया में जैन धर्म, बस कीर्ति मेरी जीवेगी॥
फिर रक्तपात मेरा शोभन सच्चा इतिहास कहायेगा।
यह बने सहायक सतियों का, मम हृदय कमल खिल जायेगा।
अब छुड़ा मुझे दुख से रावण, हेतु बन पहुंचूं स्वर्गों में।
जहाँ अवधि ज्ञान से देखूंगी, तू दुख भोगेगा नरकों में॥
वह रवि चला अस्ताचल को, तू भी अब चलने वाला है।
क्या मान करे इस राज्य का, सब कुछ धूल में मिलने वाला है॥
सच्ची सतवंती कुलवंती, लिये धर्म के जान गमाती है।
यदि नल कुबेर भी चल आवें, उनको भी ठोकर लाती है॥

दोहा

मौन धार रावण खड़ा, दिल में करे विचार।
मरने को तैयार है, पड़े किस तरह पार॥

अधिक और कुछ कहा इसे तो, अपने प्राण गवांवेगी।
इसलिये समय देना चाहिये, अपने मन को समझावेगी॥
यह सहज सहज कम होवेगा, क्योंकि पिछला मोह ताजा है।
यह मन अन्तिम गिर जावेगा, जो इसके तन का राजा है॥

—***—

नम्र रावण

दोहा

फिर बोला बस अय सिया, गुस्सा दूर निवार।
तुम तो ऐसे हो गई, जैसे लाल अनार॥

किस कारण तुमने भय माना, यह सब ऊपर की बातें हैं।
यदि हुआ कष्ट इन बातों से, तो क्षमा आपसे चाहते हैं॥

नरम गर्म वचनों से तुमको, वार वार समझाता हूं ।
इसका भी तो एक कारण है, सो तुमको आज सुनाता हूं ॥

दोहा

मैं एक समय मुनिराज से, लई प्रतिज्ञा धार ।
जो मुझको चाहे नहीं, त्यागी वो पर नार ॥

जो हृदय से नहीं चाहे, उस पर नारी का त्याग मुझे ।
वस केवल नियम रुकावट, करने वाला है मैं कहूं तुझे ॥
इस वात पै आप विचार करें, कुछ समय और भी देते हैं ।
इस पत्थर दिल को मोम वना, हम तेरे हित की कहते हैं ॥

दोहा (कवि)

अस्ताचल भानु गया, लंका में लंकेश
दासी जन को कर गया, चलते यह उपदेश ॥

—०※०—

सीता को परिसह

सुनो सभी तुम दासियों, जरा लगा कर कान ।
यदि समझाई तुम ने सिया, पावो की सम्मान ॥

अयि त्रिजटा सव में चतुर, अनुभवी तर्क अवतार है तू ।
यह काम अवश्य करना होगा, क्योंकि सवकी सरदार है तू ॥
जैसे भी हो सके सिया को, अपने पंजो में लावो ।
नरमाई या गरमाई से भय, महाभयानक दिखलावो ॥
सव यन्त्र मन्त्र टूणे टवे, सिद्ध मन्त्र कोई चलाओ तुम ।
मैं आज्ञा तुम को देता हूं, सीता को खूब सतावो तुम ॥

इस काम में आप सफल होंगी तो, मन चिन्तन धन पावोगी ।
और दासीपन भी करूं दूर, स्वतन्त्र आनन्द उड़ावोगी ॥

दोहा

समझा कर सब बात यह, पहुंचा महल मंझार ।
दासी भी करने लगी, अब अपना उपचार ॥

कोई नम्र मोम की तरह बनी, कोई तेजी लगी दिखाने को ।
कोई लगी भूतनी सी नचने, कोई मन्त्र लगी चलाने को ॥
कोई दाँत फाड़ अट अट हँसती, लगी कोई उपहास उड़ाने को ।
यन्त्र मंत्र में लगी कोई, और कोई विषय जगाने को ॥

दोहा

मूल मन्त्र सत्यशीलता, जिस पर हो हथियार ।
उस पर कुछ चलता नहीं, करलो यत्न हजार ॥

अज्ञानी कायर भर्मी भय, इनका अधिक मानते हैं ।
वह दुनियां से नहीं भय खाते, जो जिनवाणी को जानते हैं ॥
कर पांच पदों में ध्यान सिया, निज कर्मों को विचारती है ।
श्री राम के प्रेम की लहर उठे, तब मस्तक पर कर मारती है ॥

दोहा

जनक सुता को इस समय, दुःख मेरु आकार ॥
कर्मों का यूं कर रही, सीता निजी विचार ॥

गाना (सीता)

सभी जन फेरलें आंखें कि, जब तकदीर फिरती है ।
न धीरज धर्म ही होता यह, जब वेपीर फिरती है ॥१॥
घृणा हो विश्व भर को, मृत्यु भी तो दूर रहती है ॥
खबर ना काल के सिर पर भी, क्या शमशीर फिरती है ॥२॥

कोई कहता हमें कि, तुम हमारे संग में चल दो।
किन्तु हृदय हमारे, वात ये क्यों तीर चुभती है ॥४॥
कर्म बेशक सताते हैं, मगर सन्तोप है इतना।
यह चेतन आत्मा मेरी प्रवल मशहूर फिरती है ॥४॥
कर्म मैंने किये पैदा, इन्हें अब तोड़ना भी है।
'शुक्ल' सीता कर्म का, करती चकनाचूर फिरती ॥५॥

दोहा

सीता के सन्नाम की सुनी विभीषण वात।
सत्यवादी पहुंचा वहीं, होते ही प्रभात ॥
था ज्ञान विभीषण को सभी, है यह सीता नार।
फिर भी यूं कहने लगा, वचन अति सुखकार ॥
कहो वहिन तुम कौन हो, कैसा आर्त ध्यान।
कौन यहां लाया तुम्हें, करो सभी व्याख्यान ॥

किस की हो कुलवधू और, किसकी तुम राज दुलारी हो।
और अतुल कष्ट क्या पड़ा आप पर, कौन भूप की नारी हो ॥
तुम साफ साफ कह दो सब ही, इसमें क्या वात शर्म की है।
कुछ वनूं सहायक मैं तेरा, तू मेरी वहिन धर्म की है ॥

दोहा

अमृत झरते जब सुने, सत्य पुरुष के वैन।
जो भी कुछ वीतक हुआ, लगी इस तरह कहन ॥
क्या कहदूं मैं कौन हूं, क्या वतलाऊं हाल।
कौन सहायक यहां मेरा, जो काटे दुःखजाल ॥

क्या वतलाऊं अपना भाई, तुमको मैं कौन कहां की हूं।
जब थी तब तो मैं थी किन्तु, अब यहां की हूं न वहां की हूं ॥

परिवर्त्तनशील संसार सभी, सर्वज्ञ देव फरमाया है।
जो भी कुछ पूर्व कर्म किया, मैंने उसका फल पाया है॥
मैं जनक भूप की पुत्री हूं, भामण्डल मेरा भाई है।
दशरथ नृप की कुलवधू, नाम सिया मात विदेहा माई है॥
लक्ष्मण जी देवर मेरे, श्री रामचन्द्र को व्याही हूं।
वनवास में साथ रघुपति की, मैं सेवा करने आई हूं॥

दोहा

दण्डकारण्य के गिरी में निश्चल ठहरे आन।
आगे भी सुन लो जरा, इधर लगा कर कान॥

जहां करते करते भ्रमण दूर, जा निकले लक्ष्मण उस वन में।
थी वंश वृन्द में लटक रही, तलवार देख हुए खुश मन में॥
वट वृक्ष गहन द्रुम छाया थी, जहां नजर नहीं कुछ आया था।
परीक्षा कारण वंशजा में, खड्ग अनुज ने वहाया था॥

दोहा

विद्या था वहां साधता, शूर्पणखा का लाल।
सिर नीचे था लटकता, पांव बंधे थे वट डाल॥

वहां वंश जाल के सहित कटा, शम्बुक का सिर पड़ा नजर।
खेद किया लक्ष्मण जी ने, निर्दोष मरा कोई राजकुंवर॥
जो बीता वहां लक्ष्मण जी ने श्री राम को आकर बतलाया।
जब सुना हाल करुणा सागर को, लक्ष्मण पर गुस्सा आया॥

दोहा

रघुदिनेश कुल मुकुट ने, दी लक्ष्मण को फटकार।
खेद प्रकट करते हुए, बोले कर्मावतार॥

बिना विचारे किया काम, तुमने अति ही नादानी का।
निरपराधी विद्या साधक, का शीश उतारा प्राणी का॥

खेद प्रकट किया श्री राम ने, और कहो क्या करना था।
कारण वन गये श्री लक्ष्मण जी मरने वाले ने मरना था॥

दोहा

ऐसी बातें कर रहे, थे वह दोनों वीर।
शूर्पणखा आई इधर, वंशजाल के तीर॥

यह तो मुझको भी ज्ञान नहीं, क्या किया वहां पर जा करके।
पर देख अनुज के चरण चिन्ह, गई पास हमारे आकर के॥
वह रूप देख श्री राम का वश, मोह काम राग में लीन हुई।
सब प्रेम भूल गई पुत्र का, जब बुद्धि महा मलीन हुई॥

दोहा

जो भी कुछ उसने कहा, मन घड़ सभी असत्य।
सुनते ही श्री राम जी, समझे जो था तथ्य॥
बोली विद्याधर कोई, ले गया मुझे चुराय।
देख रूप मोहित हुआ, और दूसरा आय॥

दोनों विद्याधर मरे परस्पर, इसी रूप पै लड़ करके।
अतिरिक्त मेरे संसार में, और नहीं कोई भी बढ़ करके॥
फिर करी प्रार्थना विवाह करन की, राम लखन को चाह करके।
स्वीकार किया नहीं दोनों ने, फटकार दई धमका करके॥

दोहा

पूरी ना उसकी हुई, मन की चाही आश।
गुस्से में भर कर गई, खरदूषण के पास॥

खरदूषण त्रिशिरा आदिक, दल बल ले वन में आये थे।
इस तरफ अनुज भी धनुष बाण, ले कर में सम्मुख धाये थे॥

फिर कहा राम ने कष्ट पड़े तो, भाई मुझे बुला लेना।
संकेत शब्द सिंहनाद मेरे, कानों तक जरा पहुँचा देना ॥

दोहा

शूर्पणखा ने बात सब, कही रावण को आन।
जाल बिछाया इन्होंने, लिया सभी अब जान ॥

संग्राम ओर छिप करके कहीं, रावण ने था सिंहनाद दिया।
इसी समय चल दिये लखन को, करन सहाई राम पिया ॥
इस दुष्ट दुराचारी ने फिर, खेला शिकार मुझ अबला का।
कुदरत ही सर्वस्व हर लेगी, ऐसे दुर्भागी कंगला का ॥

दोहा

धर्म बिना यहाँ कौन है, मेरा लंका मांय।
बात न कोई पूछता, जो देता दुख आय ॥

जिस जगह दुखी को दुख मिलता, वह देश दुखी हो जाता है
करुणा दिल में न रहे तो, प्राणी जन्म जन्म दुख पाता है ॥
ईर्ष्या रूपी जहाँ पवन चले, और द्वेषानल जहाँ जगती है।
वहाँ की प्रजाएं सुख तो क्या, खाने से भी कर मलती है ॥
समवेदना सत्य एकता और, जहाँ प्रेम का नाम निशान नहीं।
सद्ज्ञान धर्म प्रचार लिये, जहाँ करते हो कुछ दान नहीं ॥
जो काम समाज का करते हों, उनकी इज्जत चाहते न हों।
वह नष्ट भ्रष्ट हो जाते जो, औरों को अपनाते ना हों ॥
जो स्वार्थ में होकर अन्धे, अन्याय रात दिन करते हैं।
वह स्याही अपने मुख पर, मलकर अंत नरक दुख भरते हैं ॥
कहने करने में है फरेब, लेना देना सब खोटा है।
वहाँ पर कहिए सुख प्रेम कहाँ, जहाँ पेट भरन में टोटा है ॥

गुरुजन में भक्ति ना हो, वद श्रेष्ठों की पहिचान नहीं !
चोरी यारी जहाँ करते हों, पर नारी मात समान नहीं ॥
विश्वास न जिनको आपस में, सन्तोष कान मर्यादा नहीं ।
भूपाल स्वयं अन्याय करे, होता सब कुछ बर्बाद वहीं ॥

दोहा

प्रत्यक्ष आज यह लक में, घटती सारी बात ।
आने वाली है यहाँ, महा दुखों की रात ॥

मैं नारी नहीं नागिनी हूँ, रावण की मौत निशानी हूँ ।
या यों कहिये दुष्कर्त्तव्यों के पीलन वाली घानी हूँ ॥
जैसे भी होगा वैसे मैं, अपना धर्म बचाऊंगी ।
नहीं अन्तिम यह तो होगा ही, इस तन की बलि चढ़ाऊंगी ॥
यहाँ तुमने तो कुछ पूछा भी, और कौन पूछने वाला है ।
अब निश्चय मुझको हुआ, लंक से पुण्य रूसने वाला है ॥
पूछा तो हमने बतलाया, और श्रेष्ठ पुरुष जाना तुमको ।
इक धर्म सहायक है सबका, यह भी विश्वास हुआ मुझको ॥

दोहा

वीर विभीषण ने सुना, सीता का व्याख्यान ।
मीठे स्वर से इस तरह, बोला खोल जबान ॥

गाना

कर्म रेखा है अमिटे, कैसे मिटाये कोई ।
भाग्य चक्र से कहाँ, भाग के जाये कोई ॥१॥
सर्वस्व लगा जिसके लिये गौरव से लाये घर में ।
आज उस घर में उसे कैसे टिकाये कोई ॥२॥

शय्या फूलों की थी कल, सुख के साधन थे अतुल।
आज वन खण्ड तड़फ, वक्त विताये कोई ॥३॥
जो जगदम्बा कहलाती थी कल, आज वह दुख में फंसी।
धैर्य बंधाने के लिये, पास न आवे कोई ॥४॥
पुण्य अपकर्प में "शुक्ल" आँख चुरावें सब ही।
कर्म का मारा व्यथा, किसको सुनाये कोई ॥५॥

दोहा

बुरा किया दशकन्धर ने, लाया तुम्हें चुराय।
अच्छा मैं जाकर अभी, देऊंगा समझाय ॥
धन्य तेरे मां वाप को, धन्य तुम्हें सौ वार।
होना भी यह चाहिये, धर्म तत्व जग सार ॥

जो यथातथ्य पतिव्रत धर्म, तूने क्षत्राणी पाला है।
शील रत्न जैसा दुनियाँ में, और ना कोई उजाला है ॥
पति के हित राजमहल छोड़ा, वन में आ कष्ट सहे भारी।
तीन खण्ड की ऋद्धि पर भी, तूने है ठोकर मारी ॥
प्रवल सिंह के पंजे में, फंस करके भी निर्भय रहना।
विना पता पति से विरह हुआ, और आपत्ति सिर पर सहना ॥
यहाँ दुख समूह में पड़कर भी, तुमने समता रस पिया है।
पूरण होंगी सब आशाएं, जो भी दृढ़ निश्चय किया है ॥
हे जनक सुता अब धीर धरो, क्यों इतनी व्याकुल होती हो।
हृदय से सहायक वनूं तेरा, अब क्यों अपना तन खोती हो ॥
सब अर्पण करें धर्म पे, जिसके दिल में यही समाई है।
फिर उसको कौन असाध्य चीज, इस दुनिया में वतलाई है ॥
महा कष्ट सदा शुभ ज्ञान दर्श, चारित्री पर ही पड़ते हैं।
वह प्राण तलक अर्पण करते, पर दुनिया से नहीं डरते हैं ॥

अब थोड़ा कष्ट रहा बाकी, अपने मन का सन्ताप हरो।
सर्वज्ञ देव का लो शरणा, और पांच पदों का जाप करो॥
पहरे पर जो हैं तेरे यहां, उन सबको समझा जाता हूं।
कोई ना कष्ट तुम्हें देगा, सुमति पर उन्हें लगाता हूं॥

छन्द

विश्वास दे वहां से चला, दासी खड़ी सिर नाय के।
प्रेम से सबको विभीषण ने, कहा समझाय के॥

दोहा

त्रिजटा आदि सभी, छोटी बड़ी विशेष।
आगे करना काम वह, जैसा दूं उपदेश॥

तुम भी सोचो अपने मन में, प्रथम तो यह परनारी है।
फिर सती धर्म के लिये महा, ऋद्धि पर ठोकर मारी है॥
यदि आज नहीं तो काल यहां, पर झगड़ा होने वाला है।
जो सीता को दुःख देवेगा, उसका होना मुंह काला है॥
कर्त्तव्य सभी का मुख्य यही, दुखिया को सुख देना चाहिये।
फिर देखो कैसी सती हमें, यह भी तो गुण लेना चाहिये॥

बस यही हमारा कहना है, तुम लगो सिया की सेवा में।
अज्ञान दूर कर दोगी तो, बस हाथ रहेगा मेवा में॥
दशकन्धर की आज्ञा को भी, निश्चय पालन करना चाहिये।
पर योग्य अयोग्य कार्य का तो, ध्यान सदा धरना चाहिये॥
नीति की रक्षा करने में, प्राणों तक दे देना चाहिये।
अन्याय अधर्म कार्य में, कोई भाग नहीं लेना चाहिये॥
महाराजों की यही औषधि है, बस हाँ जी हाँ जी कर देना।
और समय देख इन लोगों का, कुछ बातों से घर भर देना॥

अब जावो निज निज काम लगो, बस यही हमारा कहना है।
परभव संग शोभन धर्म चले, वाकी सब यहां पर रहना है॥

दोहा

बात विभीषण की सभी, हृदय गई समाय।
अमल वही होने लगा, कुमति दई भगाय॥
क्षमा याचने को गई, सब ही सीता पास।
जनक सुता निज कर्म को, बोली ऐसे भाप॥

(सीताजी का गाना)

जा जा निर्दयी कर्म अबलाओं पै, बल आजमाया न कर।
जन्म से दुखिया सदा, उन पै बाण चलाया न कर॥
दुःख शोक के बादल बरस रहे, हम आजादी को तरस रहे।
किसी अन्य का दोष नहीं है कर्म, दुखियों को और दुखाया न कर।
बदनसीबों के हम चक्र में फँसी,. दुर्गम निर्जन वन में धँसी॥
निर्दोष दुखियों को निठुर, तेग की धार दिखाया न कर॥
अब ये और बुरे दिन आये हैं, श्रीराम ने आहे भुलाये हैं।
आहार है रंजो गम ही सदा, जी जलों को अधिक जलाया न कर॥
सुख वृक्ष का देखा मूल नहीं, लखा स्वप्नमात्र फल फूल नहीं।
बस क्षमा ही कर अय कर्म अरी, विकराल स्वरूप दिखाया न कर॥

विभीषण की शिक्षा

दोहा

वीर विभीषण चल दिया, पहुंचा लंका जाय।
रावण को कहने लगा, ऐसे मस्तक नाय॥
कीर्ति धवल कुल मणि मुकुट अय भाई रणधीर।
नम्र निवेदन आपसे, करने आया वीर॥

आज तलक यह वंश हमारा, भाई शुद्ध कहाता है।
कुछ दाग लगाया भगिनी ने, तू बड्डा आज लगाता है॥

हो तीन खण्ड के नाथ आप, कोई भी तेरे समान नहीं।
यह गौरव नष्ट-भ्रष्ट हो रहा, क्या इस पर आया ध्यान नहीं॥

क्यों क्षत्रापन को धूर मिलाया, सीता नार चुरा करके।
शुभ धर्म वृक्ष की जड़ काटी, यह खोटा कर्म कमा करके॥

सुख सम्पत्ति रूपी वृक्ष लिये, पैनी परनार कुल्हाड़ी है।
यह नारी नहीं नागिनी या, समझें विष बुझी कटारी है॥

जो भी कुछ तेरी इच्छा है, वह कभी नहीं फल लावेगी।
गौरव राज्य कोष शक्ति क्या, सब कुछ धूल बनावेगी॥

वह महा पवित्र महिला है, नहीं हवा तलक आने देगी।
न्यौछावर कर देगी तन को, नहीं गौरव को जाने देगी॥

दोहा

भानु पश्चिम को चढ़े, भूले अपनी राह।
सीता तजे ना शील को, देवे प्राण गँवाय॥

काछी माछी की नहीं पुत्री, वह जनक सुता क्षत्राणी है।
कुलवधू श्रेष्ठ दशरथ नृप की, श्री रामचन्द्र की नारी है॥

पाताल लंक को छीन लिया, खरदूषण और दल को मारा।
हैं महाबली श्री राम लखन, संग वीर विराध योद्धा भारा॥

वह किष्किन्धा में आ पहुंचे, यहां आने में कुछ देर नहीं।
प्रभात हुई तो भानु चढ़ने में, विलम्ब कुछ फेर नहीं॥
जिसकी नारी यहां बैठी है, उनको बतलाइये चैन कहाँ।
सूर्य वंशी कहलाते हैं, ऐसे अपमान का सहन कहाँ॥

दोहा

अच्छा है कुव्यसन के सिर पर डारो धूर।
यही विनती आपके, चरण कमल में भूर॥

इस एक नार के पीछे क्यों, शत्रु की शक्ति बढ़ा रहे।
सुग्रीव भी उनके साथ मिला, क्यों अपनी ताकत घटा रहे॥
अन्तिम यह नम्र निवेदन है, कि सीता को वापस कर दो।
यदि आप नहीं जाते तो यह, सब भार मेरे सिर पर धर दो।

दोहा

सहसा तेजी आ गई, सुन कर यह व्याख्यान।
दशकन्धर कहने लगा, मस्तक त्यौरी तान॥
बस बस बस अब मौन हो, करो जरा आराम।
जनक सुता वापिस करो, फेर न लेना नाम॥

जितना समय लिया मेरा सब तूने निष्फल खोया है।
किन बातों में यह बात कही, जो कहा सभी कुछ रोया है॥
क्या अच्छा होता कहीं शूद्र, वैश्य के यहां जन्म लेता।
कोई देता कष्ट तुझे तो मेरी, आन के यहां शरण गहता॥

दोहा

क्षत्राणी का दूध भी, खोया सब नादान।
शृगालों से डरने लगा, होकर सिंह महान्॥

प्रथम तो यह बात यही, वस्तु नहीं छोड़ा करते हैं।
तन धन चाहे न्यौछावर हो, नहीं बात को मोड़ा करते हैं।
और छल माया प्रपंच सभी, होती नीति महाराजों की।
फिर बात तीसरी जो अच्छी, वस्तु होती सिरताजों की॥

दोहा

रत्न मिला चिंतामणि, पुण्ययोग से आन।
इसे छोड़ कर क्या कहो, वन जाऊं अनजान ॥

आज नहीं तो कल सिया, अपने मन को समझावेगी।
क्या शक्ति होती अबला की, कब तक निज पाँव जमावेगी।
जो वहम तुम्हारा झगड़े का, सो भी निर्मूल निकम्मा है ॥
सब तीन खण्ड की ला रक्खी, इस रावण ने परिकम्मा है ॥

दोहा

आज नही संसार में, दिखलावे दो हाथ।
दशकन्धर के नाम से, थरथर कांपे गात ॥

मैं बड़े-बड़े दल मोड़े क्या वह, रंक यहाँ कर सकते हैं।
हाँ इतनी उन्हें स्वतन्त्रता यहाँ, आकर के मर सकते हैं ॥
ना सेना कोई विमान पास, ना दारू गोला शस्त्र है।
अस्त्रों का तो वहाँ नाम कहाँ, मामूली धनवा वस्त्र है ॥
फिर क्या शक्ति सुग्रीव की है, जो उनके संग मिल जायेगा।
यदि मिल भी गया तो भी क्या है, वह भी निज प्राण गवांवेगा।
जो रण की चोटें सहें शूरमे, वही जागीरी पावेंगे ॥
यदि तुझ जैसे कायर जीये, तो भी क्या धूल उड़ायेंगे।
अब याद रहे ऐसी बातें, मेरे संग फेर नहीं करना ॥
जो होगा देखा जावेगा, तू हृदय फिक्र नहीं धरना ॥
यह जानकी जानकी साथिन है इसमें ना फरक जरा होगा।
जायेगी जनक सुता तब जब, रावण का नाम मरा होगा ॥

दोहा (विभीषण)

मैंने कर्त्तव्य पालन किया आगे तेरा ध्यान।
कहते हैं अनुमान सब आ पहुंचा अवसान ॥

विभीषण का गाना

समझले अब भी नहीं, सिर धुन के पछतायेगा तू।
श्रेष्ठा चारित्र को सता कर, नरक में जायेगा तू ॥१॥
स्वल्प आयु के लिये बदनाम क्यों होने लगा।
मनुष्य तन खोकर कुगति में, ठोकरें खायेगा तू ॥२॥
धूल में गौरव मिलाता, आज खोटे कर्म से।
संसार सागर का सदा, महमान कहलायेगा तू ॥३॥
चक्री तीर्थंकर व गणधर, काल ने खाये सभी।
राज लक्ष्मी छोड़ लंका, यमपुरी पायेगा तू ॥४॥
जैसी करनी वैसी भरनी, दृष्टान्त यह प्रसिद्ध है।
जैसा बोया बीज तूने, वैसा फल पायेगा तू ॥५॥
हैं तेरे यदि कर्म खोटे, तो "शुक्ल" फिर क्या करे।
इस कर्म खोटे का फल, ये शीश कटवायेगा तू ॥६॥

दोहा (रावण)

क्यों मेरा शत्रु बना, भाई होकर ढीठ।
मैं तेरी सुनता नहीं, दिखा यहाँ से पीठ ॥

दिखा यहाँ से पीठ जल्द, क्यों मुझको सता रहा है।
बना नपुंसक आप, पाठ हमको वही पढ़ा रहा है ॥
मिला-मिला करके समास, विद्वत्ता जता रहा है।
एक नहीं मानूं तेरी, क्यों बातें बना रहा है ॥

दौड़

क्षमा मुझको बतलाइये, आप बस चले जाइये।
नहीं सुनना चाहता हूं, यदि नहीं तुम जाते तो मैं
आप चला जाता हूं।

दोहा

दशकन्धर फौरन उठा, हुआ चलने को तैयार ।
रोक विभीषण ने लिया, लम्बी भुजा पसार ॥

रंग ढंग सब देख कर, हुआ मुझे विश्वास ।
होनी ने अब लंका पर, किया आन कर वास ॥

जो मर्जी सो करें आप, शिक्षाप्रद वचन हमारा है ।
मर्जी रखें भेजें सीता को, जैसा ख्याल तुम्हारा है ॥
मन में सोच विचार करो, अन्तिम यह नम्र निवेदन है ।
अब चलते हैं इस लिये कहा, कि आपस में संवेदन है ॥

दोहा

सत्य पुरुष वहाँ से चला, पहुँचा निज स्थान ।
रावण ने त्रिजटा को, कहा इस तरह आन ॥
सीता को अय त्रिजटा, करवाओ नित सैर ।
प्रकृति के सन्मुख लगें, धर्म कर्म सब जहर ॥

सब केलि गृहे क्या अन्तरोदक, वह रत्नों के घर दिखलाओ ।
जिस तरह सिया का दिल पलटे, वह दृश्य महाशर दिखलाओ ॥
आदर्श जहां आकर्षण हों, ऐसे धामों पर ले जाओ ।
मरना है सबको एक रोज, बुद्धि का परिचय दे जाओ ॥

दोहा

स्वीकार वचन करके चली, पहुँची सीता पास ।
जनक सुता के सामने, किया प्रेम से भाष ॥
जनक सुता तेरा हुआ: अद्भुत कृश शरीर ।
दिल में दुःख मेरे बढ़े, देख तुम्हारी पीर ॥

इसलिये चलो कुछ सैर कराऊं, स्वास्थ्य ठीक हो जावेगा ।
जलवायु के परिवर्त्तन से, कुछ खून भी दौरा पायेगा ॥
ऐसे नित प्रति करने कारण. दुबलापन नहीं रहने का ।
मन की प्रसन्नता होने से, नेत्रों से जल नहीं बहने का ॥

दोहा

प्रातः और सायं समय, रहो नित्य तैयार ।
देखो क्या क्या दृश्य है, लंका द्वीप मंझार ॥

कहीं केलि गृहे कहीं अन्तरोदक, भवनों में हीरे जड़े हुए ।
नन्दन वन सम जैसा अद्भुत, फल फूल श्री से भरे हुए ॥
कहीं जल झरनों से गिरता है, और हँसों का कुछ पार नहीं ।
कोयल पंचम स्वर बोल रही, मृगों की फिरे कतार कहीं ॥
चहुं ओर से है शोभाशाली, शुभ दृश्य बाग का बना हुआ ।
सब ऋतुओं के फल-फूल खिले, हैं जाल सामने तना हुआ ॥
खेल खेलकर कहीं बालक जन, दिल अपना बहलाते हैं ।
अमित शक्ति सौन्दय पाकर, सुखप्रद स्वास्थ्य बढ़ाते हैं ॥
कोई घूम रहा एकान्त बैठ, कोई विद्या अध्ययन में लगा हुआ ।
और अपना श्वास पकाने को, कोई फिरे बाग में भगा हुआ ॥
देख देख जनता इनको, मन फूली नहीं समाती है ।
पर वैदेही श्रीराम बिना, कुछ भी नहीं सुनना चाहती है ॥
क्या सारा वृतान्त कहें, दासी समझा कर हार गई ।
और अपनी सब चालाकी के, औजार वहाँ पर हार गई ॥

दोहा

हँस सरोवर ना तजे, तजे न मणि भुजंग ।
सती तजे ना शील को, तज देवे निज अंग ॥

उच्च भाव लख सती के, त्रिजटा हुई हैरान ।
अपने दुष्कर्तव्य पर, आंसू लगी वहान ॥

चरणों में मस्तक डाल दिया, रो रो कर क्षमा मांगती है ।
शुभ कर्मोदय से प्राणी की, यों शोभन दशा जागती है ॥
स्पर्श लोहे का हेम करे, पर निज दर्जा नहीं देता है ।
पर महापुरुष महा पतितों को, भी अपने सम कर लेता है ॥
बोली दुनिया में यही एक, परतन्त्रता बीमारी है ।
इस रहस्य को जिसने समझ लिया, निर्वाण का वह अधिकारी है ॥
इस लंका में हे जनक सुता, तू मुझको तारन आई है ।
सर्वस्व समर्पण सेवा में, करदूं मन यही समाई है ॥
अब तो रावण का बातों से, मुझको घर भरना होगा ।
अन्याय में जो कोई लीन होवे, तो अन्तिम सिर धुनना होगा ॥
व्यवहार में दासी रावण की, निश्चय में आपकी बन ही चुकी ।
अय जनक सुता क्या बतलाऊं, बस आपके प्रेम में सन ही चुकी ॥

दोहा

नमस्कार कर त्रिजटा, पहुंची रावण पास ।
पटुताई से भाव फिर, लगी करन प्रकाश ॥
तडित केशकुल मणि मुकुट, दुखी जन के सिरताज ।
हुक्म आपका सब तरह, बजा दिया महराज ॥

किन्तु अभी तो इन फूलों में, महक का नामो निशान नहीं ।
यदि ज्यादह तङ्ग किया सीता को, आपकी इसमें शान नहीं ॥
नाम सैर का सुनते ही, प्राणों को तजना चाहती है ।
जिस दिन से लाये उस दिन से, ना पीती ना कुछ खाती है ॥
मेरी तो अर्ज यही चरणों में; अभी ना कुछ कहना चाहिये ।
जो भी कुछ बोले जनक सुता, शांति से सब सहना चाहिये ॥

रहस्य समझ कर रावण ने, कुछ समय के लिये मन मोड़ लिया।
यहां मूल मन्त्र में जगदम्बा ने, अपने मन को जोड़ लिया॥
रावण निज आवास गया, था शोक धुनी में जला हुआ।
और इधर विभीषण भाई भी, अपने विचार में लगा हुआ॥

दोहा

अय होनी तूने किया, कैसा समय तलाश।
चढ़े हुये इस पुण्य पर, सहसा किया निवास।

छन्द

क्या था क्या होने लगा, क्या दैव उठाया धनुप है।
इससे बचा संसार में कहो, कौनसा वह मनुष्य है॥
घात परदारा के कारण, होवे ज्ञानी ने कहा।
रावण के मरने का वही, तैयार नक्शा हो रहा॥
मैंने तो अपनी ओर से थे, बीज छेदन कर दिये।
होनी हमारी ने वही विप, वृक्ष सन्मुख धर दिये॥
जिनका सहायक पुण्य और, आयु कर्म का जोर है।
कांपे उन्हों से सुरपति, मारे मनुष्य किस तौर है॥
इस तरफ यह अन्धा हुआ, और बात कुछ सुनता नहीं।
तैयार हैं उस तरफ भी, शत्रु न आ जावे कहीं॥
पानी से पहले पाल बाँधों, ये बड़ों का कहन है,
उद्यम ही सबका सार है, बाकी सभी कुछ वहम है।
शुक्र अब कर्त्तव्य मम, मन्त्रीश को बुलवाय लूं,
सारे सभासद् मेलकर, प्रबन्ध सब करवाय दूं।

विभीषण मन्त्री विचार

दोहा

वीर विभीषण ने लिया, मन्त्री वड़ा बुलाय।
सत्यवादी अति प्रेम से, यूं बोला समझाय॥
अब मन्त्री क्या अभी, तलक रही घुमेरी छाय।
होनी ने चहुं ओर से, लंका घेरी आय॥

पुण्य रवि लंका का मन्त्री, जल्दी छिपने वाला है।
सुख रूप चन्द्रमा को देखो, अब राहु ग्रसने वाला है॥
आलस निद्रा दूर करो, और सोचो अपनी हस्ति को।
अब गौरव दबने वाला है, रोको इस हेम बरसती को॥

दोहा

पतिव्रता सीता सती, रामचन्द्र की नार।
ज्ञात सभी कुछ है, तुम्हें फिर क्या कहूं उचार॥

क्या सोचा बतलाओ तुमने, क्योंकि मन्त्रीश कहाते हैं।
सब भार तुम्हारे सिर पर ये, किस बात में गौरव चाहते हैं॥
क्या कर्त्तव्य आपका है, और किसकी जुम्मेवारी है।
फिर क्या फल निकलेगा इसका, इस समय जो कर्त्तव्य जारी है॥

दोहा

पाताल लंक श्रीराम ने, अपनी लई बनाय।
वीर विराध सुग्रीव भी, बन गये सेवक जाय॥

प्रत्यक्ष आज सुग्रीव नरेश्वर, पक्ष राम का करता है।
और पवन पुत्र श्री हनुमान, उनके चरणों में पड़ता है॥
और बाकी सब जितने राजे, रावण पर दाँत पीसते हैं।
मति भंग हुई दशकन्धर की, वो अपनी तान खींचते हैं॥

दोहा

कमी नहीं मैंने करी समझाने में आज ।
रावण को सीता बिना, और नहीं कुछ काज ॥

इसलिये बुलाया मैंने यहाँ, सम्मति आपकी लेने को ।
और दशकन्धर का कहूँ हाल, क्या मन नहीं चाहता कहने को ।
तुम बुद्धिमान और स्याने हो, नीतिज्ञ चतुर मर्दाने हो ।
अब बतलावो क्या करना है, क्योंकि तुम अनुभवी दाने हो ॥

दोहा

जो कुछ भाषा आपने, सभी यथार्थ ठीक ।
सीता रावण के लिये, है कांजी की छींट ॥

वह एक दूध का नाश करे, पर यह सर्वस्व हरायेगी ।
वो जरने में कुछ बने सहायक, सीता दिक हो जायेगी ॥
यदि महाराजा से करें निवेदन, इतना हममें साहस कहाँ ।
पर हृदय से मैं चाहता हूँ, यह व्याधि भेजी जाय वहाँ ॥

दोहा

जिस दिन से लाये सिया, खुशी ना देखे भूप ।
क्रोध हर समय जिस तरह, बना इस तरह रूप ॥

अब लिये वीर दशकन्धर के, यह नारी नहीं नागिनी है ।
या यों कहिये महाराजा को, चिपटी यह एक शाकिनी है ॥
और व्यन्तरनी का साया भी, मन्त्रादिक से जा सकता है ।
जो मोह नशे में चूर हुआ, शिक्षा कैसे पा सकता है ॥
हां युद्धस्थल में शूर वीर, निश्चय महाराज कहाते हैं ।
जो पड़े विलासिता में वह प्राणी, शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ॥
सुग्रीव पवन क्या हनुमान, इनके चरणों में पड़ते थे ।
जहां पर भी जंग जुड़ा पहिले, अपना सिर आगे करते थे ॥

खरदूषण का सहस्रांशु से, हनुमान ने वन्ध कटाया था।
और नाग फांस से अंजनी सुत ने, रावण को छुटवाया था॥
प्रत्यक्ष सभी यह दीख रहा कि, दोनों शक्ति टूटेंगी।
और विरुद्ध हमारे हो करके, लंका के ऊपर ऊठेंगी॥

दोहा

सबसे श्रेष्ट उपाय यह, सीता को दें भेज।
नहीं तो कुछ संशय नहीं, बनें रक्त की सेज॥

सभासदों को बुला अभी से, नियत शीघ्र कुछ कर लेवें।
या करवा दें सीता वापिस, या चुस्त सभी को कर देवें॥
हैं सूर्यवंशी राम लखन, सर्वस्व तलक लाने वाले।
हैं दलबल सबल विमान सहित, समझो यहां पर आने वाले॥

दोहा

बात बड़े मंत्रीश की, हृदय में गई समाय।
सभासदों को बुलायकर, करने लगे उपाय॥

अन्त में सबने नियत किया, कि इन्तजाम सारा करदो।
और भरती खोलो सेना की, उल्टी सतोयें सीधी करदो॥
सन्धि के सब मार्ग रोको, कुछ भेजो फौज समुद्र पर।
सारे उद्यमशील बनो, भय मार्ग और सरहद्दी पर॥
अब लंकापुरी पर आशाली का, कोट शीघ्र करना चाहिये।
और वज्रमुखा पहिरे पर हो, दारू गोला धरना चाहिये॥
गुप्तचरों को फैलादो कोई, अन्य न अन्दर आ जावे।
है भेदी कपि पति छलिया कोई, भेद न यहां से ले जावे॥
फिर सीता को वापिस करने की, करो विनती राजा से।
कितनी शक्ति शत्रु की है, यह भी देखो अन्दाजा से॥

जब तक ना रण प्रारम्भ हुआ, तब तक झगड़ा मिट सकता है।
मिथिलेश कुमारी लिये बिना, श्री राम नहीं हट सकता है॥

दोहा

नियत किये प्रस्ताव जो, सबको दिये सुनाय।
अब निज निज कर्त्तव्य पर, लगे सभी जन जाय॥

अब लगा सभी दारू गोला, सामान इकट्ठा होने को।
और मुख्य मुख्य स्थानों पर, सब योग्य सामग्री ढोने को॥
क्या हाथी घोड़े विकट गाड़ियां, संग्रामी रथों का पार नहीं।
हैं संग्रामी विमान गगन में, चहुँ ओर विस्तार कहीं॥

दोहा

तैयारी होने लगी, लंका में इस तौर।
अब सब ध्यान करो जरा, किष्किंधा की ओर॥
पल पल छिन छिन राम को, बीते वर्ष समान।
सुग्रीव लगा निज काम में, कर्त्तव्य भूल महान्॥
राम अति व्याकुल हुए, आर्तवन्त उदास।
लक्ष्मण को कहने लगे, बैठाकर निज पास॥

—:×:—

राम लक्ष्मण विचार

राम—किसकी आशा पर यहां, बैठा लक्ष्मण वीर।
सीता की सुध बिन लिये, अब दिल को नहीं धीर॥

किसकी आशा पर भाई, हमने यहां डेरा डाला है।
सुग्रीव लगा अपने सुख में, कर्त्तव्य नहीं कुछ पाला है॥
सुखिया सोवे दुखिया जागे, प्रत्यक्ष आज हम पर बीती।
काम काढ़ चुप हो बैठा, कपि पति ने क्या खेली नीति॥

दोहा

और यांद देरी हुई, सिया तजेगी प्राण।
निष्फल सब प्रयत्न हों, करो जरा कुछ ध्यान ॥
सुने वचन श्री राम के, हृदय गये समाय।
जल्द उठे कर धनुष ले, बोले मस्तक नाय ॥
गर्माई की हाकिमी, नर्मी का व्यापार।
इससे जो उल्टा चले, पड़े किस तरह पार ॥

इस समय हमारी नरमाई, गौरव का नाश करायेगी।
जा रहे भरोसे औरों के, तो सीता हमें ना पायेगी ॥
बस आज्ञा आपकी चाहता था, देखो क्या कर दिखलाता हूँ।
तलवार के आगे धर सबको, सीता का पता लगाता हूँ ॥

दोहा

उसी समय लक्ष्मण चले, तुर्त निवाकर माथ।
रक्त नयन डोरे खिंचे, धनुषबाण लिया हाथ ॥

सूर्यहांस तलवार बगल में, लक्ष्मण के शोभाती है।
प्रबल सिंह के मस्तक पर, लाली की दमक दिखाती है ॥
शूरवीर सहसा पहुँचा, वहाँ मुख्य सभा थी लगी हुई।
और नेत्रों की ज्योति भी थी, मानिन्द मशाल के जगी हुई ॥

दोहा

काल रूप लक्ष्मण पड़ा, नजर सामने जाय।
वानरपति कंपित हुआ, गिरा चरण में आय ॥

सबके सब हो गये खड़े, और दिल अन्दर से धड़क रहा।
गुस्से में चेहरा लाल अनुज का, दक्षिण भुजबल फड़क रहा ॥

मौन चित्रवत खड़े सभी, मुँह से नहीं बोल निकलता है।
समय देख नरमाई से, कपि पति यों गिरा उचरता है॥

दोहा

सिंहासन पे विराजिये, हे प्रभु दीन दयाल।
सेवक हाजिर चरण में, आप क्यों आये चाल॥

हे नाथ आपके गुण गाऊं, वह जिह्वा नहीं मेरे मुख में।
है धन्य पिता और माता को, जिसने तुम धारे हो कुख में॥
आज्ञा जो सेवक लायक हो, कृपया पहले सो बतलाइये।
स्वामिन कुछ अन्न जल पान करो, पुण्यरूप चरण अन्दर लाइये॥

दोहा (लक्ष्मण)

कहने में कुछ और है, करने में कुछ और।
आकृति में और है, मन में है कुछ और॥

मन में है कुछ और, सभी यह धूर्तों के लक्षण हैं।
किन्तु निश्चय समझ, अनुज के बाणों के भक्षण हैं॥
काम पड़े पर करे मित्रता, निकले पर दुश्मन है।
कष्ट आपको कौन, यहाँ बैठे आनन्द अमन है॥

दौड़

मित्र वानर हैं किसके, काम काढ़ा और खिसके,
सुखों में भूल रहा।
सहसगति के पास पहुँचा दूंगा, क्या भूल रहा है॥

गाना लक्ष्मण जी का (बहरतवील)

तेरी बातों ने धोखे में डाला हमें,
अब भी वोही सफाई जिताता रहा।

तूने वृथा हमारा समय खो दिया, झूठे नैनों से आँसू
बहाता रहा ॥१
मारा वृथा ही सहसगति राम ने, वह विचारा दुखी
अरडाता रहा।
तेरी युक्ति में कोई कसर ना रही, फुलझड़ी जैसी
बातें झड़ाता रहा ॥२॥
अब नहीं तुझको कोई भी चाहना रही,
जो खटकता था काँटा वो जाता रहा ॥२॥
अब तू तोते चश्म बनकर बैठा यहाँ, हमको बातों
का शरबत चटाता रहा ॥३॥
क्यों तू विश्वास देकर लाया यहाँ, बगुला भक्ति से
हमको फंसाता रहा।
क्या शर्म तुझको अब तक भी आई नहीं,
खाना पीना ही हमको सुनाता रहा ॥४॥
क्या तूने यह समझा कि मेरे बिना, बस पता
इनको सीता का पाता नहीं।
तुम यहाँ बैठ अपना नशा पीजिये, कृतघ्नों को
लक्ष्मण भी चाहता नहीं ॥५॥

दोहा

सुने वचन जब लखन के, घबराया सुग्रीव।
गिरा चरण कर जोड़ कर, बोला बन कर दीन ॥
नम्र निवेदन कृपा कर, सुनलें आप जरूर।
जो मर्जी फिर कीजिये, निकले यदि कसूर ॥

निकले यदि कसूर मेरा तो, शीश अलग कर देना।
सेवा में हाजिर हुआ नहीं, यह भी कारण सुन लेना ॥

विगड़ा जो था काम सभी, सो भी कर मैं था ना।
आप से अधिक ख्याल सीता का, मुझे समझ सत्य लेना ॥

दौड़

गुप्तचर भेज दिये हैं, और तैयार किये हैं, वचन पूरा कर दूंगा.
वैदेही के शोधन में चाहे अपना सिर दे दूंगा।

सुग्रीव जी का गाना (बहर तवील)

दृष्टि चुराऊं प्रभु आपसे, ऐसा स्वप्ने में भी ख्याल लाया नहीं।
भूल जाऊँ बड़े भारी उपकार को, मैं कमीनों व नीचों का जाया नहीं ॥१॥
ऐसे तानों की गोली न मारो मुझे, मैंने कर्त्तव्य अपना भुलाया नहीं
देखलो कर रहा क्या यही सामने, अब तक खाने तलक को भी खाया नहीं ॥२॥
मेरी इच्छा है हनुमत को बुलवाय लूं, यह खड़ा दूत आज्ञा सुनाई नहीं।
सीता माता का जो न लगाऊं पता, तो मैं जन्म नुर राजा के पाया नहीं ॥३॥
बन चुका हूँ मैं चाकर सियाराम का, विषय ऐसों में दिल को फंसाया नहीं।
लो चलो मैं भी चलता हूँ रघुवीर पै, क्योंकि दर्शन भी कल से है पाया नहीं।

दोहा

फिर दोनों वहां से चले, पहुंचे रघुवर पास।
प्रणाम बाद सुग्रीव जी, ऐसे बोले आप ॥
मैं चरणों का दास हूं, हे स्वामी सुखधाम।
राज पाट सब आपका, करूं बताया काम ॥

ऋण जो आपका है आयु, पर्यन्त नहीं दे सकता हूँ।
हाँ सिया सुधि के बाद आप, दोगे सो ही ले सकता हूँ॥
जब तक सीता ना पायेगी, तब तक मुझको आराम नहीं।
हूं इसी बात में लगा हुआ, कोई और दूसरा काम नहीं॥

दोहा

सुनी बात सुग्रीव की, खुशी हुए सुखकन्द।
मिष्ट वचन से यूं लगे, कहने दशरथ नन्द॥
तू मेरी दक्षिण भुजा, इन्दुमालिनी फरजन्द।
बाईं भुजा मेरी समझ, वीर सुमित्रानन्द॥

तेरा ही यह काम मित्र, सब तूने ही तो करना है।
यदि कहीं पर पड़ा काम, वहां पर तूने ही लड़ना है॥
अन्तिम ताज सुयश का भी तो, तेरे ही सिर धरना है।
कौन फिकर उनको जिनको, श्री जिनवाणी का शरना है॥

दौड़

ध्यान जब स्वयं है तुमको, फिकर फिर कौन है मुझको।
काम जल्दी करना है, सीता हरने वाले के गले पर शस्त्र धरना है॥

दोहा

कृपा आपकी चाहिए, मुझ पर कृपानिधान।
सीता की सुध के लिए, करूं अभी सामान॥

श्री हनुमान को बुलवा लूं, क्योंकि वो बुद्धि वाला है।
वह शूर वीर अनुभवी योग्य, उसका कुछ ढंग निराला है॥
एक एक दो ग्यारह हम और, आपकी सिर पर छाया है।
अरिहन्त देव का शरणा लेकर, बीड़ा आज उठाया है॥

—***—

सीता की खोज

दोहा

आज्ञा पा श्रीराम की, किया एक दरबार।
जिसके जैसा योग्य था, दिया सभी अधिकार ॥
एक दूत आदित्यपुर, भेजा हनुमत पास।
अमल वही होने लगा, किया जिस तरह पास ॥

गुप्तचरों को भेज दिया सब, ग्राम ग्राम क्या नगरों में।
और दूर दूर सज गये रिसाले, जंगल वन खण्ड गहनों में ॥
पैदल पल्टन फिरे कहीं, फिरते विमान आकाशों पर।
सब वैदेही को देख रहे 'दूरदर्शक यंत्र' आँखों पर ॥

दोहा

सुग्रीव भूप खुद भी चला, ताण्डिल बैठ विमान।
कम्बूद्वीप नग पर रहा, शोध सभी स्थान ॥
गिरिकन्दर में था पड़ा, रत्न जटी लाचार।
फिरे विमान आकाश में, देखा नजर पसार ॥

ना मार्ग कोई निकलने का, चहुं ओर से पर्वत घिरा हुआ।
ऊपर को भी नहीं चढ़ सकता, ऐसे स्थल पर था गिरा हुआ ॥
मन में ऐसा खटका था, विमान न हो दशकन्धर का।
इसलिये विचार था छिपने का, आश्रय ग्रहण कर पत्थर का ॥

दोहा

जब देखा सुग्रीव ने, नीचे नजर पसार।
रत्नजटी आया नजर, गिरि गुफा मंझार ॥

सुग्रीव नरेश ने उसी समय, विमान तले को झांक दिया।
इस हालत ने फिर रत्नजटी को, छिपने से भी रोक दिया ॥

कुछ हालत थी कमजोरी की, तन पर थे बेढ़ब घाव पड़े ।
महाकष्ट देख उस व्यक्ति को, रहे पूछ हाल यों पास खड़े ॥

दोहा

अय भाई तू कौन है, क्या है तेरा नाम ।
क्या हालत तेरी यहाँ, गिरा किस तरह आन ॥

गिरा किस तरह आन. छवि तन की मुरझाय रही है ।
और लगे घाव किस तरह, कमर तेरी बल खाय रही है ॥
तृषा तुझको लगी हुई मुख, जिह्वा बता रही है ॥
होता है मालूम तुझे, क्षुधा भी सता रही है । ॥

दौड़

सभी वृत्तान्त सुनावो, भय ना कुछ मन में खावो, योग्य सेवा बतलावो, नहीं सांच को आंच, सभी बेखटके हाल सुनावो ।

दोहा

हे स्वामिन् सुन लीजिये, मेरी व्यथा तमाम, ।
अर्कजटी का पुत्र हूं, रत्नजटी मम नाम ॥

जनक सुता को लंकपति, हरके लंकामें ले जाता था ।
उस तरफ सैर करता करता, मैं भी विमान से आता था ॥
रावण के विमान बीच, आवाज रुदन की भारी थी ।
दशरथ नृप की कुलवधू 'सिया' वह रामचन्द्र की नारी थी ॥
हा लक्ष्मण देवर तुम्हीं, सुनलो मेरी पुकार !
दुष्ट मुझे ले जा रहा, सुनो राम भर्तार ॥
इस तरह सिया चिल्लाती थी, दुखिया की कोई सहाय करो ।
कभी कहती थी हे जनक पिता, तुम ही मेरा सन्ताप हरो ॥
सीता के रुदन भयानक थे, पत्थर का कलेजा छनता था ।
कभी हा कार के सहित वीर, भामंडल नाम निकलता था ॥

दोहा

भामंडल का नाम सुन, मुझे आगया जोश।
क्योंकि मेरा मित्र था, रह न सका खमोश॥

बहिन मित्र भामंडल की, सीता मेरी भी भगिनी है।
और ज्ञात मुझे यह पहले था, यहाँ पेश न मेरी चलनी है॥
क्षत्रापन का धर्म नहीं, इस हालत में देऊँ टारा।
इसलिए काढ़ शस्त्र मैं, जा रावण के सम्मुख ललकारा॥

दोहा

हुआ परस्पर व्योम में, देर तक संग्राम।
रावण ने विमान फिर, तोड़ा मेरा तमाम॥

हे नाथ फेर बेपर हो कर, मैं गिरा गिरि पर आ करके।
फिर होनहार लाई मुझको, इस कन्दरा में खिसका करके॥
कुछ अपने दुःख का ख्याल नहीं, यदि है तो ख्याल सिया का है।
धिक्कार मेरी यह जिन्दगानी, इस जीने का फल लिया क्या है॥

दोहा

उसी समय सुग्रीव ने, लिया विमान बैठाय।
रत्नजटी को पथ्य और, औषधि दई पिलाय॥
रत्नजटी को फिर दिए, शुद्ध वस्त्र पहनाय।
धन्यवाद उस वीर को, देते हैं हर्षाय॥

सुग्रीव कहे हे रत्नजटी, तुमने सुयोग्य कर्त्तव्य किया।
सब दुःख हमारा मिटा दिया, श्रीराम को भी जीतव्य दिया॥
दिन रात जिस लिए फिरते थे, तूने सो सफलीभूत किया।
दुष्कर था यह जो काम हमें, मित्र तूने सब सूत किया॥

चलो मित्र यह पता खुशी का, रामचन्द्र को देवेंगे।
मिले पूर्ण सुयश तुमको, हम जरा दलाली लेवेंगे ॥

दोहा

दाबी कला विमान की, पहुंचे रघुवर पास।
माथ निवा कपिपति ने, किया वचन प्रकाश ॥

महाराज सिया का रत्नजटी से, हाल सभी कुछ सुन लीजे।
फिर आगे क्या करना चाहिए, सो भी हमको आज्ञा दीजे ॥
अब है नाहर के पंजे में, सीता यह भी मन ध्यान धरो।
पहले सुनलो सब बात तोल शक्ति, फिर सोच के काम करो ॥

दोहा

आदित्य नगर से आगये, उधर वीर हनुमान।
वनरपति करने लगे, स्वागत अरु सम्मान ॥
रत्नजटी को राम ने, लिया हृदय से लगाय।
लगे प्रेम से पूछने, अपने पास बिठाय ॥
कष्ट उठा करके कहो, रत्नजटी वृत्तान्त।
सीता का और स्वयं का, आदि अन्त पर्यन्त ॥
कथन सिया का क्या कहूँ, जलता हृदय तमाम।
यही शब्द थी कह रही, हा लक्ष्मण हा राम ॥

लंकपति हर सीता को, ईशान कोण में लाता था।
और कम्बू द्वीप गिरि ऊपर, मैं भी उत्तर से आता था ॥
जब सुना रुदन वैदेही का, मैं रावण के सम्मुख धाया।
इस तरफ उठाया मैं शस्त्र, उस तरफ बाण उसने उठाया ॥

दोहा

कुछ देर तलक आकाश में, हुए वार पर वार ।
उधर सिया थी हो रही, रो रो कर लाचार ॥

हे नाथ दृश्य वह याद करने से, हृदय कमल उछलता है ।
क्या करूं सिवा कहने के मेरा, जोर नहीं कुछ चलता है॥
वज्र बाण से रावण ने, विमान मेरा झट तोड़ दिया ।
और बेपर समझ व्योम ने भी, गिरितल पर मुझको छोड़ दिया ॥

दोहा

पता देन की आशा पर, रहे अब तलक प्राण ।
घृणा आती है मुझे, क्या दिखलाऊँ शान ॥

क्या दिखलाऊँ शान दुष्ट, पापी जन गया न मारा ।
घोर दुःख में फँसी सिया को, कुछ न दिया सहारा ॥
क्षत्राणी का दूध सभी मैंने, हराम कर डारा ।
अब यही मेरे मन आता है, मर जाऊँ मार कटारा ॥

दौड़

पता कर भामंडल को, तजूं फिर गन्दे तन को, क्योंकि
मन घबराता है; देख सिया का दुःख खाना, नहीं हलक तले जाता है

दोहा

हृदय विदारक जब सुनी, खबर सिया की राम ।
नेत्रों में आंसू चले, परिपद दुःखी तमाम ॥
रत्नजटी की प्रशंसा, करी बहुत श्रीराम ॥
धन्यवाद के शब्द से, गूंज उठा सब धाम ॥

फिर भामंडल पर उसी समय, सीता हरने की खबर गई ।
और रत्नजटी की लगे चिकित्सा, करने वहाँ पर वैद्य कई ।

सिया शुद्धि ने राम लखन का, हृदय कमल खिलाया है।
फिर पास बुला श्रीराम ने यों, सुग्रीव को वचन सुनाया है॥

दोहा

अय भाई सुग्रीव अब, आलस्य देवो निकाल।
असली नक्शा लंक का, दिखलावो तत्काल॥
हाँ स्वामिन् देखें सभी, नक्शा आप जरूर।
किन्तु कार्य सिद्धि, यहाँ होनी नहीं हजूर॥

होनी नहीं हजूर क्योंकि, वह अतुल बली नाहर है।
तीन खंड में पुण्य प्रचण्ड, आज जिसका जाहिर है॥
सहस्र एक साधी विद्या, और नीति का माहिर है।
लगे कांपने सब दुनियां, जब निकले वो बाहिर है॥

दौड़

वीर बली कुम्भकर्ण हैं, भुजा जिसकी दक्षिण है, विभीषण शूरा
नामी, हे स्वामिन् रावण की उसको, भुजा समझलो बायीं।

दोहा

इन्द्रजीत है सुत बड़ा, मेघवाहन लघु जान।
जिनके तेज प्रताप से, कांपे सकल जहान॥

शक्ति रावण की देखने में, यहाँ सारी उमर बिताई है।
सब तीन खंड की परिक्रमा, उनके संग मैंने लाई है॥
और सहस्रांशु नृप का घमंड, रावण ने सभी उतारा था।
और इन्द्रभूप इन्द्र समान को भी, निज कैद में डारा था॥

दोहा

शक्ति तोड़ी वरुण की, जो था बड़ा नरेश।
मधुकभूप चरणन गिरे, साधें सेव विशेष॥

नृप सुरसुन्दर भी नाथ उन्हीं के ही, दम में दम भरता है।
और नल कुबेर सुत दुर्लंघपुर का, उनकी सेवा करता है॥
सुर संगीत का मय नरेश, जामाता है जिसका लंकपति।
तीन खण्ड में आज अद्वितीय, रावण की है पुण्य रति॥

दोहा

अष्ट महा ये शक्तियें, हैं दशकन्धर के पास।
बाकी भी सब समझलो, हैं रावण के दास॥

रावण की सेना की शक्ति, निज मुख से क्या वर्णूं मैं।
दो हनुमान सुग्रीव इधर, हाजिर हम आपके चरणों में॥
खुद देखो नजर पसार सभी, योद्धाओं का फक चेहरा है।
दशकन्धर के भय का 'इन' सब के हृदयों पर डेरा है॥

दोहा

कायरता सुग्रीव की, देख सुमित्रा लाल।
शूरवीर बांका बली, बोल उठा तत्काल॥
वाह जी वाह क्या कर रहे, गीदड़ के गुणगान।
चोरों ने भी क्या कभी, मारा है मैदान॥

मारा है मैदान कहां, चोरों ने बताइये साहिब।
आप न चलिये संग वहाँ, निर्भय हो जाइये साहिब।
निगल न जाये 'दशकन्धर' पुर, में छिप जाइये साहिब।
डरपोकों की भरती हमको भी, ना चाहिये साहिब॥

दौड़

बात क्या कही अनोखी, प्रसंशा करी गधों की, अकेला मैं जाऊँगा
पहले प्राण हरूँ रावण के, फिर सीता लाऊँगा।

गाना (लक्ष्मण जी का)

चलाई तेग भेड़ों पर, न देखा शूरमा अब तक।
झपट शेरे बबर की में, कभी आया नहीं अब तक ॥१॥
करोड़ा करोड़ तारेगण, चमक कब तक दिखाते हैं।
रवि ने अपनी किरणों को, वहाँ फैंका नहीं जब तक ॥२॥
रंगा रङ्ग में जिस्म, बना अफसर दुरिन्दो का।
मगर तब तक कि नाहर ने, सुनी भापा नहीं जब तक ॥३॥
जो माता चोर बकरे की, शकुन कब तक मनायेगी।
उन्हों का सिर उड़ाने का, मिला मौका नहीं जब तक ॥४॥
जरूरत थी सिया सुध की, शुक्ल लाचार बैठा था।
तड़फता था मैं जिस दिन को, मिला मौका न था अब तक ॥५॥

दोहा

कुछ कहने को और था, वीर सुमित्रानन्द।
श्रीराम ने ला दिया, खामोशी का बन्ध ॥
गर्म नर्म दोनों मिले, काम तुरन्त हो जाय।
नर्मी से सुग्रीव को, बोले यों रघुराय ॥
तुम दोनों मेरी भुजा, बायीं दक्षिण जान।
भरत तुल्य तू है मुझे, सुन सुग्रीव सुजान ॥

मत फिकर करो अपने मन में, तुम मेरे धर्म के भ्राता हो।
किस मुख से मैं गुणगान करूं, तुमतो मुझको सुखदाता हो।
आभारी हूँ सबका ही मैं, तुमने महाकष्ट उठाया है।
दुष्कर था हमको सीता का, सब आपने पता लगाया है ॥

दोहा

यहाँ आने से भरत को, दिया हमीने रोक।
ऐसे ही तुम भी, रहो किष्किन्धा सब लोक ॥

जनक सुता को ले आने की, शक्ति हम में काफी है।
पर आशा करे सो नित्य अधूरा, श्री जिनवाणी भाषी है॥
आग्रह हम नहीं करते हैं, लंका में तुम्हें ले जाने का।
रखता है साहस एक लक्ष्मण, रावण का शीश उड़ाने का॥

दोहा

चोर उच्चकों ने कहाँ, मारा है मैदान।
सन्मुख आ सकते नहीं, भगें बचाकर जान॥

खुल गया ढोल का पोल सभी, जिस दिन से सिया चुराई है।
रावण ने चत्रापन कुल की, मर्यादा धूल मिलाई है॥
अष्टा पद के उठते ही, सिहों का पता न पाता है।
अब देखो लक्ष्मण वीर लंक में, क्या करके दिखलाता है॥

गाना

तर्ज—चुरा कर ले गया कोई

सभी हम शक्तियें रावण की, मिट्टी में मिला देगें।
धरणी की तो है शक्ति क्या, स्वर्ग को भी हिलादेगें॥१॥
जो मन में ठान ठानी है, वही करके हटेगें हम
समर की धूर में रावण का, सर धड़ से उड़ादेंगे॥२॥
अरुणावर्त के आगे, बनेगी धूर सब शक्ति।
वज्रावर्त से सबका कलेजा, हम हिला देंगे॥३॥
'शुक्ल' शरणा श्री जिनका, हमें परवाह किसकी है।
सिया को चन्द ही दिन में, यहाँ लाकर दिखादेंगे॥४॥

दोहा

देखा जब सुग्रीव ने, हैं बिल्कुल तैयार।
हाथ जोड़ कहने लगा, ऐसे गिरा उचार॥

हे नाथ विना कारण हमको, ऐसे क्यों लज्जित करते हैं।
हम जनक सुता को छुड़वाने, में पीछे पांव न धरते हैं ॥
जहाँ गिरे पसीना प्रभु आपका, अपना रक्त बहावेंगे।
बन चुके आपके दास, दासपन का कर्त्तव्य निभावेंगे ॥

००=००

सम्मतियें

पवन पुत्र तुम भी कहो, अपने दिल का ख्याल।
फिर जितने बैठे यहाँ, पूछें सबसे हाल ॥
नाथ कही कपिराज ने, सभी यथार्थ बात।
निश्चय ही दशकन्धर के, अतुल ताकतें साथ ॥

किन्तु जो पाकर के गौरव, अन्याय के ऊपर तुलते हैं।
तो जगह चमर के उस व्यक्ति पर, मोची पत्र ढुलते हैं ॥
जो काम नीच भी नहीं करते, वह काम किया दशकन्धर ने ॥
तो समझ लेवो अब कूच किया, लंका से पुण्य सिकन्दर ने ॥

दोहा

चन्द्रोदर को मार के, खर लई लंक पाताल।
क्या नीति वर्ती वहाँ, करो जरा कुछ ख्याल ॥

क्योंकि रावण को निज बहनोई की, खातिर थी मंजूर सभी।
यह तो कुछ बात पुरानी है, यह नया पोल खुल गया अभी ॥
सम्मति हमारी तो यह है, इस शक्ति को कमजोर करो।
क्या समय अनुपम मिला हुआ, और सीता का संताप हरो ॥

दोहा

मनुष्य जन्म पाकर यदि, करे न कुछ विचार।
तो समझो नर जन्म को, खोते सभी निस्सार ॥

गाना (हनुमान जी का)

तर्ज—करो प्रचार दुनियां

यदि हम में ना इक दूजे पै, कोई महरवाँ होगा।
ठिकाना फेर दुनियां में, धर्मियों का कहाँ होगा ॥१॥
यदि अन्याय कुशक्ति से, डरके मुंह छिपावोगे।
भला फिर कौनसी जां पर, यह चत्रापन अदां होगा ॥२॥
चाहे सर्वस्व भी लाकर, शीश अन्याय का तोड़ो।
यहाँ कर्त्तव्य पालन मोक्ष, या 'सुरपुर' मकां होगा ॥३॥
मुझे निश्चय सचाई पर, डटोगे वागवां होकर।
यहाँ फल-फूल और लंका, समझलो वियांवां होगा ॥४॥
हवावत् वैक्रिय होगा, हमारी वीरता का जब।
उड़ेगा खुश्क पत्तोंवत, लंका दल जो जमा होगा ॥५॥
सचाई पर डरे चत्री नहीं, डरते हैं अन्त से।
यहाँ इतिहास परभव में, जगत हितकर सखा होगा ॥६॥
लखो मत शक्ति रावण की, शुक्ल अन्याय को देखो।
तुम्हारी पुण्य शक्ति से ही, शत्रु नीमजा होगा ॥७॥

दोहा

हम हैं पक्षी सत्य के, रहें कुसंग से दूर।
बाकी सब बैठे यहाँ, पूछें आप हजूर ॥
मिथिला नगरी से तभी, भामंडल गये आय।
स्वागत और सम्मान दे, लिया पास बैठाय ॥
आज्ञा आपको दे चुके, अहो अंजनी लाल।
आप सभी से पूछलें, जो कुछ जिसका ख्याल ॥
मिथिलेश कुमार भी बैठे हैं, और विराजमान हैं विराध यहाँ।
गवगवच्च सरभजगवाय हैं, जामवन्त शुभनाद यहाँ ॥

विद्युत और यह गन्धमादन, योद्धा नल नील विराज रहे।
अंगद मेदश्लील वीर रणवांके सन्मुख राज रहे॥

दोहा

यथायोग्य लेने लगे, सम्मति पवन कुमार॥
शक्ति रावण की बड़ी, सबका यही विचार॥
वीर विराध कहने लगे, सुनो सभी कर गोर।
असली क्षत्रिय समय पर, दिखलाते हैं जौहर॥

गाना

चाहे कुछ हो ईंट का उत्तर तो, अब होगा पत्थर से।
हमें कुछ भय नहीं रावण के, किसी तलवार अस्त्र से॥
अन्ध अन्याय शक्ति से, कभी क्या क्षत्री डरते हैं।
निकलते हैं वह पहले ही, बांध कर सिर कफन घर से॥२॥
हमें निश्चय सही वह दिन, भी इक दिन आने वाला है।
उसको परभव पहुँचावेंगे, मार उसके ही चक्कर से॥३॥
पुण्य काफूर अब उसका, हुवा सीता चुराने से।
उड़ेगी तृण सम शक्ति, बकाया वायु अस्त्र से॥४॥
मान में ही रहे अन्धे, नजर आता नहीं कुछ भी।
ठीक मस्तक बना देंगे, सिर्फ हम एक नस्तर से॥५॥
"शुक्ल" अब कूच लंका पर, करेंगे कह दिया हमने।
यदि चलना है! जिसने सब, सजो हथियार बख्तर से॥६॥

दोहा

वीर विराध के, कथन से फैला एकदम रोश।
क्षत्रिय वीरों को लगा, आने अद्भुत जोश॥

सम्मति परस्पर टकराई, कुछ देर तलक यह हाल रहा।
बाकी तो सब कुछ नियत हुवा, इक रावण का ही ख्याल रहा॥

जामवंत यों उठ बोले, ऐसा योद्धा होना चाहिये।
जो शक्ति रोके रावण की, और इतमिनान होना चाहिये॥

दोहा

जामवन्त की राय में, मिल गई सबकी राय।
अंजनी सुत फिर राम से, यों बोले मुस्काय॥
बहुत काम तो हो गया, निश्चय से प्रभु ठीक।
एक कसर को मेट कर, ठोको इनकी पीठ॥

यह कसर जौनसी है स्वामिन्, श्री जामवन्त बतलाते हैं।
इस बात को आप भी, समझ गये कुछ परीक्षा लेना चाहते हैं॥
प्रायः है भी ठीक क्योंकि, सबके हृदय में खटका है।
यदि आप इसे पूरा करदें, तो लंक तख्त आ तकता है॥

दोहा

इतना कह वज्रांग जी, बैठ गये निज ठौर।
जामवन्त उठ सामने, बोला दो कर जोड़॥
दास आपके बन चुके, हे प्रभु दीन दयाल।
भय इनके दिल का सभी, देवें आप निकाल॥

यह सुना मुनिजन ज्ञानी से, जो कोटि शिला उठायेगा।
वही मारे दशकंधर को, और वासुदेव कहलायेगा॥
यह कोटि शिला उठाने से, सब दल निर्भय हो जावेगा।
तैयार लंक में जाने को एक से एक आगे पावेगा॥
ये शिला अहिल्या भी कहलाती है ग्रामीणी भाषा में।
या यूँ समझें ये वासुदेव की ही रहती है आशा में॥
काल अनादि से ऐसी यह परम्परा चली आती है।
वासुदेव के बिना और कोई शक्ति नहीं हिलाती है॥

दस करोड़ा-करोड़ सागरोपम में नौ वार हिलाई जाती है।
इस के अतिरिक्त अहिल्या यही शिला कहलाती है।
प्रथम शिखर, दूसरा सिर तक, तीसरा ग्रीवा तक लाता है॥
चौथा स्कंध, पंचम छाती, हृदय तक छटा पहुँचाता है।
पसली सप्तम कटी अष्टम नवां नीचे कुछ रहता है॥
परीक्षा की यही कसौटी है इतिहास यह निश्चय कहता है।

दोहा

वज्रमयी यह है शिला सदा अखण्डित जान।
इसे उठावेगा वही रावण से वलवान॥
खुश होकर सहसा उठा, वीर सुमित्रानंद।
बोला यों श्री राम से, वांका वीर बुलन्द॥
कोटि शिला क्या चीज है! तोड़ गिरि तमाम।
क्षत्राणी का पुत्र हूँ, लक्ष्मण मेरा नाम॥

आज्ञा दीजे भ्रात लता सी, फेंक शिला को दूंगा।
चलो अभी यह भ्रम तुम्हारा आज सभी हर लूंगा॥
कितनी शक्ति है रावण के, भुज वल में देखूंगा।
पहले खोज मिटा रावण का, फिर जगदम्वा लूंगा॥

दौड़

चलो अब देर न लावो, वृथा क्यों समय बिताओ।
मुझे पल-पल भारी है, क्योंकि उधर दुःखों की चलती,
सीता पर आरी है!

दोहा

आज्ञा पा श्रीराम की वैठे तुरत विमान।
पहुँचे जहां पर थी शिला सहित वीर हनुमान॥

मूल मंत्र का ले शरण जब हाथ शिला के लाया है।
जैसे मुद्गर ऐसे लक्ष्मण ने, शिला को वहां उठाया है ॥
फिर लगी पुष्प वृष्टि होने, सुर जय जय शब्द सुनाये हैं।
फिर बैठ विमान में खुशी सहित. किष्किन्धा नगरी आये हैं ॥

दोहा

उसी समय सुग्रीव ने, किया खास दरबार।
लंका चढ़ने के लिये, होने लगा विचार ॥

गण नायक कोई बना कोई, सेनापति पद पर नियत किया।
निज निज सेना तैयार करो, सुग्रीव ने सबको हुक्म दिया ॥
और जंगी भरती खोल दई, दारू गोलों का पार नहीं।
जंगी बेड़े जंगी जहाज, अद्भुत है वायुयान कहीं ॥

—※※※—

दूत हनुमान

दोहा

वृद्ध मन्त्री कहने लगा, दूत देवो भिजवाय।
सीता को यदि वापिस करें, झगड़ा सब मिट जाय ॥
दूत भी ऐसा चाहिये, करे भूत का काम।
एक बार के जाने से, करदे काम तमाम ॥

पहले जनक सुता को, यहाँ की खबर सुनावे जा करके।
फिर दे उपदेश विशाल, सब तरह रावण को समझा करके।
यदि नर्मी से ना काम बने तो, कहे फेर झुंझला करके।
अन्तिम जंगी ऐलान, सुना आवे कुछ जौहर दिखा करके ॥
बाजार गली कूंचा-कूंचा, ज्ञाता हो सब बाजारों का।
जगदम्बा जहाँ हो विराजमान, ले नक्शा उन्हीं मिनारों का ॥
शूरवीर योद्धा बांका, जाने से ना घबराता हो।
फिर जबरदस्ती का काम नहीं, हृदय से करना चाहता हो ॥

दोहा

श्रेठ पुरुष है लंका में, एक विभीषण वीर।
न्याय वन्त गम्भीर है, शूरवीर रणधीर॥

यदि काम बनाना चाहो तो उसके द्वारा बन सकता है।
और रावण को भी समझा कर, सन्मार्ग पर ला सकता है॥
हो वीर प्रथम परिचय वाला, जिसका प्रभाव भी पड़ता है।
फिर सजी हुई लंका, आशाली विद्या से ना डरता हो।

दोहा

वृद्ध मन्त्री की सम्मति लई, सभी ने मान।
उसी समय सुग्रीव जी, बोले खोल जबान॥
कर सकते हैं काम सब, पूरे यह हनुमान।
क्योंकि हैं ये अनुभवी. शूरवीर बलवान॥

ऐलान जंग का देने को तो, हर एक व्यक्ति जा सकता है।
पर इन बातों पर विजय, एक बजरंगबली पा सकता है॥
भनेज जमाई रावण का, खा राखी इसने जाफत है।
बाजार गली कूंचे तो क्या ये महलों तक के वाकिफ हैं॥
फिर विभीषण जी से हनुमत जी का, मेल-जोल भी खासा है।
जो कहा इसे चौचन्द दिखायेगा, करके यह आशा है॥
इसलिये कहो बजरंगबली, यह काम तुम्हारे लायक है।
वास्तव में देखा जाय तो, इस दल का तू ही तो नायक है॥

दोहा

जी हाँ बिल्कुल ठीक है, यों बोलो सब वीर।
समय भाव को देख कर, कहने लगे रघुवीर॥

दोहा (राम)—पवन पुत्र हनुमान जी, शूरवीर गम्भीर।
सब योद्धाओं की नजर, है तुम पर बलवीर॥

हे सच्चे पुरुषार्थी योद्धा, यह जल्दी काम बनावो तुम।
जो डाली नींव समर की तो, यह भी तकलीफ उठावो तुम ॥
उपकार जिसे कहती दुनियां, उसके समक्ष अवतार हो तुम।
यह भार तुम्हारे सिर पर है, क्योंकि सबके सरदार हो तुम ॥
चाहे नींव कहो जड़मूल कहो, इस दल के स्तम्भ तुम्हीं तो हो।
था बन्ध छुड़ाया रावण का, बजरंगबली तुम वही तो हो ॥
काम सभी यह आप बिना, कोई और नहीं कर सकता है।
जो घाव किया दशकंधर ने, अय वीर तू ही भर सकता है ॥

दोहा

मिष्ट वचन श्रीराम के, सुने वीर हनुमान।
हाथ जोड़ श्रीराम के, गिरा चरण में आन ॥

दोहा (हनुमान)

हे रघुवर कुलपति मुकुट, जगभूषण जगताज।
नम्र निवेदन दास का, सुन लीजे महाराज ॥

यहाँ बड़े-बड़े योद्धा बैठे, मैं पिछली संख्या वाला हूँ।
इनके आगे कोई चीज नहीं, क्योंकि फिर भी मैं बाला हूँ ॥
श्रीगव गवाक्ष सरभज गवय, बैठे हैं वीर बली भारी।
यह जामवन्त अंगद सलील, जो जरा धरा कंपा देवे सारी ॥
यह गंधमादन द्विविद गवय, नल नील बड़े रण बांके हैं।
महा तेज देख इन योद्धों का, हृदय फटते दुर्जन के हैं।
फिर हैं सबके सब अनुभवी, इनके समक्ष मैं बच्चा हूँ ॥
यह काम हाथ में लेते हुवे, दिल में 'होता' मैं कच्चा हूं।

दोहा

आपने सबको छोड़ कर, दिया मुझे यह दान।
तो फिर मुझको भी प्रभु, है सब कुछ प्रमाण ॥

अहो भाग्य मेरे स्वामिन्, यह अवसर आज नशीव हुवा ।
शक्ति अनुसार करूं पूरा, जो भी कुछ तजवीज हुवा ॥
मूल मंत्र का ले शरणा, जिस समय लंक में जाऊंगा ।
और चिरस्मरणीय, छाप विना, मारे नहीं वापस आऊंगा ॥
आज्ञा हो यदि आपकी यहां, जगदम्बा को ले आने की ।
तो मेरे आगे दुर्जन की, वहाँ पेश नहीं कुछ जाने की ॥
सीता तो क्या और कही, कुछ बदले में ले आऊंगा ।
ऐलान जंग का तो स्वामिन्, चलते चलते दे आऊंगा ॥

दोहा

सुने राम ने जिस समय, हनुमान के वैन ।
मिष्ट वचन से रघुपति ! लगे इस तरह कहन ॥

है निश्चय जो कुछ कहा, आप पूर्ण करके दिखलावोगे ।
और मान सभी के मर्दन कर, सीता को भी ले आवोगे ॥
किन्तु अभी करो इतना, जो भी कुछ यहाँ पर नियत हुआ ।
फिर बाद में जो मर्जी करना, जैसा तेरा चित्त विच हुआ ॥
क्योंकि अधिकार है शत्रु का, क्या पता वहाँ कैसे वीते ।
हम आते हैं कुछ देर नहीं, कह देना पास सिया जी के ॥
चन्द दिनों का कष्ट और है, धैर्य उनको दे आना ।
विमान भी है तैयार काम, करके वापिस जल्दी आना ॥

दोहा

जो कुछ आज्ञा आपकी, प्रभु मुझे स्वीकार ।
अभी ही पहुँचूं लंक में, मुझे न लगती वार ।

पर एक ख्याल कुछ और, अभी जो मेरे मन में आया है ।
कि आंज तलक वैदेही का, मैंने दर्शन नहीं पाया है ॥

है उदाहरण कि जला दूध का, फूक छाछ को लाता है।
इस कारण से जगदंबा को, विश्वास मेरा कब आता है॥
क्योंकि वह सती महान् सती, विश्वास न मुझ पर लायेगी।
वह जगह तसल्ली के उल्टी, अपने मन में घबरायेगी॥
इसलिये निशानी दे दीजे, अपनी जो उन्हें दिखा देऊं।
कुछ धीर बंधा कर सीता से भी तुम्हें निशानी ला देऊं॥

गाना

(तर्ज—एतभी)

निश्चय दिलाने के लिये, विपदा मेरी काफी है।
सुना देना उन्हें वृतांत, मेरा काफी है।
निश्चय वहाँ बैठी हो, चाकमीवाँ बन कर।
यह सुना देना यहाँ, जलती मेरी छाती है॥

नित्य विरह रूपी उसे, दाह सताती होगी।
नाम संदल ही मेरा, उसकी दवा काफी है॥
ऐसी निशानी कहीं, गुम भी नहीं होने की।
उसके हृदय ने मेरी, खैंच नकल राखी है॥

यह भी ना समझे कहीं, कि मुझे भुला बैठे हैं।
भला पानी से भी क्या, शीतलता कहीं जाती है॥
आराम ना पावेगा कभी, तुझको चुराने वाला।
सफर को तह करके, कजा उसकी चली आती है॥

फिक्र अब त्याग सभी, करलो निश्चय मन में।
थोड़े दिनों का ही तुम्हें, कष्ट रहा बाकी है॥
कभी ये ना समझे सिया, कि मैं ही मुसीबत में हूँ।
"शुक्ल" विपता न मेरी, कागज में लिखो जाती है॥

(हनुमान गाना तर्ज)

ठीक है सब आपका कहना, मुझे प्रमाण है भगवन्।
निशानी के बिना देगी, न हर्गिज ध्यान वो भगवन् ॥
वो समझेगी मनुष्य कोई, रावण ने ही भेजा है।
सुनाऊंगा मैं क्या उसको, न लाए कान वो भगवन् ॥
जो मर्जी सो कहुं लेकिन, न निश्चय उनको आयेगा।
क्योंकि उनको नहीं बिल्कुल, मेरी पहचान है भगवन् ॥
निशानी के बिना जाना, मेरा निष्फल सा होवेगा।
करूंगा बात मैं कैसे, ये मन हैरान है भगवन् ॥
प्रथम तो कठिन होगा, पास में जाना ही सीता के।
बिना फिर चिन्ह के माने, क्या वो नादान है भगवन् ॥
"शुक्ल" वहां पर भी रहने का, समय मुझको मिला थोड़ा।
बिना किसी चिन्ह के मेरा, वहाँ नहीं मान है भगवन् ॥

दोहा

नामांकित निज मुद्रिका, रघुवर दई निकाल।
ये मुद्रिका लीजिये, अहो अंजनी लाल ॥

(श्रीराम का गाना)

यह लो अंगूठी लो पास अपने, रख्यो इसको सम्भाल करके।
लौट कर आना जल्द यहाँ पर, कायम कोई मिशाल करके ॥
यदि हो मुश्किल सिया से मिलना, तो लेना कोई दलाल करके।
तमातेल जहां मिले नर्म हों, ये देना हीरे निकाल करके ॥
यह पत्र भी साथ लेते जाना, लिखा है सब कुछ विलाल करके।
सिया के दिल को तसल्ली देना, सभी निराशा को टाल करके ॥
जावो जल्दी वो खोती होगी, तन की रंजो मलाल करके।

"शुक्ल" परम सुख मिलेगा। तुमको
दु:खी के दिल को खुश हाल करके।

हनुमान जी का गाना

यदि है कृपा तुम्हारी मुझ पर,
तो ताज उसका गिरा के आऊँ,
ना भूले दुनियाँ कभी भी जिसको।
मैं धब्बा ऐसा लगा के आऊँ॥
यदि हो आज्ञा नहले ऊपर
दहला अपना टिका के आऊँ.
सिया तो क्या मैं उसकी पुत्री।
उसी के सम्मुख उठा ले आऊँ॥
होगा सम्मुख योद्धा जो कोई
तो उसको निश्चय सुला के आऊँ,
यदि समय कुछ अधिक मिले तो।
मैं फ्रूट मेवा चखा के आऊँ॥
सचाई है दुनियां में चीज कोइ तो
उनके दिल को हिला के आऊँ
सिया के चरणों में हाल कह कर
मैं जल्दी मस्तक झुका के आऊँ॥
"शुक्ल मैं परमेष्ठि शरणा लेकर
कवच को तन पर सजा के जाऊँ
अचूक अवसर मिला है मुझको
अकल का परिचय दिखा के आऊँ॥

दोहा

सिद्धेश्वर का नाम ले, बैठे तुरन्त विमान।
लंका को अब चल दिए, निडर वीर हनुमान॥
महेन्द्रपुर के बाग पर, पहुँचा जब विमान।
सुभट मित्र हनुमान से, बोला खोल जबान॥

यह बाग आपके नाने का, देखो क्या छवि दिखाता है।
प्रसन्नकीर्ति माहेन्द्र सुत, शूरवीर कहलाता है॥
अब चलते चलते मेल जोल, कुछ इनसे भी करना चाहिए।
रावण से प्रतिकूल कान, माहेन्द्र का भरना चाहिए॥

दोहा

सुने सहायक के वचन, हनुमत ने जिस बार।
मन ही मन में इस तरह, करने लगा विचार॥
इसी जगह था माता को, दिया उन्होंने त्रास।
चाहिये इनका भी उड़ा, देना होश हवाश॥

यदि मेल जोल इन्हों से होगा, तो होगा दो हाथ दिखा करके।
कर्त्तव्य इन्हों ने किये, उसी का, देऊं स्वाद चखा करके॥
मेल जोल अब किये बिना, हम भी नहीं आगे जावेंगे।
माता को यहाँ ना मिली जगह, तलवार से जगह बनावेंगे॥

दोहा

वीर रंगीले ने तुरन्त, दीना बिगुल बजाय।
गूंज उठा ब्रह्माण्ड सब, भूप गया घबराय॥

महल सभा क्या नगर किले में, सहसा शोर मचा भारी।
क्यों अकस्मात् यह बिगुल बजा, किसने की रण की तैयारी॥

प्रसन्नकिर्ति ने झट पट, निज तन पर बख्तर धारा है।
हो गयी बिगुल रण जुटने की, धौंसे पर डंका मारा है॥
अब आन परस्पर अनी मिली, तो चमका खड्ग दुधारा भी॥
कभी अग्निबाण अभी धुन्ध बाण, कभी चलता सांग कटारा भी।
वज्ररत्न घन और, हथोड़ों की चोटों को खा जाता है।
इसी तरह हनुमान भी, रण में आगे बढ़ता जाता है॥

दोहा

देख तेज हनुमान का, घबरा गये तमाम।
प्रसन्नकीर्ति से लगा, फिर होने संग्राम॥
मामूली नहीं चीज था, महेन्द्र सुत शूर।
लड़ते लड़ते परस्पर, हो गये दोनों चूर॥

यह हाल देख कर पावन पुत्र के, जोश वदन में छाया है।
कुछ यह भी ख्याल हुवा मन में, क्या काम तू करने आया है॥
यदि मारा मैंने मामे को, तो माता अति दुःख पावेगी।
भाई मेरा तूने मारा, हर समय यह ताना लावेगी॥

दोहा

नाग फांस में बांध कर, करूं फेर प्रणाम।
भेद खोल आगे चलूं, पहुँचू लंका धाम॥

कर ऐसा विचार वज्र, संग्रामी रथ पर झौंक दिया।
सब पुरजा २ अलग २, रथ ने भी अपना छोड़ दिया॥
पवन पुत्र ने नाग फांस में, प्रसन्न कीर्ति बांधा है।
फिर अपना आप बताने का, भी दिल में किया इरादा है॥

दोहा

हनुमान का लीजिये मामा जी प्रणाम।
ऐसा कह बजरंग ने, तोड़े बंध तमाम॥

जब लगा पता कि हनुमत है तो, खुशी का ना कोई पार रहा।
महेन्द्र नृप हनुमान को, देता अतितर प्यार रहा ॥
भेद सिया का आदि अन्त पर्यन्त, सभी बतलाया है।
श्री रामचन्द्र का बना सहायक, आगे को चल धाया है ॥

दोहा

जय जिनेन्द्र कर चल दिए, उसी समय हनुमान।
प्रसिद्ध दधिमुख द्वीप पर, पहुंचा जाय विमान।
साधु दो शुभ ध्यान में, बैठे हो कर लीन।
कुछ दूरी पर ध्यान में, राज कुमारी तीन

कर नमस्कार मुनियों को, पहुँचे जहाँ पर राजदुलारी थी।
तो दीर्घ शस्त्र ज्वाला ने, कुछ, वहाँ अपनी लाट निकाली थी ॥
जलाशय से ले पानी, हनुमान ने आग बुझाई है।
और अबला क्या मुनि राजों की, आपत्ती दूर भगाई है ॥

दोहा

कष्ट सहे स्थिर योग से, सिद्धि होत तत्काल।
खुश हो राजकुमारियाँ, बोली शंका टाल ॥
बिना काल तरुवर फला, हे प्रभु दीन दयाल।
और हमारा आन के, आप ने टाला काल ॥

हम तो क्या इस ज्वाला में, वे महापुरुष भी जल जाते।
यदि एक मुहूर्त भर भी यहाँ, उपकारी आप नहीं आते ॥
कारण हम अग्नि लगने के, मुनिजन का पाप हमें चढ़ता।
तन धन और धर्म सभी जाता, यह जीव पता क्या कहां पड़ता ॥

दोहा (हनुमान)

नाम पता सब आपका, देवो हमें बताय।
कैसे तुम कारण बनी, सो भी दो समझाय ॥

दोहा (राजकुमारियाँ)

दधिमुख नगर सुहावना, गन्धर्व भूप प्रधान ।
शुकमाला राणी भली, मात हमारी जान ॥
ज्योतिषियों से पिता ने, पूछा था एक वार ।
कौन भूप इनका कहो, होवेगा भरतार ॥

तब ज्योतिषियों ने बतलाया, जो सहसगति को मारेगा ।
बस पति इन्हों का बने वही, दुखियों का दुःख निवारेगा ॥
देख तेज उस राजकुमार का, भानु भी शर्मायेगा ॥
शूरवीर गम्भीर नाम, सागर मानिन्द लहरायेगा ।

दोहा

अंगारक खेचर बड़ा, कामी एक नादान ।
रूप हमारे पर हुवा, मोहित वश अज्ञान ॥

करी याचना पिता हमारे से, हमको परणाने की ।
पर मानी नहीं पिता ने, अंगारक से विवाह रचाने की ॥
करें कोई विद्या-साधन, यह ख्याल हमें इक दिन आया ।
पा आज्ञा माता-पिता की हमने, यहां आकर डेरा लाया ॥

दोहा

द्वेषानल में दग्ध हो, अंगारक ने आय ।
हमें जलाने के लिये, अग्नि दई लगाय ॥

इसलिये ध्यान में लगे हुवे, साधु भी आज भस्म होते ।
ना हमें ध्यान से उठाना था, ना वह भी इधर उधर होते ॥
तुम हुवे पुण्य के अधिकारी, क्योंकि सब कष्ट निवारा है ।
आ जान बचाई हम सब की, और काम सिद्ध हुवा सारा है ॥
अब आप कृपा कर बतलावो, किस भूप के राजदुलारे हैं ।

इतनी जल्दी क्यों डरते हो, किस काम को आप सिधारे हैं ॥
जो सेवा हो सो बतलाईये, तुम जग दुःख भंजन हारे हो ।
कर्त्तव्य से जाने जाते हो, श्रीजिन शिक्षा के प्यारे हो ॥

दोहा (हनुमान)

नगरी है आदित्य पुर, पवनजय नृप तात ।
नाम मेरा हनुमान है, सती अंजना मात ॥

श्रीरामचन्द्र रघुकुल दिनेश, किष्किन्धा आज विराजते हैं ।
उदार चित्त गम्भीर वीर, दुखियों का दुःख निवारते हैं ॥
किष्किन्धा में आन राम ने, सहसगति को मारा है ।
सूर्य वंशी अवधेश श्री, दशरथ का राजदुलारा है ॥

दोहा

रामचन्द्र की नार थी, सीता सती विशेष ।
उसे चुरा कर ले गया, लंका में लंकेश ॥

इसलिये लंका में जाता हूं, सन्तोष सिया को देने को ।
फिर वहां जंग भी होवेगा, उस शत्रु का सिर लेने को ॥
यह गन्धर्व नृप को कह देना, तुम राम के पास चले जावो ।
इस लिये तुम्हें समझाता हूं, कि फिर पीछे ना पछतावो ॥

दोहा

कला दिखाई वीर ने, फिर चल दिया विमान ।
राजकुमारी भी गई, निज नगरी सुखमान ॥

श्रीराम की सुन कर प्रशंसा, गन्धर्व नृप मन हर्षाया है ।
दल बल विमान संग सेना, लेकर किष्किन्धा में आया है ॥
श्रीहनुमान का शीघ्र उधर, विमान लंका की ओर बढ़ा ।
जब गये पास तो कोट, आशाली विद्या का चहुं ओर खड़ा ॥

— o❊o —

आशाली

दोहा

लगाई धूम विमान की, ऊपर तले तमाम ।
रास्ते का तो नाम क्या, नहीं छिद्र का काम ॥

फिर कोण ईशान की ओर बढ़े, वहां आशाली का डेरा था ।
थी आकृति दरवाजे की, पर तम तम घोर अन्धेरा था ॥
सिवा पुण्य के और कोई, नहीं शस्त्र वहां चल सकता है ।
सब दारू गोला आशाली के, सन्मुख नहीं डट सकता है ॥

दोहा

वज्रांगी उस तमा के, अड़े सामने जाय ।
तब देवी हनुमान से, यों बोली भुंझलाय ॥
भाग्य हीन तुमको यहां, लाई मौत बुलाय ।
अब भी कहती हूँ, तुझे भागो जान बचाय ॥

हृदय नेत्र दोनों के अन्धे, चले किधर को आते हो ।
नादान आशाली ज्वाला में, किस कारण जलना चाहते हो ॥
तू मौत पराई क्यों मरता जग का झूठा नाता है ।
वह काम नहीं बनता यहां पर, जो काम तू करना चाहता है ॥

दौड़

पीठ यहां से दिखलावो, चले अपने घर जावो ।
हुक्म ये दशकन्धर का, अन्य देश वालों को जाना
मिले नहीं अन्दर का ।

दोहा

आशाली के सुन वचन, मुस्काया बजरंग ।
उत्तर में कहने लगे, होकर रङ्ग विरङ्ग ॥

आशाली काली जरा, सुनो लगाकर कान ।
अन्दर जाने दीजिये, हम यहां के मेहमान ॥

यह हुक्म नहीं दशकन्धर का, तुम रोको रिस्तेदारों को ।
किस लिये तंग करती बतला, हमसे राहगीर विचारों को ॥
उपहास्य में होता है झगड़ा, बुद्धिमानों का कहना है ।
हट एक तरफ को जाने दे, कुल दो दिन हमें रहना है ॥

दोहा (देवी).

मूढ़मति तू किस लिए, करता है तकरार ।
जाना तुझ को ना मिले, छल कर चाहे हजार ॥

लीक अरी से वत रिस्तेदारी, राजों की होती है ।
मन फटा हुवा नहीं मिल सकता, जैसे पय टूटा मोती है ॥
जान बचा कर भाग नहीं, अब काल शीश पर आता है ।
यहां लिये पराये तू वृथा क्यों अपनी जान गंवाता है ॥

दोहा (हनुमान)

वाहरी वाह क्या खूब तू , दिखा रही है जोश ।
खैर हमारे कथन से, अब होजा खामोश ॥

कितनी ही तुझ में शक्ति हो, फिर भी अबला कहलाती है ।
यहां क्षत्रिय मर्दाने के आगे, पेश न तेरी जाती है ॥
नियम कुदरती जात नार की, पुरुष वेद को नमती है ।
फिर मेरा दर्जा पंचम, और तेरा दर्जा एक कमती है ॥

दोहा (देवी)

अच्छा तो फिर करन को, आया है उपदेश ।
तो फिर तेरे काल ने, पकड़े आकर केश ॥

अच्छा अब सावधान होजा, जल्दी परभव में जाने को।
इस सुन्दर तन की आशाली से, जल्दी भस्म बनाने को ॥
ऐसा कह कर आशाली ने, लम्बी लाट निकाली है ॥
इस तरफ वीर बजरङ्गी ने, भी अपनी गदा सम्भाली है।

दोहा

ज्वाला आई जिस समय, पवन पुत्र के पास।
गदा पकड़ शरणा लिया, मूल मन्त्र का खास ॥

नवकार मंत्र से आशाली क्या, देवन पति थर्राते हैं।
पर बिन निश्चय और साधन के, बिन पूर्ण फल नहीं पाते हैं ॥
फिर मारी गदा घुमा के, प्रस्थान किया आशाली ने ॥
झट देख रवि को पीठ दिखाई, जैसे रजनी काली ने ॥

दोहा

बादल से जैसे रवि, ऐसे निकला वीर।
लंक कोट के पास फिर, पहुँचा वो रणधीर ॥

विमान तले को तार लिया, भूमिचर उसे बनाया है।
यह हाल देख कर वज्रमुखा, शस्त्र ले सम्मुख आया है ॥
अति क्रोध में चेहरा लाल हुआ, और शस्त्र कर में तोला है।
निज मस्तक पर बल तीन डाल, हनुमान से ऐसे बोला है ॥

——=

वज्रमुखा

दोहा (वज्रमुखा)

भाग्यहीन तुम किस तरह फंसे मौत मुख आन।
बिना सींग और पूंछ के, क्या तुम पशु समान ॥

क्या लिखा हुवा दरवाजे पर, यह तुम्हें नजर नहीं आता है।
क्या ऐनक लाने का स्वभाव, या मोतिया विन्द सताता है॥
आज्ञा नहीं यहाँ पर अन्य, राष्ट्र वालों को अन्दर जाने की।
और किसने शिक्षा दी तुमको, यह निष्फल प्राण गंवाने की॥

दोहा (हनुमान)

जिह्वा को वश में करो, दांत होट लो मींच।
अनुचित जो कुछ भी कहा, लेऊ रसना खींच॥

गाना (हनुमान जी का)

उछलता है क्यों मेंढ़क सा, तुझे परभव पहुंचा दूंगा।
जो बोला दुर्वचन कोई, स्वाद उसका चखा दूंगा॥
रोकता है तू रावण के, जो आये रिस्तेदारों को।
अलग हठ एक पासे को, नहीं तरकस चला दूंगा॥
कभी रास्ता कहो सिंहों का, स्यालों ने भी रोका है।
समझ अपना तू हित, चुप में नहीं यहाँ पर सुला दूंगा॥
यदि रहना है इस तन में तो, माफी माँग लो इसकी।
करी तूने जो अविनय, वह सभी दिल से भुला दूंगा॥

दोहा (वज्रमुखा)

धौंस दिखाता है मुझे, आँखें लाल निकाल।
अब निश्चय कूदने लगा तेरे सिर पर काल॥

गाना (वज्रमुखा का)

आज सारी रसम रिस्ते की, यहाँ पर हम बजा देंगे।
हमेशा के लिये सोना, तेरा बिस्तर लगा देंगे॥
यदि स्नान करना है, तो जल्दी शौक से कीजे।
तुम्हारे रक्त की धारा से, हम तुमको नहला देंगे॥

चीज ऐसी खिलायेंगे, लगे ना भूख इस भव में।
प्यास भी दूर जायेगी, नीर ऐसा पिला देंगे ॥
अहो धन्य भाग्य हैं मेरे, करूं मेहमान की सेवा।
स्वयं बस पीक आयेगी, पान ऐसा चबा देंगे ॥

दोहा (हनुमान)

सेवा करवाने के लिये हम भी हैं तैय्यार।
अब तू जल्दी सांभले अपने सब हथियार ॥

सोचा था मैंने क्यों गरीब के, नाहक प्राण गमाने हैं।
पर तेरे खोटे कर्मों ने ही, तुझको नाच नचाने हैं ॥
मरने से पहले मुझको, एक बात और भी बतला जा।
नियम यहाँ कुछ पहले भी हैं, या बदले सभी सुनाताजा ॥

दोहा (वज्रमुखा)

क्यों मरने के समय अब, गाता आल पताल।
बातें घड़ने से कभी, टल नहीं सकता काल ॥

पर कान लगा अब जल्दी से, तेरा विचार पूरा कर दूं।
फिर समय नहीं मिलना जबकि, तलवार तेरे गल पर धर दूं ॥
कोई शक्तिशाली सम्मुख हो, नीति की वहाँ जरूरत है।
पर रावण के आगे सब, नृप मानिन्द पत्थर की मूरत है ॥
दीपक की तब तक चाहना है, जब तक ना सूरज रोशन हो।
पंखे की वहाँ जरूरत क्या, जहाँ पर सर्दी का मौसम हो ॥
तीन खण्ड में कान हिलाने, वाला छोड़ा बशर नहीं।
जो मर्जी सो करें पुण्य, दशकंधर के में कसर नहीं ॥

दोहा (हनुमान)

वाह वाह वाह तो फिर हमें, मिला खूब अवकाश।
पहले तुझको मार कर, करें लंक का नाश ॥

यह लज्जा मुझको आती है, किस पर तलवार उठाऊं मैं।
जो काम करने यहां आया हूँ, सो भी तुमको समझाऊं मैं॥
हूँ दूत राम का रावण को, संदेशा देने जाता हूँ।
नहीं दूत को रोका करते हैं, फिर भी तुमको समझाता हूँ॥

दोहा (वज्रमुखा)

हमको तो आज्ञा यही, दूत होवे चाहे भूत।
रामा दल के मनुष्य को समझो सभी अछूत॥
अच्छा तो अब सम्हल कर, हो जावो तैयार।
धोके में रहना नहीं, करलो पहले वार।
वज्रमुखे ने वीर -पर, झौंक दई तलवार।
धक्का दे बजरंग ने, दिया धरन पर डार॥

फिर बोले सम्भल खड़ा हो जा, क्योंकि अब वार हमारा है।
आगे फिर जल्दी जाना है, पहले कर ढेर तुम्हारा है॥
वज्रमुखे ने फिर उठ करके, अपनी सांग घुमाई है।
पवन पुत्र ने काट उसे, अपनी तलवार भुमाई है॥

दोहा

कड़कड़ाहट से चपला ज्यों, गिरे अम्बर से आय।
ऐसे घहराती वीर की, पड़ी खड़्ग गल जाय॥

रक्त फुव्वारा उठा व्योम में, वज्रमुखे का नाश किया।
पड़ा जिस्म रणभूमि में, आतम ने परभव वास किया॥
मरा अधिपति समझ चमू में, हाहाकार मचा भारी।
जनक मृत्यु सुन कर पुत्री ने, मन में रोप किया भारी॥

दोहा

वज्र मुखे की कन्या का, लंका सुन्दरी . नाम।
शूरवीर रणधीर थी, शस्त्र कला की धाम॥

बख्तर तन पे सजा शीघ्र ,एक दम से हमला बोल दिया ।
पलायित सेना रोकी सहसा, पांव युद्ध में रोप लिया ॥
अंगरक्षक थे चारों बढ़े अगाड़ी, शूरवीर बलधारी थे ।
पवन पुत्र थे मौन मित्रवर, करते मार करारी थे ॥

दोहा

लंका सुन्दरी ये हाल लख, अरुण वर्ण कर नैन ।
शमशेर हाथ में तान कर, बोली ऐसे बैन ॥

भागो जान बचाकर अब, क्यों व्यर्थ में जान गंवाते हो ।
जिसने मारा जनक क्यों नहीं, उसे सामने लाते हो ॥
ना वीर कान दे इन बातों पर, बाण खूब बरसाते हैं ।
इधर सुन्दरी के अस्त्र और, बाण अनल उगलाते हैं ॥

दोहा

सह न सके उस मार को, घबराये चऊं वीर ।
हटा कदम निज मित्रों का, देखा हनुमत वीर ॥

गर्जे उठे ले गुर्ज हाथ में, क्रोध बदन भर आया है ।
खुद बढ़े अगाड़ी बब्बर शेर सम, रण भू को कम्पाया है ॥
बरसाये शिलीमुख अमित वेग से, मानो श्रावण झड़ी लगी ।
असह्य तेज लख पवन पुत्र का ,सेना में फिर पड़ी भगी ॥

दोहा

हाल देख ये सुन्दरी, सम्मुख हुई तत्काल ।
बोली सम्भल अब जाईये, आई मैं बन काल ॥
पवन पुत्र मन सोचते, अबला नार कहलाय ।
शिरोश्च्छेद यदि मैं किया तो दागी कुल हो जाय ॥

सच्चे शूरवीर क्षत्रिय ना, अबला पर हाथ उठाते हैं।
प्राणों पर अपने खेल जांय, फिर भी ना शस्त्र चलाते हैं ॥
पर शस्त्र कला अद्भुत इसकी, अति हस्त लाघव दिखलाती है।
प्रचण्ड तेज लख इसका चण्डी, भी मन में शरमाती है ॥
उधर अस्त्र शस्त्र छोड़े, ना असर वीर पर करते हैं।
क्योंकि बजरंगबली नभ में ही, काट उन्हों को धरते हैं ॥
तूणीर स्तम्भ हुवा कुवरी का, आश्चर्य में चकित हुई।
विद्या स्तम्भ हुई सारी, गहरी विचार उस वक्त हुई ॥

दोहा

विसार क्रोध को सुन्दरी, देखे नयन पसार।
देख रूप हनुवीर का, गया बाण दिल पार ॥
ज्यों मन्मथ निज रूप, धर खड़ा शरासन तान।
कन्या शस्त्र त्याग कर, गिरी चरण में आन ॥

फिर क्या था रण भूमि में, प्रेम का दरिया बहने लगा।
अभय रहो मन में सुन्दरी, यो वचन वीर तब कहने लगा ॥
हाथ जोड़ अश्रु भर नैनों, कन्या वचन सुनाती है।
जादू क्या कर दिया आपने, पेश न मेरी जाती है।

दोहा

लंका सुन्दरी हो गई हनुमत के अनुकूल।
भेद भाव सब ही दिया, बने शूल के फूल ॥

हनुमान विभीषण

सिद्ध प्रभु का जाप जाप, परमेष्ठि ध्यान लगाय।
पवन पुत्र फिर चल दिये, आगे पांव बढ़ाय ॥

फिर पास विभीषण के पहुँचे, झट शीश झुका प्रणाम किया ।
मिले विभीषण प्रेम भाव से, हनुमत को सम्मान दिया ॥
सेवक जन सेवा करते, सब आगे पीछे फिरते हैं ।
और वीर विभीषण हनुमान को, ऐसे गिरा उचरते हैं ॥

दोहा (विभीषण)

बहुत दिनों में आपके, दर्शन पाये आज ।
कहो कुशल हैं सब तरह पवनजय महाराज ॥

कुछ पता आपने आने से, पहले हम पर भिजवाना था ।
हम मिलते स्वयं रास्ते में, सम्मान से आपको लाना था ॥
यहाँ आने में जो कष्ट हुवा, तुमको सो हम पर धब्बा है ।
आराम आप कीजे क्योंकि, तह किया सो रास्ता लम्बा है ॥

दोहा (हनुमान)

प्रेम आपका ही हमें, लाया यहाँ पर खींच ।
किन्तु काम अब लंक में होन लगे अति नीच ॥

इसलिये जहाँ पर न्याय नहीं, वहाँ प्रेम नहीं रखना चाहिये ।
जिस बात में सम्मुख हानि है, उससे पीछे हटना चाहिये ॥
अब अन्तिम प्रणाम समझ लो, आप को करने आये हैं ।
कल्याण आपका हो जिसमें, सो अर्ज चरण में लाये हैं ॥
बस लीक अरी सेवत अब, तुमसे प्रेम हमारा टूटेगा ।
और पाप का बेड़ा भरा हुवा, लंका का सारा डूबेगा ॥
प्रेम हमारा आपसे है, कुछ अर्ज गुजारने आये हैं ।
मर्जी मानो या न मानो, निज कर्त्तव्य पालने आये हैं ॥

दोहा

पिछली बातों को जरा, रख दीजे सरकार ।
वर्तमान क्या हो रहा, इस पर करो विचार ॥

क्या आपने सोचा बतलाओ, और क्या रावण को समझाया।
या यहीं किया कि कोट, आशाली का लाकर पहरा लाया॥
निश्चय क्या ख्याल आपका है, सब साफ साफ बतला दीजे।
संकोच रूप से बतला कर, फिर जल्दी हमें विदा कीजे॥

दोहा (विभीषण)

पवन पुत्र क्या कह रहे, रूखी-रूखी बात।
प्रेम हमारा जिस तरह, शीतलता जल साथ॥

जो भी कुछ आपको कष्ट हुवा, मैं क्षमा उसी की चाहता हूँ।
अब रावण का भी हाल सुनो, सारांश तुम्हें समझाता हूं॥
मेरा विचार भी सुन लीजे, हृदय से हूं सत्य का पक्षी।
वह आहार कभी पचता नहीं, जिसमें खाई जावे मक्षी॥

दोहा

मोर खुशी में नाचता, फिर फिर चारों ओर।
किन्तु चरण निज देख कर, रोता है उस ठौर॥

बस ये ही हाल हमारा है युक्ति ये, सोच खुशहोते हैं।
कुछ पेश नहीं चलती रावण, आगे हम निष्फल होते हैं॥
उधर सती का दुख भी तो, हमसे न सहारा जाता है।
इधर बड़े भाई का भी, ना प्रेम विसारा जाता है।
जो दिल में दुख उबाल उठें, सो मुझ से कहा न जाता है।
यह उलट पेच इक आन फंसा, इसका हल मुझे न पाता है॥
और अधिक क्या बतलाऊं, इस जीने से घबराता हूँ।
अनुमान नजर जो आते हैं, सो नहीं देखना चाहता हूँ॥

दोहा (हनुमान)

दोष नहीं कुछ आपका, हुवा मुझे सब ज्ञात।
जरा ध्यान लाकर सुनो, कहता हूं दो बात॥

जैसा प्रेम तुम्हारे को, रावण का वैसा हमको है।
तन-मन से सेवा की हमने, यह ज्ञात सभी कुछ तुमको है॥
जिस काम को नीच भी नहीं, करते वह काम किया दशकंधर ने।
तो कूच किया अब लंका से, समझो कि पुण्य सिकन्दर ने॥

दोहा

दम्भी अन्यायी अधम निन्दक और अज्ञान।
इतनों की संगत सदा, तजते बुद्धिमान॥

तजो देव फलहीन तजो, राजा जो कि अन्यायी है।
तज देना चाहिये धर्म भ्रष्ट को, चाहे सगा भाई है॥
तजो अटकनी तुरी, घूमती फिरे, वृथा वह वाम तजो।
जहां रहने से हो कर्मबन्ध, ऐसे सुख शय्या धाम तजो॥
जहां भले बुरे में अन्तर ना, वहां पांव नहीं धरना चाहिये।
और बुद्धिमान शत्रु अच्छा, मूर्ख मित्र तजना चाहिये॥
रहना उसपे जो गुण जाने, न जाने गुण तो क्या रहना है।
हीरे की जौहरी परख करे, मूरख ने पत्थर कहना है॥
तुम अपना सोच विचार करो, क्यों मोह में डूबे जाते हो।
क्यूं जान बूझ तुम भी उसके संग, जहर हलाहल खाते हो॥
यदि पक्ष करोगे झूठा तो, अन्तिम तुम भी पछताओगे।
और जान माल इज्जत खोकर, बस कर मलते रह जाओगे॥
बस यही हमारा कहना है, तुम अपना आप बचा लेना।
सबसे अच्छा जहां तक होवे, रावण को भी समझा देना॥
अब ख्याल हमारा सीता से, मिल कर रावण पै जाना है।
समझायेंगे यदि समझा नहीं, अन्तिम ऐलान सुनाना है॥

दोहा

प्रथम आपको कह चुका, अपने दिल की बात ।
इस अकार्य में भ्रात का, कभी न दूंगा साथ ॥

है विचार मेरा यहां तक, सीता वापिस करवाने का ।
पर पेश नहीं जाती क्योंकि, वो है बेशर्म जमाने का ॥
जो होना सो तो होगा ही, तुम वैदेही से मिल आओ ।
हम पता निशान बताते हैं, और आप अकेले ही जाओ ॥

दोहा

यहां से उत्तर की तरफ, देव रमण उद्यान ।
उसी बाग के मध्य है, रक्ताशोक महान् ॥

उस वृक्ष तले उस महासती, सीता माता का आसन है ।
तन मन से ध्याना रूढ हुई, मुख नमोकार का भाषण है ॥
कभी ऐसी हालत होती है, नयनों से नीर बरसता है ।
सन्देशा राम का सुनने को, उसका मन बड़ा तरसता है ।
तुम जावो अभी चले जावो, सन्तोष सिया को दे आना ।
श्री रामचन्द्र का संदेशा, और क्षेम कुशल सब कह आना ॥
इक्कीस दिवस होगये आज, जिस दिन से सीता आई है ।
खाना पीना क्या बूंद एक, जल की नहीं मुख में पाई है ॥

दोहा

निज सेवक जन से किया, हनुमत ने संकेत ।
फिर परमेष्ठी को जपा, अविचल राखे टेक ॥

कर जय जिनेन्द्र विभीषण को, हनुमान वहां से चल धाये ।
जब देवरमण के पास गये तो, पहरेदार नजर आये ॥
फिर सोचा कि ये देख मुझे, कोलाहल सभी मचायेंगे ।
मेरा भी समय नष्ट होगा, ये भी निज प्राण गमायेंगे ॥

: दोहा

यदि फाटक रास्ते गया, होगा विघ्न जरूर ।
सीता के फिर मिलन में, बाधा है भरपूर ॥

अच्छा है गगन आकाशी द्वारा, ही अपना सब काम करूं ।
जहां रक्ताशोक वहां जाकर, वैदेही को प्रणाम करूं ॥
उसी समय बन कर खेचर, अशोक वृक्ष पर जा बैठा ।
ना दृष्टि वहां जा सकती थी, ऐसे टहने पर जा लेटा ॥
सीता को पंच परमेष्ठी का, बस एक वहां शरणा देखा ।
सब अंग कष्ट से दुबले थे, नयनों में जल झरना देखा ॥

=००=

जगदम्बा दर्शन

दोहा

कर्म विपाक का कर रही, थी उस समय विचार ।
नेत्रों से थी बह रही, मानो जल की धार ॥

करतल पर कर धर बैठी थी, आंखें दोनों थी मिची हुई ।
गति उदासीन थी माता की, तन की तप से नस खिंची हुई ॥
पर चिह्न कुदरती शीलवान् के, कभी नहीं मिट सकते हैं ।
गुण वैदेही के उस मुर्झाये, तन में कब छिप सकते हैं ॥

दोहा

महासती के दर्श कर, खुशी हुए हनुमान ।
मन वच काया से किया, दिल ही दिल गुणगान ॥
पहला ही अवसर मुझे, किये दर्श यहां आन ।
धन्य राम, धन्य है सिया, धन्य ज्ञान शुभ ध्यान ।

श्री रामचन्द्र की आशा में, निज तन को नहीं गमाया है ॥
इक्कीस दिवस हो गये, आज तक अन्न-पान नहीं पाया है ।
इस तीन खण्ड की, ऋद्धि पर जूती की ठोकर मारी है ॥
और शील रत्न की खान अद्वितीय आज एक यह नारी है ।
इस वैदेही को दशकन्धर, निज कर से कभी ना मोड़ेगा ॥
मेरा तो निश्चय ऐसा है, आयु पर्यन्त न छोड़ेगा ।
आज्ञा नहीं श्री रघुपति की, किन्तु इसको ले चलते ही ॥
रक्षक योद्धे और लंक पति, सब रह जाते कर मलते ही ।

दोहा

हनुमान यों वृक्ष पर, बैठे करें विचार ।
सीता बोली शोक में, ऐसे गिरा उचार ॥
अय सीता किस की यहाँ, बैठी आशा धार ।
समय पड़े पर कौन हो, किसी का मददगार ॥

सीता जी का गाना

अय मात तेरी लाडली पर, जो मुसीबत आज है ।
कैसे बतावे हाल तुझ को, सब तरह मोहताज है ॥
प्राणों से प्यारी थी तुम्हें, तुमने बिसराया क्यों मुझे ।
अब तप्त ये जिससे बुझे, कैसे मिले वो साज है ।
पति का कथन माना नहीं, अपना मैं हठ ताना सही ॥
अंजाम कुछ जाना नहीं, अब किसपे मुझको नाज है ।
हे नाथ तुम भी हो खफा, दई छोड़ मुझको कर दफा ॥
किससे कहूँ अपनी व्यथा, रखे जो मेरी लाज है ।
क्या खबर प्रीतम हैं कहाँ, दिया साथ जिसने था वहाँ ॥
वन बैठी मैं कैदन यहाँ, कहाँ अवध सुख समाज है ।

किससे कहूँ अब क्या करूं, घोट घोट दम अपना मरूं ॥
या और कुछ आशा करूं, कहाँ मम पति महाराज है ।

दोहा

कहे आपत्ति शीघ्र अब, यह शरीर दे छोड़ ।
प्रेम कहे अभी ठहर जा, अपने मन को मोड़ ॥
फिरते होंगे ढूंढते, कहाँ मुझे रघुनाथ ।
यहाँ पर सौ सौ वर्ष सम, कटे एक दिन रात ॥

निष्ठुर वचन मेरे देशकंधर, कब तक सहता जायेगा ।
फिर अवश्यमेव एक दिन मेरी, इज्जत पर हमला आयेगा ॥
कुसुम व्योमवत् रामचन्द्र की, आशा निष्फल करना है ।
फिर इस हालत में सिवा मौत के, और मुझे क्या शरणा है ॥

—:※:—

सीता जी का विलाप

किस तरह मोहताज हो. यहाँ आज मैं मरने लगी ।
अय प्रेम अब तू अलग हट, मैं तन जुदा करने लगी ॥
देश घर जन सब बिगाना, अपना यहाँ कोई नहीं ।
अनित्य चोला तन का अब मैं, प्रेम कब धरने लगी ॥
पांच सौ मुनिवर पिले, घानी में धर्म के वास्ते ।
उन्हीं के शासन में हूँ मैं, मरने से कब डरने लगी ॥
ढूंढ भाल के खूब देखा, कर्म देखा है अटल ।
ना टले अरिहन्त से, फिर मैं तो कब बचने लगी ॥

दोहा

देख सिया के हाल को, दुखित अंजनी लाल ।
उसी समय ले मुद्रिका, दई तले को डाल ॥

जा पड़ी सिया के पास मुद्रिका, नाम राम का खुदा हुवा ।
जब नजर पड़ी जगदम्बा की, तो इकदम दुख सब जुदा हुवा ॥
दमक निराली चेहरे पर, आ खुशी ने डेरा डाला है ।
मानिन्द फूल के खिला हुवा, मस्तक खुश रंगत वाला है ॥

दोहा

मन में छाई प्रसन्नता, करने लगी विचार ।
अंगूठी रख सामने, बोली गिरा उचार ॥

सीता जी का विचारना

लंका में आई क्योंकर, भगवान् की अंगूठी ।
क्या प्रेम नाहिं उनसे, स्वामिन् की ऐ अंगूठी ॥
वे राम जिनकी संगत, सुरगण भी चाहते हैं ।
उनसे विमुख हुई क्यों, श्रीमान् की अंगूठी ॥
भयभीत काल जिनसे, उनको है किसने जीता ।
सुरपति भी रच सके ना इस शान की अंगूठी ॥
पक्षी भी फांद सागर, आये यहां असम्भव ।
हैरान कर रही है, गुणग्राम की अंगूठी ॥
आशीर्वाद तुम को, दूंगी "शुक्ल" बतादे ।
लाया है कौन यहां पर, कुल भानु की अंगूठी ॥

दोहा

प्रसन्नता लख सिया की, त्रिजटा के मन उल्लास ।
कहने को वृत्तान्त यहां, पहुंची रावण पास ॥

दोहा (त्रिजटा)

जय विजय हो महाराज की दिन-दिन बढ़े इकबाल ।
यदि हुक्म हो तो जरा, कहूँ बाग का हाल ॥

गद्यवार्ता

रावण—आओ त्रिजटा आओ, आज तो तेरा चेहरा बड़ा प्रसन्न नजर आता है। क्या तुम्हारा हाथ भी कुछ तरी में होना चाहता है।

त्रिजटा—जी हां महाराज! आज खुशखबरी सुनाकर इनाम पर अधिकार जमाने आई हूं।

रावण—तो सुनाओ।

त्रिजटा—महाराज यह अर्ज है कि अब तक सीता को रुदन के सिवाय और कुछ नहीं सूझता था परन्तु आज उसका चेहरा बड़ा प्रसन्न है। बस मैं तो इस बात को देखकर भागी जैसा समझा वैसा आपको आ सुनाया। अब आप मालिक हैं।

रावण—बहुत अच्छा किया! त्रिजटा अब तुम सीता के पास चलो और मैं महाराणी साहिबा को भेजता हूँ और मैं भी आता हूँ। घबराना नहीं।

[दासी का जाना तथा रावण का प्रधान महल में आना]

मन्दोदरी—पधारिये महाराज आज तो आप अत्यन्त प्रसन्न नजर आते हैं।

रावण—हां महाराणी साहिबा! त्रिजटा सूचना देकर गई है कि सीता आज अति प्रसन्न है। सो मेरे विचार में तुम पहले जाओ। सीता को समझा कर महलों में ले आओ अब उसने पिछला प्रेम छोड़ दिया होगा। अन्त में इसके सिवाय और करती ही क्या?

मन्दोदरी—मुझे तो सीता के सामने जाने में शर्म आती है।

रावण—तुझे तो शर्म आती है। यह नहीं कहती कि शौकन मेरी छाती जलाती है।

मन्दोदरी—खैर छाती तो एक दिन जलनी ही है। यदि आप कहते हैं तो मैं जाती हूँ, परन्तु मेरा निश्चय तो यही है कि खास इन्द्र भी आकर समझाये तो सीता अपने धर्म को नहीं त्यागेगी।

(सीता के पास जाना)

मन्दोदरी—सीता तेरा दुःख मेरे से नहीं देखा जाता।

सीता—तो मेरे दुःख मिटाने के लिये क्या उपाय सोचा ?

मन्दोदरी—क्या स्पष्ट कह दूं।

सीता—जो तू कहने को आई है सो तो कहना ही है। स्पष्ट कहो चाहे लपेट कर।

मन्दोदरी—वस मेरा तो यही विचार है। कि अब तू पिछला प्रेम छोड़ दे और दशकंधर से प्रेम जोड़ ले।

सीता तेजी से—वस वस खबरदार—अरी दुतिका मेरे सामने से अलग हट जा। बातें तो क्या मैं तेरी सूरत भी नहीं देखना चाहती !

शेर

हट दुराचारिणी यहाँ से, किसको बहकाने लगी।
जैसा सिखाया भांड ने, वैसा ही तू गाने लगी॥
धिक्कार तेरे मातु पितु को, और तुझे धिक्कार है।
मक्कार खर जैसा पति, वैसी ही तू मक्कार है॥

दोहा

शर्मसार मन्दोदरी, सुन सीता की बात।
मुंह छिपाय यहां से भगी, जा पहुंची एकान्त॥

दोहा (सीता)

प्रीतम की यहां मुद्रिका गिरी, किस तरह आज ।
दिल धैर्य धरता नहीं, बने किस तरह काज ॥

जा कारण दिल है समझ रहा, वह जिह्वा नहीं कह सकती है ।
यदि प्राणपति को कष्ट हुवा तो, यह मेरी कमबख्ती है ॥
क्या पत्ती कोई उड़ा लाया, जो गिरी यहाँ पर आकर के ।
क्या देव कोई या विद्याधर, कहीं छिप गया इसे गिरा कर के ॥

गाना (सीता जी का)

मैंने कैसा किया कर्म भारी, दिल में हो रही है बेकरारी ।
कैसे मुद्रिका राम की आई, लाया कोई इसे क्या चुराई ॥
दिल में ये ही है आश्चर्य भारी ।

राम लक्ष्मण जैसे शूरे, सब तरह निज शक्ति में पूरे ।
रहते सदा बीच हुशियारी ॥
किया छल था किसी ने है भारा, शायद प्रीतम मेरे को है मारा ।
मुद्री अंगुली से तभी उतारी ॥
हाय कर्म तू और सताले, चाहे जितना तू मुझको रुलाले ।
मैं तो डूबी हूँ कर्मों की मारी ॥
अब तो जी में मेरे यही आवे, जान तन से निकल क्यों न जावे ।
और करूं क्या मुसीबत की मारी ॥
क्या खबर कहां प्रीतम प्यारे, कौन दिल के भ्रम को निवारे ।
मानूं उसका मैं ऐहसान भारी ॥

शेर

आशा थी जो दिल में, वह सब काफूर बन गई ।
दोष किसका इसमें, जब कर्मों से तन गई ॥

तन जुदा करने को भी, ना कोई सामान है।
तो खेंचने को हाथ, और मेरी जबान है॥
वैर विरोध त्याग दिल को, शान्त करती हूँ।
शील की रक्षा लिये, भगवान मैं मरती हूँ॥

दोहा

दृश्य भयानक देख कर, झट उतरे हनुमान।
सम्मुख होकर कहने लगे, माता सुनो बयान॥

दोहा (हनुमान जी का)

अरी मात जरा दिल धीर धरो।
अब मरने का ना विचार करो॥

श्रीराम का भेजा आया हूँ, और ये मुद्रिका मैं ही लाया हूँ।
अंजना राणी का जाया हूँ, माता मुझ पर इतबार करो॥
पवन भूप का पुत्र हूँ माता, श्रीराम का सेवक कहलाता।
तुमरे दर्शन से हुई माता, अब मात जगत उद्धार करो॥
श्री रामचन्द्र जी महाराया, किष्किन्धा में डेरा लाया।
वहाँ से मैं चलकर आया, अब मुझ पर कुछ उपकार करो॥
दल बल सेना है किष्किन्धा, सुध लेने को आया बंदा।
निश्चय करलो हे जगदम्बा, सब सोच दूर एक बार करो॥
सुग्रीवादिक नृप आन मिले, सब तोड़न को गढ़ लंक किले।
रावण की शक्ति धूल मिले, अपने दिल को होशियार करो॥
तुमने सती धर्म निभाया है, दुनिया में यश फैलाया है।
तपस्या से तन को सुखाया है, अब जनक सुता आहार करो॥

दोहा

भाषण ये बजरंग का, सोचा दिल दरम्यान।
जनक सुता हनुमान से, बोली मधुर जबान॥

दोहा (सीता)

आज तलक देखा नहीं तुझको मैंने भ्रात।
किन्तु महासती अंजना, सुनी जगत विख्यात॥

रंग ढंग से यही नजर आता है, तुम कोई सज्जन हो।
यदि महासती के पुत्र हो, तब तो तुम दुःख निकन्दन हो॥
क्योंकि दुनिया में महापुरुष ही, दुखियों का दुःख हरते हैं।
वह सब कुछ अपना अर्पण कर, औरों की खातिर मरते हैं॥
अब रही बात निश्चय की भो, इसमें है कुछ संकोच मुझे।
जो जला दूध का फूंक छाछ को, लाता यह सब ज्ञात मुझे॥
चालाक आदमी दूजों का, बातों से मन भर सकता है।
और कारीगर मुद्री जैसी, दूजी मुद्री कर सकता है॥

दोहा

इस कारण हे भ्राता जी, मुझे नहीं विश्वास।
और निशानी राम की, बतलाओ कोई खास॥

जिससे दिल को विश्वास मिले, कि राम लखन को साता है।
प्रतिज्ञा पुरी हुवे बिना, मुझको नहीं अन्न जल भाता है॥
सन्तोपजनक श्रीराम लखन का, यदि संदेशा सुना देवो।
फिर तो मुझको ऐतराज नहीं, बेशक अन्न पान करा देवो॥

दोहा

हस्त लिखित श्रीराम का, लेकर कर में लेख।
जनक सुता से यह कहा, लीजे माता देख॥

श्री रामचन्द्र ने पत्र में लिख रखे, सभी इशारे थे।
थे शब्द वे चुन चुन के रखे, जो जो सीता को प्यारे थे॥
उस लेख में था वह असर भरा, जो पढ़े वीरता आ जावे।
जो खुशी हुई पढ़ सीता को, वह कैसे यहां कही जावे॥

जैसे वसंत में खिले फूल, या जैसे मेला जंगल में।
और ग्रीष्म अन्त जैसे श्रावण, शुभ सखियां जैसे मंगल में॥
सीता को ऐसे लहर चढ़ी, जैसे कि लहर समुद्र में।
उस लेख पे ऐसे मस्त हुई, जैसे अहि भमरा संदल में॥

दोहा

सोच समझ निश्चय किया, अपने दिल मंझार।
जनक सुता हनुमान से, बोली गिरा उचार॥

दोहा (सीता)

हां भाई मुझको हुवा, अब पूर्ण विश्वास।
खबर मुझे दी राम की, वीर तुझे शाबाश॥

हे सच्चे उपकारी योद्धा, मैं कैसे गुण गाऊं तेरा।
इस दुर्गम राष्ट्र में आकर, तुमने ही कष्ट हरा मेरा॥
अब इच्छा है प्रबल मेरी, श्रीराम के दर्शन चाहती हूं।
जिस कारण दिल है धड़क रहा, सो मैं भी तुझे बताती हूं॥

दोहा

दुर्जन का यह देश है, तुम हो चतुर सुजान।
ऐसा न हो आपको, कष्ट देवे कोई आन॥

अब जल्द यहां से जाकर के, श्रीराम लखन को बतलावो।
क्योंकि मुझको भय लगता है, तुम न कहीं यहां रोके जावो॥
कह देना जो कुछ देर करी तो, सिया न जीती पावोगे।
मैं परभव में पहुंचूगी यहां, और तुम पीछे पछतावोगे॥

दोहा

कर्मगति की चाल को, भोगे सकल जहान।
कभी बढ़ाते मान यह, कभी घटाते शान॥

है महा खेद उपकारी को, कहती हूं आप चले जावो।
क्या जोर चले कर्मों आगे, बेशक कोई हाथ मले जावो॥
यह महा दुःख मेरी जबान, मेरा ही मान घटाती है।
श्री रामचन्द्र के सेवक को, विश्राम न देना चाहती है॥

दोहा (हनुमान)

जैसा सीता नाम है, वैसा शीतल काम।
श्री रामचन्द्र से भी अधिक, इनकी मधुर जबान॥
जनक सुता के जब सुने, अमृत झरते बैन।
हाथ जोड़ बजरंग जी, लगे इस तरह कहन॥

तुम्हें धन्य मात हे जनक सुता, उदार चित्त वाली तुम हो।
तुम हो संकट मोचन हारी, महाशक्ति सुमति वाली तुम हो॥
तुम हो जगदम्बा महासती, दुखियों का दुःख हरने वाली।
क्या मात पिता क्या पति देश, सबको प्रसिद्ध करने वाली॥

दोहा

सेवक की यह अर्ज है, सुनो मात कर गौर।
यदि हुक्म हो लंक में, दिखलाऊं कुछ जौहर॥

यदि आज्ञा हो तो मात तुम्हें, श्रीराम पे अभी पहुंचा देऊं।
आज्ञा हो तो दशकन्धर, पापी का शीश उड़ा देऊं॥
निर्भय होकर हे जगदम्बा, तुम अपने मुख से फरमाओ।
दो हाथ बताऊं लंका में, सेवक की शक्ति अजमाओ॥

दोहा

कर सकते हो जो कहा, निश्चय आप निश्शंक।
पर द्रव्य काल और क्षेत्र को, सोचो ऐ बजरंग॥

चलूं आपके साथ वीर, इस हालत में ये ठीक नहीं।
जो लड़े अकेला रावण से, तो तेरी भारी पीठ नहीं॥
बस मेरी यही सम्मति है, तुम जल्दी किष्किन्धा जावो।
दल बल समेत श्रीराम लखन को, शीघ्र वीर लंका लावो॥

दोहा (हनुमान)

जो फरमाया आपने, वहीं मुझे स्वीकार।
मगर दीन की अर्ज पर, करना जरा विचार॥

प्रथम तो फिक्र तजो माता, दूजे कुछ अन्न जल पान करो।
तीजे कुछ आप निशानी दो, चौथे फिर आज्ञा दान करो॥
अब देवरमण उद्यान देख कर, किष्किन्धा में जाता हूं।
दल बल समेत श्रीराम लखन को, शीघ्र लंक में लाता हूं॥

दोहा

प्रतिज्ञा पूर्ण हुई, किया सती ने आहार।
फेर दिया हनुमान को, चूड़ामणि उतार॥

दोहा (सीता)

लो हनुमान चूड़ामणि, रखो अपने पास।
प्रीतम प्यारे से मेरी, करना ये अरदास॥

हाथ जोड़कर कह देना, तुमरे दर्शन की प्यासी हूँ।
क्यों आपने मुझको भुला दिया, मैं तो चरणों की दासी हूं॥
अब कृपा करो इस हालत पर, क्योंकि तुम दुःख निकन्दन हो।
रघुकुल दिनेश काटो क्लेश, दशरथ के आप सुनन्दन हो॥
लक्ष्मण देवर को कह देना, तुम पर ही तो विश्वास मेरा।
और सिर्फ आपके नामों पर, चलता है श्वासोच्छवास मेरा॥

रौरव नरक से भी बढ़कर, यह देवरमण उद्यान मुझे।
यदि हुई देर लाचार जिस्म, करना होगा श्मशान मुझे॥

दोहा (हनुमान)

माता अब विश्वास कर, हुवा सकल दुःख दूर।
लंकपति की लंक में, उड़ने वाली धूर॥

मानिन्द घटा के राम लखन, लंका पर छाने वाले हैं।
विजली समान वर धनुप वाण, वर्षा वरसाने वाले हैं॥
जैसे नभ में बादल समूह, ऐसे ही विमान अड़ा देंगे।
रावण की सारी शक्ति को, क्षण भर में धूर मिला देंगे॥

हनुमान जी का गाना

तेरा चमकेगा तेज सितारा सती।
तैंने पतिव्रत धर्म निभाया है, और कष्ट अतुल उठाया है।
हमको तेरा ही है, आधार सती॥
तैंने धर्म पर जान कुर्बान करी, लिये रावण के हुई तेज छुरी।
होगा दुष्ट का अब, संहार सती॥
श्रीराम लखन अब आवेंगे, गढ़ लंका को धूर वनावेंगे।
यहाँ का पुण्य खत्म हुवा सारा सती॥
तैंने सतियों का धर्म प्रकाश किया, सच्चे शील भवन में वास किया
समझा सब कुछ और असार सती॥
दुःख दूर हुवा विश्वास करो, नमोकार मन्त्र का जाप करो।
श्री जिन वर का लो सहारा सती॥
अब किष्किन्धा को जाता हूँ, बस आज्ञा आप से चाहता हूँ।
लेवो अब प्रणाम हमारा सती॥
हम संग राजे हैं वलवान् कई, और दलवल का कुछ पार नहीं।
ध्यावो "शुक्ल" ध्यान सुखकारा सती॥

दोहा (सीता)

वार वार रघुराय से, यही मेरी अरदास।
कह देना श्रीराम को, अब मत करो निराश॥

दोहा (हनुमान)

माता मत घबराइये, दिल में धारो धीर।
चन्द दिनों में आपकी, हर लेगें सब पीर॥

जो कहा आपने आदि अन्त, पर्यन्त सभी मैं कह दूँगा।
मुझको यहाँ कुछ भी कष्ट नहीं, यदि होगा तो सब सहलूंगा॥
अब आने में कुछ देर नहीं, श्रीराम को यहाँ समझ माता।
लो नमस्कार मैं जाता हूं, श्री वीतराग को भज माता॥

दोहा

नमस्कार कर चलने को, हनुमत हुवा तैयार।
जल भर नयनों में सिया, बोली गिरा उचार॥

सीता जी का गाना

जावो जावो जी हनुमत जावो, जल्दी राम लखन को लावो।
प्रीतम बिन यह नयन तरसते, दर्श बिना दिन रैन बरसते।
सब जाकर हाल सुनावो॥१॥
प्रेम के पुंज दया के सागर, रघुकुल दीपक करुणा सागर।
अब न मुझे तरसावो॥२॥
मैं दुखियारी कर्मों की मारी, सेवा न कुछ करी तुम्हारी।
ख्याल न दिल में लावो॥३॥
सावधान हो करके जाना, प्रीतम को सब अर्ज सुनाना।
अब आनन्द घन बरसावो॥४॥

दोहा

सीता को सन्तोष दे, चले वीर हनुमान।
लगे देखने घूमकर, देवरमण उद्यान ॥

कभी खाते हैं सन्तरा, कभी बदाम की डाल झुकाते हैं।
कभी लेवें तोड़ अनार, रक्त फूलों पर हाथ जमाते हैं ॥
फिर पहुँचे वीर अंगूरों के, गुच्छों पर हाथ चलाने को।
यह हाल देख उस तरफ, बाग का माली लगा चिल्लाने को ॥

—***—

माली और हनुमान

दोहा (माली)

अरे २ कहा करत भयो, रह्यो अंगूर उजाड़।
मानत नहीं ढीठ तू, आकर देऊँ सुधार ॥

आकर देऊँ सुधार तोये, मरनो पसन्द आयो है।
बिना हुक्म तू देवरमण में, कैसे घुस आया है ॥
देऊँ थोथरो तोड़ फेर जो, मुख अंगूर पायो है।
यह सरकारी बाग मूढ़ तू, किसको बहकायो है ॥

दौड़

आज तू कैद परेगो, जेल में कष्ट भरेगो, हुक्म नहीं यहाँ आने को, आन फंस्यो फन्दे मेरे, अब नहीं सूखो जाने को।

माली का गाना

अरे ढीठ उद्यान में क्यों बड़ा।
किस तरह घुस गया, जब कि पहरा खड़ा ॥
तोड़ने फल न दूंगा, मैं हरगिज कभी,

निकल वाटिका से तू, बाहर अभी।
नहीं तो लगे बांस, अब कड़कड़ा ॥
हुक्म रावण का हमको, बड़ा सख्त है,
तू तो सुनता नहीं, फिर रहा मस्त है।
बेइजाजत तू क्यों, बाग में आ बड़ा ॥२॥
तेरे सिर पर समझ, मौत मंडला गई,
परभव जाने की, तेरी खबर आ गई।
मैं था बेसुध गफलत में, सोया पड़ा ॥३॥

दोहा

बड बड़ करता इस तरह, पहुंचा हनुमत पास।
निडर वीर खाते रहे, हुए ना जरा उदास ॥

यह हाल देख खामोशी का, माली गुस्से में लाल हुआ।
नयनों में डोरे रक्त खिंचे, और भृकुटि सहित निडाल हुआ ॥
आकृति देख यह माली की, अंजनी लाल मुस्कराते हैं।
और प्रेम भाव से माली को, यों शीतल वचन सुनाते हैं ॥

दोहा (हनुमान)

बागवान् कहो क्या तुम्हें, हो रहा कम्पन वाय।
मस्तक में कुछ फर्क था, गर्मी रही सताय ॥

आवो बैठो यहाँ शान्ति से, और हमको आज बताओ सब।
जो रोग औषधि सब देंगे, क्योंकि फिर आवेंगे कब कब ॥
एक रोग तो है प्रसिद्ध, मुख आकृति से दर्शाता है।
यह रोग क्रोध रूपी अग्नि, जो मुख आँखों से बरसाता है ॥

दोहा

हनुमान के वचन सुन, हो गया लाल अंगार।
दांत पीस और शस्त्र ले, बोला गिरा उचार ॥

दोहा (माली)

अरे ढीठ तू हमन से, रह्यो मखोल उड़ाय।
भुट्टो सो यह सर तेरो, देऊँ धरन गिराय॥

जो बाग उजाड़ गेरो तूने, इसको अब स्वाद चखाऊँगो।
और जकड़ के रस्सों से तोहे, रावण के पास ले जाऊंगो।
काल तेरे सिर पर छायो, जो हमें बीमार बनावत है।
चोर काहीं को आन घुस्यो, और उल्टो धौंस दिखावत है।

दोहा

माली का वक्तव्य सुन, कोपे पवन कुमार।
कुछ तेजी में आन कर, बोले गिरा उचार॥

दोहा (हनुमान)

किस कारण अनुचित रहा, अपनी जबां चलाय।
क्या तेरे सिर पर रहा, आज शनिश्चर छाय॥

केवल यही विचार मेरा कि, किस पै हाथ उठाऊ मैं।
बुला आज दशकन्धर को, जिस को शक्ति दिखलाऊं मैं॥
क्षत्रापन का धर्म नहीं, तुम रंक का खून बहाऊं मैं।
किन्तु अनुचित भाषण का, थोड़ा सा स्वाद चखाऊं मैं॥

दोहा

माली की दाढ़ी पकड़, दिये तमाचे चार।
दो ठोकर पीछे दई, मच गया हा हा कार॥

रुदन सुना जब माली का, मालिन भी दौड़ी आई है।
बच्चे-बच्ची मजदूरों ने, कोलाहल अधिक मचाई है॥
यह हाल देख उस बाग के, सारे रक्षक दौड़े आये हैं।
मारो, पकड़ो यह भाग न जाये, मिलकर शोर मचाए हैं॥

दोहा

देख हाल ये पवन सुत, मन में करे विचार।
उन सबके हित के लिये, बोले गिरा उचार॥
मूढ़ सभी क्यों बन गये, भगो बचाकर प्राण।
नहीं द्वेष तुम से कोई, कहा हमारा मान॥

क्यों हमसे रार बढ़ाते हो, निज-निज स्थान प्रस्थान करो।
मात-पिता की सेवा करना, और बच्चों से प्यार करो।
निज शक्ति कुल को देखे बिन, क्यों मौत पराई मरते हो।
अनमोल समय न मिले फेर, क्यों व्यर्थ ही कर से खोते हो॥

दोहा

सुन कर हनुमत के वचन, रक्षकराय रिसाय।
शस्त्र लेकर हाथों में, बोला कदम बढ़ाय॥
अब पछताये क्या होत है, जब चिड़ियां चुग गई खेत
माफी माली से मांग लो, अपनी रक्षा हेत॥

ना छूट सके यूं बातों से, अब तेरा उल्लू बनायेंगे।
और मार-मार तुझ को, दुग्ध छठी का याद करायेंगे॥
ऐसा सुन अञ्जनीलाल को, क्रोध बदन भर आया है।
विकराल बदन और गर्जे-तर्जे कर, थप्पड़ एक जमाया है॥
पड़त वज्र सम चपेटिका, प्रधान धरणि पर जाय पड़ा।
प्रचंड तेज लख अंजनीसुत का, सबके दिल में खौफ भरा॥
पकड़ टांग से एक दूजे पै, गैंद समान गिराते हैं।
ये मार करारी देख सभी, जा सभा में अर्ज सुनाते हैं॥

दोहा

भाग-दौड़ माली गये, रावण के दरबार।
सभी दुहत्थंड़ मार कर, करने लगे पुकार॥

ध्यान सिया का हृदय में, दशकन्धर लाए बैठा था।
सब यथायोग्य बैठे बायें, सिंहासन पुत्र कनिष्ठा था॥
जब दृष्टि उठाकर देखा तो, माली सम्मुख रोते हैं।
नृप ध्यान हटा कुछ सीता से, इस तरह मुखातिब होते हैं।

दोहा (रावण)

क्यों रोते अय मालियो, कहो कष्ट का हाल।
किसने मारा है तुम्हें सूज रहे जो गाल॥

दोहा (माली)

बुरो हमन को हाल हुवो, सुनो श्री महाराज।
बालवचन के भाग से, बची जान यह आज॥

बची आज ये जान, आपके पास दौड़ आये हैं।
अर्ज यही कि देवमरण में, रहने को भरपाये हैं॥
तोड़ गेरो सब बाग फूल, अंगूर सभी खाये हैं।
आन घुसो कोई चोर, बाग में हम सब घबराये हैं॥

दौड़

पतो ना क्या बलाय है, किसी से डरत नाय है।
तुमन को काढ़े गाली, चमु प्रधान से मार दिये हम तो
गरीब हैं माली।

दोहा

अक्षय कुंवर सुत की तरफ, देखा नजर उठाय।
विनीत पुत्र झटपट उठा, बोला मस्तक नाय॥

दोहा (अक्षय)

चाहता था मैं भी यही, ठीक किया उपकार।
देखूं जाकर बाग में, कौन है मूढ गंवार॥

कवच शस्त्र धारण कर जाऊं, संग में सैन्य ले जाता हूं।
कौन घुसा ये आन बाग में, अभी पकड़ कर लाता हूं॥
शीश झुकाया पिता को, आ टुकड़ी को हुक्म सुनाया है।
अस्त्रों-शस्त्रों से सजवा करके, देवरमण में आया है॥

दोहा

निश्शंक वहीं थे घूमते, अमित बली हनुमान।
देख अकेला वीर को, बोला अक्षय धर मान॥

दोहा (अक्षय-हनुमान)

बिना आज्ञा इस बाग में, घुसा किस तरह आन।
कारण जल्दी से कहो, नहीं काढलूं प्राण॥

यदि प्राण प्यारे हैं तो सच-सच सब बातें बतलाओ।
नहीं तो इस तलवार को, सिर देकर के परभव को जावो॥
हाथ जोड़ कर क्षमा मांग, माली को शीश निवा जावो।
फिर मांगो माफी सब जन से, यदि जान बचानी निज चाहो॥

दोहा (हनुमान)

वाह-वाह-वाह क्या खूब, तू बजा रहा है गाल।
जैसा रावण चोर तुम वैसे जन्मे लाल॥

दोहा

ई परस्पर इस तरह, दोनों की तकरार।
दोनों योद्धों ने लिये, कर में शस्त्र धार॥

अक्षय कुमार की बिगुल बजी झट, मारा मार मची भारी।
अब चले वीर के बाण सरासर, सेना करते संहारी॥
पता लगे ना चाप का कब मारा, कब कर में बान लिया।
यों छाया सारा व्योम बाणों से, चंदोवा सा तान दिया॥

जिधर गये बजरंगी बाण, सब सेना चपट कर डारी है।
ये हाल देख घबराई सेना, भगी पड़ी अति भारी है॥
ये हाल लखा जब अक्षय कुंवर ने, धनुप बाण उठाया है।
पर पेश गई न वीर के सम्मुख, सरासन अपना टिकाया है॥
जब अक्षय कुंवर निज खड़ग तान हनुमान के सम्मुख आन अड़ा
और इधर वीर बजरंगी का, वज्र पर दाहिना हाथ पड़ा॥
अक्षय कुंवर ने खडग तान कर, अंजनीलाल पर झोंक दिया।
पर पवनपुत्र ने वार बचा, निज वज्र उस पर ठोक दिया॥

दोहा

अक्षय कुमार धरनी गिरा, मच गया हा हा कार।
कुछ बचे आदमी सैन्य के, दोड़े करन पुकार॥

दोहा (दूत रावण का)

वज्रपात प्रभु हो गया, परलोक सिधारे कुमार।
इन्द्रजीत को सुनते ही, छाया जोश अपार॥

दोहा

सुन मूर्छित लघु भ्रात को, इन्द्रजीत रणधीर।
तमक उठा सारा बदन, यों बोला बलवीर॥

यों बोला बलवीर देखूं जा, बला ये क्या आई है।
यदि निकला कोई अन्य मनुष्य, उसकी शामत आई है॥
तीन खंड में भुजबल की, शक्ति मैं दिखलाई है।
आज यह कर्त्तव्य करने की, यहाँ किसमें जुर्रत आई है॥

दौड़

किये का दण्ड पायेगा, भाग कर कहाँ जायेगा।
सिर्फ आज्ञा चाहता हूं, बाँध जूड़ कर उसी दुष्ट
को अभी यहाँ लाता हूं।

दोहा (रावण)

हाँ बेटा जावो अभी, देवरमण उद्यान।
पकड़ उसे लाकर धरो, मेरे सम्मुख आन ॥

इन्द्रजीत-हनुमान

दोहा

कवच पहन तन पर लिये, सब हथियार सजाय।
इन्द्रजीत उस बाग में, पहुंचा जल्दी जाय ॥

जब नजर मिली बजरंगी से, तो दोनों वीर मुस्काये हैं।
दोनों के भुजदण्ड फड़क उठे, शस्त्रों पर हाथ जमाये हैं ॥
जब अक्षयकुमार को देखा तो, नयनों में सुर्खी आई है।
तब क्रोधातुर हो इन्द्रजीत ने, ऐसे बात चलाई है ॥

दोहा (इन्द्रजीत)

अय मूर्ख तू किस लिये, फंसा मौत मुख आन।
इकलौता ही लाल तू, सोचा नहीं नादान ॥

क्यों प्रहलाद का वंश आज, निर्वंश करन की ठानी है।
अब लंका से नहीं ले जा सकता, ये अपनी जिन्दगानी है ॥
अक्षयकुमार और वज्रमुखा, दोनों को तूने मारा है।
अब सोच जरा अपने मन में, कैसे होगा छुटकारा है ॥
यदि ख्याल हो तेरा भागन का, सो भी आशा निष्फल होगी।
नादान नहीं कुछ भी सोचा, परिवार बनेगा सब शोगी ॥
बस एक यही रास्ता तुमको, पहनो कर में जंजीर अभी।
चल सैर करो कारागार की, बख्तर शस्त्र दो छोड़ सभी ॥

शेर (हनुमान)

संहार इस वज्र से मैंने, दोनों का ही कर दिया ।
ठोकर से गेरूं ताज रावण का ये, दिल में धर लिया ॥
जामात तेरे बाप का, जंजीर पहनेगा नहीं ।
कंगना विजय का हाथ में, सज कर दिखा देगा यहीं ॥
आदत ये तेरे बाप की है, दुम दबाकर भागना ।
हम शुरमां का काम है, शत्रु के सम्मुख गाजना ॥
मुश्किल बताता जंग में, धोखे में रह जाना नहीं ।
इस मौत रूप. वेग में तू, देख बह जाना नहीं ॥
कहना तेरा ये ठीक मैं, अंजना का एक ही लाल हूं ।
उस सिंहनी का सिंह, तुम सब के लिये मैं काल हूं ॥
सिंहनी के सिंह ही, होते अतुल बलवान हैं ।
मानिन्द गधी के जन दिये, मन्दोदरी ने लाल हैं ॥

शेर (इन्द्रजीत)

शेखियां तेरी सभी यह, धूल में मिल जायेंगी ।
पहुँचेगा तू परभव में, और बातें यहाँ रह जायेंगी ॥

शेर (हनुमान)

शक्ति है कितनी मुझ में, यह वज्र पता देगा ।
आ सामने तुझको, तजुर्बा सब बता देगा ॥

दोहा

सुनी काट करती हुई, हनुमान की बात ।
इन्द्रजीत का क्रोध से, लगा कांपने गात ॥

जुट गये वीर रण में दोनों, दोनों ही थे गम्भीर बली ।
बाणों की वर्षा बंद हुई, फिर दोनों की तलवार चली ॥

कभी नभ में कभी भूतल पर, अप अपना जोर लगाते हैं।
ना वो हारा ना वो हारा, दोनों ही लज्जा खाते हैं॥

दोहा

देख तेज हनुमान का, इन्द्रजीत हैरान।
वज्रङ्गवली के सामने, ढला आज सब मान॥

इन्द्रजीत मन सोच रहा, ये तो बिल्कुल ही आफत है।
हनुमान भी यही विचार रहा, किसको दे बैठा जाफत है॥
रावण से भी वातें दो करके, किष्किन्धा को जाना है।
दे रामचन्द्र को सभी खवर, सीता का कष्ट मिटाना है॥

दोहा (हनुमान)

चेहरे पर कहो किस लिये, गई उदासी छाय।
अपने दिल के भाव सब, देवो जल्द वताय॥

क्या मुझको रिश्तेदार समझ, तुमने नहीं चोट लगाई है।
या दशकंधर के पास चलूं, यदि दिल में यही समाई है॥
मैंने तो समझा था लंका, वालों में कुछ दानाई है।
पर यहां अक्ल के खाने में, सबके ही सिफर समाई है॥

दोहा (हनुमान)

क्यों मेंढक सा उछल कर, रहा जवान चलाय।
स्वयं आप घवरा गये, हमको रहे चिड़ाय॥

अभी तो मैंने केवल तेरी, शक्ति ही आजमाई है।
ले सम्भल खड़ा हो जा जल्दी, अव तेरी शामत आई है॥
जब मौत शृगाल की आती है, तो ग्राम सामने आता है।
था अब तक रिश्तेदार किन्तु, अव तो शत्रु कहलाता है॥

दोहा

इतना कह बजरंग पर, नाग फांस दिया डार।
बैठा कर विमान में, पहुंचा लंक मंझार॥

जा पेश किया दशकंधर के, सम्मुख हनुमान बैठाया है।
तब इन्द्रजीत की पीठ ठोक, दशकंधर अति हर्षाया है॥
दरबार ऐन भरपूर हुवा, कई देख २ खुश होते हैं।
कई बुद्धिमान् अन्याय समझ, अंजाम सोच कर रोते हैं॥
वीर विभीषण भी अपने, सिंहासन पर थे विराज रहे।
कुछ अन्तर से थे भानुकर्ण, योद्धा भी वहाँ विराज रहे॥
देख २ निज गौरव को, दशकंधर जी खुश होते हैं।
फिर पवन पुत्र से लंकपति, इस तरह मुखातिब होते हैं॥

=———

रावण-हनुमान

(हनुमान जी व रावण का सवाद)

रावण—अहो पवनपुत्र तुमने यह क्या किया ?

हनुमान—जी हाँ जब तक आत्मा की मोक्ष नहीं हो जाती तब तक यह संसार में कुछ न कुछ अवश्यमेव करता ही रहता है। इसलिये आपकी इच्छानुसार जो कुछ आपको अच्छा लगा सो आपने किया। जो कुछ मेरा कर्त्तव्य था सो मैंने कर दिया।

रावण—क्या तेरा यही कर्त्तव्य था, कि चोरी से देवरमण में घुसना, बागवानों को सताना, नागफांस में फंसकर यमराज के हाथ में अपनी जान देना।

हनुमान— आपकी बात बिल्कुल ठीक है किन्तु मेरे साथ सम्बन्ध नहीं बैठता। यदि आप हृदय में विचार कर देखेंगे तो आपके ऊपर ही घटती नजर आयेगी।

रावण—अरे हनुमान तेरी समझ पर क्या पत्थर पड़ गया है। मैं तो भानेज जंवाई समझ कर प्रेम से कुछ पूछना चाहता हूँ और तुम मेरे से विपरीत ही चलते हो। और यह गन्दी बात हमारे ऊपर ढालते हो।

हनुमान—वाह वाह क्या कहने हैं। आपको एक शर्म नहीं और सब गहने हैं। अजी भानेज जमाई के वास्ते तो आपके प्रेम की ही सीमा न रही अहा हा देखो तो सही ऐसा आभूषण कोई प्रेम के बिना किसी को पहिना सकता है? हरगिज नहीं और इसका नाम भी क्या है। (नागफांस , और जिस बात को आप अपने वास्ते गन्दा समझते हैं। उसे प्रेम भाव ही तो मेरे ऊपर लगा रहे हैं।

रावण—अरे यह तो तेरे खोटे कर्मों का फल है।

हनुमान—वाह यह खूब उचरे नानी खसम करे दोहिता चट्टी भरे। दुष्ट काम करने वाले आप और इसका फल भोगने वाला मैं! भला ऐसा घोर अन्याय हो वहाँ का राज्य और सुख सम्पति क्यों ना नष्ट हो यह किसी कवि ने क्या ही उत्तम पद कहा है कि—

बिगरे पय कांजी की छींट परे, कलधोत कुधात परे बिगरे।
बिगरे तपपुञ्ज कषाय चढे. पद ऊँच कुसंगति ते बिगरे॥
बिगरे कुल जात कलंक लगे, नृपराज अनीति करे बिगरे।
बिगरे हित मित्र जहां छल है , शुभ धर्म मृपामति से बिगरे॥

रावण—अनीति मैंने की या तूंने।

हनुमान—सोचो मैंने की या कि तुमने।

रावण—सोचने की क्या बात है। यह तो प्रत्यक्ष सामने नजर आती है। और अब भी आँखों में धूल डालना चाहता है।

हनुमान—क्यों बतलाइये मैंने क्या करी!

रावण—अरे दुष्ट तूने आशालीकोट क्यों ढाया।

हनुमान—तुमने को लगाया क्या किसी दुष्टकर्त्तव्य का डर था

रावण—देख जबान को लगाम लगा।

शेर

औकात अपनी देख कर, बातें बनाना चाहिये।
जैसा पचे भोजन उदर में, वैसा खाना चाहिये॥

हनुमान—हां, मुँहजोर टट्टू को कांटेदार लगाम की आवश्यकता है।

शेर

क्षत्रिय का जो विन्द वह ललकारता मैदान में
चोर की औकात क्या, बातें करे जो सामने॥

रावण—अच्छा तैंने वज्रमुखा को क्यों मारा।

हनुमान—उसने मुझको क्यों रोका।

रावण—अपना कर्त्तव्य पालन करने के लिए।

हनुमान—उसका क्या कर्त्तव्य था।

रावण—अन्य राष्ट्र वाले को अन्दर नहीं आने देना।

हनुमान—यदि दूत होतो?

रावण—दूत को नहीं रोकना।

हनुमान—बस मैं आपके कथनानुसार निर्दोष होगया।

रावण—क्या तू दूत है?

हनुमान—और क्या भूत हूं।

रावण—किसका दूत बन कर आया है ?

हनुमान—वाह आप किस अन्धेरी कोठरी में बैठे हैं। आपके पास पत्र आ चुका है, सारी दुनियाँ में प्रसिद्ध हो चुका, यदि आपको भी फिर पता नहीं तो बताये देता हूँ-मैं दूत हूं अयोध्या पति श्री रामचन्द्र जी महाराज का।

रावण—वाह खूब सुनाई। जंगली भीलों का दूत बन के आया है। खैर इस बात को तो फिर चलायेगें परन्तु यह बतलाओ कि देवरमण में बिना आज्ञा क्यों घुसा।

हनुमान—देवरमण कहाँ है।

रावण—तुमको खबर नही।

हनुमान—किस बात की।

रावण—अरे जहाँ मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा हुआ है क्या तुमको यह भी नजर नहीं आया।

हनुमान—अच्छा तो देवरमण शब्द जहाँ मर्जी लिखदें वह चोर पल्ली भी क्यों न हो तो क्या उसी का नाम देवरमण हो जाता है।

रावण—अरे जहाँ तैने मालियों को मारा, अक्षकुमार को मौत के घाट उतारा, जहाँ मेघनाद ने तुमको नागफांस में बांधा क्या वो चोर पल्ली है।

हनुमान—चोर पल्ली नहीं तो और क्या है।

रावण—भला कैसे चोर पल्ली है।

हनुमान—अजी जहाँ चुराई हुई वस्तु छिपाई जाय और भले पुरुष को भी अन्दर न आने दिया जाय।

रावण—क्या छिपाया।

हनुमान—जिस काम को नीच भी नहीं करते उस नीच काम से भी नीच काम को आपने किया! श्री रामचन्द्र जी की

महारानी सीता जी को चुराया। और चोर पल्ली में छिपाया। उसको छिपाने वाला चोर नहीं तो और क्या। और जहां सीता जी को छिपाया चोरपल्ली नहीं तो और क्या है?

रावण—तू दूत है वरना तेरा सिर उड़ा देता।

हनुमान—क्या कहना है शूरमा हो तो ऐसा ही हो। वन में गीदड़ की तरह छिप कर सिंहनाद बजाना, धोखे से सीता को चुराना, पूंछ दबाकर भागना, भला ऐसे नपुंसकों ने भी कहीं मैदान मारा है? असली बात का कोई उत्तर नहीं। बस यही सीखे हैं कि सिर उड़ा दूंगा। अजी सिर तो आपका उड़ने वाला ही है। जिसको आप बुलावा दे आए हो। क्या वह लक्ष्मण का शस्त्र आपका सिर लेने को न आयेगा? नहीं नहीं, अवश्य आयेगा।

रावण—यदि तू दूत है तो अक्षयकुमार के साथ लड़ने की क्या जरूरत थी?

हनुमान जी—निरपराधी के ऊपर वार करने का तो मेरा भी नियम है।

रावण—उसने तेरा क्या अपराध किया?

हनुमान—हां-हां गालियां दीं, मारने को शस्त्र झोका, क्या फिर भी अपराधी ही ना हुआ?

रावण—अरे तूने पहले मालियों को सताया, ठोकरों व तमाचों से उनका शरीर व मुख सुजा दिया, फिर भी तू अपराधी न हुआ। और बाग का मालिक, गरीब मालियों का सहायक अक्षयकुमार अपराधी बन गया।

हनुमान—हां अपराधियों का सहायक अपराधी नहीं तो और क्या होता है।

रावण - मालियों ने तेरा क्या बिगाड़ा था ?

हनुमान—हां उन्होंने अनुचित शब्द कहे, बद जबान चलाई और मैंने दो थप्पड़ व ठोकर लगाई ।

रावण—उन्होंकी आज्ञा विना देवरमण में क्यों घुसा और फल क्यों खाये ?

हनुमान—फिर वही बात । अजी मैं तो चोरपल्ली में गया था अपना मुद्दा ढूंढने के लिये, सो मेरा कार्य सिद्ध हो गया और मैं लंका को चोरपल्ली, यहां के निवासियों को चोर और आपको सबका सरदार समझता हूं ।

रावण शेर—

अब अधिक जो कुछ कहा, तो सर उड़ा दूंगा ।
तेरे जिस्म से जीव का, नाता छुड़ा दूंगा ॥

हनुमान शेर—

शेखियां तेरी ये, मिट्टी में मिलाऊंगा ।
ताज ठोकर से गिरा, मस्तक का जाऊंगा ॥

इन्द्रजीत—पिताजी आप किस पागल से मगजपच्ची कर रहे हैं महाराज ! भूत का इलाज हमेशा जूत होता है । आप तो शान्ति के समुद्र हैं । परन्तु ऐसे अयोग्य शब्दों को मैं सहन नहीं कर सकता ।

[खड्ग खैंच कर]

शेर—

अनुचित शब्द कहने से, पहले सिर उड़ा देता ।
खाल में भुस भर के, रास्ते पर टिका देता ॥
बस मैं आगे और कुछ कानों से, सुन सकता नहीं ।
सिर उड़ाये बिन मैं, इस शत्रु का रह सकता नहीं ॥

इन्द्रजीत-विभीषण

विभीषण जी—बस-बस बेशर्म कुपात्र—तू कहां से कुल कलङ्क पैदा होगया। तू भाई रावण का हितकारी पुत्र नहीं, किन्तु शत्रु है। भला तेरा बीच में बोलने का क्या अधिकार था। अय मूढ़! तूने आज असंख्य पीढ़ियों से और असंख्य समय से चली आती हुई राजनीति का भंग किया है। बस यदि अपना भला चाहता है तो चुपचाप वापिस यहां से उसी जगह बैठ जाओ। मैं इस अन्याय को नहीं देखना चाहता। यदि एक कदम भी आगे बढ़ाया तो अपनी तलवार से तेरा सिर उड़ा दूंगा। जब तक मैं जीता हूँ, जहाँ तक मेरी शक्ति है, तब तक अपने भाई त्रिखण्डेश्वर श्री दशकन्धर के गौरव को नीचा न होने दूँगा। दूत का कर्त्तव्य है कि अपने स्वामी की आज्ञा नर्म या कठोर जैसी मर्जी वैसे कठोर शब्दों में सुना सकता है और सुनना हमारा कर्त्तव्य है।

रावण—ठीक, विभीषण का कहना ठीक है और तुम गलती पर हो। राजनीति में दूत अवध्य है। और यह भी सोचना चाहिये कि जिसको जैसी संगति होती है वैसे ही उनमें संस्कार पड़ जाते हैं। किसी ने यह सत्य कहा है—

दोहा

जैसी सौबत बैठते वैसे ही गुण लीन।
कदली सीप भुजंग मुख एक बूंद गुण तीन॥

जैसे जंगली मनुष्य राम लक्ष्मण हैं वैसा ही यह दूत है। एक और यह भी सोचने की बात है कि जब उनकी स्त्री पर हमारा अधिकार है। क्या बेचारे गालियों से भी गये। यही तो

निर्बल और शक्तिशालियों की परीक्षा की कसौटी है। यह स्वाभाविक बात है कि निर्बल गालियाँ ही निकाला करते हैं और बुद्धिमान् सह लेते हैं। इसलिये तुम अपने दोष को स्वीकार करते हुए उल्टे पैरों अपने सिंहासन पर बैठ जाओ।

इन्द्रजीत—पिताजी आपकी आज्ञा मुझे स्वीकार है परन्तु यह याद रखें कि चचा साहिब ने इस समय शत्रु की सहायता की है और मेरा सिर उड़ाने में नीति समझी है। आपने भी शत्रु की सहायना करने वाले की प्रशंसा की है लेकिन समय आने पर आपको प्रत्यक्ष दिखला दूँगा कि देखलो शत्रु की सहायता पर पूर्ण तुले हुए हैं। ऊपर से ये तुम्हारे भाई हैं! और प्रेम दिखलाते हैं किन्तु निश्चय ये शत्रु हैं। आप भी इनके साथ मिल कर नीति-नीति पुकारते हैं। पिता जी शक्ति ही नीति है, कहावत भी प्रसिद्ध है कि "जिसकी लाठी उसी का सिर" शत्रु और कांटे को जहां पावे, वहीं मसल देना चाहिये। बस यही सर्वोत्कृष्ट नीति है। शक्तिशाली अपना काम कर जाते हैं और निर्बल नीति-नीति करते मर जाते हैं। अच्छा हमें क्या! जैसी मर्जी वैसा करें, जब आपके सामने कोई कठिन समस्या आयेगी स्वयं पता लग जायेगा।

[मेघनाद का अपने स्थान पर बैठ जाना]

रावण—क्यों हनुमान जी कुछ घबरा रहे हो या किसी विचार में लग रहे हो।

हनुमान—जी नहीं, घबराना किससे है। कुछ आप लोगों का तमाशा देख रहा था और कुछ विचार भी कर रहा था।
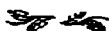
रावण-हनुमान

रावण—क्या विचार कर रहे थे।

हनुमान—जी हाँ एक दृष्टान्त पर मेरा ध्यान चला गया था। उसको आप ही के ऊपर घटा रहा था।

रावण—फिर घटा है या नहीं ?

हनुमान—जी हाँ, बिल्कुल ठीक बावन तोले पाव रत्ती।

रावण—क्या दृष्टान्त है, हम भी सुनें।

हनुमान—महाराज एक पर्वत के समीप मिरासी लोग रहा करते थे, पथरीला क्षेत्र विशाल था। अन्नादिक की उत्पत्ति कम होती थी। वहाँ के राजा ने सोचा कि इन रंक मिरासियों से क्या कर लेना है मानो एक स्वतन्त्र मिरासियों को रियासत ही बन गई थी। प्रायः ये लोग कलह प्रिय होते हैं, एक दूसरे के घर, मुहल्लों पर अधिकार जमा लेते थे। कई पीढ़ियों तक इनकी यही दशा रही, उसके बाद एक मिरासी के तीन पुत्र पैदा होगये। जिनमें बड़ा पुत्र झगड़ालु, जल्दबाज, कलह-प्रिय, आचार-विचार भ्रष्ट, कुपात्र था, दूसरा अपने भाई के अनुकूल चलने वाला जिसको अच्छे बुरे की पहिचान न थी, भद्र और शूरवीर था, तीसरा पवित्रात्मा, सत्यवादी, न्यायी, सदाचारी था। बड़े पुत्र ने अपने बड़ों से छिनी हुई रियासत. घर-मुहल्ला जो कुछ भी था, उसे अपनी शक्ति व प्रभाव से वापिस छीन लिया तथा आसपास के मिरासियों पर अधिकार जमा कर मानो एक स्वतन्त्र राजा बन बैठा और आनन्द से रहने लगा। इधर-उधर किसी की पुत्रियों को, राजकुमारियों को अपहरण कर लेना, किसी को सताना

उसका कुकर्त्तव्य था. परन्तु शक्तिशाली था इसलिये सब लोग डरते थे। उस अन्यायी का सामना करते हिचकते थे। एक दिन श्रेष्ठ राजा अपनी रानी को साथ लेकर भ्रमण करता हुआ उसी पहाड़ के समीप आ निकला। मिरासी राजा की नजर श्रेष्ठ राजा की पतिव्रता पर पड़ी और अपहरण कर लाया। धर्मात्मा राजा ने अपना दूत भेजा लेकिन नीति से अनभिज्ञ मिरासियों ने दूत का भी अपमान किया। यह देख दूत ने जाकर अपने स्वामी से सब वृत्तान्त कह दिया तथा उस न्यायी राजा ने कुछ योद्धाओं को भेज कर मिरासियों को अन्याय करने का स्वाद चखाया, कुछ भाग गये, कुछ कैद कर लिये और अपनी रानी को साथ ले गया। सो मैं भी यही विचार कर रहा था कि देखो बुद्धिहीन शठों ने अपना सर्वस्व नाश करा लिया।

रावण—अच्छा तो यह दृष्टान्त हमारे ऊपर घटाया है।

हनुमान—मैंने क्या जबरदस्ती घटाया है, यह तो स्वयं ही घट गया।

रावण—तो हम मिरासी हैं।

हनुमान—आप जो मर्जी बनें, मैंने तो उनकी तरह बतलाया है।

रावण—अरे तुल्य कहो, तरह कहो, भांति कहो, इसमें भेद ही क्या है।

हनुमान—नहीं तो ना सही, इसमें भेद की जरूरत ही क्या है।

रावण—मुझको क्रोध बहुत आता है। किन्तु क्या करूं तू दूत है।

हनुमान—नहीं तो।

रावण—नहीं तो तेरे टुकड़े-टुकड़े कर डालता।

हनुमान अच्छा मैं रामदल में सैनिक बन कर दूसरे रूप में

आपसे जंग करने के लिये आऊंगा उस समय यह क्रोध मेरे ऊपर निकाल लेना, किन्तु यह याद रखना कि मेरे सामने आने से पहल ही किसी योद्धा की झपट में आकर परभव को सिधार न जाना।

शेर (रावण)

सूरमा मैंने कोई, संसार में छोड़ा नहीं।
नीचा दिखाये विन, किसी को आज तक मोड़ा नहीं॥
आएंगे शक्ति कौनसी पर, भील मेरे सामने।
नाम ही रावण का सुन, योद्धा लगें सब काँपने॥

शेर (हनुमान)

चाल जो राजा की हो, सो चाल चलनी चाहिये।
ठोकरें खाने से पहले ही, संभल जाना चाहिये॥
शेखियां सारी ये रण, भूमि में देखी जायंगी।
वीर लक्ष्मण के अगाड़ी, धूल में मिल जायंगी॥
शेर की मूछों पै डाला, हाथ क्या छुट जायेगा।
कच्चे चित्र की तरह, दुनिया से तू मिट जायेगा॥

रावण (भानुकरण)—विभीषण देखो, रामचन्द्र जंगली भील होते हुए भी चालाक और धूर्त कितना है। जिसने हमारी छत्र-छाया में रहने वाले हमारे सेवक हनुमान को भी कैसे फन्दे में फँसाया है, पता नहीं क्या जादू डाला है। जिसके प्रभाव से अपने कुल का गौरव और हमारा प्रेम तो क्या जिसने अपने शरीर की भी सुध-बुध भुला दी। और रामचन्द्र शिकारी की तरह आप तो नहीं आया किन्तु हनुमान को कुत्तों की तरह मुझ जैसे सिंह के सामने भेज दिया। अब इसने तो विना सोचे समझे अज्ञानता से अनुचित काम किया,

परन्तु यदि मैं भी इसको प्रत्युत्तर में सजा दूं तो मेरा और उसका अन्तर ही क्या रह जायेगा। किन्तु नहीं हमारी शोभा और गौरव हनुमान के ऊपर अनुग्रह करने में ही है।

कुम्भकर्ण—निस्सन्देह महाराज आपको ऐसा ही सोचना चाहिये। [क्षमा वीरस्य भूषणम्] अर्थात् दूसरों पर कृपा करना, मिष्ट वचन बोलना, विचार कर काम करना ही बड़ों का भूषण है तथा (उदारचित्तानां वसुधैव कुटुम्बकम्) अर्थात् उदार हृदय वाले पुरुष का समस्त संसार ही निज का कुटुम्ब है। फिर हनुमान तो हमारे पुत्रवत् है। यदि इसका जो भी कुछ अपमान हुआ वह हमारा ही तो हुआ।

शेर

भूले को समझाना यही, कर्त्तव्य है इन्सान का।
करना नहीं अपमान, घर आए हुए मेहमान का॥

विभीषण—भानुकरण जी का कथन सुनहरी अक्षरों में लिखने लायक है, तथा मेरी जबान इन अनमोल शब्दों का आशय प्रकट करने में असमर्थ है। अब इतना ही कहना चाहता हूँ कि महाराज का और हनुमान जी का परस्पर प्रेमपूर्वक वार्तालाप होना चाहिये।

शेर

जिसको नजर आता स्वयं, मार्ग वही बतलायेगा।
जो आप ही उल्टा चल रहा, औरों को क्या समझायेगा॥
कर्त्तव्य अप अपना पिछाने, मनुष्य का ये धर्म है।
नहीं तो उसे जानो पशु, या यों कहो बेशर्म है॥

इसलिए हमारी दोनों से प्रार्थना है कि प्रेम पूर्वक वार्तालाप हो और हनुमान जी ! आप से हम विशेष करके कहते हैं।

हनुमान—आपका कथन मुझे स्वीकार है किन्तु ईंट का उत्तर तो मैं पत्थर से ही दूंगा। क्योंकि—

शेर

चाकर हूँ मैं श्रीराम का, उनका सिपाही हूं।
भाई भले का समझ ले, बद का जमाई हूं॥

जिसको अपने गौरव की जरूरत हो वह दूसरों का गौरव बढ़ाने की कोशिश करे।

शेर

शिक्षा लई गुरुदेव से मैं, पहल कर सकता नहीं।
जो होगा अपराधी कभी मैं, उससे टल सकता नहीं॥
सत्य का पक्षी हूँ मैं, प्रतिपक्षी हूँ अन्याय का।
खौप खोटे कर्म का, सेवक हूं श्री जिनराय का॥

रावण—ठीक; पवन कुमार मनुष्य को ऐसा ही होना चाहिए। अब जरा शान्ति से सुनें उसके ऊपर विचार करें।

हनुमान—जी हां ध्यान से सुनूंगा।

रावण—अच्छा प्रथम लंका और अयोध्या की तुलना करके देखो कि कितना अन्तर है

हनुमान—किस बात का।

रावण—जल वायु का, स्वाभाविक दृश्यों का, रूप का, शक्ति का, पुण्य प्रताप का, मेरा और रामचन्द्र का इत्यादि सब प्रकार का।

हनुमान—जी हाँ ऐसे तो पृथ्वी और आकाश में जितना अन्तर है। अयोध्या पुरी जैसे स्वर्ग, लंका जैसे नर्क रामचन्द्र जैसे सुरेन्द्र आप जैसे असुरेन्द्र इत्यादि सब प्रकार का।

रावण---मैंने समझ लिया कि तू हवा के घोड़े पर सवार है,

हनुमान---जो मर्जी कहो वह आपके अख्त्यार है।

रावण---मैं क्या करूं जब काल तेरे सिर पर तैयार है।

हनुमान---जी हाँ, काल तो सबके ऊपर आयेगा, कोई शुभ नाम और कोई अशुभ नाम फैलाकर मर जायेगा।

रावण कथन (व० त०)

होश में आन कर बात कर तू जरा।
वीर पृथ्वी के मुझको सलामी करें॥

तेरा गौरव मेरे संग बढ़ जायेगा॥
रामचन्द्र की क्यों तुम गुलामी करें। (१)

वह तो स्वयं ठोकरें खाते वन में फिरें॥
ऐसे भीलों से तुम क्यों कलामी करें।

"शुक्ल" कर दूंगा.वृद्धि तेरे राज्य की॥
ता उमर क्यों न अपनी आरामी करें। (२)

हनुमान (व० त०)

यह कहना उन्हें जो हों अज्ञानी जन,
मेरे खुले हैं सारे हृदय चस्म के जख्म।
सिक्का ढल जायेगा सारा पल में तेरा,
इस लंका में तेरी न होगी रस्म।
जिन्दगी तेरी समझ खत्म हो गई,
रामचन्द्र के रण में तू होगा भस्म।
तुख्म छोड़े ना लंका में हरगिज तेरा,
साफ कहता हूं खाकर मैं तेरी कसम।

जर्द चेहरा हुवा देख गममें तेरा,
हिल चुकी है तुम्हारी सब नब्जो नसम।
"शुक्ल" थोड़े दिनों में तेरे जिस्म की,
बस उठा लेंगे डोली में गाके नजम।

शेर (रावण)

सोच अपने मन में अब तू, क्या था और क्या हो गया।
जो साथ मेरे था तेरा गौरव वो, सारा खो गया॥

कहाँ तो सुग्रीव और हनुमान को दुनियाँ राजा रावण की मूछों का बाल कहती थी। किन्तु आज तुम उस नीच जंगली भील सम शिकारी के कुत्ते बने हो शर्म शर्म शर्म।

हनुमान—बस फिर क्या जब मूछें ही कट गई तो फिर रहा ही क्या? खाक किन्तु मूछों का ख्याल मर्दों को होता है, नामर्द की मूछें कटें चाहे दाढ़ी उसे क्या शर्म।

रावण—देख जैसे तुम्हारे बड़े और तुम भी अब तक हमारे सेवक रहे और हम तुम्हारी सहायता करते रहे। उसी तरह अपने बड़ों की परम्परा को छोड़ना धर्म नहीं।

दोहा (हनुमान)

कब सेवक थे हम तेरे, कब स्वामी था तू।
स्वामीपन की आप में, जरा नहीं है खुशबू॥

जब वरुण भूप ने कैद किये, खरदूषण को क्या नहीं पता।
कुछ पेश गई ना आपकी वहाँ, तब बुलवाया था मेरा पिता॥
खरदूषण को छुड़वा करके, आधीन वरुण करवाया था।
क्या वह दिन भी अब भूल गये, शत्रु से तुम्हें बचाया था॥

फिर एक बार मैं आया था, जिस समय आप पर भीड़ पड़ी।
उस समय तुम्हारे चहुँ ओर, दुर्जन की थी संगीने खड़ी॥
जब आपके लगे घसीटने को, वहाँ वरुण भूप के सुत दल में।
तब मैंने आकर छुड़वाया था, तुमको शत्रु के दंगल में॥

दोहा

शुभ कर्त्तव्यों पर जरा, रखना चाहिये ध्यान।
गौरव निज पहचान कर, तजो निरस अभिमान॥

आज तीन बातों को लेकर, हुआ मेरा यहाँ आना है।
प्रथम सीता की खबर लेन, दोयम तुमको समझाना है॥
यदि आप नहीं समझे तो, फिर जंगी ऐलान सुनाना है।
और नाग फांस के बंधने का, बदला लेकर भी जाना है॥

अब सोचो आप जरा मन में, किस गौरव पर थे खड़े हुए।
और तीन खंड में सब राजों के, मस्तक पर थे चढ़े हुए॥
किन्तु आज सब दुनियाँ की, दृष्टि से आप हैं गिरे हुए।
हैं बड़े बड़े शक्तिशाली राजों के, दिल भी फिरे हुए॥

बस यही हमारा कहना है, जगदम्बा को वापिस कर दो।
जिस बात से प्रेम घटा सब का, फिर भी उसको वैसा कर लो॥
वह पुण्य समाप्त अब हुवा आपका, सीता माता के हरने से।
हम सब का भी मन फटा एक बस, यही अनीति करने से॥

जिस शक्ति का अभिमान तुम्हें, वह सभी धरी रह जायेगी।
अब तक तो कुछ भी नहीं बिगड़ा, फिर बात हाथ नहीं आयेगी॥
यह समय हाथ से निकल गया, तो फिर पीछे पछताओगे।
लक्ष्मण आगे रणभूमि से, तुम अपने प्राण गंमाओगे॥

दोहा (रावण)

वस वस वस मैं सुन लिया, सब तेरा उपदेश।
अधिक और आगे कहा, तो होगा वहुत क्लेश॥

जब तक दम में दम मेरा, तो जानकी जान की साथिन है।
जैसे तू नाग फांस में यूं, सीता में वंधा मेरा मन है॥
मैं सुर सुन्दर से जीत लिये, फिर कौन विचारा लक्ष्मण है।
इक रामचन्द्र क्या सारा दल, तलवार मेरी का भक्षण है॥

शेर (हनुमान)

फिर कहता हूँ समझ ले, वरवाद क्यों होने लगा।
एक नारी के लिये सर्वस्व, क्यों खोने लगा॥

शेर (रावण)

सीता विरह का शब्द भी, सुनना जरा चाहता नहीं।
प्राण प्यारी के विना, अन्न जल मुझे भाता नहीं॥
सीता सो मेरी जान है, जो जान है सीता वही।
वतलाइयें पानी से क्या, शीतलता जाती है कहीं॥

गाना (हनुमान का रावण को समझाना)

अय भूपति मत, जुल्म पर वांधे कमर,
आखिरी अच्छा, नहीं होगा समर।
दिल दुखाना धर्मियों का, है गुनाह,
अन्याय से ना, सुख मिले हमने सुना॥
इसलिये रख, प्राणी मात्र की कदर,
एक डंडे से, सभी को हाँक मत।
ज्ञान सम्यक से लखो, कुछ सत्यासत,
फिर न्याय और अन्याय की, कुछ रख खवर॥

कर्त्तव्य अपने को जरा पहचान तू,
पाके तुच्छ वैभव, न कर अभिमान तू।
क्या मनुष्य तन पाया है, भरने को जठर॥ २
व्यवहार रखना शुद्ध, गौरव है यही,
चन्द दिन की जिन्दगी, सब की कही।
अन्त सब लेवेंगे, परभव की डगर॥ ३
चक्री तीर्थंकर, व गणधर चल बसे,
अन्त-सुरपति ने भी अपने कर घसे।
आज ढूंढे भी नहीं आते नजर,
धर्म करने को मिला मनुष्यतन।
पाके अत्युत्कर्ष को ना नीच बन।
लांघ मत सरवर व व्रज की सतर।
आया कहीं से काल कर जाना भी है,
फिर शुभाशुभ कर्मफल पाना भी है।
इसलिये शुभ ध्यान अपना शुक्ल कर।

शेर [रावण]

बंद कर उपदेश को बस क्यों ढिठाई है गही।
राम के जो भी सहायक मौत उन की आगई।

शेर [हनुमान]

ठीक यह दिल में समझ, मौत तेरी आगई।
पेश अब किसकी चले, जब होनी सिर पर छागई॥

रावण वार्ता:—बस-बस अब ज्यादा बक-बक मत कर यदि कुछ दिन दुनिया में रहना है तो जान बचाने की फिक्र कर।

(हनुमान जी का प्रचँडता में आकर नागफांस तोड़ डालना और ऐलान सुनाना)

हनुमान जी—अहो लंकेश—श्री रामचन्द्र महाराज तुमको यह हुक्म देते हैं कि या तो सीता को अर्च-पूज कर वापिस करदो नहीं तो जंग के लिए तैयार हो जावो। और जीने की आशा छोड़ कर परभव में जाने की तैयारी करो। फेर ना कहना कि रामचन्द्र जी ने मुझको बिना खबर ही आकर दबा लिया।

शेर

धोखा न देना किसी को, यह क्षत्रियों का धर्म है।
शरण आये की करे, प्रतिपालना ये कर्म है॥
किस बात पर भूला फिरे, तुझको मिटा देंगे।
धरणी तो क्या चीज, हम स्वर्ग को भी हिला देंगे॥

रावण—बेटा मेघनाद इस दुष्ट को अभी पकड़ कर मेरे सामने मुँह काला करदो और गधे पर बैठाकर मोरी के रास्ते से निकाल दो।

दोहा

सुनते ही इस बात को, कोप उठे बजरँग।
कड़के बिजली की तरह, होकर रँग विरँग॥

मस्तक पर ठोकर लाकर के, रावण का ताज गिराया है।
फिर गगन गति कर गये, कलेजा सबका ही दहलाया है॥
निज अंगरक्षकों से आन मिले, जहाँ पर भी था संकेत किया।
प्रसन्न वदन हो चले शीघ्र जा, किष्किन्धा प्रवेश किया॥

दोहा

वाशिन्दे सब लंक के, जल बल हो गये खाक।
रावण ऐसा जल गया, कोयला न रहा राख॥
दशकन्धर का जब गिरा, ताज धरणी पर जाय।
एक दम सारे शूरमे, दौड़ शोर मचाय।

पकड़ो पकड़ो इस दुरात्मा को, टुकड़े टुकड़े इसके कर दो।
इस बात का तो क्या कहना है, यदि पकड़ यहां सम्मुख धरदो॥
देख देख इस बेइज्जती को, सब लंका वाले रोते हैं।
कर सके कौन रक्षा उसकी, जिसके उल्टे दिन होते हैं॥

रावण—बेटा इन्द्रजीत! शर्म शर्म शर्म।

इन्द्र—किसको।

रावण—तुमको।

मेघनाद—क्यों।

रावण—अरे हमारे अपमान को तो खड़ा खड़ा देखता रहा। तुमसे एक वंदर न पकड़ा गया।

मेघनाद—अजी मेरा तो रोम-रोम खुश होगया। आपके साथ ऐसा ही होना चाहिये था। और चाचा साहब का कहना माना करो, बस जल्दी ही बेड़ा पार हो जायेगा। फिर ताज तो क्या आपका सिर भी गिर जायेगा।

भानुकर्ण:—बेटा इन्द्रजीत शान्ति करो, तुम्हारा कहना ठीक है परन्तु उस समय तो बात ही और थी।
यदि दूत को मार ही देते तो हमेशा के लिए कलंकित हो जाते।

इन्द्रजीत—हूँ-अब तो बड़े निष्कलंक हो रहे हो। सीता को लाये तभी दोनों को समाप्त कर आते तो क्यों बुआ राँड होती क्यों पाताल लंका का राज्य जाता। और क्यों सुग्रीव-हनुमान राम के पक्ष में होकर आज ये दुर्दशा करते, परन्तु यहाँ हमारी मानता ही कौन है, यहाँ तो उनकी ही चलती है जो सत्यानाश करने वाले हैं' जहाँ दुनिया चोर कहती है। वहां अन्याय किया इतना और कह देती। बस इतना ही अन्दर था या और कुछ—

शेर

कष्ट से लाया था मैं, शत्रु को पकड़ करके यहाँ।
हाथ से मौका गया अनमोल, अब मिलना कहाँ॥
दुःख बड़ा यों काल के मुख से, गया दुर्जन निकल।
पवन पुत्र कर गया, हम सबकी बुद्धि को विकल॥

रावण—बेटा इस विचार को अब छोड़ दो। और हम उसको एक पशु समझते हैं। जैसे पशु बंधन से घबरा कर रस्सों को तोड़ देता है और नुकसान भी कर देता है बस यही हाल हनुमान का हुआ फिर हम विचार करें तो किस बात का!

विभीषण—जी हाँ सम्भव है। ऐसा ही हुआ होगा क्योंकि जिस समय आपने काला मुँह करने को कहा बस वह शब्द उससे सहा नहीं गया और गगन गति करते समय आपके ताज में झपट लग गयी बस बात तो यह है, इस बात को यहीं छोड़ देना चाहिए। और जिस कारण से अशान्ति हुई है उस कारण को दूर करने का कोई नियत समय कर लीजिये जिसमें शान्त करने का कोइ उपाय सोचा जाय।

रावण—शान्ति का उपया सोचा जाय। क्या किसी को तपेदिक है। हमें सोचने की कोई जरूरत नहीं यदि होगी तो रामचन्द्र को होगी वह सोचें या न सोचें हमें क्या? प्रथम तो रामचन्द्र में शक्ति ही नहीं कि लंका की ओर एक भी कदम उठायें, यदि उठायेगा तो अपने प्राण गवायेगा। यदि सुग्रीव भी उसका साथ देगा तो वह अपने प्राण और तीन सौ योजन का वानर द्वीप हाथ से गवांयेगा। हमारे तो सब तरह पौ बारह हैं। (सभा की ओर देखकर) क्यों जी क्या बात ठीक है। (विभीषण के अतिरिक्त सब) हाँ ठीक है। बिल्कुल ठीक है।

रावण--बस मेरी यही आज्ञा है कि सबको अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए हर समय तैयार रहना चाहिए और प्रेम से एक जयकारा बुलाकर सभा को विसर्जन करना चाहिए (बोलो राजा रावण की जय)

[पटाक्षेप]

राम-हनुमान

दोहा

रामचन्द्र के पास जब, जा पहुँचा हनुमान ।
भूम झाम चहूं ओर से, आ पहुंचे इन्सान ॥
सीता का चूड़ामणि, दिया राम के हाथ ।
आदि अंत पर्यंत अब, लगा कहन सब बात ॥

भूखा जैसे भोजन पर, त्रिषातुर जैसे पानी पर ।
प्रतिज्ञा पर जैसे संतजन। या भव्यजीव जिनवाणी पर ॥
वीणा पर जैसे सर्प मस्त, औषधि मस्त जैसे रोगी ।
जनता सुनने में मस्त हुई, शुभ ध्यान मस्त जैसे योगी ॥

दोहा (हनुमान)

जिस कारण लंका गया, हुवा सिद्ध सब काज ।
जो जो कुछ बीतक हुवा,सुनो सभी महाराज ॥

चहुं ओर कोट आशाली का था, पहले उसको तोड दिया ।
फिर रोका वज्रमुखे ने तो, उसका भी सिर फोड़ दिया ॥
फिर पहुँचा पास विभीषण के, जो मेरा बड़ा सहायक था ।
यह उनका ही उपकार सभी, वरना मैं तो किस लायक था ॥

फिर गया व्योम से देवरमण, अशोक वृक्ष पर जा बैठा।
थीमणि पीठिका पर सीता, उस तरफ ही ध्यान लगा बैठा॥
तब देख हाल जगदम्बा का, पत्थर का कलेजा छनता था।
गिर गिर नयनों का जल वहाँ, पानी का झरना बनता था॥
बैठी थी अपने आसन पर, ना खाती थी ना पीती थी।
यदि जीती थी बस एक आपके, राम नाम पर जीती थी॥
एक घड़ी-घड़ी पल-पल उनको, वर्षों की तरह गुजरता था।
दिल तो चाहता था मरने को, पर आपका प्रेम मुकरता था॥
अन्तिम निराश हो करके फिर, शर्द श्वास जब भरने लगी।
तब मैंने मुद्रिका गेर दई, देखा कि जब वे मरने लगी॥
फिर मैंने प्रणाम किया, और आपका सब संदेश कहा।
जब दशा आपकी सुनी, नीर नयनों से और विशेष बहा॥
विश्वास दिलाकर मुश्किल से, मैंने उसको समझाया था
इक्कीस दिवस के बाद मात को, अन्न पान कराया था॥
बार बार तुम चरणों में बस, यही अर्ज गुजारी है।
यदि जल्दी ना लिया पता तो, आयु खतम हमारी है॥
मेरी तो यही सम्मति है, अब देरी का कुछ काम नहीं।
जब सीता को है कष्ट महा, तो हम को भी आराम नहीं॥
लंकपति को चलते समय, जंगी ऐलान सुना आया।
निज ठोकर से दशकन्धर के, मस्तक का ताज गिरा आया॥

दोहा

सिया संदेशा राम ने सुना, प्रेम के साथ।
हृदय लगाया पवन सुत, लम्बे करके हाथ॥

जब लगी खबर सिया की सबको, खुशी की ना सम्भाल रही।
सुन दुःख सिय का सब नारी, आँखों से आंसू डाल रही॥

अब शीघ्र लंक में जाने को, सब योद्धाओं का मन चाहता है।
श्री रामचन्द्र को घड़ी-घड़ी, वर्षों की तरह दिखाता है॥

दोहा

उसी समय सुग्रीव ने, किया खास दरबार।
लंका पर अब चढ़न को, हुए सभी तैयार॥
मुख्याधिकार सबने दिया, सुग्रीव नरेश के हाथ।
और सहायक संग में, कर दिया वीर विराध॥

वानर दल के योद्धाओं के, मस्तक पर लाली दमक रही।
गम्भीर शूरमे सजे खड़े, नंगी तलवारें चमक रही॥
बाकी राजे सब अपनी अपनी, सेना ले तैयार हुवे।
श्री रामचन्द्र के सेवक बनकर, सब के दिल एक सार हुवे।

दोहा

भामंडल मंडलपति, वड़वानर नल नील।
जामवंत अंगद चढ़े, कपि सुत नन्द सलील॥

श्री महेन्द्र महिमा अपार, और पवन पुत्र बजरंग चढ़े।
सज गए प्रबल महाबल, यह दोनों ही थे दुर्दान्त बड़े॥
वीर विराध बलवंत महा, थे भूप सुनैयन उदार वहीं।
कई विद्याधर कई भूचर थे, सब दल बल का कुछ पार नहीं।
सज गये विमान आकाशी, और दारू गोला शुमार नहीं॥
संग्रामी रथ हाथी घोड़े; हैं विकट गाड़ी विस्तार कहीं।
सब मारू बाजे बजा बजा, सेना को जोश दिलाते हैं।
चढ़ गया वीर रस योद्धों को, हुँकार से धरा कंपाते हैं॥

दोहा

श्रीराम ने कर दिया. लंका को प्रस्थान।
एक से एक शूरमा, महा अधिक बलवान्॥

करता किलोल सिन्धु जैसे, इस तरह राम की सेना है।
वहाँ विविध भांति के वाहन, और जहाँ विविध भांति का गहना है॥
और विविध भूप सुन्दर स्वरूप, क्या शस्त्रों का वहां कहना है।
निश्चय विश्वास सभी को, रावण का खुर खोज न रहना है॥

दोहा

जंगी बाजे बज रहे, पड़ी गगन में धूम।
जय बोले 'श्रीराम की' रहे चरण रज चूम॥

हैं विविध भांति के तम्बू आदि, खान पान समान सभी।
तल्लीन राम की सेवा में, और राजे हैं कुर्बान सभी॥
गुल गुलाहट हस्ती करते, कहीं घोड़ों का हिनमाना है।
झंकार कहीं पर थानों का, अद्भुत ही शब्द सुनाना है॥

दोहा

कायर जन सिंहनाद सुन, क्षण में छोड़ें प्राण।
बढ़े शूरमों का वहाँ, उत्साह अधिक महान्॥

कई बैठे चले विमान बीच, कोई गजरथ अश्व पै जाते हैं।
सब पार हुए बेधड़क सिन्धु, वेलन्धर गिरि पर आते हैं॥
सेतु समुद्र वहाँ दो राजे, महाशुर वीर बलधारी थे।
श्रीरामचंद्र को रास्ता, देने से दानों ही इन्कारी थे॥

सेतु भूप

दोहा

वेलंधर पुर नगर का, सेतु श्री महाराय।
सीमा पर श्रीराम के, दल को रोका आय॥

मित्र भूप समुद्र को संग ले, निज सीमा पर आन खड़े।
यह लगा पता श्रीराम के, सन्मुख योद्धे हैं बलवंत खड़े॥
श्रीरामचन्द्र जी ने भेजा, निज दूत उन्हें समझाने को।
आज्ञा पाकर वहां दूत गया, स्वामी का हुक्म बजाने को॥

दोहा (दूत)

राम दूत की लीजिये, नमस्कार महाराज।
जिस कारण आया यहाँ, सभी सुनाऊँ आज॥

श्रीराम ने ये बतलाया है, तुमसे ना वैर हमारा है।
फिर किस कारण रोका हमको, असली क्या ख्याल तुम्हारा है॥
एक सिया के कारण ही, हम लंक पुरी को जाते हैं।
हम सिवा एक रास्ते के, आपसे और नहीं कुछ चाहते हैं॥
बस यही निवेदन है तुमसे, अपने दल को वापिस कर लो।
इसमें क्या आपकी हानि है, यदि है भी तो हम से भर लो॥
झगड़े का करना ठीक नहीं, इसमें कुछ हर्जा तुम्हारा है।
और क्षण २ की देरी में यहां, भारी नुक्सान हमारा है॥

दोहा

वचन दूत के सुनत ही, कोपा सेतु नरेश।
उलट पुलट कहने लगा, जिससे बढ़े क्लेश॥

दोहा (सेतु)

वन का वासी भीलड़ा, दुखियारी का पूत।
नार खुसा कर अब यहां, लगा भेजने दूत॥

उस समय शक्ति क्या गहने थी, जब दशकंधर ने सिया हरी।
धिक्कार है ऐसी शूरमता, इक नारी की ना विपद टरी॥
बस यही हमारा कहना है, अपने दल को वापिस कर लो।
वरना नृप सेतु समुद्र की, यहां शक्ति सहने का दिल कर लो॥

रास्ता देकर क्या रावण से, हम अपना नाश करा लेवें ।
उस लंक में ऐसे योद्धे हैं, जो सारी धरा कंपा देवें ॥
सभी नपुंसक सेना लेकर, लंका पर करी चढ़ाई है ।
जा कहो राम से वापिस, हो जाने में तेरी भलाई है ॥

दोहा

सुने काट करते हुए, सेतु भूप के वैन ।
विकराल रूप होकर लगा, दूत इस तरह कहन ॥

इसमें ही भला तुम्हारा है, जा राम लखन के चरण परो ।
वरना देरी का काम नहीं, मैदान में आकर चरण धरो ॥
ज्यूं खोज तिटाया खर दूषण का, ऐसे तुम्हें मिटा देंगे ।
जिस लंकपति का भय तुमको, हम धूल में उसे मिला देंगे ॥

दोहा

इतना कह कर दूत फिर, गया राम के पास ।
आदि अन्त पर्यन्त सब, कथा सुनाई भाप ॥

चौपाई

उसी समय नल- नील बुलाया ।
श्रीरामचन्द्र ने, हुक्म सुनाया ॥
जावो वीर मत, देरी लगाओ ।
सेतु भूप वो, बांध ले आओ ॥

दोहा

सेतु समुद्र दो भूप थे, अद्भुत शक्तिवान् ।
टापू एक समुद्र में, थे उनके स्थान ॥

यन्त्रों की चहुँ तरफों से, सुरंगें थी वहाँ बिछा रखी ।
जो आवे उसे डुबा देवें, शक्ति थी वहाँ छिपा रखी ॥

सिवा पत्थर के और कोई ना, चीज सफल हो सकती थी।
नल नील ने अनुभव से देखा, हृदय में स्वामी भक्ति थी॥

दोहा

अहं भाव तज स्वामी की, करें हृदय से सेव।
गौरव दुनिया में बढ़े, उन सब का स्वयमेव॥

साइन्सदान नल नील उस समय, हरफन के जो माहिर थे।
थे महाबली योद्धा बाँके, कर्त्तव्यशील जग जाहिर थे॥
कृत सकंल्प से पहिले लंका में, लश्कर पहुंचाना था।
उस सामग्री का था अभाव, जो जल्दी काम बनाना था॥
गर देर लगी पुल बन्धने में, तो वाक्य भंग हो जायेगा।
प्राण तजे वहां सीता. यहाँ योद्धों का दिल घबरायेगा॥
नल नील ने देखा दूर गिरि से, एक जलाशय घिरा हुवा।
वृत्त सहित उसमें पत्थर. नौका के मानिन्द तिरा हुवा॥

दोहा

लिया नमूना नील ने, पत्थर किये तलाश।
उसी नमूने का मिला, गिरी समुद्र पास॥

दण्ड रत्न सम शस्त्र से, पर्वत को तोड़ गिराया है।
गुप्त मार्का राम नाम, पहिचान के लिये लगाया है॥
इसी नसल के पाषाणों में, पुल सा एक तय्यार किया।
उदधि की खाड़ी पर था यह, फरश आर और पार किया॥

दोहा

श्रीराम इस कार्य को, देख हुये हैरान।
सम्बोधन कर सभी से, यूं बोले भगवान्॥

जितने भी योद्धा हो मुझको, एक एक से अधिक प्यारा है।
विश्वास मुझे सन्मुख तुम्हारे रावण कौन विचारा है॥
यह काम किया तुमने जादू का, पत्थरों को भी तिरा दिया।
नल नील की खोज अपूर्व है, सबके दिमाग को फिरा दिया॥

दोहा

आश्चर्य लख राम का, बोले नल नील प्रवीन।
सिद्ध कार्य उन्हीं का, रहे सत्य में लीन॥

हे नाथ आप की कृपा से, ये सारे पत्थर तरते हैं।
विश्वास प्रभु में है जिन का, वह पार भवोदधि करते हैं॥
पुण्य आपके से स्वामी, यह पत्थर यहाँ पर पाया है।
हे नाथ आपकी कृपा से, ये पुल तैयार कराया है॥
ये आपके नाम की बर्कत है, बस और किसी का महत्त्व नहीं।
ये पुण्य प्रकृति आपकी है, बस और कोई यहाँ तत्त्व नहीं॥

दोहा

परीक्षा कारण ही गये, एकान्त आप भगवान्।
समझ रहस्य पीछे चले, गुप्त वीर हनुमान॥

श्रीराम ने एक शिला लेकर, पानी पर स्वयं टिकाई है।
उसी समय वह डूब गई, तब शर्म राम को आई है॥
पीछे जब देखा हनुमत है, तो बोले बात छुपाने को।
आओ हनुमान किस तरफ चलें, क्या आये शौच मिटाने को॥

दोहा

प्रभु अकेले कहाँ चले, देखा मैं जिस वार।
पीछे मैं भी चल दिया, झटपट हो तैयार॥

पर यहां आप पाषाणों को क्यों, उदधि में सरकाते थे।
और आश्चर्य से इधर-उधर, क्यों दृष्टि को दौड़ाते थे॥

हे नाथ आपकी शुभ प्रकृति, काम सभी कुछ करती है।
और पुण्य-योग से मिली हुई, योद्धाओं की शुभ भक्ति है॥

दोहा

मुस्काय हनुमान को, यूं बोले श्रीराम।
भाई मुझमें वो नहीं, कोई महत्त्व का काम॥

नल नील की ये सब महिमा है, पत्थर को जिसने तरा दिया।
जिसको मुश्किल समझे थे, वह काम आपने बना दिया॥
जन समूह एकत्रित हो, श्रीराम के गुण सब गाते हैं।
योद्धों सहित नल नील के यूं, श्रीराम जी गुण-प्रकटाते हैं॥
यह सब नल नील की साइंस है, इसमें शंका का काम नहीं।
हमने फेंका वो तरा नहीं, तो महत्त्व का राम का नाम नहीं॥
भगवान् जिन्हों को फेंक देवें, तो वह कैसे तर सकते हैं।
आप नहीं जिनको फेंकें, वह कष्ट पार कर सकते हैं॥
महापुरुष गुण वर्णन करके, औरों को अपनाते हैं।
यों विनोद की बातें कर कर, दिल अपना बहलाते हैं॥
प्रेम पूर्वक जो प्राणी अपने, कर्त्तव्य निभाते हैं।
वो यहाँ पर गौरव सुख भोगें, अन्त परम पद पाते हैं॥
स्वार्थी अपने नाम का ही, टाइटिल चमकाना चाहते हैं।
वो सदा दुःखी गौरव खो करके, नीच गति जा पाते हैं॥
'शुक्ल' ध्यान परमार्थ शोभन, ज्ञान ध्यान में लीन सदा।
जीवन सफल उन्हीं का होगा, आवे दुःख न पास कदा॥

दोहा

फिर आज्ञा पा राम की, चले वीर हुलसाय।
रणभूमि में आन कर, दिया मोरचा लाय॥

दिया मोरचा लाय खनाखन, बजने लगा दुधारा।
कहीं अग्निवाण कहीं धुन्धवाण, कहीं चलता सांग कटारा॥
किया धरणि को रक्त व्योम में, चलता खून फुवारा।
देख तेज नल नील का, सेतु समुद्र हौसला हारा।

दौड़

घेर लिये दोनों राजे, जीत के बाजे बाजे पास, श्रीराम के लाये, उदार चित्त रघुकुल दिनेश ने ऐसे वचन सुनाए।

दोहा (श्रीराम)

निष्कारण तुमने किया, निज गौरव का नाश।
समझाये थे प्रथम ही, दूत भेज कर पास॥

फिर भी हम हित की कहते हैं, तुम अपने घर आबाद रहो।
हमको कुछ भी नहीं चाहना है, एक भरत भूप की शरण गहो।
यदि सहायता रावण की चाहो, तो मंगवा सकते हो।
और जो भी दिल में ख्याल, सभी तुम पूरा करवा सकते हो॥

दोहा (सेतु)

क्षमा करो सब दोष अब, कृपा करो रघुनाथ।
दास समझ कर प्रेम का, धरो शीश पर हाथ॥

यह राज पाट सब आपका है, हम तो चरणों के चाकर हैं।
दुःखियों के दुःख निकन्दन हो, रघुकुल में आप दिवाकर हैं॥
जो भी कुछ आपकी आज्ञा है, सो सिर मस्तक पर धारेंगे।
यह सिर जाय तो जाय किन्तु हम, वचन ना अपना हारेंगे॥

दोहा

तोड बंध श्रीराम ने, किया उन्हें स्वतन्त्र।
प्रेम भाव उत्पन्न हुआ, बजने लगे वाजिन्त्र॥

सेतु समुद्र ने लक्ष्मण को, निज-निज पुत्री का डोला दिया।
बन गये सहायक रामचन्द्र के, दारू शस्त्र गोला दिया।
यहाँ एक रात विश्राम किया, फिर आगे को चल धाये हैं।
सेतु समुद्र के सहित सभी, सुवेल गिरि पर आये हैं।
सेतु समुद्र को आधीन किया, सुवेल भूप को खबर लगी॥
और सुना राम दल आ पहुँचा, तो क्रोधानल प्रचण्ड जगी।
इसी समय रणतूर बजाकर, दल बल आगे ठेल दिया॥
इस तरफ सुसेन भूप ने भी, आकर सीमा को घेर लिया।

—※※※—

सुवेल भूप

दोहा

युद्ध भयंकर छिड़ गया, लगा होन घमासान।
गिरें धड़ाधड़ शूरमे, रणक्षेत्र में आन॥

वो दृश्य भयानक देख देख, कायर धरणी गिर जाते थे।
श्री रामचन्द्र का तेज देख, सब ही शत्रु भय खाते थे॥
झट भगी फौज यह हाल देख, सुवेल भूप घबराया है।
इस वक्त सुशैन ने हल्ला कर, भूपति को आन दबाया है॥

दोहा

सोचा भूप सुवेल ने, अब ना पार बसाय।
संधि का फिर इस समय, दिया निशान दिखाय॥

फिर क्या था इस रण भूमि में, प्रेम परस्पर होने लगा।
श्रीरामचन्द्र का वचन भूप के, वैर विरोध को खोने लगा॥
रघुकुल दिनेश की सब शर्तें, सुवेल भूप ने मान लई।
तन मन से सेवा रामचन्द्र की, करना दिल में ठान लई।

हंसरथ भूप

दोहा

तीजे दिन वहां से चले, संघ सुवेल उदार।
हंस द्वीप में पहुंच कर, दई छावनी डार ॥

हंसरथ नृप दल बल भारी, ले युद्ध करन सन्मुख आया।
इस तरफ महाबल योद्धा भी, अपनी सेना लेकर धाया ॥
थे दोनों रणधीर वीर दोनों, इस फन में माहिर थे।
अतुल बली थे दोनों ही, महाशूर वीर जग जाहिर थे ॥
फिर लगी बाण वर्षा होने, जैसे श्रावण की लगी झड़ी।
चल रहे दारू गोला तोपें, और संगीने थी अड़ी खड़ी ॥
बादल समान नभ में विमान, थे अड़े खड़े कुछ पार नहीं।
कहीं विकट गाड़ी की कला दबा कर, फिरते थे राजकुंवार वहीं ॥
तोमर शक्ति कुदाल भुशण्डि, परशु परिघा बरसाते थे।
जैसे आंधी से फूल गिरे, धड़ से यों सिर गिर जाते थे ॥

दोहा

महाबल दल में घुस रहा, हो करके विकराल।
पराजित होकर के भगा, हंसरथ भूपाल ॥

छिप गया दुर्ग में जाकर के, पहरा चहुँ ओर लगाया है।
इधर राम दल ने भी जा सब, दुर्ग को घेरा लाया है ॥
फिर समझ लिया कि नरमाई बिन, बचने का अवकाश नहीं।
जो लड़ूं सामने होकर के तो, शक्ति मेरे पास नहीं ॥

दोहा

अक्ल भ्रमण करने लगी, उड़ गये होश हवाश।
तृण मुख में लेकर गया, रामचन्द्र के पास ॥

दोहा (हंस)

पराक्रम जाना था नहीं, आपका हे श्रीराम ।
शरणागत को शरण में, रख लीजे सुख धाम ॥

कृपा सिन्धु कृपा विशाल, करके दुःख सारा दूर करो ।
यह राजपाट सब आपका है, विनती मेरी मंजूर करो ।
जो भी कुछ आपकी आज्ञा है, तन मन से उसे निभाऊंगा ।
जहां गिरे पसीना आपका, वहां मैं अपना रक्त बहाऊंगा ॥

दोहा (राम)

माफ सभी हमने किया, जो तेरा अपराध ।
सम्वेदन है तू मेरा, जैसे वीर विराध ॥

यदि वो बाईं भुजा मेरी तो, तू दक्षिण कहलाता है ।
आनन्द से अपना राज करो, जैसे भी तुमको भाता है ॥
मत फिक्र करो अपने मन में, तुम भरत भूप की शरण परो ।
कोई कष्ट पड़े तुम पर आकर, तो शीघ्र हम पै खबर करो ॥

दोहा

आज्ञा जो श्रीराम की, लई भूप ने मान ।
हंसरथ नृप का होगया, योग्य पक्ष पर ध्यान ॥

दोहा

यह सब खटका मेटकर, हुये सभी तैयार ।
विमानों द्वारा हुवे---महा समुद्र पार ॥

श्रीराम पास ही आ पहुंचे, यह खबर लंक में फैल गई ।
और पुण्य सितारा देख राम का, सबकी तबियत दहल गई ॥
जैसे मीन राशि में शशि, आने पर जन घबराते हैं ।
ऐसे ही सब लंका वाले, भय रामचन्द्र से खाते हैं ॥

आ गये राम आ गये राम, यह शोर लंक में होने लगा।
तब आँख खुली दशकंधर की, तो निज शक्ति भी टोहने लगा॥
मारीच हस्त प्रहसित और, सारन आदि सब बुलवाये।
श्रीराम से युद्ध मचाने को, निज-निज कर्त्तव्य सब पर लाए॥
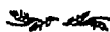
रावण विचार

दोहा

उसी समय दशकंधर ने, किया खास दरबार।
सिंहासन पर बैठकर, ऐसे कहा उचार॥
अब तक यही विचार था, कि राम रहेगा दूर।
किन्तु आज सिर पर चढ़ा, उसकी मौत जरूर॥

शृगाल की मौत जब आती है, तब ग्राम सामने जाता है।
बस यही हाल है रामचंद्र का, पास लंक के आता है॥
सेतु समुद्र सुवेल हंसरथ, ये भूप और भरमाए हैं।
सो भी अपना नाश करन को, संग राम के आए हैं॥
अब उद्यमशील रहो सारे, और इन्तजाम जल्दी कर दो।
जा रखो मोरचा हंस द्वीप के, पास वहीं डेरा कर दो॥
बेटा इन्द्रजीत तुम भी, सब अपनी सेना ले जावो।
मुश्क बांधकर उन जंगली, भीलों को यहां पर ले आवो॥
बस मूल नास हो जाने से, महावृक्ष स्वयं गिर जायेगा।
क्या वानरपति क्या हनुमान, फिर किसी का पता न पायेगा
अब देरी का कुछ काम नहीं, रणतूर बजा देना चाहिये।
जिस मान पै शत्रु कूद रहा, वह मान गिरा देना चाहिये॥

दोहा

विना विभीषण ने किया, सबने वचन प्रमाण।
शिक्षा देने को अनुज, बोला चतुर सुजान ॥
हे भाई कुछ सोचकर, करना चाहिये काम।
सोच किये मुख रूप है, विन सोचें मुख श्याम ॥

विन सोच किये मुख श्याम, मान ले अब भी बात हमारी।
सब दुनियां में बरत रही थी, आन अखंड तुम्हारी ॥
किन्तु आप लाए जिस दिन से, सीता राजदुलारी।
उसी रोज से भ्रात लंक में, लगी असाध्य बिमारी ॥

दौड़

श्री रघुपति के हाथ में गई सब
आज ताकते, मान लो अब भी कहना,
यदि न माने तो लंका का, अब खुर खोज रहेना।

शेर

कुल को कलंकित कर दिया, और शक्तियां सब खो दई।
जो अवस्था चोर की, सो आज तेरी होगई ॥
किसको दिखावें मुख यह अपना, आज हम संसार में।
क्या धूल इज्जत पायेंगे, जाकर किसी दरबार में ॥
क्षत्रिय है रघुवंशी कभी, खाली वो जा सकते कहीं।
मैदान में उनसे कभी, तुम जीत पा सकते नहीं ॥
श्रीराम के एक दूत ने था, जौहर दिखलाया यहां।
कोट ढाया अक्ष मारा, ताज था गेरा कहां ॥
लक्ष्मण के आगे समर में, यह शीश भी गिर जायेगा।
धूल में लंका मिलाकर के, सिया ले जायेगा ॥

तुम अपने गौरव पर रहो, वह अपने रास्ते जायेगा ।
बस जानकी को भेज दो, झगड़ा सभी मिट जायेगा ॥

दोहा

शिक्षा का और राग का, होता जग में वैर ।
रावण को ले पैर से, चढ़ा शीश तक जहर ॥

पड़ गये तीन बल मस्तक पर, गुस्से में चेहरा लाल हुआ ॥
नयनों में सुर्खी आ पहुंची, और रूप अति विकराल हुआ ॥
इन्द्रजीत भी पास भरा गुस्से में, था बेतोल खड़ा ।
रावण से पहले मेघनाद, यों चचा सामने बोल पड़ा ।

इन्द्रजीत–विभीषण

दोहा (इन्द्रजीत)

शूरमताई आपकी, देखी खूब हजूर ।
अब तक तेरा ना हुआ, क्लीबपना यह दूर ॥

नाश हमारा करने में, तैंने नहीं छोड़ी बाकी है ।
अब समझ गये हैं शायद पिता भी, सब तेरी चालाकी है ॥
विश्वासघात करने वाला, दिल भी अन्दर से काला है ।
और अब तक तूने हम सबको, बस धोखे में ही डाला है ॥
यह झूठ कहा तूने आकर, दशरथ को मैंने मार दिया ।
फिर हनुमान को भी तूने, लंका का भेद विचार दिया ॥
तू भ्रात नहीं कोई शत्रु है, जो पिता को तैंने तंग किया ।
जो रङ्ग लंका पर चढ़ा हुआ था, तूने सभी विरुद्ध किया ॥

दोहा (इन्द्रजीत)

ताज गिराया पिता का, लगी सभा थी आम ।
शर्म तुझे आई नहीं, करवाते यह काम ॥

फिर नागफांस में बंधे हुए, शत्रु को साफ निकाल दिया ।
इस भरी सभा में तूने ही, था, मान हमारा गाल दिया ॥
अब शत्रु सिर पर आन चढ़ा, फिर भी तू हमको रोक रहा ।
तो समझ गये तू मिला हुवा, शत्रु की पीठ को ठोक रहा ॥

शेर

अब तेरा प्रपंच कोई भी, यहाँ चल सकता नहीं ।
दाँतों तले आया अरि, हर्गिज निकल सकता नहीं ॥
नाम इन्द्रजीत मेरा, कौन सम्मुख आयेगा ।
राम क्या दल बल कोई, जीता न यहाँ से जायेगा ॥
यदि आपको है भय कोई, जाकर कहीं छिप जाइये ।
या पहन करके चूड़ियाँ, अबला जरा बन जाइये ॥
अब आपकी यहाँ दाल, मनमानी न गलने पायेगी ।
राम की सेना को यह, तलवार दलने जायेगी ॥
नाश कर सकते नहीं, कहने से तेरे अपना हम ।
अपनी शक्ति से करूंगा, राम क्या सब दल खतम ॥

शेर (विभीषण)

क्यों उछल कर कूदता, अविनीत कल के छोकरे ।
होश गुम हो जायेंगे, जिस दम लगेगी ठोकरें ॥
रङ्ग दिखलायेंगी ये, बातें तेरी आता नजर ।
हितेच्छु को जो माने अरि, तो पुण्य में उसके कसर ॥
अनुचित शब्द कहने का, यहाँ अधिकार क्या था बेशर्म ।
बेटा उदय में आ गये हैं, अब तेरे खोटे कर्म ॥

दोहा

पुत्र मेरा कुछ भी नहीं, रामचन्द्र से प्रेम।
तन मन धन से चाह रहा, आप सभी का क्षेम ॥

गाना (विभीषण जी का—बहरतवील)

आवे कैसे सीधा रास्ता नजर,
जबकि आँखों पै अपराधी चश्मा लगा।
जैसे विषयान्ध क्रोधान्ध मोहान्ध को,
जग में आता नजर न कोई अपना सगा ॥
अब ये विपरीत बुद्धि तुम्हारी हुई,
जो कि उपदेश मेरा जरा न लगा।
जिसने दल दल में फंसने की ठान ली,
तो उसे थल पै ले जावे कैसे सखा ॥

(इन्द्रजीत)

बस चचा साहिब अब जो कहा सो कहा,
आगे लाना जवां पै जिकर ये नहीं।
क्षत्रिय कुल में कहाँ से तू गीदड़ हुवा,
तेरा अबला के जितना जिगर भी नहीं ॥
मुझ बबर सिंह का जो करे सामना,
ऐसा दुनिया में कोई बशर ही नहीं ॥

विभीषण

बेशर्म अब तू अपनी जवां बन्द कर,
वृथा बक बक लगाई क्यों तूने यहां।
दूध के भी ना टूटे तेरे दांत हैं,
यह अनुभव फेर तुझे है कहां ॥

जिस पिता की तू शक्ति का मान करे,
इनको वाली ने नीचा दिखाया वहां।
लाया क्यों ना सिया को राम के सामने,
क्षत्रापन उस समय घुस गया था कहां॥

इन्द्रजीत

इस समय उस समय क्या सभी काल ही,
तेरी चालाकी सारे ही चलती रही।
देख कर के ये गौरव पिता का सभी,
तेरी छाती हमेशा से जलती रही॥
बस तेरी शरारत के कारण सदा,
महा विपत्ति पिता पर है आती रही।
नाश करने में तैंने न छोड़ी कसर,
यह तो किस्मत हमारी सम्भलती रही॥

विभीषण

तू अधर्मी कृतघ्नी महा दुष्ट है,
तुझे परभव का खौफो खतर ही नहीं।
तैंने बोली की गोली से घायल किया,
मेरे हृदय में छोडी कसर ही नहीं।
कामी अन्धे के अन्धा तू पैदा हुवा,
तेरी नजरों में कोई बशर ही नहीं।
कील ठुकवाने को मेंढ़क उछलता फिरे,
पेट फट जायेगा यह खबर ही नहीं।

शेर (विभीषण)

क्या सभ्यता यही सिखाई, थी किसी ने पीर ने।
तासीर बतलाई है या, माता तेरी के क्षीर ने॥

क्या त्रिखंडी लंकेश भी भरी सभा में ऐसे अयोग्य शब्दों को चुपचाप बैठे सुन रहे हैं। क्यों भाई साहब क्या आप इसको रोक नहीं सकते ?

रावण—जो भी कुछ इन्द्रजीत ने कहा सो बिल्कुल ठीक कहा है। यदि सत्य पूछा जाय तो तेरे षड्यन्त्र का भण्डा फोड़ दिया है।

....

रा० भ० क्रोध

शेर

अब तेरा विश्वास मैं त्रिकाल खा सकता नहीं।
अपनी आदत से कभी तू, बाज आ सकता नहीं॥
निश्चय में तू शत्रु मेरा, ऊपर से भाई बन रहा।
अब भेद सारा खुल गया, जो भी तू ताना तन रहा॥

शेर (विभीषण)

समझते शत्रु मुझे, सब आपकी यह भूल है।
आगे यही हालत रही, तो लंक की भी धूल है॥
मरते दम तक भी फर्ज, अपना बजा जाऊँगा मैं।
तू बदी से बाज आ, फिर बाज आजाऊँगा मैं॥

रावण (बहरतवील)

अय विश्वासघाती अलग हट जरा,
तेरा उपदेश मुझको सुहाता नहीं।
क्योंकि पापी अधर्मी महा नीच है,
अपने दिल की अग्नि तू बुझाता नहीं॥

भेद देना सिया का तेरा काम था,
वरना लंका में कोई भी आता-नहीं।
मीठा वन तैंने काटी हमारी ही जड़,
तेरी वाणी किसी को यहाँ भाती नहीं ॥

विभीषण

कर दो अब भी वहम दिल से ऐसा तर्क,
वरना रो रो के आखिर को पछताओगे।
अपनी नारी को हरगिज ना छोड़ेंगे वह,
सारी सेना को वृथा ही कटवाओगे।
भेजदो भेजदो भेजदो जानकी,
मानो कहना हमारा तो सुख पाओगे।
वृथा न रतन अमूल्य को खो कर के तुम,
खोटे कर्मों का खोटा ही फल पाओगे।

रावण

बेशर्म निरंकुश तू बकता है क्या,
अब समझले तेरे धड़ पर सिर ही नहीं।
काट डालूंगा शस्त्र से गर्दन तेरी,
मेरी शक्ति की तुझको खबर ही नहीं।
निर्भय होकर के सन्मुख खड़ा मूढ़ तू,
धमकी सहने का तेरा जिगर ही नहीं।
रामचन्द्र का तू पक्षपाती बना,
कृतघ्नी तेरे जैसा कोई नर ही नहीं।
तेरे आये उदय भाग्य खोटे कर्म,
अब तेरे मरने में कुछ भी कसर ही नहीं।
भाग जायेगा बच के कहाँ बेशर्म।
क्या यह आता नजर मेरा खंजर नहीं ॥

विभीषण

देता धमकी किसे यहाँ तू अय बेधर्म,
आ अगाड़ी जरा अपनी शक्ति दिखा।
काट सकता नहीं मेरा सिर तू कभी,
मेरी तलवार से अपना सिर तू बचा।
अरे लम्पट तू आँखों से चल हट परे,
मेरे आगे न अपनी ये शेखी दिखा।
होनी आई है क्यों तेरी आज ही,
किस कुमति ने तुझे अब दिया है बहका।
तेरे सिर की धरणी पर उड़ेगी गरद,
क्या तू फिरता है दिल में बहादुर बना।
किया चोरी से तूने सिया का हरन,
तुझे कर्म चबायेंगे नाको चना।

दोहा

सुनकर के व्याख्यान ये; हुआ दशानन लाल।
उछल-कूद सन्मुख खड़ा, शस्त्र लिया निकाल॥

इधर विभिषण ने भी झट, अपनी शमशेर निकाली है।
मैदान में दोनों कूद पड़े, नयनों का रंग गुलाली है।
यह झगड़ा देख परस्पर का, सब बुद्धिमान् घबराने लगे॥
फिर भानूकर्ण झट उठे, बीच पड़ दोनों को समझा ने लगे।

कुम्भकर्ण का गानाः—

सगे होकर के तुम भाई, परस्पर जंग करते हो।
उधर शत्रु खड़ा सिर पर, इधर आपस में लड़ते हो॥
रावण—मेरे भानुकर्ण भ्राता, जरा चुप आप हो जाईये।
बड़ा शत्रु विभीषण जैसा, ना कोई और बतलाईये॥

भानु—अजी आपस में जो कुछ हैं, चाहे शत्रु चाहे मित्र।
किन्तु औरों के तो तीनों ही, मिल कर लायें हम छितर॥

रावण—वहम यह दूर कर भाई, यदि इसको बचाओगे।
दगा मैदान में देगा, वफा इससे न पाओगे॥

भानु–समझलो दिल में यदि, तलवार भाई पर चलावोगे।
तो वदनामी यहां लेकर, वहाँ नरको में जावोगे॥

रावण–समझता तो हूँ मैं भी आपने, जो कुछ उचारा है।
खड़ा देखो तो कैसे, तानकर, कर में दुधारा है॥

भानु—अर्ज दोनों से है मेरी, खास कर आपसे पहले।
जो कहना है विभीषण को, वही कहना मुझे कहलें॥

विभीषण--किसी की अच्छी शिक्षा को, हृदय में धर नहीं सकता।
निशंक तुम छोड़ दो इसको, मेरा कुछ कर नहीं सकता॥
सभा में आज भाई को, जो यूं तलवार दिखलाई।
पुण्य काफूर अब इसका, हुआ यह समझलो भाई॥

भानु—बड़े भाई की इज्जत को, जरा अब ध्यान में धरलो।
अभी तलवार अपनी को, विभीषण म्यान में करलो॥

विभीषण—सार यह आपका कहना, मैं सिर आंखों पै धरता हूं।
आप के कथन से लो, म्यान में तलवार करता हूं॥

दोहा

भानू–तडितकेश कुल मणि मुकुट अय भाई लंकेश।
सिंहासन पर बैठ कर, देवो कुछ आदेश॥

आज्ञा देवो योद्धाओं को अब, देरी का कुछ काम नहीं।
जब तक शत्रु ललकार रहा, तब तक हमको आराम नहीं॥

अब एक जान तुम हो जावो, और द्वेष भाव को दूर करो।
रण तूर बजाकर जल्दी से, शत्रु का दल काफूर करो॥

शेर (रावण)

राम की शक्ति कुचलना खेल, बायें हाथ का।
पर भव पहूंचाऊंगा उन्हें, बस अंतरा है रात का॥

दोहा

होनं हार के वस पड़ा, दशकंधर लंकेश।
लघुभ्राता को जोश में, बोला वचन नरेश॥

अरे दुष्ट विभिषण यदि अपना भला चाहता है तो यह आदर्श नीक अपना मुख मुझे ना दिखा और तू जिस राम की सहायता के लिये तुला हुआ है। जा, उसी राम के पास चला जा तुमको देख देख कर मेरी आंखों से खून बरसता है। और तेरे अधिकार में जितनी सेना है उसको भी साथ लेजा मुझे उसकी जरूरत नहीं। क्योंकि जिन को तेरी संगति है वह मेरे शत्रु हैं। कृतघ्नी, विश्वासघाती, स्वार्थी, इन्हीं से कोई लाभ नहीं उठा सकता, इसलिये तू और तेरे सब मित्र तीस मुहूर्त के अन्दर लंका से निकल जाओ। नहीं तो सारे मौत के घाट उतारे जायेंगे। क्योंकि तुम मेरे गुप्त शत्रु हो।

शेर

गुप्त शत्रु से कोई जल्दी, सम्भल सकता नहीं।
प्रत्यक्ष होकर के अरि, नुकसान कर सकता नहीं॥

फट गया जो दिल मेरा, तुझ से मिल सकता नहीं।
दाव तेरा अब यहाँ, कोई भी चल सकता नहीं॥

छन्द (विभीषण)

खैर अब मैं क्या करूं जब काल सिर पर आगया।
अज्ञान का पर्दा तेरी, बुद्धि के ऊपर छा गया॥
श्वास तब तक आश मैं, कहावत ये छोड़ूंगा नहीं।
चाहे समझ शत्रु परन्तु, मित्र रहूँगा जहाँ कहीं॥
जब तक भी जीता हूँ मैं, कर्त्तव्य निभाता जाऊंगा।
तू समझ चाहे ना समझ, मैं तो सुझाता जाऊंगा॥

———

विभीषण प्रस्थान

दोहा

रहना उस संग चाहिये, जो होवे अनुकूल।
यदि इससे विपरीत हो, उड़े वहां पर धूल॥

तजना अच्छा गुणहीन देव, खोटा न जाप जपना चाहिये।
जिसमें न जौहर वह अस्त्र तजो, अन्याई भूप तजना चाहिये॥
दुराचारिणी नार तजो, वह मित्र तजो जो छल करता।
उस दुष्ट का मुख ना देखो कभी जो नार सताये पतिव्रता॥
जहाँ भले बुरे में अन्तर ना, ऐसों का संग तजना चाहिये।
दस अन्धों में जो हो अन्धा, उससे न वाद करना चाहिये॥
जो कह कर बात बदल जावे, उसका विश्वास नहीं करना।
जिसकी कुछ जान पहिचान नहीं, उसके कुछ पास नहीं धरना
जो शत्रु समझे मित्र को, उसके क्यों नाहक गल पड़ना।
वहाँ बीज डाल कर खोना है, फल देता कल्लर रकड़ना॥
फट गया तेरा दिल मेरे से, ना सूरत देखना चाहता है।
तो नमस्कार लो वीर विभीषण, भी लंका से जाता है॥

दोहा

सज्जन गण सुन लीजिये, होनहार बलवान।
लंका से अब चल दिया, लघुभ्रात पुण्यवान॥

चले विभीषण वीर श्रुति, रघुवर चरणन में लाई।
तीस अक्षौहिणी चली फौज, संग देर न जरा लगाई॥
हाथी घोड़े रथ संग्रामी, गर्द गगन में छाई।
हंसद्वीप की तरफ विकट, गाड़ी की कला दबाई॥
राम का उधर गुप्तचर, भेद लंका का लेकर, चरण आशीश निवाया।
रावण और विभीषण का सब, भेद खोल दर्शाया॥

दोहा (दूत)

सूर्यवंश कुल मणि मुकुट, हे स्वामिन गजदीश।
विजय आपकी समझलो, होगी विश्वा वीस॥

अब सुनो हाल सब लंका का, यहां नया फूल एक और खिला।
फट गया विभीषण रावण से, यह भी एक कारण खूब मिला॥
मन में थी यही विभीषण के, सीता वापिस करवाने की।
बस इसी बात से बिगड़ गई, भाई से राजा रावण की॥
फिर लगा परस्पर युद्ध होने, तब भानु कर्ण ने छुड़वाया।
मुझको ना अपना मुख दिखला, यह दशकंधर ने फरमाया॥
यह वचन विभीषण सह न सका, और अन्न जल वहां का छोड़ दिया।
हे नाथ आपके चरणों में, दिल प्रेम पूर्वक जोड़ लिया॥
तीस अक्षौहिणी फौज सहित, वह चला इधर को आता है।
आगे मुझको कुछ पता नहीं, दिल में क्या ध्यान लगाता है॥
सहसा विश्वास नहीं करना, क्योंकि शत्रु का भाई है।
जैसी हालत मैंने देखी, वैसी ही आन सुनाई है॥

शेर (राम)

अय वीर योद्धा किस तरह, गुण मैं तेरा वर्णन करूं ।
यह लो खुशी से हार, हीरों का तुझे अर्पण करूं ॥
जिस बुद्धि से लाया पता, आश्चर्य उस पर हैं सभी ।
देखोगे शीघ्र टूटता, गढ़ लंका को सारे अभी ॥

दोहा

गौरव पाकर गुप्तचर, लगा फेर निज काम ।
खबर यही श्रीराम ने, फैला दई तमाम ॥

सभी जगह यह लगी खबर, तो बटने लगी वधाई है ।
दशकन्धर के यहाँ फूट पड़ी, यह खुशी सभी दिल छाई है ॥
तीस अक्षौहिणी फौज संग ले, वीर विभीषण आता है ।
इस बात को सुन कर वानरपति, सुग्रीव का दिल दहलाता है ॥

दोहा

उसी समय वहाँ से चला, गया राम के पास ।
होकर के भयभीत सा, बोला ऐसे भाप ॥

दोहा (सुग्रीवः)

स्वामी मेरी विनती, पर कुछ कीजे गौर ।
तीस अक्षौहिणी आरही, हंस द्वीप की ओर ॥

हंस द्वीप की ओर गुप्तचर, यही पता लाया है ।
इसी बात को प्रभु आपने, हर जहां पहुंचाया है ॥
किन्तु कुटिल रावण की, नस नस में फरेब छाया है ।
क्या पता बहाने मिलने के, धोखा देने आया है ॥

दौड़

आप विश्वास ना करना, विनती हृदय धरना, पुराना शत्रु भारा ।
दशरथ नृप को आया था मारन, यही अरि तुम्हारा ॥

(सुग्रीव का गाना)

सुग्रीव–यदि मिलने की मर्जी थी तो, सेना संग क्यों लाते ।
भेजते दूत या पाती कोई, या खबर दिलवाते ॥
श्रीराम–जो होगा ठीक ही होगा, सखा न दिल में घबराये ।
यदि आया है लड़ने को तो, फिर तुमको भी क्या चाहिये ॥
सुग्रीव–ठीक है आपका कहना, इसी कारण तो आया हूँ ।
किन्तु यह भी भ्रम लड़ते, तो जंगी बिगुल बजवाते ॥
श्रीराम–यदि निश्चय ही करना तो, तुम्हें अख्त्यार है सब कुछ ।
भेद लो आप जाकर या, किसी खेचर को भिजवाइये ॥

दोहा (सुग्रीव)

आज्ञा आपकी चाहिये, देरी का क्या काम ।
भेजूं विद्याधर कोई, लावे भेद तमाम ॥
विभीषण ने निज दूत एक, भेजा रघुवर पास ।
आकर सब कहने लगा, जो था मतलब खास ॥

दोहा (दूत)

दुःख मोचन श्रीराम जी, सज्जन पोषण हार ।
एक दास की विनती, सुन लीजे सरकार ॥

यह अर्ज विभीषण वीर की है, चरणों की सेवा चाहता हूं ।
बस लज्जा आपके हाथ में है, मैं शरण तुम्हारी आता हूँ ॥
वचन सिया को दे बैठा, स्वतन्त्र तुम्हें बनाऊंगा ।
इसलिये बिगाड़ी भाई से, ना वचन के बट्टा लाऊंगा ॥

दोहा (राम)

वीर विभीषण से मेरा, है आन्तरिक प्रेम ।
कह देना यहां पर सभी, वर्त रहा है क्षेम ॥

रावण और विभीषण क्या, मैं भला सभी का चाहता हूं ।
और सिवा एक वैदेही के, कुछ और न लेने आता हूं ॥
आवो निःशंक सिर मस्तक पर, तुम तो मेरे हमदर्दी हो ।
और फटे हुए दिल सीमन को, तुम ही एक अनुभवी दर्जी हो ॥
जैसा हूँ वैसा हाजिर हूँ, शरणा तो श्री जिनवर का है ।
जिस काम के वास्ते आया हूं, वह काम तुम्ही को करना है ।
आवो मित्र यहाँ खुशी खुशी, यह तम्बू डेरा आपका है ।
विश्वास तुझे मेरा मुझका, तेरा तो डर किस वात का है ॥

दोहा

ले सन्देशा राम का, गया विभीषण पास ।
आदि अन्त पर्यन्त सब. हाल सुनाया भाप ॥

जब सुने राम के वचन, विभीषण की अर्ति सब दूर हुई ।
अनुकूल विभीषण यही वात, सब सेना में मशहूर हुई ॥
सुग्रीव नरेश्वर के दिल में, फिर भी विश्वास न आया है ।
और ठीक भेद सब लेने को, विद्यावर वहाँ पठाया है ॥

दोहा

पास विभीषण के गया, विद्याधर सुविशाल ।
भेद भाव लेकर सभी, आन कहा सभी हाल ॥

करके निश्चय मन में आ फिर, स्वागत का कार्य करने लगे ।
उस खुशी का कुछ भी पार नहीं, यहाँ प्रेम के झरने झरने लगे ॥
दरवार राम का लगा हुआ, चहूँ और थे योद्धे खड़े हुए ।
थे उद्योगी निज कर्त्तव्य पर, और वख्तर तन पर पड़े हुये ॥

राम० विभी० मिलन

दोहा

आ पहुंचे विभीषण जी, धूमधाम के साथ ।
रामचन्द्र आगे बढ़े, लम्बे करके हाथ ॥

वीर विभीषण ने अपना मस्तक, चरणों में डाल दिया ।
औदार चित्त श्रीराम ने भी, उस पर निज हाथ विशाल किया ॥
क्षीर नीर समप्रेम प्रेम का जल, नयनों में वहने लगा ।
विश्वास दिलाने लिये राम, अपने मुख से यों कहने लगा ॥

दोहा (श्रीराम)

तन दुबला कैसे हुआ, अहो सखा लंकेश ।
शूरवीर धर्मज्ञ तुम, कारण कौन विशेष ॥

कारण कौन मिला मित्र, तुमको दुर्बल होने का ।
जलवायु अनुकूल सभी, और लंक काट सोने का ॥
मिला समागम खूब तुम्हें है, धर्म बीज बोने का ।
श्री जिनवर का धर्म समागम, मिला कर्म खोने का ॥

दौड़

तेरा सब पर सम मन है, फेर इतना क्यों गम है ।
मानसी और शरीरी, इनमें से हे प्रिये मित्र है तुम्हें,
कौन दल गिरी ।

दोहा (विभीषण)

मैं तो हूँ प्रभु आपके, चरण कमल का दास ।
सिवाय यहाँ के और ना, मिला मुझे कहीं वास ॥

जिसको ना मिलती ठौर कहीं, उसको लंकेश बुलाते हो ।
हे नाथ अपेक्षा कौन आप, जिससे ऐसा फरमाते हो ॥

थी जलवायु तो शुद्ध लङ्क की, किन्तु अब सब बिगड़ गई।
और धर्म बीज बोने की भी, शक्ति इस कर से निकल गई॥

धर्म ठीक सर्वज्ञ देव का, कर्म मैल को धोता है।
पर भाग्यहीन को तो फिर भी, कर्मों का बन्धन होता है॥

कुल के गौरव को मैंने, निज दिल मे नहीं भुलाया है।
बस यही मानसी दुःख मुझे, जिसने कमजोर बनाया है।
यदि घृणा है तो मुझको कुछ, रावण के कर्त्तव्यों पर है॥
निश्चय उससे कुछ वैर नहीं, इज्जत मेरे दिल अन्दर है।

दोहा

सत्यवादी के वचन पर, रीझ गये रघुवीर।
दानवीर गम्भीर नर, यों बोले रणधीर॥

दोहा (राम)

सखा विभीषण कह चुके, हम तुमको लंकेश।
ऐसा तू भाई मेरा, जैसा भरत नरेश॥

यदि भरत है भाई भुजा ठीक तो, भुजा मेरी तू दक्षिण है।
जैसा मुझको सुग्रीव मित्र, वैसा तू मित्र विभीषण है॥
और जनक सुता के सिवा लंक से, और न कुछ ले जावेंगे।
बस ताज लंक का निज कर से, हे मित्र तुम्हें दे जावेंगे॥

गाना (श्री राम का)

तैंने विपत्ती समय में, सहारा दिया।
सगे भाई का दुख न. गंवारा गया॥

तैंने सत्य धर्म को पाला है, और दुनियाँ में नाम निकाला है।
तैंने हृदय ये सर्द, हमारा किया॥

जब हनुमत लंक में आया था, तैंने सीता का भेद बताया था।
हम पर आपने, ये उपकार किया ॥
तू जनक सुता का सहारा था, सारी लंका में तू ही हमारा था।
कैसे दुष्टों में, तैंने गुजारा किया ॥
तुम जैन धर्म के ज्ञाता हो, सच्चे पुरुष जगत विख्याता हो।
खोटे पुरुषों से, तूने किनारा किया ॥

दोहा

रामचन्द्र के जब सुने, अमृत झरते बैन।
विभीषण चरणों में गिरे, लगे इस तरह कहन ॥

दोहा (विभीषण)

मैं तो इस लायक नहीं, जैसे कहते आप।
शरण पड़ा हूँ आपके, काटन निज संताप ॥

यदि मैं इस लायक होता तो, जनक सुता क्यों दुःख पाती।
क्यों आडम्बर इतना बढ़ता, यह राड़ कभी की मिट जाती ॥
जो होनहार की मर्जी है, सो तो अब रङ्ग दिखायेगी।
जब तक दशकंधर का दम है, तब तक सीता ना आयेगी ॥

दोहा

राम विभीषण का यहाँ, हुआ परस्पर मेल।
एक दूजे का चाह रहे, कुशल और सब चेम ॥

लंका पर चढ़ाई

दोहा

प्रथम बिगुल जिस दम बजा, सावधान हुवे शूर।
योद्धों को लाली चढ़ी, खुशी ऐन भरपूर ॥

दोहा

हंसरत भूपाल भी, गये राम के साथ ।
शस्त्रों से अति शोभते, रणधीरों के गात ॥

आठ दिवस रहे हंसद्वीप, फिर आगे को प्रस्थान किया ।
चढ़ रहा वीर रस योद्धों को, लंका पर सबने ध्यान दिया ॥
दशकंधर की सीमा पर, जा श्री राम ने सेना डाल दई ।
और तेजी से लक्ष्मण जी ने, फिर धनुषबाण टङ्कार दई ॥

दोहा

लम्बी चौड़ी जगह थी, योजन बीस प्रमाण ।
चक्रव्यूह सब सेना का, किया वहाँ मंडान ॥

मारू बाजा बजता है, योद्धों को जोश दिलाने का ।
टङ्कार शब्द हो रहे खूब, शत्रु के दिल दहलाने को ॥
घनघोर शब्द सुन सुन करके, लंका वाले घबराते हैं ।
तब वीर दशानन इन्द्रजीत को, ऐसे हुक्म सुनाते हैं ॥

=oo=

राक्षस दल

दोहा (रावण)

बेटा इन्द्रजीत अब, क्यों करते हो देर ।
कर तैयारी फौज की, शत्रु को ले घेर ॥

शत्रु को ले घेर स्वयं, आ फंसे कर्म के मारे ।
बिन पुरुषार्थ किये सिंह को, मिले मृगगण सारे ॥
समझ लिया बेटा मैंने, प्रबल हैं भाग्य तुम्हारे ।
करो नाश शत्रु का, बस हो गये आज पौबारे ॥

वार्ता--रावण----बेटा इन्द्रजीत अब अपने जौहर दिखाओ।

शेर (इन्द्रजीत)

आपकी कृपा से यदि मैं चाहूं तो, एक बाण से, अंधेर मचा दूं।
आए हुवे मध्याह्न में, सूर्य को छिपा दूं॥
क्या राम, क्या सुग्रीव, सब परभव में पहुँचा दूं।
ऐक तीर से तूफान की, तस्वीर बना दूं॥

दोहा (रावण)

शाबाश मेरे सुत केहरि, इन्द्रजीत बलवंत।
जंगी बिगुल बजा अभी, करो अरि का अंत॥

चढ़ा हुक्म दशकन्धर का, लगा बजन रणतूर।
बख्तर शस्त्र पहन कर, खड़े हुवे सब शूर॥
सज गई विकट गाड़ी संग्रामी, रथ पर भूप सवार हुवे।
हाथी घोड़ों का पार नहीं, अद्भुत विमान तैयार हुवे॥
मारू बाजा बजा रहे, योद्धों को जोश दिलाने को।
कल्पान्त काल की तरह चला, रावण निज धूल उड़ाने को॥

दोहा

सहस्र अक्षौणी सेना को, देख हर्ष दिलमाय।
रण भूमि में आन के, दिया मोर्चा लाय॥

योजन पचास में फौज पड़ी, रावण की चक्रव्यूह रचके।
अप अपने शस्त्र नचाते हैं, कोई गदा उछाल रहा हंस के॥
इन्द्रजीत और भानुकर्ण थे, मेघवाहन दुर्दन्त बड़े।
मारीच सुन्द सारण आदि, यह सभी वीर बलवंत खड़े॥
त्रिशूल भुशुंडी धनुषबाण, शतघ्नी की दनादन होती है।
कहीं दण्ड खड्ग शस्त्र अपार, मुग्दर की सजावट होती है॥

फिर उतर पड़े रणक्षेत्र में, बलवीर दुतर्फी आकर के।
तब लगा घोर संग्राम होन, कई गिरे धरणी गश खाकर के ॥
दुर्दान्त महाबलवन्त शूरमा, उधर से हस्त प्रहस्थ चढ़े।
दोनों का मान मर्दन करने, इस तरफ वीर नलनील बढ़े ॥
अब लगा होने संग्राम घोर, कायर का हृदय फटता है।
मिट जाता है वह दुनिया से, जिस पर शस्त्र जा पड़ता है। ।
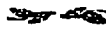
संग्राम

दोहा

नल भूपति ने हस्त के, मारा कस कर बाण।
शत्रु ने मैदान में, दिये छोड़ झट प्राण ॥

यह हाल देख के प्रहस्थ वीर के, तन में गुस्सा छाया है।
तेजी से हल्ला बोल दिया, वानर दल आन दबाया है ॥
इस तरफ से नीलबली ने भी, सम्मुख अपना दल ठेल दिया ॥
प्रहस्थ सुभट के सन्मुख जा, संग्रामी रथ को मेल दिया।
जब आन परस्पर मेल हुवा; तो युद्ध भयानक होने लगा ॥
एक एक शूरमा शर शय्या पर, नींद सदा की सोने लगा ॥
फिर नील बली ने मारी एक, शत्रु को मांग घुमा करके।
जा लगी प्रहस्त के हृदय में, झट गिरा मूर्च्छा खाकर के ॥
फिर एक दम हल्ला बोल दिया, रावण के दल में भगी पड़ी।
अब उनकी गिनती कौन करे, जो खून से लाशें रंगी पड़ी ॥
पराजय हुई दशकन्धर की, और विजय राम ने पाई है।
अब रणक्षेत्र में दशकन्धर की, फौज दूसरी आई है ॥

दोहा

भूप वीर मारीच शुक, सारण और सिंहरथ ।
वीभत्स उदामा रवि, मकरचन्द्र अश्वरथ ॥

कामाक्ष और ज्वरभूप चढ़े, गम्भीर बली थे सिंहजघन ।
सम्भूप सकामा महाबली, यह चढ़े वीर दिल अतिमगन ॥
यह महाबली दशकन्धर के, योद्धे आ रण में ललकारे ।
इस तरफ राम की सेना ने, वस्त्र शस्त्र तन पर धारे ॥

दोहा

मदन और अंकुश बली, प्रथित और सन्ताप ।
पुष्पात्र सुविघ्न भट, नन्दन दुरी और चाप ॥

सुदूर धर सजगया वीर, योद्धा रणधीर बहादुर था ।
संताप से आ मारीच जुटा, जो कि बलवीर उजागर था ॥
मारीच वीर ने रण क्षेत्र में, सन्ताप भूप को मार दिया ।
नन्दन वानर ने यहाँ ज्वर, राक्षस को धरणि पछाड़ दिया ॥
राक्षस उद्दामा ने विघ्न सुभट, दल में घायल कर डाला है ।
तब दुरित वीर के एक बाण से, परभव शुक सिधारा है ॥
सिंह जघन ने प्रतीप कपि पर, अमोघ बाण को छोड़ दिया ।
जब लगा उर स्थल आकर के, दुनियां से नाता तोड़ दिया ॥
यह महाघोर संग्राम देखकर, सूर्य अस्ताचल पहुँचा ।
योद्धों ने शस्त्र म्यान किये, हो गई शाम ये दिल सोचा ॥
अप अपने डेरों में जाकर, सब योद्धों ने विश्राम किया ।
जो नियत किये थे मुर्दों पर, अप-अपना सबने काम लिया ॥

दोहा

दिनकर जब प्रकट हुवा, हुई निशा जब दूर ।
योद्धे सब तैयार थे, बजन लगा रण तूर ॥

वजा वजा रण तूर चले, शूरे खा जोश समर में ।
वख्तर तन पर पड़े हुवे, लटके तलवार कमर में ॥
जीने की तज दई आशा, ना किया ध्यान कुछ घर में ॥
रण क्षेत्र में कूद पड़े सब, शस्त्र लेकर कर में ॥

दौड़

खड़े सब तने दुतर्फी, सिर्फ थी देर हुक्म की, बैठ संग्रामी रथ में, सब सेना को कर आगे दशकंधर कहे मगन में ।

दोहा (रावण)

सुनहु शूर मम वचन सब, लगा इधर को ध्यान ।
जौहर दिखाचो आज तुम, समर भूमि दरम्यान ॥

समर भूमि दरम्यान आज बस, खतम सभी को कर दो ।
बाँध मुस्क दो भीलों की, सन्मुख मेरे ला धर दो ॥
क्षत्राणी का क्षीर समर में, अदा आज सब कर दो ।
मार मार वाणों से सब, सेना का छेद जिगर दो ॥

दौड़

जौहर जो-दिखलायेगा, जागीर सो पायेगा, पीठ देगा जो-रण में, जीता छोड़ू नहीं उसे आखिर पहुँचे नरकन में ।

दोहा

लंक पति के वचन सुन, महा रोप मन खाय ।
ललकारे सब शूरमा, रण भूमि में आय ॥

गाना

(तर्ज—आल्हा-ऊदल)

रामचन्द्र की सेना पर जा, योद्धे परे सभी अराय ।
दण्ड चक्र परिघा व मुग्दर, फरसी गदा को रहे चलाय ॥

जिधर झुके रणधीर शूरमा, लाशो पर दें लाश बिछाय।
यह गति कर दई रण क्षेत्र की, नदी खून की दई बहाय ॥
वीर बहादुर चढ़े जोश में, सत्रु को मार ही मार सुहाय।
जैसे पक्षी उड़े व्योम में, ऐसे शीश उड़ें रण माय ॥
दुर्जय माली झुके जिधर को, उधर देवे अन्धेर मचाय।
बेशक राक्षस बूढ़ा था, पर कोई सन्मुख आवे नाय ॥
रामचन्द्र की सेना पर गई, राक्षस सेना गालिब आय।
खननन २ खांडा बाजे, शतघ्नी दनादन रही मचाय ॥
विकट गाड़ियें घूमें रण में, जिनकी झपट सही ना जाय।
देख पराक्रम रावण दल के, राम की सेना गई घबराय ॥
देख हाल सुग्रीव नरेश्वर, धनुप बाण कर लिये समाय।
खबर लगी यह हनुमान को, वानर पति चढ़े रण माय।
झट आकर प्रणाम किया, और बोला ऐसे शीश नवाय ॥

दोहा (हनुमान)

स्वामि आज्ञा दीजिये, सेवक को एक बार।
रण भूमि में आज मैं, करूँ कठिन तलवार ॥

कौन वीर है रावण का, जो मेरे सन्मुख आयेगा।
जब गरजूँगा रण में जाकर, शत्रु दल पीठ दिखायेगा ॥
प्रथम अकेले ने लंका में, अक्षकुमार को मारा था।
और भरी सभा में रावण का, ठोकर से ताज उतारा था ॥

दोहा (सुग्रीव)

महाबली बस है मुझे, तुझ पर ही विश्वास।
जावो अब रण क्षेत्र में, करो अरि का नाश ॥

दोहा

पा आज्ञा सुग्रीव की, चढ़े अंजनीलाल।
रण भूमि में जा धसे, होकर के विकराल ॥

फिर क्या था श्रीराम फौज ने, पांव समर में रोप दिया।
और पवन पुत्र ने जोश दिला कर, सहसा हल्ला बोल दिया ॥
जैसे शेर हस्तियों में, यों राक्षस दल को दलने लगा।
या शूकर जैसे पानी को, ऐसे रणधीर मसलने लगा ॥
देख बली का तेग दशानन, की सेना घबराई है।
हो गये धरणि पर खाक, शूर कायरों ने पीठ दिखाई है ॥
ये देख हाल दुर्जय माली, हनुमान के सन्मुख आया है।
तब पवन पुत्र ने उस बूढ़े को, ऐसे वचन सुनाया है ॥

गाना (हनुमान)

अरे बूढ़े बता तूने, अकल कहां बेच खाई है।
अवस्था वृद्ध है, तलवार तैंने क्यों उठाई है ॥
गई अब उम्र वह तेरी, जो थी संग्राम करने की।
बता अब काल को आकर के, क्यों धमकी दिखाई है ॥
बैठ करके किसी स्थानक में, अब भजन कुछ कर ले।
क्योंकि परभव में जाने की, तेरी यह उमर आई है ॥
किये संग्राम तैंने उमर भर, अब तो धर्म कर ले।
तरस खाकर "शुक्ल" कहता, तेरी इसमें भलाई है ॥

गाना (दुर्जय माली)

अरे तू छोकरे कल के, काल को क्यों खिजाता है।
चन्द दिन सैर कर अपनी, तू क्यों हस्ती मिटाता है ॥
दूध के भी नहीं टूटे, दांत कितना अकड़ता है।
तेजर्बेकार को मूर्ख-तू, क्या योवन दिखाता है ॥

मेरे एक तीर से अवसान, सारे भूल जायेगा।
जरा तू सामने आ, क्यों खड़ा बातें बनाता है॥
लाल तू एक माता का, "शुक्ल" यह तरस आता है।
किन्तु मैं क्या करूँ, जब काल ही तुझको मिटाता है॥

गाना (हनुमान व० त०)

अच्छा बाबा तू, अपना दिखाले जौहर,
क्योंकि फिर तेरे, मन की न मन में रहे।
अब तू सारे ही, अरमा यहाँ काढ ले,
कोई शक्ति, बकाया ना तन में रहे॥
तू तो मुर्दा है खुद, क्या मैं मारूं तुझे,
वरना तेरा निशाँ, ना समर में रहे।
मैंने समझाया था पर, तू समझा नहीं,
क्यों ना आनन्द से, अपने घर में रहे॥

दोहा

पवन पुत्र के सुन वचन, छाया क्रोध अपार।
हनुमत पर करने लगा, वृद्ध वार पर वार॥

जैसे निरर्थ खर्च में मूर्ख, दौलत वृथा गंवाते हैं।
जब पास नहीं कुछ रह जाता, तो फिर पीछे पछताते हैं॥
बस यही हाल हुआ बूढ़े का, शस्त्र विद्या सब खो बैठा।
फिर ऐसा दिल में भाव हुआ, मैं जीने से कर धो बैठा॥

दोहा

आश्चर्य में पड़ गया, उड़ गये होश हवाश।
हनुमत तब करने लगा, मुख से वचन प्रकाश॥

दोहा (हनुमान)

क्यों बाबा अब किस लिये, मुंह को रहे उबाय।
यदि कुछ शक्ति और है, तो भी दो दिखलाय॥
अब यदि समाप्त कर बैठे तो, घर जाकर आराम करो।
माला कर में लो पकड़, नित्य श्री नमोकार का जाप करो॥
क्योंकि अब तो काल स्वयं, तुमको ले जाने वाला है।
तो किस कारण फिर शस्त्र से, मुर्दे का खून बहाना है॥

दोहा

वज्रोदर बलवीर नृप, आ पहुंचा तत्काल।
हो सन्मुख हनुमान से, बोला आंख निकाल॥
क्यों शठ वृद्ध से इस तरह, बातें रहा बनाय।
यदि कुछ शक्ति बदन में, आज मुझे दिखलाय॥

वज्रोदर गाना

(बहरे तवील)

क्यों मेंढ़क सा टर्राता अब बेशर्म,
तुझको जीता समर में ना छोड़ूंगा मैं।
आज मेरी प्रतिज्ञा, यही समझ ले,
सबको करके खत्म मुंह को मोड़ूंगा मैं॥
पहले तुझको मिटा करके, मैं आगे बढ़ूं,
मान सुग्रीव का आज तोड़ूंगा मैं।
बाकी दो ही रहे सब विजय है मेरी,
शक्ति उनकी भी, सारी निचोड़ूंगा मैं॥

दोहा (हनुमान)

वाह जी वाह क्या खूब ये, शक्ल दिखाई आय।
था गल में मुर्दा पड़ा, तुमने दिया हटाय॥

हनुमान गाना

(बहरे तवील)

बूढ़े बाबा को देकर, अभयदान हम,
आवो तुमको, पहुँचायेंगे मुल्के अदम ।
आज अरमान दिल का, सभी काढ़ले,
क्योंकि कर दूंगा, फिर तो तेरा दम खतम ।
राम सुग्रीव लक्ष्मण को, देखेगा क्या,
यहां ही कर देंगे साहिब, तुम्हारी भसम ।
दाना पानी अब, तेरा खतम हो गया ।
सच्ची कहता हूँ, तुमको तुम्हारी कसम ॥

दोहा

पवन पुत्र के वचन सुन, वज्रोदर झुंझलाय ।
वज्रवाण हनुमान पर, सहसा दिया चलाय ॥
पवन पुत्र ने काट वार को, अपना वाण चलाया है ।
तज दिये प्राण वज्रोदर ने, परभव डेरा जा लाया है ॥
यह हाल देख जम्बू माली, नृप का नन्दन सन्मुख आया ।
पर एक वार से हनुमान ने, उसको भी परभव पहुँचाया ॥

दोहा

दो योद्धा दल में गिरे, मच गया हा हा कार ।
रावण दल में एक दम, छाया जोश अपार ॥
महोदर आदि वीर नृपति, चढ़ आये चहुं तरफा से ।
अंजनी लाल यूं घेर लिया, जैसे कोई पक्षी वर्षा से ॥
उदधि में जैसे वडवानल, यों राक्षस दल में शोभ रहा ।
जैसे भानु के चढ़ते ही, तारागण का ना खोज रहा ॥

या यों समझे महा प्रबल सिंह, जैसे कि गर्ज रहा वन में।
त्यों अस्त्र शस्त्र घुमा २, करता कमाल रण के फन में॥
मुर्दों पर जीते गिरने लगे, यह हाल हुआ रण क्षेत्रों में।
तब लगा बरसने रक्त देख, यह कुम्भकर्ण के नेत्रों में॥

दोहा

कुम्भकर्ण जिस दम चढ़ा, दहला गई जमीन।
लगा समर में घूमने, जैसे विकट मशीन॥

राघव सेना अति घबराई, उस वीर की शक्ति सह न सके।
एक सिवा अंजनालाल युद्ध में, सन्मुख कोई रह न सके॥
कल्पान्तकाल की तरह वीर ने, रूप भयानक धारा है।
जिस तरफ झुका बस, उसी तरफ सब रुंड-मुंड कर डारा है॥
मुर्दों में जीते लगे छिपने, कई अपने प्राण बचाने को।
यह हाल देख कई लगे सोचने, रण में पीठ दिखाने को॥
सब छिन्न भिन्न होगई सेना, सुग्रीव ने हाल निहारा है।
झट बिगुल बजाया योद्धों ने, बख्तर निज तन पर धारा है॥
चल दिये दधि मुख माहेन्द्र, अप अपनी फौज सजा करके।
चौथे मुकुन्द अंगद पंचम, सज गये जोश में आकर के॥
तब चढ़े वीर दुर्दन्त बली, भामण्डल इनमें शामिल थे।
मिथिलेश किशोरी के भाई, जो कि इस फन में कामिल थे॥

दोहा

छः योद्धे जाकर अड़े, कुम्भकर्ण के साथ।
उधर अकेला वीर था, दशकन्धर का भ्रात॥

जब लगा घोर संग्राम होने, तो नदी रक्त की बहने लगी।
कल्पान्तकाल आगया आज, वहां की जनता ये कहने लगी॥
लगी बाण वर्षा होने, बहुते शरशय्या पर लेट गये।
ना हटे पिछाड़ी दोनों दल, शूरे निशंक रण भेट हुये॥

दोहा

कुम्भकर्ण ने तान कर, छोड़ा 'सन्मोहन बाण'।
निद्रागत सेना हुई, कपिपति का हुवा ध्यान॥
शयनाहतास्त्र को छोड़, भूप ने सेना तुरन्त उठाई है।
फिर तमकतान क्रोधातुर होकर, अपनी गदा घुमाई है॥
वाहक संग संग्रामी रथ, सब कुम्भकर्ण का चूर हुआ।
मुग्दर ले नीचे कूद पड़ा, क्योंकि योद्धा मजबूर हुआ॥

दोहा

मुग्दर ले भानुकर्ण, कपिपति ऊपर जाय।
गुस्से में भरपूर हो, रथ पर दिया झुकाय॥
संग्रामी रथ को उसी समय, सुग्रीव नरेश ने तोड़ दिया।
थे वीर बराबर के दोनों, फिर आपस में जंग जोड़ लिया॥
विद्या की शिला बना करके, सुग्रीव नरेश ने छोड़ दई।
पर भानुकर्ण ने मुग्दर से, वा माया सारी तोड़ दई॥

दोहा

कुम्भकर्ण ने तान फिर, मारा अस्त्र रज बाण।
घोर अन्धेरा छागया, उड़ी धूल आसमान॥
यह हाल देख सुग्रीव ने, झट अस्त्राम्बु बाण चलाया है।
जिस रज से घोर अन्धेरा था, उसको झट शान्त बनाया है॥
छोड़ दिया एक तड़ित बाण, सुग्रीव ने महारिसा करके।
जा लगा अरि के हृदय में, झट गिरा मूर्छा खा करके॥

दोहा

कुम्भकर्ण जिस दम गिरा, होकर के बेहोश।
राक्षस सेना का हुआ, ठण्डा सारा जोश॥

छाई खुशी रघुसेन में, अरि गया मुर्झाय।
उत्साह चौगुना बढ़ गया, हल्ला बोला जाय॥
पक्षीगण उड़ जाते हैं, जिस तरह वृक्ष गिर जाने से।
ऐसे ही भगी राक्षस सेना, एक योद्धा के मुरझाने से॥
दुर्दशा देखकर सेना की, दशकन्धर अति रिसाया है।
झट चढ़ा आप संग्रामी रथ, मुख से रण तूर बजाया है॥

दोहा

तैयार पिता को देख कर, आया ज्येष्ठ कुमार।
विनय सहित मस्तक निवा, कहा वचन सुखकार॥

दोहा (मेघनाद)

पिता आप किस पर चढ़े, बख्तर शस्त्र धार।
शृगालों पर क्या शोभते, आप सजा हथियार॥
आज्ञा मुझको दे दीजे, देखो तो फिर क्या कर दूंगा।
जिस तरफ झुकूंगा उसी तरफ, लाशों पर लाशें धर दूंगा॥
कौन चीज सुग्रीव विचारा, आज सभी को मारूंगा।
यह नित्य प्रति का जो झगड़ा है, बस सभी खत्म कर डालूंगा॥

दोहा (रावण)

बेटा तुम पर ही मेरा, है अन्तिम विश्वास।
जावो अब रणक्षेत्र में, करो अरि का नाश॥

रावण गाना

करो जंग बहादुर बेटा, अब दुश्मन को मार दो।
अमोघ शस्त्र को धार, उनके सिर उतार दो॥
कहलाता इन्द्रजीत, तूने जीता इन्द्र को।
क्या चीज राम की सेना है, छिन में निवार दो॥

बढ़ने न पावे आगे को, ये सेना शत्रु की।
लेकर के सेना अपनी, तुम आगे विस्तार दो।
राष्ट्र अपने की करो, अब सेवा तन मन से।
परवाह न करना मरने की, यह निश्चय धार लो॥
भानुकर्ण चाचा तुम्हारा, देखो मूर्छित है।
शत्रु से इसका बदला, तुम अपना उतार लो॥

दोहा

स्वीकार वचन करके, हुवा इन्द्रजीत तैयार।
बिगुल बजी तो हो गई, सेना सब तैयार॥

तीन ताल (इन्द्रजीत की तैयारी)

मेघनाद तैयार हुआ है, पहन अभेद्य भारी बख्तर।
खिच गई पेटी दलनायक की, संग चले हैं सब अफसर॥
लंका से दल चला, मैदाने शान पर।
काली घटायें छाईं, ज्यूँ आसमान पर॥
कवायद करवा सब सेना को, देख रहा अफसर वस्त्र।
सलवट हो ना किसी वर्दी में, मेघनाद बोला हंसकर॥
बाजा बजा है रण का, झंडा लगा दिया।
रावण की जय मनावो, सब को सुना दिया॥
बर्छी भाले और तमंचे बांध, लिये सबने शस्त्र।
वानर दल पर आज अपूर्व, बरसाओ अस्त्र शस्त्र॥
शक्ति नहीं है दुश्मन की, मेरे सहे वार को।
लगादे चौब डंका, बोला नक्कार को॥
बिन जीते अब राम लखन के, वापिस नहीं लौटूं घर पर।
पुण्य पाप का खेल जगत में, काल घटा सब के सिर पर॥

दोहा

इन्द्रजीत रण में चढ़ा, होकर के विकराल।
सुर्खी छाई नयनों में, भृकुटी सहित निढाल॥

इन्द्रजीत और मेघवाहन आ, रणभूमि में ललकारे।
विमान विकट गाड़ी सेना, भारी योद्धे संग बलवारे॥
कल्पान्त काल की तरह देख, वानर योद्धे घबराते हैं।
तब इन्द्रजीत वानर सेना को, ऐसे शब्द सुनाते हैं॥

दोहा (इन्द्रजीत)

इधर कान धर कर सुनो, वानर वीर तमाम।
अब यहाँ से भागो सभी, पहुंचो निज निज धाम॥

कहाँ गया सुग्रीव बली, और पवन पुत्र हनुमान कहाँ।
राम लखन और भामण्डल, सब का आ पहुंचा काल यहाँ॥
बाकी डालो हथियार सभी, क्यों मौत पराई मरते हो।
जा मिलो बाल-बच्चों से तुम, किसलिये जुदाई करते हो॥

दोहा

इन्द्रजीत का नाम सुन, घबरा गये तमाम।
जैसे हो भूकम्प से, कंपित सारे धाम॥

यह हाल देख सुग्रीव और, भामंडल दोनों वीर चढ़े।
झट इन्द्रजीत और मेघवाहन के, सम्मुख जा रणधीर अड़े॥
मेघवाहन से रणभूमि में, भामंडल ललकारा है।
और इन्द्रजीत के पास पहुँच, सुग्रीव ने वचन उचारा है॥

गाना (सुग्रीव का)

क्यों अभिमान करता; खड़ा हो सम्भल कर,
कदम अपना आगे, बढ़ाओ सम्भल कर।

यदि इच्छा लड़ने की, तेरी प्रबल है,
तो देरी क्यों करते हो, आवो सम्भल कर ॥
जरा सोच लेना, समर है ये बांका,
करो सैर परभव की, जावो सम्भल कर ।
यदि वीर हो तो चढ़ो, अब अगाड़ी,
नहीं पैर पीछे, हटाओ सम्भल कर ॥

गाना (इन्द्रजीत का)

तुम्हें आज सब कुछ, दिखाऊँ सम्भल कर ।
समर में सभी को, लिटाऊँ सम्भल कर ॥
समझ लो सभी जान, खतरे में अपनी ।
कि सिर सब का धड़ से, उड़ाऊं सम्भल कर ॥
इस लंका पे चढ़ने का, तुमको नतीजा ।
सभी को समर में, दिखाऊं सम्भल कर ॥
तजो आश जीने की, तैयार हो लो ।
परभव में सबको, पठाऊं सम्भल कर ॥

दोहा

आपस में यूं बढ़ गया, क्रोध दुतर्फी जान ।
रणभूमि में होने लगा, महाघोर घमसान ॥
विकट वीर बलवान बहुत, धरणी पर मार गिराये हैं ।
कभी अग्निबाण कभी धूंधबाण, कभी मेघबाण बरसाये हैं ॥
फिर मेघवाहन ने नाग फांस, अस्त्र छोड़ा भामंडल पर ।
वह जनक पुत्र को जा लिपटा, जैसे अहि लिपटा सन्दल पर ॥

दोहा

रघुवर दल के पड़ गये, महा सङ्कट में प्राण ।
सज्जन गण सुन लीजिये, होनहार बलवान ॥

इन्द्रजीत ने भी अपना, अस्त्र सुग्रीव पै साध लिया।
उस तरफ बंधा भामंडल, यहां सुग्रीव नरेश को बांध लिया॥
यह हाल लखा वज्राङ्गबली ने, क्रोध वदन में छाया है।
अन्य लक्ष्यों को गौण बना, उस तरफ ही रथ बढ़ाया है॥

दोहा

जा पहुँचे झटपट वहीं, जहाँ थे दोनों वीर।
रोक रथ दोऊ शूरों के, बोला अमित बली वीर।'

क्यों उछल कूद मचाई है, अब परभव को पहुंचाऊंगा।
सुग्रीव और भामंडल के, बांधन का स्वाद चखाऊंगा॥
फिर क्या था वे वीर परस्पर, बाणों की वर्षा करने लगे।
घनघोर युद्ध छिड़ गया वहां, कायर लख के ही गिरने लगे॥
रक्त नदी बहती यहाँ नभ में, रक्त फुव्वारे चलते हैं।
जिस पर जा पड़े वीरों के बाण, क्या पता कहां जा मिलते हैं॥
थे अमित बली रावण सुत, पर वज्रांग भी एक ही नाहर थे।
थे कांपते जिनके नाम से नृप, ऐसे दुनियां में जाहिर थे॥
रुप गये पांव श्री राम चमू के, देख के योद्धा बलधारी।
भिड़ गई सेना फिर से आपस में, मारा मार मची भारी॥
भुशुण्डी शतघ्नी परिघापटा, भाला खंजर भी खटकते हैं।
उन वीरों के रण में आपस में, व्योम में वार सरकते हैं॥

दोहा

अस्त्र शस्त्र कड़कते, ज्यों हो विद्युत पात।
देख तेज वज्रंग का, सोचें दोनों भ्रात॥
अमित बली हनुमंत है, शक इसमें कुछ नांय।
शक्ति ना हर कोई सह सकें, नाम सुनत भग जांय॥

उधर बली श्री हनुमान के, बाणों से अम्बर छाया है ।
इत मेघवाहन और इन्द्रजीत क्या, रावण दल घबराया है ॥
इतने में मूर्छा त्याग के रण में, भानुकर्ण भी आया है ।
फिर तो क्या था रणभूमि में, कल्पान्त काल सा छाया है ॥

दोहा

कुम्भकर्ण ने उछल कर, मारी गदा घुमाय ।
पवन पुत्र उस गदा से, गिरे मूर्छा खाय ॥
हो गये वीर तीनों बेवस, फिर राघव सेना घबराई ।
यह हाल देख वानर दल का, रावण सेना अति गर्वाई ॥
पत्ती जैसे उड़ते नभ में, यों वीरों के सिर उड़ते हैं ।
यह हाल विभीषण देख, राम आगे यों गिरा उचरते हैं ॥

—※※※—

विभीषण-राम भयभीत

दोहा (विभीषण)

सेना हमारी हो गई, सभी प्रभु बेकार ।
रावण के सुत भ्रात ने, किया बहुत संहार ॥
भामंडल और सुग्रीव बली, दोनों बेवस कर डारे हैं ।
धोखे में गिरा वज्रांगबली, सब दल के होश बिगारे हैं ॥
मानिन्द शेर के गर्ज रहे, निर्भय हो अब दोनों दल में ।
ऐसे तो खाली कर देंगे, हमको योद्धों से क्षण पल में ॥

दोहा

केवल इक अंगद बली, निभा रहे हैं काम ।
जिनके पैरों पर खड़ी, कुछ सेना सुख धाम ॥

इसका अब शीघ्र विचार करो, नहीं तो पीछे पछतावोगे।
यदि ले गये लंक में तीनों को, तो कर मलते रह जावोगे॥
अब तो दुःख है सीता का, फिर छोटा सा सन्ताप नहीं।
और बिना तीन योद्धों के, बाकी इस दल में रहे खाक नहीं॥

गाना विभीषण

श्रीराम के प्रश्नोत्तर

यह देख हाल दिल को, बिलकुल सबर नही।
इस दम हमारी सेना, उनसे जबर नहीं है॥
अंगद अकेला रण में, कब तक डटा रहेगा।
हिलता है एक जगह पर, मेरा जिगर नहीं है।
राम---सुनकर वचन तुम्हारे, मन को सबर नहीं है।
बीतेगी आज कैसी, कुछ भी खबर नहीं है।
बजरंग पड़ा है मूर्छित, दो नागफांस में है॥
मेरा भी एक जगह पर, इस दम जिगर नहीं है।
विभी०---झुकता है जिस तरफ को, वो भानुकर्ण देखो।
जिसके मुकाबले हो, यम का गुजर नहीं है॥
राम---बेशक अतुल बली है, भानुकर्ण बहादुर।
लड़ता है काल बनकर, इसमें कसर नहीं है॥
विभी०---वो इन्द्रजीत भाई, दोनों को आप देखें।
जौहर दिखा रहे हैं, कुछ भी तो डर नहीं है॥
राम---रावण के पुत्र दोनों, बेशक हैं वीर बांके।
आसान उनसे करना, निश्चय समर नहीं है॥

दोहा

कुंभकर्ण हनुमान को, झुक कर लगा उठान।
अंगद ने अति क्रोध में, कस कर मारा बाण॥

वह वार बचाया कुंभकर्ण ने, हनुमान की मूर्छा दूर हुई ।
और अंजनी लाल फिर ललकारे, अंगद की आर्ति दूर हुई ॥
इतने में विभीषण आ पहुंचे, श्रीराम की आज्ञा पा करके ।
बस फिर क्या था वानर सेना, बढ़ गई जोश में आ करके ॥

गाना

खड़ा जिस दम विभीषण, तानकर कर में दुधारा ।
मेघवाहन ने फिर सोचा कि, यह चाचा हमारा है ॥१॥
ख्याल यह ज्येष्ठ भाई का कि टल जाना ही अच्छा है ।
लड़े किससे पितावत् यह, बड़ा गुरुजन हमारा है ॥२॥
भाव भानुकर्ण के भी, यही लड़ना नहीं अच्छा है ।
यदि आपस में मचावें जंग, तो हर्जा हमारा है ॥३॥

दोहा

उसी समय पीछे हटे, राक्षस वीर तमाम ।
जैसा किया विचार था, बना नहीं वो काम ॥
सूर्य अस्ताचल पर्वत के, पास पहुंचने वाला था ।
नागफांस ने यहां महा, योद्धों को कष्ट में डाला था ॥
किया बहुत उपाय राम ने, नागफांस तुड़वाने का ।
किन्तु प्रयत्न गया खाली, सब योद्धों के छुड़वाने का ॥

दोहा

रघुवर ने स्मरण किया, महालोचन फिर देव ।
उसी समय हाजिर हुआ, देव आन स्वयमेव ॥
था वचन दिया श्री रामचन्द्र को, जिस कारण सुर आया है ।
और संकट दूर कराने का, श्रीराम ने उसे बुलाया है ॥
आपत्ति सब दूर भगें, शुभ पुण्य जिन्हों का चढ़ा हुआ ।
दो हाथ जोड़कर खड़ा सामने, देव वचन का बंधा हुआ ॥

गाना (रामचन्द्र व देवता का)

सेवा मुझे बताओ चरणों का दास आया।
जिस काम के लिए है, मुझको प्रभु बुलाया ॥१॥
लाचार हो के हमने, तुमको यहां बुलाया।
दुःख दूर करना होगा, जिसने हमें सताया ॥२॥
मुख से जरा उचारें, फिर देर भी तो क्या है।
मैं आपकी अमानत, इस वक्त देने आया ॥३॥
यह दो हमारे शूरे, सेना सभी के चक्षु।
दोनों पे राक्षसों ने, है नागफांस लाया ॥४॥
बेशक विकट यह फंदा, है काल की निशानी।
यह खूब तुमने सोचा, मुझको यहां बुलाया ॥५॥
यह गारुड़ी लो विद्या, देता हूँ आज तुमको।
जहां पर रहे यह विद्या, हो दूर नाग माया ॥६॥

छन्द

गारुड़ी विद्या सुमित्रा, लाल लक्ष्मण को दई।
सिंहनि नादा नाम विद्या, रामचन्द्र ने लई॥
शत्रु विनाशक एक गदा, विद्युत वदन तसु नाम है।
देकर ये विद्या सभी, वो सुर गया निज धाम है॥
गारुड़ी विद्या पै चढ़, लक्ष्मण जी वहां फिरने लगे।
नागफांसों के समूह, सब धरणी पै गिरने लगे॥
महा कष्ट से दोनों बचे, सुग्रीव भामण्डल बली।
सब दल के हृदय खिल गये, जैसे कि फूलों की कली॥

दोहा

वानर दल आनन्द में, टल गया सकल क्लेश।
जय जय शब्द होने लगे, चारों ओर विशेष॥

जब सुने खुशी के नक्कारे, रावण दल को अति कष्ट हुआ।
जिस खुशी में थे सब फूल रहे, उस खुशी का साहस नष्ट हुआ॥
अस्ताचल पर सूर्य पहुँचा, सब शूर लगे विश्राम करन।
प्रातः काल के होते ही, लग गये वीर संग्राम करन॥

दोहा

रण भूमि में जुट गये, हो कर के विकराल।
सुभट बहुत मरने लगे, जिनका आया काल॥
जुट गये वीर दोनों दल में, तब नदि खून की बहने लगी।
निज २ स्वामी और देश के, हित सेना शस्त्रों को सहने लगी॥
रावण सेना के पराक्रम से, राघव सेना घबराई है।
छिन्न भिन्न हो गये वीर, कईयों ने पीठ दिखाई है॥

दोहा

देखा जब सुग्रीव ने, सेना का यह हाल।
उसी समय झट कोप कर, चले जिस तरह काल॥
बड़े बड़े रणधीर शूरमा, सहसा दल में कूद पड़े।
इस तरह बढ़ा श्रीराम का दल, जैसे समुद्र की बेल बढ़े॥
जरा देर में रावण दल को, छिन्न भिन्न कर डाला है॥
हो गये बहुत रण भेंट शूरमें, अन्तिम पैर उखाड़ा है।

दोहा

भंग देख निज सेना का, चढ़े दशानन आप।
थर थर कांपे मेदिनी, महा प्रबल प्रताप॥
आँधी आगे जैसे तृणों, या जैसे सिंह आगे बकरी।
ऐसे ही अब वानर दल की, रावण ने घुमा दई चकरी॥
जिधर झुके रणधीर वीर, सब सफा उधर ही कर डारे।
कई भाग गये पर धाम गये, और कइयों ने शस्त्र डारे॥

दोहा

रावण का कर्त्तव्य यह, जब देखा रघुरेश।
वज्रावर्तज धनुष को, कर में लिया सजायेश॥
पता विभिषण को लगा, हुए राम तैयार।
हाथ जोड़ सन्मुख हुआ, बोला गिरा उचार॥

दोहा (विभीषण)

आज्ञा मुझ को दीजिये, हे प्रभु दीना नाथ।
रण भुमि में आज मैं, दिखलाऊं दो हाथ॥
वानर दल सारा बिखर गया, मैं उनका पैर जमाऊंगा।
रावण के सन्मुख जाकर के, अपनी तलवार चलाऊंगा॥
अभी आपका रावण से, लड़ने का समय नहीं आया है।
अब आज्ञा सेवक को दीजे, मेरे दिल यही समाया है॥

श्री रामजी का गाना—विभीषण के प्रति

यदि है इच्छा यही तुम्हारी, तो जावो मित्र खुशी खुशी से।
भय न खाना किसी का मन में, सजाओ बख्तर खुशी २ से॥१॥
हमेशा होती है सत्य की जय, असत्य की न हुई न होगी।
है पुण्य योद्धा सहाई तेरा, लगावो शस्त्र खुशी खुशी से॥२॥
किन्तु ये शिक्षा हमारी सुनजा, ना धोका भाई से कोई करना।
जो कर्म क्षत्रीय का सोही करना, चलाओ अस्त्र खुशी २ से॥३॥
यह भी दिल में विचार करना, ना पहले भाई पर वार करना।
यदि चाहे सन्धी विचार करना, तो झुकाना मस्तक खुशी २॥४॥

विभीषण

जो फूल वर्षे तुम्हारे मुख से, सजाऊं गलमें खुशी खुशी से।
ये जंगी बख्तर है देर क्या है, सजाऊं तन पे खुशी २ से॥५॥

जो गुण तुम में है दीनवंधो, जवां से उनको कहूँ मैं कैसे।
सहारा चरणों का लेके स्वामी, मैं जाऊं रण में खुशी र से ॥६॥

रावण विभीषण जंग

दोहा

सब सेना को जोश दे, चढ़ा विभीषण वीर।
उधर सामने आ गया, लंक पति रणधीर॥
जब आन मोरचा लगा सामने, देख शूर हर्षाये हैं।
हाथी घोड़े संग्रामी रथ, नभ में विमान आन अड़ाये हैं॥
यथायोग्य स्थानों पें. थे रक्षक योद्धा खड़े हुये।
फिर भाई से बोला रावण, पर मस्तक पर बल पड़े हुए॥

दोहा (रावण)

देख लई सब बानगी, अहो विभीषण वीर।
आज काल के गाल में, झोंका तुझे अखीर॥
जैसे धूर्त शिकारी जन, आगे कुत्ते को लाते हैं।
बस यही हाल है रामलखन का, तेरी बली चढ़ाते हैं॥
किन्तु वे कब तक अपने, प्राणों का भला मनावेंगे।
अन्तिम तो तलवार मेरी की, धार तले वो आवेंगे॥

दोहा

मौत पराई किस लिये, मरता है तू वीर।
अन्तिम तेरे दुख की, होगी मुझको पीर॥
पूरा-पूरा तुझ पर स्नेह, क्योंकि तूं मेरा भाई है।
वो कहाँ छिप गये राम लखन, बस मौत उन्हीं की आई है॥

तुम जाओ अपने तम्बू में, बस यही हमारा कहना है।
वानर सेना सब राम लखन, कोई जीता आज न रहना है॥

दोहा (विभीषण)

जो कुछ कहना आपका, सिर मस्तक पर वीर।
एक बात सुन लीजिये, दिल में लाकर धीर॥

प्रेम आपका मुझ पर है, और ऐसा होना भी चाहिये।
पर दिल में जो है भ्रम भूत, उसको भी खो देना चाहिये॥
श्रीराम आप ही आते थे, मैंने ही उनको रोका है।
अपनी मर्जी से आया हूं, ना किसी ने मुझ को झोंका है॥

दोहा

होनी के आते नजर जाहिर सब आसार।
अतः आप को चाहिये करना मेरा विचार॥

गाना (विभीषण)

उड़ गई तेरी लंका की अब सब तरी।
बात समझो ना रावण, मेरी सरसरी॥
रामचन्द्र के, सीता हवाले करो।
शूरवीरों के नाहक, नगाले करो॥
एक वानर ने ही, कायर लंका करी॥१॥
पेश उनपे चलेगी, ना तेरी जरा।
हो गया तेरी लंका में, अब चर चरा॥
हुए प्रकट अवतार, रघुवर हरी॥२॥
सैना लश्कर का भाई, तू मत कर गुमां।
करके ही छोड़ेंगे, वो तेरा खातमां॥
सब ये रह जायेगी तेरी, शक्ति धरी॥३॥

राम लक्ष्मण जब रण में धरेंगे कदम।
उनके हाथों से, जायेगा मुल्के अदम॥
सूर्य वंशी हिला देंगे ये धर्त ॥४॥

दोहा

बीत गई सो तो गई, आगम ना अख्त्यार।
वर्तमान पर ही सदा, बुध जन करें विचार॥

बस यही हमारा कहना है, अब भी कुछ सोच विचार करो।
जो करन निवेदन आया हूं, हे भ्रात आप स्वीकार करो॥
लड़ने का एक बहाना है, तुम को समझाने आया हूँ।
कल्याण जिस तरह हो सब का, तजवीज बताने आया हूं॥

दोहा

जनक सुता वापिस करो भला इसी में जान।
नहीं तो अब यहां कसर क्या, होने में घमसान॥

लाखों के प्राण गवायें हैं, रण-भूमि में लड़वा करके।
अब कर मलते रह जाओगे, सब कुटुम्ब यहां कटवा करके॥
एक नार के कारण क्यों, सब देश का नाश कराते हो।
क्यों अपना आप गंवा करके, नरकों का बंध लगाते हो॥

दोहा

औदार चित्त होते सदा, नम्र भाव में लीन।
बुद्धिमान् हो स्वयं ही, हरफन में प्रवीण॥

यदि आप न जाना चाहते तो, सिया को मैं दे आता हूं।
विशाल हृदय कर बतलाओ, बस आज्ञा आपकी चाहता हूँ॥
इतनी सुनकर बात भ्रात की, रावण जल-बल अङ्गार हुआ।
तलवार काढ़ विकराल बना, जैसे कि कुपित यमराज हुआ॥

दोहा (रावण)

प्यासी तेरे खून की ये मेरी तलवार।
फेर यदि ऐसा कहा लेऊं शीश उतार॥

रावण—तेरा कायरपना नीच जाता नहीं;
मुझ को सारी उम्र ही सताता रहा।
मैंने भाई समझ करके खाया तरस,
फिर भी टेढ़ी ही बातें बनाता रहा॥
सीधे रास्ते से मूर्ख मुझे वेर कर,
हर समय उलटे रास्ते पर लाता रहा।
क्या है रिश्ता तेरा उनसे यह तो बता,
कर दो वापिस सिया ये सुनाता रहा॥

विभीषण—होनी सिर पर ही आई तो फिर क्या करें,
तुझ को हम तो हमेशा बचाते रहे।
तैंने सन्धि के सारे समय खो दिये,
मौके-मौके पे हम तो जिताते रहे॥
चाहे मुझ को कहो या किसी को कहो,
तेरे खोटे कर्म ही सताते रहे।
कर दो वापिस सिया हम कहेंगे यही,
अब भी पहले भी तुमको सुनाते रहे।

रावण—अरे महा मूढ़ अच्छा ठहर जा,
पहले करता हूँ जल्दी तेरा दम खत्म॥
तू है कायर कमीना कुबुद्धि कुदिल,
बेहया बेच खाई कहां तूने शर्म।
तुझ को भाई समझ कर बचाता रहा,
नहीं तो बोलने से पहले ही करता खत्म॥

पीछे देखूंगा भीलों की शक्ति को मैं,
पहले पहुंचाऊं तुझ को ही मुल्केअदम।
ओ कुलांगार कायर अधर्मी कुटिल,
जरा आगे तो आ बेहया बेशर्म॥
विभी०—मुझे मारेगा क्या अपनी खैर मना,
तुझको पहुंचाता हूँ आज मुल्केअदम।
तेरे जैसे अधर्मी पे करना रहम,
यह भी दुनियां में फैलाना खोटा कर्म॥
कृतघ्नी, कुबुद्धि, अधम, बेशर्म,
आज आया उदय तेरा खोटा कर्म॥

दोहा

सुन-सुन रावण को चढ़ा, क्रोध अति विकराल।
इधर विभीषण ने किये, दोनों नेत्र लाल॥

जुट गये वीर दोनों दल में, तो लगी मेदिनी थर्राने।
आंधी सहित जैसे वर्षा, यों लगे बाण वहां सर्राने॥
हो गया रक्त से कीच धड़ाधड़, शूर धरणि-पर गिरते हैं।
हल-चल का कुछ पार नहीं, विमान व्योम में फिरते हैं॥

दोहा

युद्ध भयंकर छिड़ गया, चलें सरासर बाण।
महाकाल से लड़ रहे, दोनों वीर बलवान्॥

इन्द्रजीत और कुम्भकर्ण, आदि योद्धे भी कूद पड़े।
मेघवाहन और कुम्भकर्ण, सुत महा बली ये आन खड़े॥
सुग्रीवादिक बड़े २ सब, रावण भ्रात के संग में थे।
इस कारण बाकी वानर योद्धा, महा काल के अंक में थे॥

भयंकर रुद्र सा रूप धार कर, कुम्भकर्ण फिर धाया है।
जिस तरफ झुके रावण योद्धे, बस सफा मैदान बनाया है॥
खलबली पड़ी सब सेना में, थे राम लखन निहारा है।
वज्रावर्तज अरुणावर्तज, शरासन कर में धारा है॥
अस्त्र शस्त्र तन पर धारे, झट रण भूमि में आये हैं।
जब लखा और भूपों ने ये, तो वो भी संग उठ धाये हैं॥
इधर नजर पड़ी सुग्रीवादिक की, खलबली फौज में छाई है।
झुक पड़े उधर ही रण बांके, राक्षस सेना घबराई है॥

दोहा

इन्द्रजीत के सामने, अड़े सुमित्रानन्द।
मेघनाद के भी हुआ, मन में परमानन्द॥
अनी मिली जब वीरों की, खड्ग हाथ में तान।
लाल नेत्र कर कहत यूं, इन्द्रजीत बलवान॥

आओ २ ऐ जंगली भीलो, मैं राह तुम्हारी लखता था।
छिपे हुए थे अब तक दोनों, मेरा खड्ग तरसता था॥
अब लंकपुरी पर चढ़ने का, परिणाम तुम्हें दिखलाऊँगा।
ना बचकर जा सकते यहाँ से, यमपुरी को आज पठाऊँगा॥

दोहा

वचन अवज्ञा के सुने, कोपे सुमित्रा लाल।
रूप भयानक धार के, गर्जे जैसे काल॥

ओ मूढ़ अधर्मी अन्याई, क्यों व्यर्थ में गाल बजाता है।
श्रीराम ने करुणा करी बहुत, पर काल ही तुझे बुलाता है॥
मुझको क्या पराभव पहुँचायेगा, नराधम जान बचा अपनी।
और साथ ही निज पाखंडी पिता को, बनवा ले जाकर कफनी॥

दोहा

जन्मा नहीं किसी जननी ने, सहे मार मम आय।
भागो जान बचा नहीं, परभव दूं पहुँचाय॥

मेघनाद व लक्ष्मण जी का संवाद

(चाल थ्येटरी)

मेघनाद बोला दलवीर, मेरे अस्त्र हैं अकसीर।
तुझको जीता दूं न जान, देख हनूं अब तेरे प्राण॥
देखूं कैसा तू रणधीर॥ १॥
लक्ष्मण—क्या तू बोल रहा है अधीर, तेरी उल्टी है तकदीर।
रघुकुल के हम वीर जवान, खोदें तेरा नाम निशान॥
पत्थर पर तू जान लकीर॥ २॥
इन्द्रजीत—मेरे अस्त्र हैं गम्भीर, लाखों योद्धा दीने चीर।
क्या तू बनता तीरन्दाज, तुझे न जीता छोड़ूं आज॥
अब ना काबू रहा शरीर॥ ३॥
लक्ष्मण—मिल आ रावण से आखीर, देख लेवें तेरी तसवीर।
उसे न दर्शन होंगे फेर, लिया काल ने तुझको घेर॥
सम्भल जा आती है जंजीर॥ ४॥

दोहा

विस्तार से क्या व्यादह कहे, समझो स्वयं सुजान।
योद्धों का संक्षेप से, परिणाम इस तरह जान।

गाना

(तर्ज—आल्हा ऊदल)

कुम्भकर्ण संग राम जुट गया, इन्द्रजीत संग लक्ष्मण जाय।
सिंह जगन महा बली राक्षस, नील ने उनको लिया दबाय॥

दुर्मुख कपि घटोदर राक्षस, इनकी जोड़ी अधिक सुहाय ।
दुर्मुख निशाचर गर्जा तर्जा, शम्भू प्रवल सिंहवत् जाय ॥
स्वयंभू और नल योद्धा की, चलने लगी कठिन तलवार ।
अंगद विराज स्कन्द निशाचर, करने लगे परस्पर वार ॥
मय वानर और चन्द राजस, जुट गये खाकर जोश अपार ।
वीर विराध निरूपम योद्धा, खुव चलाते सांग कटार ॥
मारीच और सुग्रीव नरेश्वर दोनों थे रण धीर अपार ।
श्रीदत्त वानर जम्बू राक्षस दोनों कुद पड़े ललकार ॥
भामंडल और केतु राजा, दोनों विद्याधर वलधार ।
पवनपुत्र और कुम्भकर्ण सुत, वलि जिन में था अपरम्पार ॥

कुन्द और धूमाक्ष अड़ गये, जैसे फणिधर गुस्सा खाय ।
घटाटोप अम्बर कर डारा, शतघ्नी दनादन रही मचाय ॥
चन्द्र रश्मि और शारण योद्धे, दल में रहे अन्धेर मचाय ।
कटी हुई खेती जैसे, वलवीरों का दिया ढेर लगाय ॥
इन्द्रजीत ने लक्ष्मण ऊपर मारा, खैंच के तामस वाण ।
वाण २ से काट गिराया, लक्ष्मण शूरों का सुल्तान ॥
नागफांस लक्ष्मण ने छोड़ा, इन्द्रजीत पर अस्त्र महान् ।
रावण सुत फंस गया फंदे में, छुट गये अस्त्र गिर गया मान ॥
करके वन्द विकट गाड़ी में, अपने दल में दिया पहुंचाय ।
चन्द्रोदर का इन्द्रजीत पै पहरा, सख्त दिया लगवाय ॥
रामचन्द्र ने नागफांस में, कुम्भकर्ण को लिया फंसाय ।
भामण्डल के हाथ उसे भी, उसी जगह पर दिया पहुंचाय ॥
पवनपुत्र ने कुम्भकर्ण सुत, अपने फन्दे लिया फंसाय ।
वीर सुभट के पहरे में फिर, डेरे में उसे दिया पहुंचाय ॥

दोहा

ये शूरे जब राम की, पड़े कैद में जाय।
मेघवाहन अति जोश में, डटा सामने आय॥

पवनपुत्र, बजरङ्गबली से, आकर युद्ध मचाया है।
पर पेश चली ना हनुमान सन्मुख, बन्दी नाम धराया है॥
फिर जिसके जो काबू में आया, उसी ने उसको दबोच लिया।
मक्खन बिन जिम दूध समझ, ऐसे सेना को फोक किया॥

दोहा

रावण ने यह जब लखा, निज सेना का हाल।
क्रोधातुर होकर किया, रूप अति विकराल॥
सुत भाई पर बस हुए, लगी खबर जिस बार।
वचन तीर सम भूप के, हुए जिगर के पार॥
इतने में ही पहुंच गये, वीर सुमित्रा लाल।
दोनों भ्रात जहाँ लड़ रहे, होकर के विकराल॥

रावण ने दाँत पीस भ्रात पर, कठोर त्रिशूल चलाई है।
सो लक्ष्मण वीर बहादुर ने, रास्ते में काट गिराई है॥
फिर तो जैसे वैश्वानल में, घी सींचे ऐसा हाल हुआ।
अमोघ विजय शक्ति पर अन्तिम, दशकन्धर का ख्याल हुआ।

दोहा

अमोघ विजय महा शक्ति पर, था पूरा विश्वास।
क्योंकि इस महा अस्त्र में, देवी का था वास॥

धरणेन्द्रदत्त अमोघविजय, शक्ति रावण ने हाथ लई।
इस तरफ खड़े ये वीर विभीषण, के भी योद्धे साथ कई॥

जिस समय घुमाई रावण ने, तो हाहाकार मचा भारी ।
रोको रोको सब कहते हैं, शस्त्र ले कर में बलधारी ॥

दोहा

देख प्रबल उस शक्ति को, दहल गये रणधीर ।
शस्त्र फेंकने के सिवा, करते क्या आखीर ॥

वह प्रलय काल की बिजली के, मानिन्द चमक दिखलाने लगी ।
दगदगाट और तड़तड़ाहट कर, अपना रूप बढ़ाने लगी ॥
नेत्र बन्द कर लिये क्योंकि, उस तेजी को न सहार सके ।
अस्त्र शस्त्र छोड़े अपार, शक्ति ना कोई निवार सके ॥
उड़ गये होंस सारे दल के, ना पेश किसी की जाती है ।
उस समय किसी योद्धा के, तन में रही ना शक्ति बाकी है ॥
वीर विभीषण शांत खड़े, जीने की आशा छोड़ दई ।
अमोघ मन्त्र श्रीनमोकार की, तरफ आत्मा जोड़ दई ॥

दोहा

परिणाम विभीषण ने किये, निर्मल और विशेष ।
सागारी संथारा किया, तज संयोग अशेष ॥
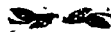
मित्रता

उदार चित्त ने जब देखा, मित्र पर शक्ति आती है ।
शरणागत का यों मर जाना, हृदय में लगती काती है ॥
सुनों मित्रगण दुनिया में मित्रों का हाल सुनाते हैं ।
मित्र की मित्रता को देखो, कैसे श्रीराम पुगाते हैं ॥

दोहा

जिस दम देखा मित्र पर, आता कष्ट अपार ।
लक्ष्मण को श्रीराम जी, बोले वचन उचार ॥

दोहा (श्रीराम)

ऐ भाई लक्ष्मण जरा, सुनना मेरी बात ।
जान बचाना मित्र की, आज तुम्हारे हाथ ॥

यह समय हाथ से निकल गया, तो फिर पीछे पछतावोगे ।
कर्तव्यशील सत्पुरुष विभीषण, सा मित्र न पावोगे ॥
आमोघ विजय शक्ति से यदि, शरणागत मारा जायेगा ।
तो निश्चय करलो रामचन्द्र, जीता नहीं मुख दिखलायेगा ॥

गना (श्रीराम का)

मित्र पे कष्ट आया, अय वीर आज भारी ।
अब दूर तुम निवारो, आपत्तिआज सारी ॥१॥
सर्वस्व को है त्यागा, जिस ने हमारी खातिर ।
उसकी हो ऐसी हालत, हमको ये दुःख अपारी ॥२॥
जिसने हमारे खातिर, अपना लहू बहाया ।
उसका हमारे ऊपर, ऐहसान आज भारी ॥३॥
कर्तव्य बस यही है, अब अपनी जिन्दगी का ।
मित्र के बदले बेशक, लगजाये जां हमारी ॥४॥
दुखिया शरण में आकर, फिर भी रहा जो दुखिया ।
मिट्टी में जिन्दगी ये, मिलजाये आज सारी ॥५॥
इसका उपाय अब तो, इसके सिवा न कोई ।
हृदय में आप झेलो, शत्रु की ये कटारी ॥६॥

मेरे सखा की खातिर, छाती अड़ादो अपनी।
परवाह न जान की कर, हृदय में लो ये धारी ॥७॥
मरना "शुक्ल" जरूरी, दो दिन या आगे पीछे।
ना साथ तन चलेगा, नर हो या चाहे नारी ॥८॥

दोहा (लक्ष्मण)

जैसी आज्ञा आपकी, करूं वही मैं काम।
खूब विचारा आपने, हे स्वामी सुख धाम ॥

दोहा

जब तक जीता जगत में, सेवक लक्ष्मण वीर।
तब तक तुम को क्या फिकर, अय भाई रणधीर ॥

हे भाई रणधीर अभी मैं, आगे बढ़ जाऊंगा।
अमोघ विजय शक्ति को, अपने हृदय में खाऊंगा ॥
जो कुछ कहा अभी देखो, पूरा कर दिखलाऊंगा।
इस विपदा से आज आपदा, मित्र बचा लाऊंगा ॥

दौड़

सोच अब दूर निवारो, आप मन निश्चय धारो,
अभी आगे बढ़ता हूं, जगह आपके मित्र की अपना हृदय करता हूँ।

दोहा

उसी समय आगे बढ़े, वीर सुमित्रा लाल !
मित्र विभीषण का धरा, अपने सिर पर काल ॥

रावण के सन्मुख लक्ष्मण ने, निज सीना तुरत अड़ाया है।
जिसको अपना कह चुके, उसे अपना ही कर दिखलाया है ॥

काल के सन्मुख आय अड़े, मित्र का अङ्ग पुगाया है।
उस समय दशानन ने, लक्ष्मण को ऐसे वचन सुनाया है॥

दोहा (रावण)

क्यों लड़के तू किस लिये, फँसा काल के गाल।
जरा देर ता देखता, रणभूमि का हाल॥

रणभूमि में आज सभी, सर शय्या पर सोवोगे।
पानी की ना मिले बूंद, आँसुओं से मुख धोवोगे॥
देख देख अपनी हालत, दोनों भइया रोवोगे।
तड़प तड़प कर प्राणों को, रणभूमि में खोवोगे॥

दौड़

प्रथम इसको मरने दो, ढेर दलका करने दो, बाद में तुम भी मरना, दशकन्धर बलवीर, संग नहीं जंग सुखाला करना।

दोहा

शर्म तुझे आती नहीं, खाली करते बात।
कैद हमारी में पड़े, तेरे सुत और भ्रात॥

तेरे सुत और भ्रात डूब मर, पापी चुल्लू भर में।
तीस मारखां बने रहे, तुम आज तलक निज घर में॥
कायर चोर अकड़ता कैसे, बांध के तेग कमर में।
आज सुमित्रा लालसिंह से, पाला पड़ा समर में।

दौड़

लंका की धूलि उड़ाऊं, समर में तुझे सुलाऊं,
प्रथम तू जोर लगा ले खड़ा तान छाती सम्मुख,
दशरथ नन्दन अजमाले।

दोहा

बोली गोली सम हुई, दशकन्धर के पार।
फिर भी यों कहने लगा, धैर्य मन में धार॥
फिर कहता हूं तुझे, ओ लड़के नादान।
क्यों मरता मतिमन्द तू, मौत पराई आन॥

आमोघ विजय शक्ति का निश्चय, वार न खाली जायेगा।
यदि पहले ही मर गया, तमाशा फेर न देखन पावेगा॥
सबसे बड़ा विभीषण शत्रु, पहले इसको ही मरने दो।
जो लगी हुई तन में ज्वाला, वह शान्त जरा अब करने दो॥
दुष्ट विभीषण जीता है, तब तक मुझ को सन्तोष नहीं।
क्योंकि सब भेद दिया इसने, बस किसी और का दोष नहीं॥
इस से क्या आपका रिश्ता है, मरने दो वे परवाही से।
फिर आपकी बारी आवेगी, मिल आओ अपने भाई से॥

दोहा

रिश्ते दो हैं जगत् में, एक प्रेम एक द्वेष।
तेरा शीश उतार के, करूं इसे लंकेश॥

रिश्ता प्रथम विभीषण से, और दूसरा रिश्ता आप से है।
फिर शरण हमारी आन पड़ा, बचकर तेरे संताप से है॥
श्री रामचन्द्र ने बांह पकड़ी, हृदय से मित्र हमारा है।
इसलिये सामने खड़ा करूं निष्फल ये ख्याल तुम्हारा है॥

गाना (लक्ष्मणजी का)

लिया साथ इसका, निभाना पड़ेगा।
चाहे हमको सर्वस्व लगाना पड़ेगा॥१॥
विभीषण को हम कह चुके अपना भाई।
तो भाई बना कर दिखाना पड़ेगा॥२॥

यदि आई मित्र पे, कोई भी विपदा।
तो खून हमको, अपना बहाना पड़ेगा ॥३॥
यह शक्ति दिखा करके, क्या फूलता है।
तुझे अपना ही तन, मिटाना पड़ेगा ॥४॥
यह धड़ से गिरा सिर, तेरा ताज लेकर।
विभीषण के मस्तक सजाना पड़ेगा ॥५॥
सीता चुराने का, भय चोर तुझ को।
समर में नतीजा, चखाना पड़ेगा ॥६॥
यह कहता हूँ निश्चय, समझ काल मुझ को।
तुझे अब तो, परभव में जाना पड़ेगा ॥७॥

दोहा (लक्ष्मण)

जाओ लंका लौट कर, सुनो हमारी बात।
यहां पर लगने की नहीं, लगा रहे जो घात॥

कल तक जो कुछ मिल ना जुलना, खाना पीना, सब कर आओ।
क्योंकि फिर तुमने, मरना है यह शस्त्र भी घर धर आओ॥
अन्त समय यदि चाहोगे, सुत बांधव तुझे मिला देंगे।
खुशी खुशी फिर नींद हमेशा की, हम तुम्हें सुला देंगे॥

दोहा (रावण)

कर कर बाते जोश की, रहा कलेजा चीर।
अन्तिम जंगली भील की, जाय कहाँ तासीर॥

ना संगति शोभ न मिली तुम्हें, जंगल की धूल उड़ाई है।
वन में गीदड़ ही धमकाये, ना झपट शेर की खाई है॥
यह कतर कतर करना जिह्वा से, तुझ को अभी भुलाता हूं।
ले सावधान हो नींद हमेशाकी, मैं तुम्हें सुलाता हूं॥

दोहा

ऐसा कहकर भूप ने, शक्ति दई चलाय।
वानर दल के शूर में, सभी रहे घबराय॥

निज-निज शस्त्र सब शूरों ने, शक्ति की ओर झुकाये हैं।
आंधी आगे जैसे तृणे, शक्ति ने दूर भगाये हैं॥
अमोघ विजय आ लक्ष्मण के, हृदय में तुरत समाई है।
मूर्च्छित हो गिरा धरणी में सहसा, सुरति सभी विसराई है॥

दोहा

सुनो मित्र गण जिस समय, गिरा सुमित्रा लाल।
दशकन्धर आने लगा, नजर सभी को काल॥

हुआ विकल सब वानर दल, निज आंसुओं से मुंह धोते हैं।
छा गई अंधेरी आंखों में, सब वीर धीर को खोते हैं॥
सुग्रीव विभीषण भामण्डल, सब ऊंचे स्वर से रोते हैं।
चढ़ गया ताप कई शूरों को, बीमार बने कई सोते हैं॥
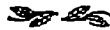
राम-रावण

दोहा

देख हाल यह राम को, चढ़ा जोश विकराल।
संग्रामी रथ बैठकर, गर्जे जैसे काल॥

गर्जे जैसे काल खैंच लिया, धनुष-बाण निज कर में।
टंकार शब्द घनघोर कड़क, बिजली की ज्यों अम्बर में॥
रावण को ललकार दई, जाकर श्रीराम समर में।
लटक रहा था शम्बूक वाला, खड्ग अमोघ कमर में॥

दौड़

देख रावण घबराया, काल की शंका लाया, राम ने पहुंच दबाया, एक बाण से रावण का, सारा रथ तोड़ बगाया ।

आल्हा

रावण ने फिर दूजे रथ पर, अपना आसन लिया जमाय ।
उसको भी श्री रामचन्द्र ने, पुर्जा-पुर्जा दिया बनाय ॥
जान बचाने को फिर रावण, तीजे रथ पर बैठा जाय ।
एक बाण से रामचन्द्र ने, दिया उसे बेकार बनाय ॥
जान बचानी दशकन्धर को, मुश्किल बनी सामने आय ।
वीर दशानन ने फुर्ती से, चौथा रथ फिर लिया सजाय ॥
बज्रावर्तज धनुष बाण से, उसको भी दिया गर्द बनाय ।
योधें खड़े तमाशा देखें, राम का तेज सहा नहीं जाय ॥
विकल समर में हो रावण फिर, पंचम रथ पर हुआ सवार ।
दशरथ नन्दन ने झुंझलाकर, उसे भी दिया धरणी में डाल ॥
पीठ दिखाई दशकन्धर ने, अन्तिम रणभूमि मंझार ।
प्राण बचाने को रावण ने, दिल में ऐसा किया विचार ॥

दोहा

भाई के मोह में हुआ, अन्धा फिरता राम ।
यदि यहां ठहरा अभी, पहुँचा दे परधाम ॥

'अन्धे का जप्फा बुरा', ठीक यह पंजाबी में कहते हैं ।
बुद्धिमान् ऐसे मौके पर, कभी ना वहां पर रहते हैं ॥
समय विचारे सो स्याना, ये गुरुजनों का कहना है ।
यह स्वयं प्राण तक देवेगा, किस कारण यहां दुःख सहना है ।
जिस पर था आधार सभी का, उसका समझो अवसान हुआ ।
श्रीराम स्वयं मर जायेगा, क्योंकि यह दुःखी महान् हुआ ॥

बाकी तो हैं सब चूर भूर, दिन उगे कोई न पावेगा।
जो पड़े कैद में सुत बान्धव, सो भी कल देखा जावेगा ॥

दोहा

रावण लंका में गया, दिल में खुशी अपार।
इधर खड़े श्रीराम जी, ऐसे रहे पुकार ॥

गाना श्रीराम

(तर्ज—स्थानक में नरनार आवो आवो)

दशकन्धर बलधार आवो आवो।
रणभूमि में यार, आवो आवो ॥ टेक ॥
क्षत्रिय का यह धर्म नहीं है, पीठ दिखाना कर्म नहीं है।
है तुझको धिक्कार ॥ १ ॥
भाग कहाँ जायेगा पाजी, सिर धड़ की अब लाके बाजी।
देऊँगा शीश उतार ॥ २ ॥
परभव को मैं तुझे पठाऊं, सूर्यवंशी तब ही कहलाऊं।
आज नहीं तो कल यार ॥ ३ ॥
कायर क्रूर, अधर्मी, अनारी, भ्रात मेरे के शक्ति मारी।
अब ना करूं उधार ॥ ४ ॥
छल फरेब से सिया चुराई, अब क्यों रण में पीठ दिखाई।
पावेगा नरक द्वार ॥ ५ ॥

—※—

मूर्छा

दोहा

दृष्टि से रावण छिपा, जाना जब श्रीराम।
वापिस फिर रथ को किया, आ पहुंचे निजधाम ॥
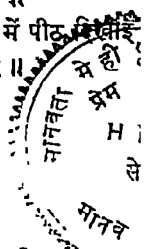
जब देखा लक्ष्मण भाई को, झट गिरे मूर्छा खा करके।
सुग्रीवादिक ने शीतलता, कर मूर्छा दई हटा करके॥
भाई का सिर गोदी में रख, नयनों से नीर बहाने लगे।
श्रीराम का दुःख ना देख सका, मानु अस्ताचल जाने लगे॥

दोहा

रामचन्द्र को हो रहा, महा घोर सन्ताप।
गोदी में ले भ्रात को, किया बहुत विलाप॥
रो रो कर श्रीराम जी, बहा रहे जल नैन।
वीर सुमित्रा लाल को, कहन लगे यों बैन॥

गाना (श्रीराम)

मेरे भाई लक्ष्मण वीर, मुख से बोलो तो सही। (ध्रुव)
शक्ति नहीं तो वचन से, वचन नहीं तो नैन।
नैन नहीं तो और कोई, करो इशारा वीर॥ १॥
दिवस चन्द्र के तेज सम, बने सभी रणवीर।
एक तुम्हारे बिन सभी, खो बैठा दल धीर॥ २॥
दशकन्धर जीता गया, क्या तुमको यह रोष।
या शक्ति ने तेरे उड़ा दिये हैं होश॥ ३॥
सभी शूरमें थे खड़े, तुम पैरों पर वीर।
कटक सभी है रो रहा, बंधा इन्हें अब धीर॥ ४॥
भाई अब तेरे बिना, सीता लावे कौन।
तैंने तो अब मौन धारा, कौन बंधावे धीर॥ ५॥
क्या मुझ पर गुस्से हुआ, वीर सुमित्रा लाल।
तेरे बिन हम देखो भ्राता, कैसे हो रहे अधीर॥ ६॥
शुक्र सहायक ना बना, यदि यह तेरा विचार।
तो मैं शत्रु के अभी, मारूं हृदय में तीर॥ ७॥

दोहा (स्वगत रावण)

मोह के वश श्रीराम जी, धनुष बाण ले हाथ।
शत्रु की करने चले, राम समर में घात ॥
दुष्ट तुझे मारे बिना, मुझे नहीं आराम।
आता हूं अब ठहर जा, पहुँचाऊँ पर धाम ॥

देख मेरी शक्ति कायर, और अपनी शक्ति दिखा मुझे।
अब जीता कभी ना छोडूंगा, यह साफ २ मैं कहूं तुझे ॥
तेरा शीश उड़ा करके, लक्ष्मण को अभी दिखाता हूँ।
जो रूठ गया प्यारा भाई, फिर जाकर उसे मनाता हूँ ॥

दोहा

उसी समय हनुमान ने, रोके राम नरेश।
फिर आकर यों सामने, बाले किष्कन्धेश ॥
सूर्य अस्ताचल गया, लंका में लंकेश।
आप किधर को चल दिये, सोचो जरा नरेश ॥

मूर्च्छागत है श्री लक्ष्मण जी, मत फिकर करो अपने दिल में।
रजनी में ही कोई उपाय करो, फिर काम नहीं बनना दिन में ॥
मन्त्र यन्त्र या औषधि से, शक्ति यदि बाहिर निकल आवे।
भानु के चढ़ने से पहले, ऐसा कोई तन्त्र मिल जावे ॥

सुग्रीव का गाना

देव शक्ति को दूर हटावो प्रभु।
कोई ऐसा उपाय बनाओ प्रभु ॥टेक॥
हम तन मन अपना लगावेंगे,
और लक्ष्मण का कष्ट मिटावेंगे।
सच्चे मित्र तब ही कहलावेंगे,
श्री जिनवर के गुनगावो प्रभु ॥ १ ॥

सारी लंका की धूल उड़ावेंगे,
और सीता को जीत के लावेंगे।
ऐसा करके सेवक दिखलावेंगे,
अब अर्ति दूर नसावो प्रभु ॥ ३ ॥
प्रातः लक्ष्मण बली उठ जावेंगे,
जाकर रावण का शीश उड़ावेंगे।
विजय रण में स्वामी पावेंगे,
इन बातों पर निश्चय लाओ प्रभु ॥ ४ ॥
अब सेना के कोट बनावेंगे,
और लक्ष्मण को मध्य लिटावेंगे।
सब रल मिल यत्न बनावेंगे,
तुम हृदय में धैर्य लाओ प्रभु ॥ ५ ॥
सब योग्य चिकित्सा जारी है,
और पुरुषार्थ अति भारी है।
इस कारण अर्ज गुजारी है,
अब "शुक्ल" ध्यान शुभ ध्याओ प्रभु ॥ ५ ॥

दोहा (राम)

कष्ट महा प्रलय भई, सुनों वीर सब बात।
प्यारे भाई के बिना, अब नहीं शान्ति दिखात ॥
ऐसा कह श्रीराम जी, होकर हाल निढाल।
लक्ष्मण से कहने लगे, उठो सुमित्रा लाल ॥

श्रीराम का गाना

जागो २ ऐ भ्राता लक्ष्मण करो न जग हंसाई।
आंखें खोलो मुख से, बोलो प्राणों से प्यारे भाई।
मन नहीं बांधे धीर, वीर मैं सह ना सकूं जुदाई ॥ १ ॥

एक तेरे सोने से कुल की, मिटती है प्रभुताई।
अवध में शोक आनन्द लंक में, विधि ने धूल उड़ाई ॥ २ ॥
संग तुम्हारे प्राण तजूं मैं, रण में मचे दुहाई।
यह सुनते ही प्राण तजेगी, सीया जनक की जाई ॥ ३ ॥
रघुकुल भूपण प्राण राम के, सैन्या को सुखदाई।
जनक सुता नहीं आई, अभीना लंक विभीपण पाई ॥ ४ ॥
"शुक्ल" भरोसे तेरे ही, लंका पै करी चढ़ाई।
उठ रख लाज तू मेरे प्राण की, अच्छी नहीं रुलाई ॥ ५ ॥

दोहा (सुग्रीव)

धैर्य करके हे प्रभु, सोचो कोई उपाय।
जैसे-तैसे हो सके, विघ्न सभी टल जाय ॥

दोहा (राम)

क्या कह दूं मैं इस समय अपने मुख से भाप।
भाई विन मेरा हुआ, मानो सर्वस्व नाश ॥

श्रीराम सुग्रीव का गाना

(श्रीराम चहरतवील)

मैं कैसे कहूँ अपने दिल की व्यथा;
मेरे सिर पर महा कष्ट भारा पड़ा।
उस तरफ खोती होगी सिया जानकी,
इस तरफ मेरा भाई प्यारा पड़ा ॥ १ ॥
तव तक मेरा भी दिल ठिकाने नहीं,
जव तक माता की आंखों का तारा पड़ा।
मैंने झोंका इसे काल के गाल में,
शक्ति आगे ना हृदय हमारा वढ़ा ॥ २ ॥

सुग्रीव—बांधो दिल में दिलासा निकालो अकल,
प्यारे लक्ष्मण को जल्दी उठाओ प्रभु।
बीत जायेगा ऐसे तो सारा समय,
आप रो रो न हमको रुलाओ प्रभु ॥ ३ ॥
कोई इसकी कहीं पर बताओ दवा,
उसको जल्दी वहाँ से मंगावो प्रभु।
पास भाई के बैठो तजो सब फिकर,
विद्याधर योद्धे हर जहाँ पठाओ प्रभु ॥ ४ ॥

शेर [राम]

मन ही ठिकाने पर नहीं, फिर मैं करूँ तो क्या करूँ।
दिल तो चाहता है यही, भाई से पहले मैं मरूँ ॥

दोहा

इतना कह फिर अनुज सिर, धरा राम ने हाथ।
मोह के वश फिर लखन से, यों बोले रघुनाथ ॥

श्रीराम का विलाप

उठो तुम रण योद्धा बलवान, सो लिये बहुत देर मरदान ।टेक।
कैसे बर्छी आ लगी तेरे तन में वीर।
हाय लक्ष्मण नहीं बोलता, मेरी उलट गई तकदीर ॥
आंखें खोल मुझे पहचान ॥ १ ॥
दशकंधर के अस्त्र ने, किया वीर बेहोश।
सिया चाहे मत ना मिले, मुझे नहीं अफसोस ॥
बचादे कोई वीरन के प्राण ॥ २ ॥
आधी रैन होने लगी, लगी ना औषधि खास।
वानर सेना सब तेरी, लक्ष्मण खड़ी उदास ॥
विपद में विपद पड़ी क्या आन ॥ ३ ॥

जब जाऊँगा अवध में, पूछेगी मोहे मात ।
कहां वीर लक्ष्मण तेरा, कौन कहूं फिर बात ॥
कैसा लगा दुष्ट का बाण ॥ ४ ॥

खबर लगे जब भरत को, तन करले विकराल ।
सिर धुन धुंन पागल बने, छिन में करेगा काल ॥
गंवा देगा सुन कर जान ॥५॥

औषधी कोई लगती नहीं, हुए वैद्य लाचार ।
चीर फाड़ से उल्टी शक्ति, करती दुःख अपार ॥६॥
हाय बिगड़ी रघुकुल शान ॥६॥

शेर

नारी खुसाई बन में, और भाई गवाऊंगा यहाँ ।
वाक्य ना पूरा किया, यह मुख दिखलाऊंगा कहां ॥

दोहा

नारी हरण भाई मरण, कष्ट रहा ये दूर ।
लंक मित्र को ना दई, यही दुःख भरपूर ॥
तन के खातिर धन तजो, तन को तज रख लाज ।
धर्म हेतु तीनों तजो, कहा श्रीजिनराज ॥

संयोगमूल दुःख दुनिया में, सर्वज्ञ देव का कहना है ।
क्योंकि एक दिन होगा वियोग, ना पास किसी के रहना है ॥
यह जीव अकेला आया है, और आप अकेला जायेगा ।
एक सिवा शुभाशुभ कर्मों के, और साथ ना कुछ ले जायेगा ॥

दोहा

एक दिन होना था जुदा, अवध पुरी का राज ।
माता पिता भाई बहिन, और सब साज समाज ॥

जनक सुता की भी मुझ से, एक रोज जुदाई होनी थी।
लक्ष्मण भाई की भी आगे, पीछे कब होनी टलनी थी॥
किन्तु मित्र को वचनदिया, वह अब तक नहीं निभाया है।
लंकेश विभीषण को कह कर, लंकेश ना उसे बनाया है॥

दोहा

प्रातःकाल ही समर में, रावण का सिर तार।
राज लंका का मित्र के सिर पर देऊं धार॥

राज्य तिलक कर वीर विभीषण, के सिर ताज टिकाऊंगा।
निज वचन करूं पूरा मित्र के, ऊपर चंवर झुलाऊंगा॥
एक सुमित्रा लाल बिना, सीता की कुछ दरकार नहीं।
और राजपाट धन दौलत क्या, इस तन से भी अब प्यार नहीं॥

दोहा

भामण्डल सुग्रीव जी, श्रीवज्रांग नरेश।
वीर विराध आदि सभी, जावो निज निज देश॥

तन मन से सेवा की तुमने, इसका बदला मैं नहीं दे सकता।
पर एक वीर लक्ष्मण के बिना, इस तन को भी नहीं रख सकता॥
पूरा करके वचन राम, चन्दन की चिता बनायेगा।
फिर भाई के संग भाई गन्दे, तन की भस्म बनायेगा॥

दोहा

कर्मों ने ये कर दिया, पूरा खेल तमाम।
कुशल क्षेम पहुँचो सभी, तुम अप अपने धाम॥
सुनें राम के जिस समय, हृदय विदारक वैन।
प्रेम से फिर वज्रांग जी, लगे इस तरह कहन॥

दोहा (हनुमान)

वचन आप के तीर सम, हुए जिगर के पार ।
जनक दुलारी के विना, जाना है धिक्कार ॥

शूर वीर क्षत्रीय हो कर हम, कसे कदम हटायेंगे ।
यह शस्त्र तन पे धारण कर, क्या जग में मुख दिखलायेंगे ॥
धरें लाश पर लाश समर में, दशकन्धर को मारेंगे ।
वचन आपका पूर्ण कर, सीता का कष्ट निवारेंगे ॥

गाना (हनुमान जी का)

चाहे ये तन भी लग जावे तो, लाना ही मुनासिब है ।
विना सीता के लंका से, नजाना ही मुनासिब है ॥१॥
वचन पूरा करो बेशक, तुम्हारा धर्म है राजन् ।
धर्म हम को भी अपना तो, निभाना ही मुनासिब है ॥२॥
करो यह काम पहले, मूर्छा हो दूर लक्ष्मण की ।
सवेरे लंक पर गोला, बजाना ही मुनासिब है ॥३॥
सिवा रावण के राक्षस सेना में, अब तन्त ही क्या है ।
स्वाद सीता के हरने का, चखाना ही मुनासिब है ॥४॥
किया अर्पण यह तन मन धन, प्रभु सब आपकी खातिर ।
हमें रावण को क्षत्रापन, दिखाना ही मुनासिब है ॥५॥
कष्ट की आज की रात्री, रहो सब चुस्त हो कर के ।
क्योंकि विश्वास शत्रु पर, न लाना ही मुनासिब है ॥६॥

दोहा (सुग्रीव)

प्रबन्ध सभी ऐसा करूं, हे आदित्य नरेश ।
मनुष्यमात्र तो चीज क्या, करे न सुर प्रवेश ॥

सात कोट बना करके, दरवाजे चार बनाता हूँ ।
इर्द गिर्द यह इन्तजाम, ऊपर विमान अड़ाता हूँ ॥

मध्य भाग में राम लखन, पहरा नंगी तलवारों का।
पहरा होगा दरवाजों पर भी, महा योद्धा वलधारों का॥

दोहा

शीघ्र वीर सुग्रीव ने, किया सभी यह काम।
मध्य भाग ले लखन को, बैठ गये श्रीराम॥

सात कोट कर विद्या के, फिर वीर किये सब शीघ्र खड़े।
दरवाजों पर थे अतुल बली, विमान व्योम में सभी अड़े॥
गव-गवाक्ष सुग्रीव हनुमत, तारक स्कन्ध दधि मुख थे।
अस्त्र शस्त्र सब लगा वीर, सातों पूर्व के सन्मुख थे॥

दोहा

श्री महेन्द्र अङ्गद कुरम, अङ्ग विहंग सुशैन।
चन्द्ररश्मि उत्तर तरफ, तने खड़े थे ऐन॥

समरशील दुर्धर मन्मथ, जयविजय वीर संभव भारी।
पश्चिम दरवाजे सावधान हो, खड़े नील थे वलधारी॥
वीर विराध गज भुवनजीत, नल मंद विभीषण भामंडल।
नृप राज कुमार सब चुस्त खड़े, कानों में शोभ रहे कुण्डल॥

दोहा

योग्य स्थानों पर खड़े, वीर तान समसेर।
लक्ष्मण की करने लगे, वैद्य औषधि फेर॥

दोहा

देव रमण उद्यान में, बैठी थी बेचैन।
सीता को जा त्रिजटा, लगी इस तरह कहन॥
दुःख में दुःख देने के लिये, आई तेरे पास।
जनक किशोरी क्या कहूँ, अपने मुख से भाष॥

त्रिजटा सीता के प्रश्नोत्तर—(वहरतवील)

त्रि०—मेरा आता कलेजा है मुख की तरफ,
क्या कहूं जैसी मैंने है वाणी सुनी।
क्या खबर कैसी बीतेगी कल को वहन,
जैसी कर्मों में है आज तानी तनी ॥१॥
मेरी फटती है छाती यह रुकती जवां,
जब से लंका में मैंने कहानी सुनी।
मेरे तनका तो हाल भगिनी ऐसा हुआ,
जैसे चिपटी हो लकड़ी को खाने घुनी ॥२॥

सीता—क्या सुनी तैंने ऐसी कहानी वहिन,
कृपा करके वह जल्दी सुना तो सही।
कौन तेरे सिवा मेरा हितकार है,
प्यारी रंजो अलम यह उड़ा तो सही ॥३॥
मेरा दिल बैठता जाता है आज तो,
इसका कारण मुझे तू बता तो सही।
सारा कांपे जिस्म आता चक्कर मुझे,
मेरे दिल की तफ्त को बुझा तो सही ॥४॥

त्रिजटा—तेरा पहिले ही जब कि, बुरा हाल है,
क्या सुना करके बेमौत मार तुझे।
मैं करूं तो करूं क्या अय सीता बता,
यह भी अन्याय दिल से बिसराऊं तुझे ॥५॥

सीता—तो फिर देरी क्यों करती हो जल्दी कहो,
मेरे दिल को तसल्ली बंधा तो सही।
क्या तू लाई खबर आज के जंग की,
जैसी है वैसी मुझको बता तो सही ॥६॥

दोहा (त्रिजटा)

आज सुमित्रा लाल के, रणभूमि दर्म्यान।
अमोघ विजय दशकन्धर ने, मारी शक्ति तान॥

छंद

शक्ति को खा धरणि गिरा, रण में सुमित्रा नन्द है।
सब जगह चर्चा यही, रावण के दिल आनन्द है॥
मूर्छित बली लक्ष्मण हुआ, देवर तुम्हारा है सती।
धीर धर दिल में जरा, बेटी तू घबरावे मती॥

दोहा

इतना सुन कर जानकी, गिरी मूर्छा खाय।
हो अचेत धरणी गिरे, ये दुःख सहा न जाय॥
त्रिजटा का प्रेम था, सीता संग भरपूर।
शीतल चीजों से किया, मूर्छितपन को दूर॥

आँखों से पानी बरस रहा, जैसे श्रावण की लगी झड़ी।
कभी ऐसी हालत होती है, सीता जैसे निर्जीव पड़ी॥
मार मार कर मस्तक पर, सीता न धैर्य धरती है।
अपनी हालत को देख देख, फिर ऐसे गिरा उचरती है॥

दोहा (सीता)

सबको दुखिया कर दिया, फिर भी मरती नांय।
जिस लक्ष्मण पर विश्वास था, गिरा मूर्छा खाय॥

(सीता जी का विलाप—शिकस्त में खो)

आहे रावण तेरा कैसे होगा भला,
दख देने में तूने न छोड़ी कसर।

क्या विगाड़ा अधर्मी था हमने तेरा,
मार शक्ति जो लक्ष्मण का फारा जिगर ॥

मेरे प्रियतम की तैंने भुजा काट ली,
आज घी का दिया बस जला तेरे घर ।

कैसे जीतेंगे तुझको अकेले पिया,
मेरे दिल में यही एक भारी फिकर ॥

दोहा

ऐसे मूर्छित हो गिरे, पुनि पुनि उठे सम्भाल ।
मस्तक पर कर धर लिये, रोवे आँसू डार ॥
मैं पापिनी ना जन्मती, क्यों होता ये हाल ।
रणभू मे क्यों लेटता, आज सुमित्रा लाल ॥

गाना (सीता का)

सिवा लक्ष्मण पिया का गुजारा नहीं,
मेरे जीने का कोई सहारा नहीं ।

आशा दिल में जो थी सब खत्म हो गई,
ऐसी किस्मत हमारी कहाँ सो गई ॥
अब तो दुनियाँ में कोई हमारा नहीं ॥१॥

अय कर्म तुझको आती न किसी पै दया,
मुझे किसके हवाले अय पापी किया ।
तूने कुछ भी तो सोचा विचारा नहीं ॥२॥

हाय लक्ष्मण विना प्रीतम का जीना नहीं,
भ्रात विरहे में पानी भी पीना नहीं ।
क्योंकि शक्ति से बचना सुखारा नहीं ॥३॥

प्राण तज देंगी माताएँ सुन बात ये,
प्रलय होने में सिर्फ आज की रात ये।
निकला चक्कर से बेड़ा हमारा नहीं ॥४॥

एक सा समय जग में न किसी का रहा,
संयोग ही दुख की जड़ है कहा।
अब तो मस्तक में पुण्य सितारा नहीं ॥५॥

शुक्ल कहे क्या कर्म से जब पाला पड़ा,
काल सूर्यवंसियों का आ छाती चढ़ा।
सिवा धर्म के अब तो गुजारा नहीं ॥६॥

दोहा

इतना कह करके सिया, गिरी धरणी मुर्झाय।
उसी समय फिर त्रिजटा, बोली गले लगाय॥

दोहा (त्रिजटा)

जनक सुता क्यों हो रही, इतनी हाल बेहाल।
राजी अब हो जायेंगे, वीर सुमित्रा लाल॥

त्रिजटा—तेरा सुन कर रुदन ये कलेजा हिले,
अब तू आंखों से आंसू बहावे मती।
इसलिये ही तो तुमको बताती न थी,
रो रो बेटी तू मुझको रुलावे मती ॥१॥

शस्त्र योद्धों को लगते हैं रण में सदा,
तेरा देवर भी योद्धा है भारी सती।

मेरे कहने से तू अब तो सन्तोष कर,
तुझको आकर मिलेंगे अयोध्या पति ॥२॥

सीता—धीरज कैसे बंधे सोचो दिल में जरा,
ऐसी हालत में किसका सहारा लेऊं।
जब धर्म ही गया तो फिर जीऊंगी क्या,
कर खत्म दम में यहां से किनारा लेऊं ॥३॥
बिना लक्ष्मण न जीने के श्रीराम जी,
इससे अच्छा मैं पहले दुधारा लेऊं।
कर दें ऐहसान मुझ पर जरा आज ये,
ला गले मार अपने कटारा लेऊं ॥४॥

त्रिजटा—हमने तो क्या कहा तू समझती है क्या,
स्यानी होकर अक्ल कहां गमाई सिया।
तूने समझा कि निश्चय वे मर ही गये,
हमने मूर्छा है उनको बताई सिया ॥५॥
पहले मेरी अक्ल ही तो मारी गई,
तुझको आकर ये अफवा सुनाई सिया।
तेरे दुःख से दुखी आज मैं हो रही,
कैसे तुमको में निश्चय दिलाऊं सिया ॥६॥

दोहा

सर्सराहट करती हुई एक विद्याधरी आय।
सीता ने उसकी तरफ देखा नयन उठाय ॥

आंखों से पानी बरस रहा, और दुर्बलता अति तन पर थी।
वह हाल कथन नहीं हो सकता, जो अर्ति उसके मन पर थी ॥
देख हाल ये जनक सुता का, विद्याधरी अकुलानी है।
और प्रेम भाव से सीता को, ऐसे बोली वो वाणी है ॥

दोहा (विद्या०)

सुन सुन कर तेरा रुदन, हृदय दुखी अपार।
बेटी अब रोवे मती, दिल में धीरज धार॥

अशुभ कर्म का उदय भाव हो. तब ही विपत्ति आती है।
एक मनुष्य मात्र क्या देवन पति, की पेश नहीं कुछ जाती है॥
दुष्ट न होते दुनिया में तो. श्रेष्ठ पुरुष किसको कहते।
यदि अमृत ना होता तो, कैसे बुरा कहो विष को कहते॥
यदि कर्म ना होते दुनिया में, तो दुखिया नजर नहीं आते।
यदि मुक्ति न होती जीवों की, तो नित्यानन्द कहाँ पाते।
यह सभी खेल हैं कर्मों के, अयि सीता नजर जो आते हैं।
जो सुखी जीव आनन्द में है, दुखिया जल नयन बहाते हैं॥

दोहा

शुभ गणना में वे सदा, जो रहे धर्म में लीन।
सर्वस्व चाहे अर्पण करें, बनें न हर्गिज दीन॥

धर्म हेतु जो सहे कष्ट, सो ही उत्तम नरनारी है।
नर तन पाकर ना धर्म किया, तो व्यर्थ में जून विगारी है॥
धन्य धन्य हे जनक सुता, तूने सती धर्म निभाया है।
और महा कष्ट सहने पर भी, अपना मन नहीं हिलाया है॥

दोहा

अवलोकिनी विद्या सती, है मेरे आधीन।
भेद मंगाया मैं अभी, देख तेरी छवि क्षीण॥

प्रातःकाल से पहले ही, लक्ष्मण अच्छे हो जावेंगे।
निश्चय कर लो ये वचन मेरे, सब ही सच्चे हो जावेंगे॥
अस्त्र शस्त्र दशकन्धर के, निष्फल सारे हो जावेंगे।
सब भ्रम निवारो राम लखन, अब शीघ्र तुम्हें मिल जावेंगे।

जिन राज भजो मन धीर धरो, शुभ परमेष्ठी का जाप करो।
दुखियों का दुःख निवारक ये, मंत्र इससे संताप हरो॥
धन्य तुम्हें अय क्षत्राणी, क्षत्रापन खूब निभाया है।
और परम धर्म का मर्म, लिया हृदय में खूब जमाया है॥

दोहा

संतोष जनक सुनकर वचन, धरो जरा मन धीर।
सर्द श्वास भर नेत्रों का, पूंछ लिया सब नीर॥

सूर्योदय की करन प्रतीक्षा, चकवी के मानिन्द लगी।
और जगदम्बा की उदयाचल की, ओर निरंतर दृष्टी लगी॥
और उधर दशानन लक्ष्मण को, शक्ति लाकर खुश होता है।
अब किया ध्यान भाई पुत्रों का, सिर धुन धुन के रोता है॥

—※※※—

रावण पश्चात्ताप

दोहा

कर मल मल पछता रहा, दशकंधर रणवीर।
हा वत्स वत्स कर रहा, कभी कहे हा वीर॥
हा भाई भानुकर्ण फंसा किस तरह आज।
तेरे बिन मेरा सभी, बिगड़ गया ये साज॥

छन्द

हाय इन्द्रजीत बेटा, कैद शत्रु की फंसा,
प्राण प्यारा मेगवाहन, नाग फांसी में कसा।
क्या पता तुम पर अरि जन कष्ट क्या क्या लायेंगे।
हाय मेरे वीर सुत, कैसे वह दुख उठायेंगे।

आत्मा मम दूसरी, भानुकर्ण तू वीर था,
हाय मेरे ज्येष्ठ सुत, तू तो बड़ा रणधीर था।

मेघवाहन मेघ जैसी, गर्जना कहां खो दई,
आज मेरे मुख्य योद्धों की, गति क्या हो गई।

कैसे छुटें अब कैद से, योद्धे सभी ये ही फिकर,
कोई वली ना दूसरा, जिससे कहुँ अपना जिकर।

शक्ति से लक्ष्मण मर गया, तो प्रलय उन पर आयेगी,
यदि रहा जीता तो मेरी, पेश ना कुछ जायेगी।

हे—प्रभु अब किस तरह, सुतभ्रात का बन्धन छुटे,
पुत्र विरह में श्वास रुकता, आज मेरा दम घुटे।

दोहा (रावण मंदोरी)

रावण ऐसे कह रहा, बैठा आर्त ध्यान।
मन्दोदरी को यह खबर, लगी महल दरम्यान॥

सुत देवर हो गये कैद, यह खबर सुनी तब घबराई।
तब भूल गई रंग चाव सभी, और पास दशानन के आई॥
देख हाल दशकन्धर का, रानी का मस्तक ठिनका है।
और समझ गई मन ही मन में, बस पुण्यघटा अब इसका है॥

दोहा

कर साहस आगे बढ़ी, किन्तु भय दिल मांय।
हाथ जोड़ मन्दोदरी, बोली शीश नवाय॥

गाना (मन्दोदरी का)

मेरे प्रीतम मुझे भी, बतावो जरा।
स्वामी दिल काये, भ्रम मिटावो जरा॥

पंख बिन जैसे पखेरु, तड़फता गिल पर पड़ा।
आप के दुख का असर, मेरे सभी दिल पर पड़ा॥

मौन करके मुझे न सतावो जरा ॥१॥
दिवस का जैसा शशि, ऐसा है मस्तक आप का।
सहना सकती दुख स्वामी, आपके सन्ताप का ॥
मेरे दिल को तसल्ली बंधावो जरा ॥२॥
आंख मेरी फरकती है, दाहिनी अच्छी नहीं।
बात मेरी मानते तुम भी, कोई सच्ची नहीं ॥
मेरे सुत कहाँ मुझ को दिखाओ जरा ॥३॥
क्या शुक्ल आया उदय, मेरा ही खोटा कर्म है।
आपकी आंखों में कैसे, आ रहा कुछ वर्म है ॥
मेरे प्रीतम जवां तो हिलावो जरा ॥४॥

दोहा

अय रानी मैं क्या कहूँ, अपने दुख का हाल।
कैद अरि ने कर लिये, तेरे दोनों लाल ॥

छन्द

देवर तेरा भानु कर्ण भी, आज उनकी जेल है।
साथ में योद्धे कई, बिगड़ा सभी यह खेल है ॥
आज तक ऐसी कभी, बीती न मेरे साथ थी।
लाखों हजारों की अकेले, ने करी मैं घात थी ॥
अय प्रिया मुझको विभीषण, दुष्टने धोका दिया।
मुझ को लगा बातों में, शत्रु को उधर मौका दिया ॥
नाग फांसी में फंसा, धोके से उनको ले गये।
जब लगा हमको पता, तो हाथ मलते रह गये ॥
क्या खबर कैसी करे, सुत भ्रात के संग में अरि।
भाग्य खोटे थे मेरे, जो मध्य आ रजनी पड़ी ॥

दोहा (मन्दोदरी)

काल के मुख धरदिये, मेरे दोनों लाल।
अब के नम्बर आपका, आने वाला काल ॥

समझाये सब तरह किन्तु, तुमने ना एक विचार करी।
तो अब क्या यत्न बनाओगे, बतलाओ कुछ सरकार मेरी ॥
सांप पवनिये दिये छेड़, वह सूर्य वंशज नाहर हैं।
फिर वह लड़ते नीति अन्दर, तुम लड़ते नीति बाहर हैं ॥

दोहा

अन्याय महा तुमने किया, हरी पराई नार।
अपने हाथों आप ही, सिर में गेरी छार ॥

किन्तु अब यह ध्यान करो, यदि आगे रार बढ़ाओगे।
तो कुटुम्ब खतम करवा कर के, सब राज पाट से जाओगे ॥
पतिव्रता नारीकी हाय बुरी, यह सर्वस्व नाश कर डारेगी।
कोई रहे न यहां रोने वाला, परभव नरकों में डारेगी ॥

दोहा

महापुरुष को चाहिये, निज गौरव का ध्यान।
नीति कभी ना त्यागते, तज देवें चाहे प्राण ॥

हे नाथ अनीति करने से, जो पुण्य सभी कापूर बने।
फिर अतुल बली भी पुण्यवान, आगे अति कायर कूर बने ॥
तीन खंड में नाथ दूसरा, नहीं आपकी शानी का।
एक नार के लिये क्यों करते, नाश लंक राजधानी का ॥

(मन्दोदरी का गाना—समझाना)

कही मानों हमारी हजारी वलम ॥टेक॥

शेर

सिया हर के कहो तुमने, क्या फल पाया है।
हम तो साफ कहेंगे कि, इज्जत को गंवाया है॥
समर में मरवा के, कईयों को रंड वनाया है।
घर वेघर भी हुये, कईयों का नाश कराया है॥
होती पर नारी जहर कटारी वलम ॥१॥

शेर

कहाँ पै गई वह आपकी, शक्ति साहिव।
वैठ अवला की तरह क्यों, आंसू वहाये साहिव॥
सुत वन्धु ना किसी, शक्ति से छुटाये साहिव।
अव भी मानो मैं खड़ी, सिर का झुकाये साहिव॥
कर दो वापिस ये, जनक दुलारी वलम ॥२॥

दोहा (रावण)

तू है कायर की सुता, सो आदत कहाँ जाय।
कायर सुत पैदा किये, फंसे कैद में जाय॥

फंसे कैद में जाय वता, इसमें क्या दोष हमारा है।
शत्रु की जो करी प्रशंसा, ये दुर्वचन तुम्हारा है॥
कायर सुत पैदा करते ही, तभी नहीं क्यों मारा है।
सीता खटक रही तुमको, ये मैंने ठीक विचारा है॥

रावण का गाना

सारा भेद मुझे अव पाया है,
तेरे हृदय को जिसने जलाया ॥

तेरी आँखो में सीता रड़क रही,
जिस कारण सिर को है पटक रही ।१।
तेरी तबीयत विषयों में लटक रही,
तैंने सब ये पाखंड बनाया है ।
कभी राम को बलीया बताती है,
कभी सीता पै करुणा लाती है ।२।
और कायर हमें जितलाती है,
कैसा तिरिया चरित्र फैलाया है ।
तेरे जैसी कोई मक्कार नहीं,
सिया जैसी सरल कोई नार नहीं ।३।
तेरे फरेबों का कुछ शुमार नहीं,
और तैंने ही उसको बहकाया है ।४।
तेरी शौकन सिया को बनाऊंगा,
पटरानी का चीर उढ़ाऊंगा ।
तुझे सारी उमर तरसाऊँगा,
अब तो दिल में ये निश्चय बैठाया है ।५।
जैसा छलिया दुष्ट विभीषण है,
राणी तेरा भी वैसा ही लक्षण है ।
दुखदायी तुझे ये कुलक्षण है,
तुम्हारा देवों ने पार न पाया है ।६।

दोहा (मन्दोदरी)

जैसी गति वैसी मति, स्फुरना वही निडाल ।
राजन तेरे शीश पर, आ बैठा अब काल ॥
प्रति पालक तुम हो मेरे, परम प्राण प्रिय आप ।
देख न सकती आपका, अरधांगिनी संताप ॥

जो मर्जी सो कहें आप मैं, तो निज धम निभाऊँगी ।
प्रज्वलित प्रतापी महाराज, नित्य आपके शकुन मनाऊँगी ॥
धीर वीर गंभीर धुरन्धर, आप सा कोई और नहीं ।
पर यह भी मन में समझ लेवो, श्रीराम का पुण्य कमजोर नहीं ॥
फंस गये कैद में सब योद्धे, दिल मेरा बड़ा धड़कता है ।
रह गये अकेले आप मेरा, यह दाहिना अंग फड़कता है ॥
एक दूत राम का आकर के, यहाँ सब की शान बिगाड़ गया ।
और निर्भयता से देवरमण में, अक्षकुमार को मार गया ॥

दोहा (रावण)

प्राण प्रिया तू किस लिये, होती है दिलगीर ।
जब तक जीता जगत में, दशकंधर रणधीर ॥

एक रात का कष्ट मुझे कल, सभी ठीक हो जायेगा ।
लक्ष्मण के मरने बाद सभी, शत्रु दल पीठ दिखायेगा ॥
आमोघ विजय शस्त्र मैंने, लक्ष्मण के हृदय मार दिया ।
बस उसी समय रण भूमि में, लक्ष्मण ने पैर पसार दिया ॥
जब तक रजनी तब तक उसके, श्वासों की आस मनावेंगे ।
सूर्य की किरनें नजर पड़ी, परभव को शीघ्र सिधावेंगे ॥
प्रातः काल ही अय राणी, तेरे पुत्र छुड़वा दूंगा ।
भागेंगे प्राण बचा करके, तम्बू डेरे उठवा दूंगा ॥

रावण गाना (व० त०)

मेरे प्रणों की प्यारी, तजो सब फिकर,
यहाँ मुझको नहीं है, किसी का बतर ।
कल को दिखला दूं, करके ये बातें सभी,
आज की रात को, कर तसल्ली सबर ।१।

अपने भुजबल की, शक्ति पै लाया सिया,
मेरी शक्ति ना झेले, मनुष्य क्या अमर।
बदला सबका चखा करके, लाऊंगा कल,
लूंगा जाकर के अच्छी तरह से खबर।२।
मन्दोदरी—कुछ ना लोगे खबर, हे हजारी बलम,
पीठ दिखलाई तुमने, समर में पिया।
तोड़े संग्रामी रथ, आपके राम ने,
देखो आई हैं चोटें, कमर में पिया।३।
लाते शक्ति से सीता, को तो आते ही क्यों,
राम दलबल को, लेकर के रण में पिया।
वहाँ सीता हरी, यहाँ रण में भगे,
क्षत्रापन तो सभी उड़ गगन में गया।४।
रावण—बस बके मत तू अपनी जबां बन्द कर,
वरना कर दूंगा यहाँ मैं तेरा दम खतम।
करके तारीफ शत्रु की ऐ बेहया,
क्यों जलाया करे मेरा हर दम ये दम।५।
जो थी आदत विभीषण की वो ही तुझे,
पहले दर्जे की है तू बड़ी बेशर्म।
जब से जन्मा विभीषण तू ब्याही मुझे,
बस उसी दिन से फूटे हमारे करम।५।

मन्दोदरी का गाना

(तर्ज—रातभी)

तेरे कर्मों ने तुझे, खूब रुला के मारा,
भाव निंद्रा ने तुझे, खूब सुला के मारा।
आंखें हुई तो क्या, हृदय से तो अंधे हो,

तीस लक्षणों की ही, संख्या को बढ़ा के डारा ।१।
राग और शिक्षा का, वैर सदा से है,
आप तो चीज हैं क्या, असुरों को रुला के मारा ।२।
अन्त गति सो मति, ये भगवान ने भाषा,
पिया कुमति ने तुझे, आज भुला के मारा ।३।
एक देवर ही विभीषण, थे रत्न लंका में,
उस धर्मी का भी दिल, तूने सता के फारा ।४।
बन गया उसके बिना, सब बाग खिजा का,
रहा बाकी जो सभी, तूने कटाके डारा ।।५।।
अबके संख्या पे मुझे, विधवा बनाओगे,
कैसे दिल धीर धरूं, पुत्रों को फंसा के मारा ।६।
मेरी नैया ता शुक्ल, आन भंवर में अटकी,
डूबा मेरा ये कुटुम्ब, तुमने रुड़ा के मारा ।।७।।

दोहा (रावण)

बुद्धिहीन क्यों कर रही, अशकुन यहां अपार ।
यदि आगे कुछ भी कहा, लेऊं शीश उतार ।।

भाग्यहीन यह बता कौन मर गया, जिसे तू रोती है ।
रोवेंगे राम मर गया लखन, तू क्यों वृथा तन खोती है ।।
बत्तीस लक्षणी आप बने, और तीस में हमें बताती है ।
रत्न विभीषण को कह कर, क्यों छाती मेरी जलाती है ।।
बार बार कह दिया तेरे पुत्र, हम सभी छुड़ादेंगे ।
शत्रु का करके नाश सवेरे, झगड़ा सभी मिटा देंगे ।।
रत्न जिसे कहती पहले, उसको परभव पहुंचाऊंगा ।
क्योंकि उस पर हूँ जला हुआ, यह हृदय शान्त बनाऊंगा ।।

गाना (रावण)

विभीषण दुष्ट ने ही, भेद शत्रु को बताया है,
मेरे पुत्रों व भाई को, उसी ने तो फंसाया है ।१।
धूल वन वन की फिरते छानते, थे भील दोनों ही,
गुप्त सब भेद देकर के, उसी ने तो बुलाया है ।२।
फौज खुसरों की लेकर के, बहादुर बन गये ऐसे,
हंसरथ ही कमीनों में, मुझे भी जान पाया है ।३।
यदि भानु न छिपता आज, तो करता खतम सबको,
पुण्य उनके ने अय राणी, आज उनको बचाया है ।४।
स्वाद लङ्का पे चढ़ने का, सवेरे ही चखा दूंगा,
आज कर्मों की चालों ने, ही पुत्रों को फंसाया है ।५।
करूं पटनार सीता को मैं, पहले कर फना उनको,
'शुक्ल' तेरी तो शिक्षा ने मेरे दिल को सताया है ।६।

गाना (मन्दोदरी)

अय प्रीतम न ऐसा ख्याल करो, सती सीता तरफ न ध्यान करो,
यह दुखकारी परनारी है, दशकन्धर दिल में ज्ञान करो ।१।
मैं दासी अर्ज ये करती हूँ, लो स्वामी चरण में पड़ती हूँ,
चरण रजमस्तक पर धरती हूँ, हे नाथ न इतना मान करो ।२।
तेरे घर में हजारों हैं नारी, मुझसी कई आपके पटरानी,
सब हैं चातुर सुन्दर स्यानी, कर सबर जरा आराम करो ।३।
वह सीता है एक तेज छुरी, कुल नाश करेगी है वह बुरी,
मेरी सच मानो जो बात फुरी, इस तरफ न बिल्कुल ध्यान धरो४
मैंने परख लिया उसको जाकर, और हार गई मैं समझा कर,
तुम आवो उसे वहाँ पहुंचाकर, ना झगड़ा घर दरम्यान करो ।५।

वह स्वप्न में भी नहीं चाहती है, तेरी मूरत उसे न भाती है,
कभी नाम ना सुनना चाहती है, अब व्यादह ना हैरान करो ।६।
कल राम लङ्क धंस आवेंगे, और तुमसे जङ्ग मचायेंगे,
मुझको भी अनाथ बनायेंगे, लङ्का को ना विरान करो ।७।
मेरी अन्तिम विनती मान पिया, सब नाश करेगी जान सिया,
हठ ऐसा क्यों तुमने तान लिया, श्री राम की शक्ति प्रमाण करो ८
अब अशुभ ध्यान सब दूर हरो, और शुक्ल ध्यान भरपूर करो,
कुछ नेक नाम मशहूर करो, जिन शिक्षा अमृत पान करो ।६।

रावण—अयि मूढ़ नारी तू चल हठ परे,
तेरा उपदेश सुनना मैं चाहता नहीं ।
क्योंकि बातें ही तेरी हैं वृथा सभी,
कभी शत्रु से मैं घबराता नहीं ।१।
चाहे राणी हजारों हैं घर में मेरे,
सीता जैसी कोई एक राणी नहीं ।
रूप लावण्य में समता हो ना सके,
नक्श उसका मेरे दिल से जाता नहीं ।
कभी मानेगी सीता समझ आप ही,
अब तो जाने की यहाँ से ना वो भी रही ।
तैने बातें बनाकर यह सारी कही,
तेरे कहने पर विश्वास लाता नहीं ।३।
वो प्यारी सिया मेरे मन भा गई,
उदय पुण्य से मेरे हाथ आगई ।
चाहे नागिन छुरी वह कटारी सही,
उसको वापिस तो मैं भी पहुंचाता नहीं ।४।

मर गया होगा लक्ष्मण या मर जायेगा,

कूंच परभव को फिर राम कर जायेगा।

खेल शत्रु का सारा बिगड़ जायेगा,

बाकी राजों का खुर खोज पाना नहीं।५।

तीन खंडों में सारे अटल वाक्य हैं,

मेरे गौरव की सारे मची धाक है।

और चक्र सुदर्शन मेरे पास हैं,

खौप रावण किसी का भी खाता नहीं।६।

दोहा (मन्दोदरी)

समझ गई मैं सिर तेरे, रहा शनिश्चर छाय।
कर्मों के अनुसार ये, अक्ल विकल हो जाय॥

समझाये हर समय किन्तु, तुम जरा ख्याल नहीं लाते हो।
हम कहते हैं पूरब को तो, तुम पश्चिम को जाते हो॥
अब सीता को वापिस करके, श्री रामचन्द्र से प्रेम करो।
अब फेर दुबारा पर स्त्री का, प्राणनाथ तुम नियम करो॥

दोहा

आरी सी जिह्वा तेरी, रही कलेजा चीर।
मती हीन हटती नहीं, कस कस मारे तीर॥

अनुचित कहने का मैं तुझको, सारा स्वाद चखा देता।
क्या करूं जात है औरत की, नहीं धड़ से शीश उड़ा देता॥
पीठ दिखा यहाँ से जल्दी, क्यों तेरी होनी आई है।
निर्बुद्धि वाम बता तूने, कहां शर्म बेचकर खाई है॥

दोहा

शिक्षा ना मानी नार की, लङ्कपति ने एक।
कहो निकाचित कर्म की, टले किस तरह रेख॥

लाचार गई निज महलों में, पर दिल अन्दर से धड़क रहा।
रावण शय्या पर पड़ा हुआ, मानिन्द मीन के तड़फ रहा॥
उधर सयाने वैद्यों ने, अप-अपना जोर लगाया है।
पर वीर सुमित्रा नन्दन को, आराम नहीं कुछ आया है॥

औषधि

दोहा

विद्याधर प्रतिचन्द्र जी, आये दक्षिण द्वार।
भामंडल को प्रेम से, बोले गिरा उचार॥
यदि प्रेम है आपका, रामचन्द्र के साथ।
तो हमें वहाँ पहुँचाय दो, आज निमावें माथ॥
कौन आप हमको पता, देवें सभी बताय।
निश्चय करके हम तुम्हें, देंगे दर्श कराय॥
ठीक हमें तुम समझ लो, रामचन्द्र के दास।
बाकी फिर बतलायेंगे, रघुनन्दन के पास॥

शक्ति दूर हटाने की औषधि, बताने आया हूँ।
कृपया जल्दी बतला देवो, उनके दुख से घबराया हूँ॥
प्रात काल से पहले ही उनका, इलाज हो जावेगा।
यदि देर हुई ज्यादह मेरा, आना निश्फल कहलावेगा॥

दोहा

दिल में सोच विचार के, इन्तजाम के साथ।
पास गये श्री राम के, तुरन्त निवाया माथ॥
सूर्यवंशी कुल मणी मुकुट, हे स्वामी जगताज।
नम्रनिवेदन पर जरा, ध्यान धरे महाराज॥

सांगीत नगर का हूँ प्रभु, सुप्रभा अङ्ग जात।
प्रतिचन्द्र मम नाम है, शशि मंडल नृप तात॥
अचूक औषधि लक्ष्मण के लिये, आज बताने आया हूं।
सुनते ही शक्ति का प्रहार, हे नाथ बड़ा घबराया हूं॥
ध्यान लगा कर सुन लीजे, अपनी बीती बतलाता हूं।
फिर औषधि मिले जहाँ पर यह, सो भी स्वामी दरसाता हूं॥

छंद

राणी सहित मैं एक दिन, विमान में था जा रहा।
उस तरफ विद्याधर सहस्त्र, नामक था सम्मुख आ रहा॥
विषय सम्बन्धी वैर के, कारण हमारा जङ्ग हुआ।
इस तरफ मैं भी थक गया, उस तरफ वह भी तंग हुआ॥
प्रहार शक्ति चन्द्र वा का, अन्त में उसने किया।
मूर्छित हो मैं उद्यान में, गिर धरणी का शरणा लिया॥
आपके भाई भरत वहाँ आगये करुणा निधि।
लेकर के गंधाबू दिये, छींटे उन्होंने कर विधि॥
शक्ति उसी दम निकल भागी, बाण जैसे धनुष से।
या यों कहो जैसे भगा हो, चोर डर कर मनुष्य से॥
निश्चय समाधि हो गई, मुझको उसी जल से प्रभु।
भरत से पूछी मैं महिमा, जल की अब सुन लो विभु॥
बोले भरत गज पुर में, महिषों का व्यापारी आ गया।
विंध्य सार्थवा महीषा, रुग्ण वहाँ विसरा गया।

दोहा

सभी वार्ता भरत ने, दई मुझे बतलाय॥
सो भी मैं संक्षेप से देऊँ प्रभु सुनाय।

शक्तिहीन भैंसा वहाँ, पड़ा मार्ग में आन।
दुखिया उठ सकता नहीं, आगे सुनो बयान॥

अज्ञानी जन उस भैंसे के, ऊपर से आने जाने लगे।
कई दुष्ट और बालक जन भी, दुखिया को खूब सताने लगे।
अकाम निर्जरा होने से, वायु कुमार जा देव हुआ॥
फिर अवधि ज्ञान से देखा है, पर्याप्त जब स्वयमेव हुआ।

दोहा

निज मृत्यु का जब लखा, सुर ने सारा हाल।
सभी देश पर देव को, चढ़ा रोष विकराल॥

क्रोधातुर हो उसी समय, व्याधि सब जगह फैलाई है।
भयभीत हुए उस महा रोग से, जनता अति घबराई है॥
द्रोण मेग मामा कारण वश, इसी राज्य में रहता था।
उस जगह य. उसके आस-पास, यह रोग नही कुछ कहता था
मैंने फिर मातुल से पूछा, किस कारण यहां रोग नहीं।
और आपके आस-पास मेरी, जनता पर भी कुछ शोक नहीं॥
द्रोणमेग ने बतलाया, कि प्रियंगु जो ममराणी है।
यह रुग्ण जरा कुछ रहती थी, जो धर्मन चतुर सयानी है।

छन्द

गर्भ के प्रभाव से राणी का, दुःख सब हट गया।
जहां पांव राणी ने धरा, उसका भी संकट कट गया॥
कन्या हुई पैदा गर्भ का, काल जब पूरा हुआ।
या यों कहो पैदा सभी का, पुण्य अंकूरा हुआ॥

इस तरह ही देश मेरे में भी, भारा शोक था।
जिस-जिस जगह कन्या फिरी, वहां का मिटा सब रोग था॥

करवालिया छिड़काव फिर, लेकर के जल स्नान का।
रोग भागा दूर सारा, नारी व इन्सान का॥
नाम वैशल्या उसी दिन, से यह हमने धर दिया।
क्योंकि इसके पुण्य ने, दुःख दूर सब का कर दिया॥

दोहा

सत्य भूति मुनि एकदा, समवसरे तहाँ आय।
कारण यह मुनिराज से, पूछा हमने जाय॥
सुनकर मेरे वचन को, ज्ञान कारण मुनिराय।
मन्द-मन्द मुस्कावते, ऐसे वचन सुनाय॥
आत्म उन्नति के लिए योग स्थिर शुभ ध्यान।
दान शील तप ज्ञान से, शक्ति बढ़े महान्॥

घोर तपस्या करी जन्म पूर्व में, थी इस कन्या ने।
इस कारण कर दिया दूर, यह रोग सभी वैशल्या ने॥
दशरथनन्दन लक्ष्मण जी, इस कन्या के वर होवेंगे।
और देख-देख जिसकी शक्ति को, शत्रु मन में रोवेंगे॥

दोहा (म०)

मेरी भी विनती करी, मामा ने स्वीकार।
स्नान करा वह औषधि, दई मुझे सुखकार॥

स्नान का जल मैंने लाकर, जनता का रोग मिटाया था।
अब तुम पर भी लेकर मैंने, वो ही पानी छिड़काया था॥
घाव चोट और शक्ति क्या, कैसा ही रोग होवे तन में।
यह पानी जरा लगाने से, मिट जाता है सब पल क्षण में॥

प्रतिचन्द का गाना

ये कथन मेरा प्रमाण करो, अब लक्ष्मण को आराम करो ।।टेक।।
कोई वीर चतुर अब भिजवाओ, स्नान का पानी मंगवाओ ।
लक्ष्मण पर स्वामी छिड़काओ, अब देरी का न काम करो ।।१।।
देवी शक्ति नुकसान करे, कोई औषधि ना वहां काम करे ।
अक्सीर वो इसका मान हरे,
अब मन में ना आर्त ध्यान धरो ।।२।।

दोहा

प्रतिचन्द के वचन सुन, हर्षे अति रघुराय ।
हनुमान अंगद सुभट, शीघ्र लिये बुलवाय ।।

भामंडल थे विराजमान, योद्धा सलील बुलवाये हैं ।
श्रीराम ने जल की महिमा के, सब भेद खोल दर्शाये हैं ।।
कर जोड़ सामने खड़े वीर, तन-मन से शीश झुका करके ।
श्री रामचन्द्र तब लगे कहन, सब को ऐसे समझा करके ।।

दोहा (श्रीराम)

भामंडल हनुमान जी, अंगद सुभट सलील ।
बैठो अभी विमान में, जरा न लाओ ढील ।।

अर्ध रात्रि से ग्यारह रजनी का हिस्सा बीत गया ।
इस लिये सभी योद्धाओं का, और मेरा मन भयभीत हुआ ।।
आज तलक तुम सेवक थे, अब सभी धर्म के भाई हो ।
अपने मुख से क्या कथन करूं, बस तुम ही मेरे सहाई हो ।।
जो-जो तुमने उपकार किये, मुझ पर सो नहीं दे सकता हूं ।
अय हनुमान अंजनी लाल, तेरे गुण नहीं कह सकता हूं ।।
गम्भीर भंवर में नाव पड़ी, तुमने ही पार लगाना है ।
यह घाव किया दशकन्धर ने, सो आपने आज मिटाना है ।।

दोहा

अर्पण सब कुछ कर दिया, तन मन धन अवधेश ।
सेवक हाजिर चरण में, करो इसे आदेश ॥

बतलाइये आदेश आपका, हुक्म बजा लावें हम ।
तीन लोक से जहाँ मिले, वहाँ से औषधि लावें हम ॥
देरी का नहीं काम बैठ, विमान अभी जावें हम ।
यदि आज्ञा हो खास वैशल्या, को लेकर आवें हम ॥

दौड़

कृपया कर हुक्म चढ़ावें, काम जल्दी कर लावें,
ध्यान जिनवर का लावो, समझो अब आराम हुआ,
लक्ष्मण को मत घबराओ ।

श्रीराम का आदेश

जावो जावो जी हनुमत जावो, जल्दी गन्धोदक अब लाओ ।
पहले भरत भाई पर जाना, शक्ति का सब भेद सुनाना ॥
द्रोण मेग को फिर समझाना, देरी मत अब लावो ॥१॥
सावधान हो कर के जाना, शत्रु का विश्वास न खाना ।
संग बली योद्धे ले जाना, जल्दी विमान सजाओ ॥२॥
जनक सुता की सुध तू लाया, दशकन्धर का ताज गिराया ।
सब दल का स्थम्भ कहाया, यह भी अब काम बनाओ ॥३॥
भाई भरत को संग नहीं लाना, लक्ष्मण के बस प्राण बचाना ।
शुक्ल असह्य दुःख मिटाना, हृदय की तप्त बुझाओ ॥४॥

दोहा

शीश निवां झट चल दिये, योद्धे बैठ विमान ।
अवध पहुंच अवधेश को, लगे हाल समझान ॥

दोहा (हनुमान)

दशकन्धर ने अनुज के, मारी शक्ति तान ।
मुर्छित हो धरणी गिरा, सब दल है हैरान ॥

छंद

इस समय वैशल्या के, स्नान का जल चाहिये ।
साथ चल करके प्रथम, वह जल हमें दिलवाईये ॥
जिन्दगानी लखन की, उस जल बिना स्वामी नहीं ।
पैदा करे यह औषधि, उस सम कोई दानी नहीं ॥
प्रभात से पहले ही पहले, काम करना है सभी ।
रह जायेंगे कर मलते यदि, भानु निकल आया कभी ॥

दोहा

राम लखन का कष्ट सुन, भर लाये जल नैन ।
समय सोच कर भरत जी, लगे इस तरह कहन ॥
चलो अभी क्या देर है, द्रोण मेघ के पास ।
जल तो क्या भेजूं अभी. वैशल्या ही खास ॥
भरत शीघ्र ही चलदिये, लेकर सब को साथ ।
द्रोण मेघ सोया महल, ऊपर पिछली रात ॥

प्रथम जगाया द्रोण मेघ. फिर सारी बात सुनाई है ।
द्रोणमेघ ने उसी समय, वैशल्या तुरत जगाई है ॥
आदि अन्त पर्यंत सभी, लक्ष्मण का भेद बताया है ।
इस बात ने वैशल्या के भी, हृदय को खूब सताया है ॥
वैशल्या के संग चलने को, सभी सखी तैयार हुई ।
और मात पिता की आज्ञा से, विमान में तुरत सवार हुई ॥

(दोहा)

उसी समय झट चल दिये, पवन पुत्र बलधार।
अवध-पुरी में भरत, को लाकर दिया उतार ॥

इस अन्तर में श्रीरामचन्द्र, मन में धीरज नहीं धरते हैं।
जल बिना मीन यों तड़फ रहे, विमान प्रतीक्षा करते हैं ॥
दुःख सागर में लीन और, आँखों से आँसू गिरते हैं।
मोह के वश श्रीरामचन्द्र, फिर ऐसे गिरा उचरते हैं ॥

श्रीराम का विलाप

रात भी आज तो, विमान बनी जाती है।
भाई लक्ष्मण की नब्ज, हाथ नहीं आति है।
हाय कर्मों ने मुझे, कैसे रुला के मारा।
आज अपनी ना व्यथा, मुझसे कही जाती है ॥१॥
उपकार तेरा, मैं ना कभी भूलूंगा।
आज मुझ पर तू दया, क्यों न जरा लाती है ॥२॥
दुखिया की मदद कर, नेक सहायक बन जा।
किस लिये आज तू, तूफान बनी जाती है ॥३॥
आज तक रैन मेरे, अनकूल रहा करती थी।
आज तू मुझ से क्यों, विपरीत बनी जाती है ॥४॥
तू ही दया करके फलक, सूर्य को छिपा लेना।
क्योंकि अब रात तो, प्रभात बनी जाती है ॥५॥
अब तलक आये नहीं, हनुमान भी औषधि लेकर।
क्या करे कोई मेरी, किस्मत ही फिरी जाती है ॥६॥
कहाँ आकर के दगा, तूने दिया अय भाई मुझ को।
कोर माता के हृदय की ये चली जानी है ॥७॥

तीन से दो हम बनें, अब तो अकेला ही रहा।
कल को मैं भी ना रहूँ, साफ नजर आती है ॥८॥
माता और भ्राता खबर, सुनते ही प्राण तजेंगे।
शुक्ल कर्मों से मेरी, पेश नहीं जाती है ॥९॥

दोहा

राम इस तरह हो रहे, ऐसे आर्त वंत।
आ पहुंचे उस तरफ से, उदधि पर हनुमन्त ॥

छंद

उदधि पे आ विमान की, सहसा चमक जिस दम पडी।
राम क्या सब राम सेना, सोच सागर में पड़ी ॥
अति तेज उस विमान का, प्रतिबिम्ब कुछ जल में पड़ा
कुछ दुखी को धैर्य कहां, महाशोक सब दल में बढ़ा ॥
तेज कर विमान को, उस तरफ हनुमन्त ने कहा।
और आँसुओं का जल यहाँ, इस कष्ट में सब के बहा ॥
राम के दुःख की कोई, सीमा कही जाती नहीं।
क्षण भर की वो विपदा यहाँ, वर्णन में आ सकती नहीं ॥

दोहा

सन सन करता आगया, क्षण भर में विमान।
वानर सेना को हुई, दिल में खुशी महान् ॥

सूर्य प्रकाशी कमल जिस तरह, देख रवि को खिलते हैं।
या भानु को लख दम्पति, चकवा चकवी प्रेम से मिलते है।
या यों कहिये कि मीन तड़फती, को थल पर आ नीर मिला।
या क्षुधातुर बच्चे को जैसे, माता ने दिया क्षीर पिला ॥
दाह रोगी को जैसे शीतल, वामना कोपी होता है।
या तृषातुर खेती की जैसे, बादल खुश्की खोता है ॥

देख सरोवर ठंडे को, तृषातुर आनन्द पाता है।
श्रीरामचन्द्र भी देख यान को, मन में खुशी मनाता है॥

मूर्छा निवारण

दोहा

जय जय योद्धों ने किया, हनुमान निवाया माथ।
उतरी वैशल्या सती, निज सखियों के साथ॥
प्रणाम किया वैशाल्या ने, श्रीराम को आय।
देर न अब पुत्री करो, कहा राम समझाय॥
फेरा जिस दम सती ने, हृदय पर निज हाथ।
शक्ति भागी निकल जिम, रवि सामने रात॥

बल धारी के तीर से जिम, धरणी से नीर निकता है।
या जरा लाडली रखने से, जैसे घण लाल उगलता है॥
महा प्रबल सिंहनी के आगे, हथिनी कैसे अड़ सकती है।
बस इसी तरह वैशल्या आगे, शक्ति कब डट सकती है॥
मानिन्द चोर के भगी उसी दम, पवन पुत्र ने पकड़ लई।
या बाज ने जैसे चिड़िया को, ऐसे निज कर में जकड़ लई॥
दुःख जो था वो निकल गया, फिर चेत अनुज को आया है।
अति नम्रता से शक्ति ने, हनुमान को वचन सुनाया है॥

दोहा (शक्ति)

प्रज्ञप्ति की बहिन हूं, महा शक्ति मम नाम।
दोष नहीं मेरा कोई, करूं बताया काम॥

रावण के आधीन करी, धरणेन्द्र ने समझा करके।
दशकंधर ने लक्ष्मण ऊपर, मुझको छोड़ा झुंझला करके॥

यदि भानु चढ़ने से पहले, वैशल्या यहाँ नहीं आती ।
तो काम सिद्ध था रावण का, लक्ष्मण की जान निकल जाती ॥
पुण्य प्रबल है रामचन्द्र का, लक्ष्मण की है उमर बड़ी ।
जो प्रातःकाल से पहले ही, वैशल्या यहां पर नजर पड़ी ॥
इसका तेज प्रताप इस समय, मुझसे सहा नहीं जाता है ।
कृपा कर छोड़ देवो मुझको, क्योंकि हृदय घबराता है ॥

दोहा

फेर नहीं इन पर कभी, करने की मैं वार ।
नमस्कार तुम चरणों में, करती वारँवार ॥

तेज प्रबल वैशल्या का, यह मुझसे सहा न जाता है ।
थर थर कांपे गात मेरा, कर्त्तव्य ही मुझे लजाता है ॥
मेरा इसमें कुछ दोष नहीं, क्योंकि सेवक की भांति हूं ।
यह नम्र निवेदन है मेरा, स्वतन्त्र करो मैं जाती हूं ॥

दोहा

दीन वचन सुन वीर ने, दई उसी दम छोड़ ।
दृष्टि से गायब हुई, दौड़ गई मुख मोड़ ॥

बावना कोशा चन्दन का, लक्ष्मण के तन पर लेप किया ।
कुछ वैशल्या ने फेर फेर कर, घाव हृदय का मेल दिया ॥
प्रेम भाव से वैशल्या लक्ष्मण के, दुख को खोने लगी ।
वानर दल में उत्साह सहित, जयकार ध्वनी अब होने लगी ॥
कोई उछल उछल कर कूद रहा, फूला न अंग समाता है ।
कोई दांत पीस रहा रावण पर, कोई क्रोध से धरा कंपाता है ॥
कई रामचन्द्र के पास पहुँच, चरणों में शीश नवाते हैं ।
और मिल जल खुश हो नर नारी, अति प्रेम से गान सुनाते हैं ॥

गाना (आनन्द मनाना)

आनन्द मंगला चार, गावो गावो।
श्रीजन पै बलिहार, जावो जावो ॥टेर॥

लक्ष्मण वीर की खुशियाँ मनाओ,
आज विजय का नाद बजावो, बांटो लाखों हजार ॥१॥
भगवन् की कृपा हुई भारी,
आई यहाँ पर राजकुमारी, निकला शक्ति प्रहार ॥२॥
सती धर्म दिखलाया आकर,
वैशल्या ने शक्ति हटाकर, सती पै जावो बलिहार ॥३॥
योग्य भावना निर्मल भावो,
न्याय पाल अन्याय मिटावो, हो लक्ष्मण तैयार ॥४॥
रामचन्द्र की विजय है भारी,
रावण ने कुमति मन धारी, अब लेवें लंक दरबार ॥५॥
योद्धे कैद किये रावण के,
अब नहीं आजादी पावन के, हम दिल खुशी अपार ॥६॥
सीता सती का कष्ट मिटावो,
लंका की अब धूल उड़ावो, शत्रु का शीश उतार ॥७॥
औदार चित्त फिर राम लखन हैं,
पूर्ण किये जो कहे वचन हैं, दुखी जन के आधार ॥८॥
तन मन धन से सेवा करलो,
यहाँ यश परभव में सुर पद लो, शुक्ल ध्यान शुभ धार ॥ ६ ॥

दोहा

आनन्द दिल में छा रहा, मिट गया सकल क्लेश।
वानर दल के शूरमा, उत्साह भरे विशेष ॥

सब क्लेश भगा वानर दल से, ज्यों भान्वोदय से तिमर भगे।
गद् २ कंठ हो रहे राम थे, भ्रात के प्रेम से अति पगे॥
बाजे खुशी के खूब बजाओ, हनुमत ने आदेश दिया।
क्षण भर में राम के अंक में, लक्ष्मण ने नेत्रों को खोल लिया॥

दोहा

हर्षोदधि झट उमड़ पड़ा, दल में चारों ओर।
अनुज वीर कहने लगा, उसी समय कर जोड़॥
रंग ढंग सब खुशी का, आता नजर अपार।
नेत्रों से फिर किस लिये, आप नीर रहे डार॥

नेत्रों में पानी भरा हुआ, भाई क्या कारण है इसका।
और सभी क्रान्ति हुई क्षीण, है कहो आपको भय किसका॥
पहरा नंगी तलवारों का, किस कारण कोट लगाया है।
अनुमान नजर आता सबने, आंखों से नीर बहाया है॥
यह राज कुमारी कौन कहाँ की, कैसे यहां पर आई है।
जयकार शब्द के सहित खुशी, सबके चेहरे पर छाई है॥
यह स्वप्न मुझे कोई आता है, या साक्षात् ही देख रहा।
और किस कारण हे भ्रात, आपकी गोदी में हूँ लेट रहा॥

दोहा

सुने वचन जब भ्रात के, हर्षित राम अपार।
कण्ठ भ्रात को लाय यूं, बोले कौशल्या कुमार॥
शक्ति तुमको थी लगी, कल अय लक्ष्मण वीर।
उसी समय धरणी गिरे, मूर्छित हो रणधीर॥

हम आस तुम्हारे जीने को तजकर, मनमेघ बरसाते थे।
बस कारण यही उदासी का, जन तानों से भय खाते थे॥

श्री द्रोण मेघ की सुता सती ने, शक्ति आन हटाई है।
हनुमत आदि लाये जाकर, इस कारण यहां पर आई है॥

दोहा

है प्रत्यक्ष यह बात सब, स्वप्न नहीं यह भ्रात।
गोद हमारी में रहा, वीर आज की रात॥

आराम हुआ तुमको भाई, इस कारण खुशी मनाते हैं।
जयकार शब्द की ध्वनि सहित, सब जिनवर के गुन गाते हैं।
यह इसीलिये सब कोट बनें, पहरा नंगी तलवारों का।
और नजर तुम्हें आया सब कुछ, यह हाल सिपहसालारों का॥
अय भाई दशकंधर ने तो, यहां महा विघ्न कर डारा था।
यह जन्म दूसरा हुआ तेरा, कुछ बाकी पुण्य हमारा था॥
प्रत्युपकार नहीं दे सकता, हनुमंत आदि सब योद्धों का।
शक्ति नहीं मेरी जिह्वा में, कौशल्या को अनमोदूं क्या॥

दोहा

झुंझलाकर फौरन उठे, वीर सुमित्रालाल।
तान सरासन हाथ में, यों बोले तत्काल॥

लक्ष्मण जी का गाना

अब तो रावण का शीश, उड़ायेंगे हम।
कल की शक्ति का बदला चुकायेंगे हम॥
अब के रावण समर में, जीता कभी ना जायेगा।
यदि गया तो अनुज, दशरथ का नन्द कहायेगा॥
उसके सारे ही दाव भुलावेंगे हम॥१॥
भाई का भाई वचन, पूर्ण ही कर दिखलायेगा।
ताज रावण का विभीषण के ही, शीश टिकायेगा॥
सीता माता को शीश झुकायेंगे हम।२।

लाला मैं माता सुमित्रा का तभी कहलाऊँगा।
सीता सहित श्रीराम को जब, अवध में पहुंचाऊँगा ॥
नहीं तो जीते अवध को न जायेंगे हम ॥२

दोहा (राम)

भाई पहले कीजिये, करने वाला काम।
फिर निश्चय तुम शत्रु को, पहुंचाओ परधाम ॥

वैशल्या से हे भ्राता तुम, पहले पाणी ग्रहण करो।
उपकार किया जिसने ऐसा, उसका भी तो कुछ कहन करो ॥
यह पति तुम्हें है मान चुकी, इस भव का राजदुलारी है।
गम्भीर सती यह माता सती, जिन व्याधी सभी निवारी है ॥

दोहा

मौन राम के वचन सुन, हुए सुमित्रा लाल।
वैशल्या ने लखन को, पहनाई-वरमाल ॥

सभी सहेलियों सहित वहां पर, वैशल्या का विवाह हुआ।
था पुण्य बड़ा श्रीराम लखन का, दुख जिन्हों का जुदा हुआ ॥
अति खुशी सहित उत्सव यहां पर, श्रीराम के दल में होने लगा।
यह खबर लगी जब रावण को, तो सिर धुन २ के रोने लगा ॥

रावण विचार

दोहा

उसी समय लंकेश ने, मंत्री लिये बुलाय।
ठंडा लेकर श्वास फिर, यों बोला अकुलाय ॥
बतलावो सब को सोचकर, अब क्या करें उपाय।
रामचन्द्र से जीत हो, सुत बान्धव छुट जाय ॥

मन में बड़ी उमंग थी, मर गया लक्ष्मण वीर।
किन्तु आज आनन्द में, है शत्रु रणधीर ॥

बाजे खुशी के बजते हैं, और उत्सव का कुछ पार नहीं।
उड़ गये अक्ल के तोते सुनकर, दिल को सबर करार नहीं ॥
अब लेने के पड़ गये देने, मैं सभी चौकड़ी भूल गया।
और ब्याज की आशा आशा में, निज गाँठ का सारा मूल गया ॥
बतलाओ तजवीज कोई, जिस तरह शूरमा छुट जावें।
और रामचन्द्र के भी तम्बू डेरे, यहाँ से सब उठ जावें ॥
बुद्धि अपनी का परिचय, इस कड़े समय में दिखलाओ।
सब सोच विचार करो मिलकर, मेरे मस्तक में बिठलाओ ॥

दोहा (दरबारी)

महाराज आपको प्रथम ही, समझाया हर बार।
किन्तु निवेदन आपने, किया नहीं स्वीकार ॥

जो बीत गई सो जाने दो, अब भी कुछ सोच विचार करो।
सीता को वापिस भिजवा कर, श्री रामचन्द्र से प्यार करो ॥
नार पैर की जूती है, यदि एक नहीं तो और मिलें।
पुत्र हैं कोर कलेजे की, आसान कहो किस तौर मिलें ॥
राजपाट और ऋद्धि क्या, इस प्राणी को हर बार मिले।
जो खुसे बड़ों से लिये आपने, फिर से वापिस राज किले ॥
सीता जैसी राजकुमारी, और कई ला सकते हो।
पर जन्म जन्म में कुम्भकर्ण सा, वीर नहीं पा सकते हो ॥
बड़े-बड़े योद्धा उनकी सब, आज कैद में सड़ते हैं।
फिर किस शक्ति पर आप जरा, बतलाइये यहां अकड़ते हैं ॥
अबके रण में क्या खबर आप, किस हालत में जा पहुंचोगे।
फिर शत्रु लंका लूटेंगे, यदि अब भी आप ना सोचोगे ॥

सीता को वापिस करने में, सुत भ्रात सभी छुट जावेंगे।
श्रीराम सिया को लेकर के, बस उसी समय मुड़ जावेंगे॥
है तेज प्रताप प्रचण्ड राम का, विजय नहीं पा सकते हो।
यदि अब के रण की ठानोगे, तो वापिस नहीं आ सकते हो॥

दोहा (रावण)

शत्रु से कर विनती, मिलते कायर क्रूर।
मिलते हैं तलवार से, मर्द दिलावर सूर॥

यह वही भुजा है सुर सुन्दर, जैसों का मान घटाया था।
सहस्रांसु नृप भी हार गया, सतबाहु ने छुड़वाया था॥
दुर्लंघ्यपुर पति नल कुबेर, था कोट वहां आसाली का।
क्या हाल किया था डार कैद में, मैंने इन्द्रमाली का॥
पुत्र रत्नश्रवा का रत्न हूँ, जाय भयंकर युद्ध मचाऊं।
दंड घमंड का देऊं खलों को, तेग प्रचंड से शीश उड़ाऊं॥
वानर दल का चूर जरूर जरूर में, धूल में धूल मिलाऊं।
सुत भ्रात छुड़ाय के लाऊं तभी, कैकसी क्षत्राणी का पुत्र कहाऊं॥

रावण का गाना

मेरी शक्ति का अब तक भी, न तुमने भेद पाया है।
मिलूं शत्रु से जाकर के, वाक्य किसने सिखाया है॥ १॥
मिला करती है भाई से, बहिन या पुत्र माई से।
किन्तु क्षत्रिय का मिलना, तेग की धारा से आया है॥ २॥
मात सुत भ्रात और बान्धव, मिले यदि न मिले तो क्या।
कठिन सीता का मिलना है, समझ मेरी में आया है॥ ३॥
देखकर रूप सीता का, शर्म खाती है इन्द्राणी।
इसे वापिस करो कहते, तुम्हें किसने बहकाया है॥ ४॥

प्यारी जानकी बस जान के ही, साथ जावेगी।
मेरे जख्मी जिगर पर नमक, क्यों तुमने लगाया है ॥ ५ ॥
यदि अपना भला चाहो शुक्र, यह वचन ना कहना।
तुम्हारा दुष्ट मन्त्र यह नहीं, मुझको सुहाया है ॥ ६ ॥

दोहा

रोग असाध्य अब बन चुका, समझ गये मन्त्रीश।
काल शीश पर छागया, इसके विश्वावीस ॥

दोहा (मन्त्री)

जो मर्जी सो कीजिए, महाराज रणधीर।
सुत बान्धव जैसे घुटें, करो वही बलवीर ॥

रावण दूत

रावण ने श्री राम पै, दीना दूत पठाय।
पहुँच दूत श्रीराम से, बोला शीश झुकाय ॥

दोहा (दूत)

सूर्यवंशी कुलमणी मुकुट, बर बुद्धि बलवीर।
नमस्कार मम लीजिए, हे स्वामी रणधीर ॥

दशकन्धर ने फरमाया है, किस कारण रार बढ़ाते हो।
तुम एक नार के पीछे क्यों, वृथा बल वीर कटाते हो ॥
आमोध विजय से बचा अनुज, भाई यह ख्याल तुम्हारा है।
पर अभो सुदर्शन चक्र का तो, बाकी वार हमारा है ॥

दोहा

शम्बूक को तुमने हना, हम हर लाये नार।
यहाँ तक तो हम तुम रहे, सब दोनों एकसार ॥

किन्तु शम्बूक का घाव, सिया हरने से नहीं भर सकता है।
शम्बूक वापिस करने से ही, सीता प्राप्त कर सकता है॥
ताज सुन्द का छीन लिया, यह भी अपराध आपका है।
अन्याय पे तुमहो तुले हुवे, न ध्यान किसी के सन्ताप का है॥
हम जितने होते नरम नरम, उतने तुम सिरपर चढ़ते हो।
कर लिये कैद छल से योद्धे, क्या इस पर आप अकड़ते हो॥
पर याद रहे मैं इन बातों से, कभी नहीं घबराता हूँ।
क्या मारूं मैं तुम मुर्दों को, यह फिर भी करुणा लाता हूँ॥
यदि तुम्हें राज्य की इच्छा है, सो भी में पूरी कर दूंगा।
शरणा गतमेरे आजाओ, जितना दुख सारा हर लूंगा॥
अर्ध राज्य सब लंका का, दो भाग आज से करवा लो।
क्यों फिरते वन की धूल छानते, ताज शीश पर चढ़वा लो॥
और एक सिया के बदले में, निज पुत्री सभी विवाहता हूं।
जितने तुमने अपराध किये, सब क्षमा मैं करना चाहता हूँ॥
यह बात नहीं स्वीकार सभी, तो तुम सा कोई निर्भाग्य नहीं।
अनमोल समय यह बार बार, फिर आपको आना हाथ नहीं॥

दोहा

सुत बान्धव सब छोड़ कर, करो बात प्रमाण।
जीत आपकी सब तरह, करो हृदय मैं ज्ञान॥

दोहा (राम)

दिव्य दृष्टि से भूप ने, खूब विचारी आज।
किन्तु यहाँ आये नहीं, लेने को हम राज॥

लंका तो क्या सब दुनियां के, राज की कोई अभिलाषा नहीं।
है स्वल्प दिनों का जीना पर, कल के भी श्वास की आस नहीं॥

और सभी सुनायें लंकपति की भी, हम को स्वीकार नहीं।
हम कैसे उन्नत वंशज हैं, रावण ने किया विचार नहीं॥
यह कहना है सब ठीक उन्हों का, शम्बुक हमने मारा है।
और ताज सुन्द का वीरविराध के, मस्तक ऊपर धारा है॥
इसको तो तुमने देख लिया, पर कैसे उसे निहारोगे।
जब लंक विभीषण को देंगे, पर भव में आप सिधारोगे॥
मरने के पहले सुत बान्धव को, यदि छुड़ाना चाहते हो।
तो अर्चपूज सीता वापिस कर दो, क्यों देर लगाते हो॥
यहां सूर्यवंशी सिंह शृगाल की, धमकी से कब डरते हैं।
यदि शक्ति है तो दिखलावें, किस लिये निमन्त्रण करते हैं॥
अन्याय पै तुले बताते हो, कहते भी शर्म न आई है।
ले भागे चोरी से परनारी, यहाँ शेखी अब बतलाई है॥
हम राज और पुत्री लेंगे तो लेंगे अपनी शक्ति से।
अब भी हम तुमको कहते हैं, आ मिलो प्रेम और भक्ति से॥

दोहा (दूत)

रिश्तेदारी मित्रता, कुश्ती और तकरार।
बराबरी में ही निभे, ये चारों सरकार॥

यह चारों सरकार आप कुछ, सोच समझकर बोलें।
अपनी और दशकंधर की, शक्ति को मन में तोलें॥
योद्धों को कर कैद और, दो चार दिवस खुश होलें।
और अन्तिम का यह जंग, आप सब हाथ जाने से धोलें॥

दौड़

विश्व को जीतनहारा, लंकपति योद्धा भारा, सोच कुछ नहीं करते हो। एक नार के पीछे क्यों तुम सब के सब मरते हो।

दोहा

सुनकरके व्याख्यान ये, उठे सुमित्रा लाल।
अरुण वर्ण कर नैन दो, बोला जैसे काल ॥

दोहा (लक्ष्मण)

घर में बैठा श्वान की, तरह रहा घुराय।
कल क्यों भागा था, राम के आगे पूंछ दबाय ॥

भानु जितना चढ़ता, उल्लू अन्धा होता जाता है।
बस यही हाल है रावण का, निज गौरव खोना चाहता है ॥
सुत भ्रात कैद में पड़े सभी, बेशर्म शर्म नहीं लाता है।
ठीक बात रस्सी का जलने, पर भी बल नहीं जाता है ॥
कब तक वहां छिप कर बैठोगे, यह कह देना दशकन्धर को।
अब रण में आकर अजमाइये, श्रीराम के पुण्य सिकन्दर को ॥
कायर क्रूर अधर्मी अपना, कब तक भला मनायेगा।
अब तो परभव में निश्चय ही, बस लक्ष्मण तुम्हें पठायेगा।

दोहा

उत्तर देने को हुआ, दूत फेर तैयार।
धक्का दे हनुमान ने, किया कैम्प से बाहर ॥

आदि अंत परिपंत बात, जाकर रावण को बतलाई।
सुन तड़क फड़क के वचन, दशानन की आत्मा कुछ घबराई ॥
उसी समय सामन्त मन्त्रियों से, सम्मति मिलाई है।
जनक सुता वापिस करने में, सबने कही भलाई है ॥
सिया विरह की बातों ने, दशकंधर पर आघात किया।
कुछ लक्ष्मण जी के तानों ने, हृदय पर वज्रपात किया ॥
हो गये सोच में मग्न कोई, तरकीब नजर नहीं आई है।
कुछ देर बाद बहुरूपिणी, विद्या पर निज दृष्टि जमाई है ॥

विद्या साधन

दोहा

साधूं अब बहुरूपिणी, विद्या पूरे आस।
दशकन्धर ने कर लिया, अपने दिल में साहस॥

उसी समय कर लिया ध्यान, जा बैठे औषधशाला में।
पढ़-पढ़ कर मन्त्र लगे छोड़ने, मण के सुरति माला में॥
मंदोदरी ने द्वारपाल यमदंड को, पास बुला करके।
उपधान तपस्या करवावो, यह कहा खूब समझा करके॥

दोहा

उसी समय यमदंड ने, दई डौंडी पिटवाय।
आठ दिवस तक का हुक्म, दिया प्रसिद्ध कराय॥

गुप्तचरों ने पास विभीषण के, यह बात पहुंचाई है।
सुन वानर दल में उसी समय, सब जगह सनसनी छाई है॥
एक सिंह ही काबू नहीं, फिर कैसे पार बसायेगी।
यदि सिद्ध हो गई विद्या तो, फिर मौत सभी की आयेगी॥

दोहा

वानर दल के भाव थे, करें भंग सब ध्यान।
रामचन्द्र को आन फिर, लगा मित्र समझान॥

परम प्रतापी सत्पुरुष, प्रियवादी सुखदान।
प्रतिपालक दुखी जनन के, सुनो लगाकर कान॥
सुनो लगाकर कान गुप्तचर, पता लंक से लाया है।
रावण ने बहुरूपिणी, साधन का प्रारम्भ लगाया है॥
आठ दिवस तक करो तपस्या, सब पर हुक्म चढ़ाया है।
कीजे शीघ्र उपाय कोई, नहीं काल सभी सिर छाया है॥

दौड़

कोई रणधीर पठाकर, ध्यान से देखो चलाकर, विघ्न ऐसा पड़ने से, विद्या सिद्ध न होवे कभी, उसके उपाय करने से।

दोहा (राम)

सखा धीर मन में धरो, क्यों घबराये आप।
पापी के मारन के लिये, प्रबल उसी के पाप॥
कर्तव्य जिनका ठीक है, सिद्धि उसके होय।
किन्तु सिक्का अपथ्य ही, सदा हेम को जोय॥

प्रथम तो फल कहाँ बांसों के, यदि लगें तो उनकी शामत है।
और सन्निपातवत् रावण को, विद्या मिश्री के मानिन्द है॥
विष मिश्रीत पात्र में, शुद्ध अमृत भी विष हो जाता है।
एक पुण्य मित्रबिन सब मंत्र, यंत्र निष्फल कहलाता है॥
यदि मंत्र है तो दुनिया में, मंत्र एक पुण्य सिकन्दर है।
सो विधि सहित सर्वज्ञ कथित, शास्त्रों के देखो अन्दर है॥
प्रथम तो क्षुधातुर दुःखिया, धर्मी को भोजन देने से।
द्वितीय तृषातुर को जल, दे करके दुःख हर लेने से॥
पुण्य तीसरा पंथालय, विश्राम स्थान भी कहते हैं।
चौथे पट्टे चौकी आदि, जिनपे धर्मी सो रहते हैं॥
पंचम वस्त्र दान क्योंकि, यह तन की रक्षा करता है।
जो ये पाँचों शुभ दान करें, सो पुण्य खजाना भरता है॥
मन की प्रवृत्ति को सज्जन, सबके हित में बरताते हैं।
साधन है यह छटा मुनि, सुव्रत स्वामी फरमाते हैं॥
साधन सप्तम बतलाया, सत्य वचन सदा हितकारी हो।
गुण ग्राम करे परमात्म के, व्यवहार वचन सुखकारी हो॥
साधन अष्टम मंत्र का, तन से मोह जाल हटाते हैं।

उद्धार करें वह औरों का, चाहे खेल जान पर जाते हैं ॥
दुखियों का दुःख हरने के लिये, जो परमार्थ में रहते हैं ।
और लाख कष्ट सहने पर भी, कभी दीन वचन नहीं कहते हैं ॥
नवमें जो मुनि पद के धारी, निर्ग्रन्थ गुरु कहलाते हैं ।
जो पांच महाव्रत के पालक, और आत्म ध्यान लगाते हैं ॥
भक्ति भाव से जो ऐसों को, नित्य प्रति शीश निवाते हैं ।
जो सज्जन और गुरुजन के भी, चरणों में झुक जाते हैं ॥

दोहा

पुण्यवान् प्राणी सदा, करे कर्म में जंग ।
कर्म अरि भागें सभी, आखिर होकर तंग ॥

इसी मंत्र से सखा जीव, यह राजन् पद को पाता है ।
और इसी मंत्र से 'वासुदेव' पद, त्रिखंडी बन जाता है ।
'चक्री' बन कर इसी मंत्र से, मनवाञ्छित सुख पाता है ।
बने सुरेन्द्र इसी मंत्र से, शासन खूब चलाता है ॥
इसी मंत्र से भाई अब, दैवतपति भी थर्राते हैं ।
और यही मंत्र इस प्राणी को, भवसागर पार लगाते हैं ॥
दशकन्धर ने इस मंत्र का, साधन बिल्कुल छोड़ दिया ।
अब नीच गति से है भाई, रावण ने नाता जोड़ लिया ॥
मेरी तो यही सम्मति है, जो करता है सो करने दो ।
कोई विघ्न डालना ठीक नहीं, यह भी तृष्णा भर लेने दो ॥

दोहा (विभीषण)

नीति यह सब धर्म की, समझाई महाराज ।
राज नीति के बिन यहां, बिगड़ जायगा काज ॥

कांटा और शत्रु जहाँ निकले, वहीं मसल देना चाहिये ।
और हारे हुए शत्रु के लिये, कोई दाव नहीं देना चाहिये ।

लंकेश एक ही मान नहीं, जब सहस्रों रूप बनायेगा ।
अब जरा सोच कर बतलाइये, फिर कैसे काबू आयेगा ॥

दोहा

विघ्न डालना ध्यान में, यह भी है अन्याय ।
इसका भी फल है सखा, सुनलो चित्त लगाय ॥

निरपराधी शम्बूक का, लक्ष्मण ने शीश उड़ाया था ।
सो भी भूलकर सूर्य हाँस खांडा, वहाँ पर अजमाया था ॥
जो बिना विचारे काम किया, यह उसका ही फल पाया है ।
बिन भोगे कर्म नहीं छूटते, सर्वज्ञ देव बतलाया है ॥
अब तीनों योग लगाकर, तुम रावण का ध्यान डिगावोगे ।
यदि नहीं डिगा वह शूरवीर तो, फिर पीछे पछतावोगे ॥
बस और कहो क्या बतलाऊं, क्योंकि तुम आप ही स्याने हो ।
जो मर्जी सो कर सकते हो, तुम आप ही अनुभवी दाने हो ॥

दोहा

कपि पति ने यही किया, निश्चय दिल दरम्यान ।
ध्यान डिगाने के लिये, भेजे अपने जवान ॥

अङ्गद आदि भेष बदल जा, घुस गये पौषध शाला में ।
हो रहा ध्यान में मग्न भूप, और चला रहे कर माला में ॥
महा परिषह देने पर भी, जरा ध्यान से हिला नहीं ।
चुप चाप मंत्र में लगे रहे, उत्तर अङ्गद को मिला नहीं ॥

दोहा

अङ्गद ने फिर रच दई, अद्भुत माया और ।
ध्यान डिगाने के लिये, बोल उठे इस तौर ॥

गाना (अंगादि)

सूर्य वंशज है बलवान, करदें लंका को मैदान ।
क्या है रावण तेरी शान, अड़े जो इस रण में तू आन ॥१॥
मांगो माफी ओ अज्ञान, ना कर वीरों का नुकशान ।
रामचन्द्र के अग्नि बाण, हर लें पल में तेरे प्राण ॥२॥
मैं अङ्गद योद्धा मरदान, है कोई योद्धा वीर जवान ।
'शुक्ल' छोड़ अब आर्त ध्यान, राक्षस दल का है घमसान ।३।

दोहा

मेरु सम महा अचल था, दशकंधर बलवान ।
रंचक मात्र हिला नहीं, अतुल बली का ध्यान ॥
देख अचल भूपाल को, अङ्गद हो लाचार ।
तानावाजी के शब्द, ऐसे कहे उचार ॥
तेज प्रताप प्रचंड है, रामचन्द्र का आज ।
दशकंधर नहीं सह सका, छिप बैठा इस काज ॥

भयभीत हुआ यहाँ आ बैठा, बाकी तो सभी वहाने हैं ।
देखो तो कर कंपन से ही, गिरते माला के दाने हैं ॥
क्या करे विचारे दुखिया का, मुंह भी कैसा कुंमलाया है ।
उस तरफ राम के योद्धों ने, लंका में ऊधम मचाया है ॥

दोहा

इन शब्दों से भी नहीं, चला ध्यान से वीर ।
मन्दोदरी का भेप फिर, बनवाया आखीर ॥

ला खड़ी सामने करी, अति नयनों से नीर बहाती है ।
दो मार २ कर छाती में, रो रों कर वचन सुनाती है ॥
सुमेर गिरी वत् अचल भूप ने, मन मन्त्र में लाया है ।
इस समय वीर योद्धा अंगद ने, ऐसे वचन सुनाया है ॥

दोहा (अंगद)

रावण कपटी नीच नर, तस्कर कायर क्रूर।
अंगद योद्धा ने दई, डार तेरे सिर धूर॥

नेत्र खोल कर देख नपुंसक, मूंद लई क्यों पलकें।
तू लाया था वन से चोरी कर, जनक सुता को छल के॥
पटराणी ले चला मन्दोदरी, सन्मुख देख पकड़ के।
शक्ति है तो दिखला तेरी, जाऊं आज मसल के॥

दौड़

कहाँ अब जान छिपाई, शर्म तुमको नहीं आई।
डूब कर मर जाना था, या कर रक्षा राणी की,
नहीं विवाह क्यों करवाना था॥

दोहा

इतना कह कर ले चला, पकड़ सामने बांह।
राणी तब कहने लगी, ऐसे रुदन मचा॥

नकली मन्दोदरी का विलाप

छुड़ाओ मुझे भरतार जी, कोई ले जाता अनाड़ी।
मैं मन्दोदरी हूँ तेरी राणी, खींच के महलों से शत्रु ने लानी॥
करती हूँ रुदन अपार जी॥१॥
आपके होते हो मेरी यह हालत, कैसे पियां देखो तुम ये जहालत।
स्वामी अब सुनो पुकार जी॥२॥
हा हा कार मैं कर २ हारी, कोई ना सुनता आहो नारी।
फूटे करम हमारे जी॥३॥
स्वामी तुमने तो मौन है धारा, किसका लेऊँ मैं आन सहारा।
रो रो के गई मैं हार जी॥४॥

पकड़ो शत्रु को देर न लाओ, इस पापी से हाथ छुड़ाओ ।
पकड़ी तेरी पट नार जी ॥५॥
एक घुरकी है काफी तुम्हारी, शत्रु की जावे मती मारी ।
आप बड़े बलधार जी ॥६॥

दोहा

रावण के सन्मुख किये, राणी ने विरलाप ।
ले चला फेर घसीट के, सन्मुख अंगद आप ॥

लंकेश ध्यान में दृढ़ रहा, अंगद निज कटक सिधाया है ।
विद्या ने आन प्रकाश किया, तब दशकन्धर हर्षाया है ॥
खिल गया फूल की तरह भूप, मंत्र में ध्यान लगाया है ।
तब हाथ जोड़ बहुरूपिणी, विद्या ने यों वचन सुनाया है ॥

दोहा (बहुरू०)

जिस कारण तुमने किया, हे दशकन्धर ध्यान ।
आन खड़ी मैं सामने, देने को वरदान ॥

जो आशा मन की प्रकट करो, सब पूरी करने आई हूँ ।
क्या कष्ट है तुम पर बतलावो, मैं सभी काटने आई हूं ॥
है बहुरूपिणी नाम मेरा, विश्व वश करवा सकती हूं ।
और एक वीर से शत्रु की, सेना सब मरवा सकती हूं ॥
एक रूप से रूप हजारों, चाहो अभी बना देऊ ।
फिर कौन बिचारे राम लखन, मैं विश्व विजय करा देऊं ॥

दोहा (रावण)

जो कुछ भाषा आपने, कर सकती हो काम ।
निश्चल रहना वचन पर, अब जावो निज धाम ॥

अब जावो निज धाम, समय पर याद तुम्हें कर लूंगा।
रणभूमि में लड़ने का, कल ही सामान धरूंगा॥
रूप अनुपम बना सभी, शत्रु की फौज हरूंगा।
चक्र सुदर्शन से भीलों की, गर्दन दूर करूंगा॥

दौड़

पता महलों का लूंगा, फेर स्नान करूंगा, जरा कुछ भोजन पाकर, याद करूंगा तुम्हें उस समय रणभूमि में जाकर।

दोहा

आज्ञा ले विद्या चली, पहुँची निज स्थान।
खुशी-खुशी गया मैहल में, दशकन्धर बलवान॥
पूछ रही पति देव से, क्षेम कुशल पटनार।
समझ लिया प्रपंच था, सभी ध्यान मंझार॥
व्यायाम किया दशकन्धर ने, फिर तेल पाक मलवाया है।
करके मंजन स्नान फेर, भोजन रावण ने पाया है॥
देवरमण में जा पहुंचे, जहां बैठी जनक दुलारी है।
विनाश काल बुद्धि मलीन, रावण ने गिरा उचारी है॥

दोहा (रावण)

साध लई बहुरूपिणी, विद्या मैंने आज।
अब भी सीता मान ले, मुझको सिर का ताज॥
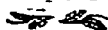
सीता-रावण

दोहा (सीता)

प्रथम तो यह बात है, फलते कभी ना बांस।
यदि कभी फल भी गये, होगा उनका नाश॥

इसी तरह अन्याय से, फला न फूला कोय।
खोल देख इतिहास सब, अंतिम गये सब रोय॥

गाना (सीता का)

तेरा जितना गरूर मिले, सबये अब धूर।
तेरी क्या मकदूर, लाखों गये हार के॥१॥
पापी फूलता वैतोर, कुछ करता नां गौर।
रावण सुनले तू, और जरा कान धर के॥२॥
तेरा रहना नहीं निशान, होगी लंका मैदान।
जब चलेंगे यहाँ पर बाण, राम अवतार के॥३॥
आज कल का तू महमान, अब भगेंगे तेरे प्राण।
सत्य सिया की जबान, सुन चित्त धार कर के॥४॥

दोहा (रावण

धर्म कर्म को तो दई, मैंने ठोकर मार।
निश्चय होना है तुझे, लंकपति की नार॥

गाना (रावण व सीता के प्रश्नोत्तर)

रावण—अय जनक दुलरी, मानोगी बात आखीर पर।
मत नीर भर यह पीर हर॥ अय॥
सीता—कामी कुत्ते ओ बेहुदे, यहाँ ना यह तकरीर कर।
अय रावण पापी, लानत है तुझ बेपीर पर रणधीर पर,
बलबीर पर॥ अय रावण॥
रावण—जबां सम्भालो नाज न डालो,
बेहुदा तकरीर पर॥ अय जनक॥
सीता—तू मुझे चुरा कर लाया।
रावण—अच्छा यों ही सही।

सीता—तू कायर क्रूर कहाया ।
रावण—मैं शूर सही ।
सीता—पतिव्रतों को सता ना जालिम ।
होगा बुरा आखीर पर ॥ अथ रावण ॥ १ ॥
रावण—पटनार बनाऊँ तुमको ।
सीता—बक बक ना करे ।
रावण—तू पति मान ले मुझको ।
सीता—परभव से डर ।
रावण—राजी से नाराजी से पटनारी का चीर धर ।
॥ अथ जनक ॥ २ ॥
सीता—किस गुरु से शिक्षा लई थी ।
रावण—कुछ और कहो ।
सीता—तब बुद्धि भ्रष्ट हुई थी ।
रावण—खामोश रहो ।
सीता—छल से नाद बजा कर लाना,
विक-धिक्कारणी चोर पर ॥ अथ रावण ॥ ३ ॥
रावण—कुछ अक्ल नहीं है तुमको ।
सीता—वाह ! खूब कही ।
रावण—क्या बोल रही है मुझको ।
सीता—बिलकुल है सही ।
रावण—क्या शक्ति है रामचन्द्र बनवासी,
भील हकीर पर ॥ अथी जनक ॥ ४ ॥
सीता—सुत बान्धव कैद में उनको ।
रावण—हाँ डर क्या है ।
सीता—सुर सेवा करते उनकी ।

रावण—तो फिर क्या है।
सीता—लेजायेंगे मुझे अयोध्या,
तेरी भस्म अखीर कर ॥ अय रावण ॥ ५ ॥
रावण—क्या सिफ्त बड़ी है उनकी।
सीता—शुद्ध आत्म है।
रावण—तुझे खबर नहीं मेरे गुण की।
सीता—दुरात्मा है।
रावण—जबां सम्भाल के बात करो,
दृष्टि डालो शमशीर पर ॥ अयी जनक ॥ ६
सीता—मैं फिर भी यही कहूँगी।
रावण—क्या ताकत है।
सीता—बिल्कुल रोके न रुकूँगी।
रावण—तो हिमाकत है।
सीता—झूठ नही लववेश आप धर देखें,
हाथ जमीन पर ॥ अय रावण ॥ ७
रावण—कल उनका सिर कतरूंगा।
सीता—खुद होगा खतम।
रावण—तेरे सम्मुख आन धरूंगा।
सीता—जाऊं मुलके अदम।
रावण—पटराणी फिर करूं तुझे, क्या भूली फिरे
अहीर पर ॥ अयि जनक ॥ ८ ॥
सीता—मैं जिस्म फना कर दूंगी।
रावण—मूर्खता है।
सीता—सुरपुर जा कदम धरूंगी।
रावण—दिल जलता है।

सीता---सती धर्म को छोड़ कभी, हरफ न लाऊं तौकीर
पर ॥ अय रावण ॥९॥

रावण---क्यों नर तन मुफ्त गंवाती ।
सीता...यह फानी है ।
रावण क्यों दिल तू मेरा जलाती ।
सीता अज्ञानी है ।
रावण---ऐसे सुख दूं, नहीं मिले होंगे, चत्तवासी मीलपर
॥ अय जनक० ॥ १० ॥

सीता...तूने कुल को दाग लगाया ।
रावण... कुछ फिकर नही ।
सीता...क्यों वन्ध नरक का लाया ।
रावण...मँजूर वही ।
सीता...धिक्कार तुझे सौ वार और धिक्,
माता पिता गुरु पीर पर ॥ अय रावण ॥ ११ ॥
रावण....क्यों करती जवां दराजी ।
सीता....हो दफा परे ।
रावण... ना मिले तुझे आजादी ।
सीता...जो कर्म मेरे
रावण...राज पाट तन तक वारूं इस सुन्दर,
तेरे शरीर पर ॥ अयि जनक० ॥१२॥
सीता...क्यो कुत्ते भौंक रहा है ।
रावण...वाहोश रहो ।
सीता...खर सोहन भोग कहाँ है ।
रावण---आशीश ग्रहो ।

सीता—ले जायेंगे मुझे लखन-तेरी छाती को,
चीरकर ॥ अय रावण ॥१३॥

दोहा (रावण)

व्योम कुसुमवत आश ये, सब ही निष्फल जाय।
जो भापा कर कल तुम्हें, देऊं सभी दिखाय॥

छोड़ो आर्त ध्यान नहीं कुछ, होता रोने धोने से।
यदि होगा सुख तुमको तो बस, अनुकूल हमारे होने से॥
प्रातः काल ही राम लखन को, तो परभव पहुंचा दूंगा।
और तम्बू डेरे उठा सभी, राजों को मार भगा दूंगा॥
नियम टूटने के भय से, अब तक यह समय निभाया है।
अब इसकी भी परवाह नहीं, बस दिल में यही समाया है॥
पटराणी का ताज सजा कल, महलों में पहुँचाऊंगा।
राजी से नाराजी से, ये झगड़ा सभी मिटाऊंगा॥

दोहा

बाण रूप जब वचन ये, पड़े सिया के कान।
मूर्छित हो धरणि गिरी, वृक्ष से जैसे टाहन॥

जरा देर में सम्भल फेर, उठ बैठी जनक दुलारी है।
हुई दुख सागर में लीन, और नयनों से गिरता वारी है॥
फिर अर्ति मन से दूर हटा, श्री जिन का ध्यान लगाया है।
और दशकन्धर को चत्राणी ने, ऐसे वचन सुनाया है॥

दोहा

दशकन्धर सुन लीजिये, जरा लगा कर कान।
चत्राणी हूं आन पर, तज देऊंगी प्राण॥

राम लखन के श्वासों पर ही, सीता की जिन्दगानी है।
यदि राणी है तो जनक सुता, श्री रामचन्द्र की राणी है॥

बाकी दुनियां में मनुष्य मात्र, सब पिता और समभाई है।
आप तो बावे दादे क्या, प्रति पितामह के न्यायी है॥
राम लखन मर गये मुझे, जब ये निश्चय हो जावेगा।
तो सीता के भी उसी समय, एक प्राण न तन में पायेगा॥
बस इसी समय से खान पान का, त्याग अटल समझे मेरा।
निज पति पास मैं पहुंचूंगी, दुर्गति में हो तेरा डेरा॥

दोहा

देख तेज आश्चर्य में, दशकन्धर बलंवार।
अपने मन में कर रहा, ऐसे खड़ा विचार॥
प्रेम स्वाभाविक राम से, जनक सुता का जान।
आशा करना व्यर्थ है, हुआ मुझे अब भान॥
पीपल झूरता फूल को, फल को नागर बेल।
जनक सुता बिन मैं झुरूं, झुरे पत्र को कैर॥

स्थल पर मीन तड़फती है, पानी से प्रेम बढ़ाने को।
किन्तु नहीं करता नीर ध्यान, दुखिया का दुख मिटाने को॥
बस इसको भी जो कुछ कहना, वज्र पर तीर चलाना है।
या यों कहिये कि मेरू गिरि को, घर पै उठाकर लाना है॥
ज्यों बामन चाहे उड़ गगण गहने, अपनी हंसी कराता है।
त्यों पानी से नवनीत ग्रहण का, व्यर्थ प्रयास कहाता है॥
पत्थर पर कमल जमाने का, उद्यम ही निष्फल जाता है।
बस यही हाल है जनक सुता का, नजर सामने आता है॥

शुद्ध विचार

दोहा

ठीक नहीं मैंने किया, हर लाया सिया नार।
कलङ्कित हुआ संसार में, पड़ी शीश पर छार ॥

छंद

शिक्षा विभीषण वीर की, मैंने कभी श्रद्धी नहीं।
अहा खेद उल्टा दुख दिया, की तनिक हमदर्दी नहीं ॥
कुल भी कलंकित कर दिया, कार्य भी कोई ना सरा।
भानुकर्ण मेरी भुजा, हा ! कैद शत्रु की परा ॥
वापिस करो हर नार, दी मन्दोदरी ने सम्मति।
निश्चय न तोड़ेगी धर्म, है अचल मेरुसम सती ॥
ठीक सुख दाई वचन, मन्त्री गणों ने भी कहा।
यह उस समय बुद्धि मेरी, क्या खबर बैठी थी कहां ॥
राम के मरने का सीता, शब्द सह सकती नहीं।
मारा उन्हें निश्चय तो, यह जीती भी रह सकती नहीं ॥
अब भयानक नियम जो, सीता ने धारण है किया।
समझ लो सामान यह सब, मरण के कारण किया ॥
हाथ मलने के सिवा, फिर हाथ कुछ ना आयेगा।
मोड़ दूं अब भी सिया तो, यश मेरा रह जायेगा।

दोहा

अब ये निश्चय कर लिया, मैंने दिल के साथ।
कल लेजा कर सौंप दूं, रामलखन के हाथ ॥

संसार में मेरा यश होगा, कुलका कलंक मिट जायेगा।
भाई बन्धु सब आन मिले, उनका डेरा उठ जायेगा ॥

वृथा ही रक्त बहाया आगे, वृथा ही और बहाना है।
क्योंकि मैंने अब समझ लिया, कुछ हाथ ना इसमें आना है।
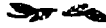
मन की लहरें

दोहा

मन में ऐसा नियत कर, चला लंक की ओर।
होनहार आगे कहो, चले किस तरह जोर॥

मन चंचल की है विचित्र गति, यह कई रंग दिखलाता है।
कभी दान वीर कभी शूरवीर, कभी शुभ मति पर टिकजाता है॥
कृपण हो मक्खी चूस कभी, कायर कपटी बन जाता है।
कामान्ध कभी मानांध कभी, कुमती पर ध्यान जमाता है॥
जल तरंग से भी ज्यादह, मन की लहरें कहलाती है।
या वायु चलने पर वन राजी, कभी न स्थिरता लाती है॥
तंदुलमच्छ की तरह जीव, दुर्मन से दुर्गति जाते हैं।
और शुभ विचार करने से, प्राणी स्वर्ग का बन्ध लगाते हैं॥
दो भेद कहे कर्मों के, 'जिन' में निद्धित तो छुट पाते हैं।
विन भोगे पर कर्म निकाचित, कभी न छुटने पाते हैं॥
जिन परिणामों से बन्ध पड़े, वो अन्त समय आजाते हैं।
यदि अच्छे हैं तो श्रेष्ठ गति, नहीं तो पीछे पछताते हैं॥

दोहा

चलते २ फिर किया, इसी बात पर ध्यान।
राग वही गाने लगा, फेर मान के तान॥
इस हालत में राम को, देऊं सीता जाय।
तो फिर इस संसार में, नाक मेरी कट जाय॥
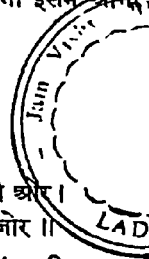
सारी दुनिया फेर मेरे, इस क्षत्रापन पर थूकेगी।
और देख २ अपमान मेरा यह, नित्य प्रति काया सूखेगी ॥
बदनाम हुआ ना काम बना, दुनिया समझेगी हार गया।
श्रीरामचन्द्र के भय से, रावण सीता आज निवार गया।
गल गया मान सब रावण का, जो सीता वापिस करता है।
क्योंकि यह अब क्या करे विचारा, लक्ष्मण जी से डरता है ॥
तो लिये सदा के मैं गन्दा, इतिहास रूप बन जाऊंगा।
और कायर कामी शठ जन की, श्रेणी में संख्या पाऊंगा ॥

शेर

चक्कर में डाला था मुझे, कुमति ने आकर के सही।
अपने गौरव को जरा मैंने, पिछाना भी नहीं ॥
अधिकार सच्चा है, सभी ने झूठ झगड़े को कहा।
अधिकार जिसने तज दिया, समझो सभी कुछ तज रहा ॥
सीता को यदि वापिस करूं, छुट जाय कर से डोर है।
फिर झुरूं ऐसे चरण जिम, देख झुरता मोर है ॥
लाया था जिस शक्ति पे, अब वहीं दिखाना चाहिये।
राम से पाकर विजय, सीता को देना चाहिये ॥

दोहा

मान उन्हों का तोड़ कर, फिर दूंगा सिया नार।
भानुकिरण सम यश मेरा, फैले सब संसार ॥

ऐसा ही करना ठीक समझ में, सभी तरह से आता है।
और विना सोचे जो करे काम, सो फिर पीछे पछताता है ॥
प्रातः काल ही पकड़ राम लक्ष्मण, दोनों को लाऊंगा।
और सुत बान्धव सब योद्धा को भी. कल स्वतन्त्र बनाऊंगा ॥

दोहा

शक्ति अपनी सभी को, पहले दूं दिखलाय।
फिर देऊं सीता उन्हें, यश फैले जग मांय॥
बैठाई तजवीज ये, सोच सोच दिल मांय।
पहुंचा सायंकाल को, भूप महल में जाय॥

करके अन्न जलपान फेर जा, शयन गृह आराम किया।
और प्रातःकाल होते ही, नृपने रणभूमि का ध्यान किया॥
बख्तर शस्त्र सजा भूप ने, वज्र हाथ उठाया है।
जब लगा देखने शीशे में तो, चेहरा नजर ना आया है॥

अपशकुन

दोहा

फेर हाथ में तो लेने, लगा, भूप तलवार।
सो भी कर से छूट कर, गिरी धरणी मंजार॥

तलवार उठाई करमें तो, मस्तक का मुकुट धरणी आया।
अपशकुन देख मन्दोदरी ने झट, मस्तक आन चरण लाया॥
दाहिना नेत्र फड़क रहा राणी का, बामा रावण का।
तब किया इरादा राणी ने भी, अपना स्वप्न सुनावन का॥

दोहा

प्राण नाथ मेरा हृदय, कांप रहा है आज।
सोच समझ कर कीजिये, समर आज महाराज॥

यह भी है अपशकुन आज, रण करने से हूँ रोक रही।
पर देख देख हालत स्वामी, कुछ अच्छा ही मैं सोच रही॥

अब तक तो छिपा रक्खा था, हे प्राण नाथ निज ख्यालों को।
पर चैन नहीं-मेरे मन को, अब देख देख इन हालोंको॥
कड़क रही कर की चूड़ियां, और दाहिना नेत्र फड़क रहा।
चलत समय गिरा मुकुट आपका, देख मेरा दिल धड़क रहा॥
प्रातःकाल ही प्रथम मुझे; आया स्वप्ना सो सुन लीजे।
हे प्राण ईश फिर सोच समझ कर, आज का आप समर कीजे॥

दोहा (रावण)

क्या स्वप्न आया तुम्हें, झट पट करो बयान।
शूर शकुन गिनते नहीं, लगे चाहे वहां प्राण॥
लगे चाहे वहां प्राण कहो, जल्दी क्यों पकड़ा दामन।
गिर जाते किसी समय मुकुट, कर से शस्त्र अय कामन॥
चोटें सन्मुख सहे शूरमें, करें जन्म निज पावन।
आज बाण बरसाऊं, जैसे झड़ी लगावे श्रावण॥

दौड़

प्रमदा प्रिये प्रवीणा, आज भय किसका कीना।
पंकज मुखी वाम मृग नयनी, अपने दिल का राज
कहो तुम हमसे कोकिल वैनी॥

मन्दोदरी व रावण का गाना

(तर्ज—लावणी)

बन गई रांड मैं आज, साफ स्वप्ने में,
ले गये सीया को राम, आज स्वप्ने में।
सज गया विभीषण, के शीश ताज स्वप्ने में॥
हो गये समर में राख, आप स्वप्ने में,
यह नथली खाकर, बल दोहरी होती है।
जिस लिये पिया यह, अर्द्धाङ्गिनी रोती है॥१॥

रावण—किस लिए आज नादान, जान खोती है।
नहीं वात कभी स्वप्ने की. सत्य होती है॥
कई वार गिरा कट २ के, शीश स्वप्ने में।
हो गई वात सब झूठ, प्रातः उठने में॥
वन जाय भिखारी, राजन पति स्वप्ने में।
फिर वही झोंपड़ी आवे, नजर उठने में॥
नथली कुछ दवने से, दोहरी होती है।
नहीं वात कभी स्वप्ने की सत्य होती है॥

मन्दोदरी—दण्डक की राणी, पुरन्द्र यशां स्वप्ने में।
लिया देख गर्क हो गया, राज स्वप्ने में॥
जल गये सभी लग गई, आग स्वप्ने में।
हो गई वात सच नाथ. सुवह उठने में॥
सव वात स्वप्न शास्त्र, की सच होती है।
जिस लिये पिया यह, अर्द्धाङ्गिनी रोती है॥३॥

रावण—यह वहम सभी देखा, तुमने स्वप्ने में।
जो दिन की चिन्ता पड़े, नजर स्वप्ने में॥
धन माल कभी खुस जाय, सभी स्वप्ने में।
तृषातुर पीता फिरे, नीर स्वप्ने में॥
भूखे को भोजन, मिले क्षीर स्वप्ने में।
तू निरर्थक आंसुओं से, मुख धोती है नहीं वात० ॥४॥

मन्दोदरी—जो क्षीर समुद्र स्वप्ने में, तिर जाता।
सो उसी जन्म में अक्षय मोक्ष सुख पाता॥
गज भानु शशि कोई, जिसे नजर है आता।
तो श्रेष्ठ पुरुष कोई, वहां जन्म है पाता॥
यह वात धर्म शास्त्रों, में भी होती है
जिस लिये पिया० ॥५॥

रावण—वैराग्य पक्ष की, बात सभी यह प्यारी।
जिनको न चिन्ता, होती कोई लगारी॥
किन्तु हम हैं क्षत्रिय, योद्धा बलधारी।
क्षत्राणी हो क्यों, बनती कायर नारी॥
ना डरे शूर जिस, समय बिगुल होती है।
नहीं बात कभी॥६॥

दोहा (मन्दोदरी)

शुभ सम्मति ना उर धरी, कभी एक प्राणेश।
अब तो दासी की, अर्ज मानो इक लंकेश॥

दोहा (रावण)

निश्चय में आया नहीं, इन बातों से बाज।
किन्तु तुम्हारे कथन पर, किया अमल कुछ आज॥
नीचा दिखलाकर पहिल, फिर सीता उनको देऊंगा।
यह कथन तुम्हारा पूरा करके, यश दुनियां में लेऊंगा॥
पाकर विजय बांध दोनों को, आज यहां पर लाता हूँ।
इस कारण ही प्राणप्रिये मैं, रण भूमि में जाता हूं॥

दोहा (मन्दोदरी)

दुःख होता है मुझे, सुन सुन ऐसी बात।
वापिस ही देना उन्हें, फिर लड़ने क्यों जात॥
आप उदारचित्त हो, ये खुशी है मुझे।
जाओ लड़ने को, हरगिज ना चाहती हूं मैं॥
मुंह को आया कलेजा, मेरा एक दम।
अपशकुन हो रहे, सच सुनाती हूँ मैं॥१॥
आंख दाईं फड़कती, धड़कता है दिल।
कड़कि चुरियां ये करकी दिखाती हूं मैं॥

आज जावो न रण को, कहा मान लो ,
हा हा खाकर के, सिर को झुकाती हूं मैं ॥२॥
रावण—कायर दुर्बल ही मानें, शकुन अपशकुन ।
तेरी बातें न हर्गिज, मानेंगे हम ॥
असली घर तो योद्धों का, रण क्षेत्र ही है ।
चाहे हो जावे, वेशक वहाँ दम खत्म ॥३॥
हो के क्षत्राणी रावण की, पटनार तूं ।
वनती कायर, जरा भी न आती शर्म ॥४॥
अब अधिक कुछ कहा गुस्सा आजायेगा !
क्योंकि करना समर का हमारा कर्म ॥५॥

दोहा

एक ना मानी नार की, समझाया हर वार ।
इसी समय दशकन्धर ने, सेना करी तैयार ॥

रण तूर वजा कर चला, मान में चूर भूप हर्पाया है ।
प्रवल प्रताप सवल दल लेकर, आन मोर्चा लाया है ॥
वानर दल था वहां खड़ा हुआ, उस तरफ प्रथम ही आ करके ।
फिर तो क्या था रणभूमि में, अड़ गये शूरमा धा करके ॥

राम व रावण प्रश्नोत्तर

राम रावण के दल में मचा वलवला ।
लाल झंडे लड़ाई के फिर आ गड़े ॥
इधर राम हैं उधर रावण खड़े ।
खुशी हो करके रावण हंसा खिलखिला ॥१॥
राम—वाज रावण तू आ मान मेरा सखुन,
क्यों करता है अपना तू चूरोचकन ।
जल के रावण कहे राम से सिर हिला ॥२॥

रावण—सब मरे योद्धा रण में हुआ खातमा,
है दुखी जिन्दगी से मेरी आत्मा।
गये योद्धा जहाँ गये मुझको बुला ॥३॥
मैं हस्ती मिटाई है, तेरे लिये।
बेटे पोते सभी, तेरे अर्पण किये॥
क्यों ना जाहिर करूं अब मैं, अपना गिला ॥४॥

दोहा

इतना कह दशकन्धर ने, हमला कर दिया आम।
अमित सुभट उस जंग में, पहुंचाये परधाम॥
मानिन्द झड़ी के परस्पर, लगे बरसने बाण।
योद्धों का होने लगा, महा घोर घमसान॥

खांडे बरछी परिघ भुशुंडी, दंडास्त्र विस्तार करें।
संग्रामी रथ और विकट गाड़ियां, कहीं धनुष टंकार करें॥
नभ में लड़ें विमान शूरमे, अगणित यहाँ पर मरते हैं।
मार्ग में ले विश्राम शरों पर, फिर नीचे आ गिरते हैं॥

———

रावण-लक्ष्मण

दोहा

रावण के सन्मुख हुआ, वीर सुमित्रा लाल।
अरुण वर्ण कर नयन दो, बोला हो विकराल॥

दोहा (लक्ष्मण)

आवो दशकन्धर बली, शूरवीर बलधार।
अन्तिम का रण आज है, करलो बढ़कर वार॥

करलो बढ़कर वार क्यों कि फिर, परभव को जावोगे।
जो कुछ करना करो आज, फिर समय नहीं पावोगे॥
करो उन्हें तैयार जिन्हें, अपने संग ले जावोगे।
परभव जाते आप अकेले, क्या शोभा पावोगे॥

दौड़

काष्ट चन्दन मंगवालो, चिता पहले चिनवालो, शल्य सब दूर निवारो, यहां से टूट गया अब नाता, आगा जरा सम्भालो।

दोहा (रावण)

छोटा मुख बातें बड़ी रहा कलेजा फार।
अब यह घाव तभी मिटे, देऊं तुझको मार॥

शक्ति से बच गया इसी, कारण क्या फूल रहा है।
परभव आज पठाऊं तुझको, क्या मन भूल रहा है॥
मेंढ़क सा क्यों उछल, उछल, अय कायर कूद रहा है।
बदल-बदल कर आँख चुभा, हृदय त्रिशूल रहा है॥

सवैया

दूध के दाँत न टूटे अभी, शठ शूर महान् से खात न शंका।
कुन्थु समान न बालक मूर्ख, बाँध के तेग बना रण बंका॥
जीवन आन उठो जग से तब, आयु के पूर्ण हो गये अंका।
जान गये हम आज बजा, तेरे सिर काल कराल का डंका॥

दौड़

विचारा जो था मन में, फेर दिया तूने छिन में, यदि
जीणा चाहते हो, डार भगो हथियार नहीं अब
परभव को पाते हो।

दोहा (लक्ष्मण)

वाह जी वाह क्या खूब ही, दिखा रहे हो धौंस ।
जरा चरण आगे धरो, अभी बिगाड़ूं होश ॥

दंड रत्न छोटा सा ही, पर्वत को तोड़ बगाता है ।
और अंकुश देखो छोटा सा, हाथी को वश कर लाता है ॥
प्रबलसिंह का बच्चा भी, कुम्भस्थल को दल जाता है ।
भानु की किरणें चढ़ते ही, रजनी का पता न पाता है ॥

दोहा

तारागण तब तक रहा, अपनी चमक दिखाय ।
जब तक उदयाचल शिखर, रवि न पहुंचा आय ॥

तारागण की तरह देव राक्षस, यह वंश तुम्हारा है ।
प्रसिद्ध सभी संसार में, निश्चय सूर्य वंश हमारा है ॥
सूर्य वंशज शूर वीर, हम भी शेरों के बच्चे हैं ।
उम्र जरासी है तो क्या, रण के फन में नहीं कच्चे हैं ॥

सवैया

तन पै रंग जंग मजीठी चढ्यो, आज फड़क रहे भुजदंड हमारे ।
काल कराल ही जान हमें, वन आये तेरे रघुवंश दुलारे ॥
लाज न आवे तुझे शठ बोलत, कैद पड़े सुत बान्धव सारे ।
खाचो न शंक निःशंक बढ़ो, आज प्राण पखेरू उड़ेंगे तुम्हारे ॥

दोहा

सुनी काट करती हुई, लक्ष्मण की सब बात ।
दशकन्धर आगे बढ़ा, शस्त्र लेकर हाथ ॥

फिर तो क्या था रणभूमि में, लगी रक्त वर्षा होने ।
और अगणित शूरे लगे समर में, नींद हमेशा की सोने ॥

जैसे नट नाचे बांसों पर, करता कमाल अपने फन में।
लक्ष्मण भी ऐसे नाच रहा, कर रहा कमाल रण के फन में॥

गाना लावणी शिकस्त

जुटे दुतर्फी समर में शूरे. खांडा खटाखट खटक रहा है।
इधर जुटे ये वीर हैं दोनों, उधर में जुट कुल कटक रहा है॥
लड़ाई अम्बर में ऐसे होती, मानों कि मानव बरस रहे हैं।
भस्म व्याधि वाले के मानिन्द, रक्त को शस्त्र तरस रहे हैं॥
रक्त फुव्वारा चले सरासर, जैसे बादल बरस रहा है।
खेलें शूरे समर में होली, जो जीते सो ही हर्ष रहा है॥

दोहा

रावण ने फिर तान कर, मारा कठिन 'अनलास्त्र'।
व्यापी अग्नि दल राम के, योद्धे हुए अति त्रस्त॥

लखा हाल ये श्री लक्ष्मण ने 'पर्जन्यास्त्र' चलाया है।
मूसलाधार मेघधारा से, वैश्वानर शान्त बनाया है॥
जब लगी डूबने रावण सेना, राय ने 'पवनास्त्र' चलाया है।
घटाटोप जो छाये मेघ थे, सबको साफ बनाया है॥
फिर रावण ने रिप खा करके, 'कर्कोटक' अस्त्र धार लिया।
छागये व्याल सब रामादल पर, प्राण रक्षा को दुश्वार किया॥
संत्रस्त हुई सारी सेना, ये लक्ष्मण जी ने निहारा है।
छोड़ा है तभी महा 'तार्क्ष्यास्त्र' माया को दूर निवारा है॥

दोहा

देखे काश्यप पुत्र जब, भगे अहि जान बचाय।
देर तलक यों ही रहे, अस्त्र शस्त्र चलाय॥
फेर बाण वर्षा लगे, करन सुमित्रा लाल।
समझ लिया दशकन्धर ने, ये है मेरा काल॥

छंद

देख शक्ति लखन की, रावण का मन घबरा गया।
समझा कि मेरा काल यह, लक्ष्मण ही बनकर आगया॥
फिर ख्याल है बहुरूपिणी. विद्या का रावण ने किया।
विद्या ने आ करके सहारा, भूप को रण में दिया॥
जिस तरफ देखें उस तरफ, रावण ही रावण घूमते।
रामदल के शूरमे अति, भय से धरणि चूमते॥
रामदल का उस समय, भयमान फूटा गोल है।
यह देख हालत लखन की, गुस्सा चढ़ा बेतोल है॥

दोहा

क्रोध अति ही छा गया, रूप बना विकराल।
गारुड़ी विद्या पर उड़े, बने भयंकर काल॥
वज्रावर्तज धनुष को, लेकर लक्ष्मण वीर।
वज्रमुखे दशशीश के, मारे कस २ तीर॥

जो जहाँ थे रावण रूप कई, वहाँ बाण रूप कई होने लगे।
जिन रूपों के जा तीर लगे, वह रूप धरणी में सोने लगे॥
फिर वानर सेना राक्षस सेना, पर आक्रमण करने लगी।
अब पुण्य हार गया रावण का, जो अगणित सेना मरने लगी॥
एक बाण से लक्ष्मण जी के, सौ-सौ बाण निकलते हैं।
सौ-सौ से फेर हजार बने, बाणों को बाण उगलते हैं॥
जिस जगह रूप दशकंधर का, जा बाण उसी के लगता है।
वह रूप लोप हो जाय तभी, क्या पता कहाँ जा मिलता है॥
जैसे बरसाती मेंढक, नित्य धूप से मरते जाते हैं।
यों रूप सभी रावण के भी, संख्या कम करते जाते हैं॥

स्वल्प समय में रूप भूल का, नजर पड़ा दशकन्धर का।
यह शक्ति का नहीं काम, काम लक्ष्मण के पुण्य सिकन्दर का ॥

दोहा

रावण तब आश्चर्य से, देख रहा मुंह बाय।
'चक्र सुदर्शन' अन्त में कर में लिया उठाय ॥

चक्र सुदर्शन को झुँझलाकर, हाथ में खूब घुमाया है।
बिजली के मानिन्द तड़तड़ाट कर, काल रूप बन आया है ॥
सुग्रीवादिक सब घबराये, जीने की आशा छोड़ दई।
ना दृष्टि सामने टिकती है, ग्रीवा भी पीछे मोड़ लई ॥
वह समय भयानक जैसा था, वैसा यहाँ कहा न जाता है।
ये दृश्य देख दशकंधर, मन में फूला नहीं समाता है ॥
ले अस्त्र-शस्त्र वानर योद्धे, चक्र पर सभी चलाते हैं।
पर उसको ना पीछे हटा सके, बेशक जाकर टकराते हैं ॥

दोहा

हो करके लाचार सब, मलते रह गये हाथ।
समझा होगी चक्र से, अब लक्ष्मण की घात ॥

भयभीत हुए सब ही दिल में, श्रीराम का मन भी हांफ गया।
भामंडल सुग्रीवादिक, सब योद्धों का तन कांप गया ॥
अमोघ अस्त्र एक नमोकार का ही, अब बाकी शरणा है।
बस सिवाय अनादि मंत्र और, किसने विपदा को हरना है ॥

दोहा

पंच परमेष्ठी का मन में, किया निश्चल ध्यान।
चक्र सुदर्शन अनुज के, पहुंचा सम्मुख आन ॥

उस समय जो भय था योद्धों को, वर्णन में नहीं आ सकता है।
पर वार अनादि मन्त्र का भी, खाली कब जा सकता है ॥

निज शक्ति का जो मान करे, और पुण्य को नहीं निहारते हैं।
पुण्य विना शक्ति निष्फल, श्री जिनवर यही उचारते हैं॥

दोहा

चक्र सुदर्शन लखन को, दे प्रदक्षिणा तीन।
दशकन्धर भी उस तरफ, देख रहा यह सीन॥

चक्र सुदर्शन लक्ष्मण जी के, दक्षिण कर पर आ बैठा।
तब लङ्कपति के हृदय पर, जैसे कोई फणियर लेटा॥
यह दृश्य देख वानर दल को, बस खुशी का ना कुछ पार रहा।
उस तरफ दशानन पिछली, बातों को दिल खूब विचार रहा॥

दोहा

याद मुझे अब आ गया, मुनिजन का व्याख्यान।
परनारी कारण सही, लगे जान अब प्राण॥

अधिकारी मन्त्री गण क्या, सब ही ने मुझको समझाया।
क्या करूँ मेरी किस्मत उल्टी, कुछ सोच नहीं मन में लाया॥
मुनिराज की बातों पर भी, श्रद्धा मैंने करी नहीं।
अष्टांग ज्योतिषी को भी, कोई बात हृदय में धरी नहीं॥

दोहा

अर्धांगिनी के कथन पर, किया न जरा विचार।
नर्म गर्म और प्रेम से, समझाया हर बार॥

रावण का पश्चात्ताप लावणी शिकस्त

किस्मत ने धोखा दिया, आज बे मौके।
अब आई मुझको अक्ल, सभी कुछ खोके॥
राणी ने आखीर तक, समझाया रो के।
खो दिये हाथ से, जितने थे सब मौके॥

क्या करूं कैद में, योद्धे पड़े तमाम।
जिस कारण लाया सीता, कुछ बना नहीं वो काम ॥१॥
सुत भूख प्यास के, कैसे दुख सहेंगे।
ना खबर पिता ने लई, ये लाल कहेंगे॥
सब योद्धों की, आंखों से अस्क बहेंगे।
किस विध सुत बान्धव के, अब प्राण रहेंगे॥
मेरे लाल कहाँ, आजादी के आराम।
जिस कारण लाया सीता कुछ बना नहीं वो काम ॥२॥
किस जन्म की वैरन शूर्पणखा थी मेरी।
तारीफ करी मुझ आगे सीता केरी।
तू प्रलय काल की पापिनी बनी अंधेरी॥
करवाया सब कुछ नाश करी ना देरी।
मेरी बहिन रुढ़ा दिया बेड़ा मेरा तमाम॥
जिस कारण लाया सीता कुछ बना नहीं वो काम ॥३॥
यदि होती कुछ मालूम ये होनी होगी।
तो क्यों बनता मैं हाय इश्क का रोगी॥
क्या हालत मन्दोदरी राणी की होगी।
नहीं मानी सीख तो आज विपत्ति होगी॥
हो गया हाय मैं मुल्कों में बदनाम।
जिस कारण लाया सीता कुछ बना नहीं वह काम ॥ ४ ॥
अमोघ विजय शक्ति भी गई निकल के॥
बहुरूपिणी विद्या भाग गई सिर धुन के।
अब चक्र सुदर्शन भी वश में हो गया उनके॥
फल दीख रहे राणी के सही स्वप्न के।
है पुण्यवान बेशक लक्ष्मण और राम॥
जिस कारण लाया सीता कुछ बना नहीं वह काम ॥५॥

दोहा

रावण ऐसे हो रहा, सोच फिकर में लीन ।
दिवस शशि जैसे हुवा, चेहरा अतिमलीन ॥
दशकन्धर के हो रहा, दिल में दुख अपार ।
लक्ष्मण तब यों भूप से, बोला गिरा उच्चार ॥
लंक पति अब कर रहे, कैसा आप विचार ।
और है शक्ति शेष कुछ, या हो गये लाचार ॥

अमोघ विजय का वार गया, खाली जो दैवी शक्ति थी ।
द्वितीय विद्या काफूर हुई, जिसकी की तुमने भक्ति थी ॥
वज्रा वर्तज के आगे जो, रूप थे वह सब धूल हुवे ।
तेरे ही साधन किये हुए, तेरे ही ना अनुकूल हुए ॥
इन्द्रजीत और कुम्भकरण, सब योद्धे कैद हमारी हैं ।
जो विद्या साधी थी हजार, वह कहां पर गई तुम्हारी हैं ॥
चक्रशुदर्शन अन्तिम शस्त्र, सो ना तेरे पास रहा ।
वह बता कौनसी शक्ति है, बाकी जिसकी कर आस रहा ॥

——— —

राम-रावण

दोहा

प्रियवादी गंभीर नर, औदार चित्त सुख धाम ।
कथन बन्द कर अनुज का, यों बोले श्रीराम ॥

दोहा

अब भी सोच विचार लो, दशकन्धर बलवीर ।
जंग आपका हो चुका, निश्चय आज अखीर ॥

निश्चय आज अखीर रहा ना, तंत जरा कुछ बाकी।
नजर आगई आज युद्ध के, अन्त समय की झांकी॥
वही श्रेष्ठ नर दुनिया में जो, करता बात सुलह की।
कर लो संधी अब भी हम से छोड़ सभी चालाकी॥

दौड़

निहःशंक रणधीर बहादुर, आप संसार की चादर, हमें अब देवो आदर, राजन पति गंभीर, वीर दिल में ना जरा गिला कर।

दोहा

तेज प्रताप प्रचण्ड तव, फैल रहा जंग मांय।
स्याही सीता हरण की, देवो इसे मिटाय॥

तुम सीता को वापिस करदो, फिर भी लाली रह जावेगी।
सब फौज हमारी प्रातःकाल ही, कूच का बिगुल बजावेगी।
यह लंक मुबारिक आप को हो, हम और नहीं कुछ चाहते हैं॥
यदि आज्ञा हो तो शस्त्र छोड़ कर, पास आप के आते हैं।

दोहा

राज खजाने वास्ते, नहीं किया यह जंग।
एक सिया के वास्ते, सो भी होकर तंग॥

सुत बान्धव आपके जितने हैं, स्वतन्त्र सभी को कर देंगे।
जो हानि यहाँ पर हुई सभी, रल-मिलकर दोनों भर लेंगे॥
तुम अपने यहाँ आनन्द करो, हम पुरी अयोध्या जावेंगे।
यदि समय गंवावोगे ऐसा, तो कर मलते रह जावेंगे॥

दोहा

रामचन्द्र के वचन सुन, दिल में उठे तरंग।
अशुभ ध्यान में लीन था, उड़ा जिस्म का रंग॥

मौन चित्र की तरह खड़ा, मुख से ना बोल निकलता है।
और सोच विचार अनेक करी, पर रास्ता कोई ना मिलता है॥
उस समय विभीषण वीर वीर को, आकर यों समझाने लगे।
और देख हाल मोह के वश हो, नयनों से नीर बहाने लगे॥

गाना विभीषण का समझाना

शिक्षा उर धारो अय भाई, तुम्हें अन्त समय समझाता हूं।
मोह के वश होकर आया हूं, कुछ प्रेम के वचन सुनाता हूँ॥ १॥
तैने जोर बहुत सा लाया है, और विद्या बल दिखलाया है।
पर काम कोई ना आया है, मैं दिल में अति घबराता हूं॥ २॥
तेरा चक्र सुदर्शन खाली गया, और पुण्य तेरा रखवाला गया।
शुभ ध्यान बाग का माली गया, अब तेरी खैर मनाता हूं॥ ३॥
तेरे पुत्र भाई बांध लिये, और भूप तेरे सब साध लिये।
श्रीराम के तैं अपराध किये, वह क्षमा सभी करवाता हूं॥ ४॥
यदि भाई तू जीना चाहता है, तो राम शरण क्यों न आता है।
रघुनाथ प्रभु सुख दाता हैं, तुम्हें सन्मार्ग बतलाता हूं॥ ५॥
श्रीमान् वीर ना देर करो, प्रभु रामचन्द्र की शरण परो।
इस देश की विपदा सारी हरो, कर जोड़ के अर्ज सुनाता हूं॥ ६॥
अब जनक सुता को पहुँचावो, रघुनाथ के संग प्रीति लावो।
निर्भय निज राज के सुख पावो, शुभ शुक्ल ध्यान मैं चाहता हूँ॥ ७

दोहा

इतनी सुनकर भूप को, चढ़ा क्रोध विकराल।
तेजी से कहने लगा, भृकुटि मस्त डाल॥

रामचन्द्र क्या चीज है, मूढ़मति अय वीर।
लक्ष्मण जो है कूदता, छिन में डालूं चीर॥

चक्र सुदर्शन गया हाथ से, जो यह है कहना तेरा।
बिगड़ा क्या उसके जाने से, तन का नहीं साहस गया मेरा॥
सब कर दूंगा चूर्ण चूर्ण, जो करूं मुष्टी प्रहार उसे।
इस धमकी के डर से हर्गिज, ना दूंगा सीता नार उसे॥

दोहा

शक्ति इस लंकेश की, जाने सकल जहान।
जीते मैंने समर में, अमित भूप बलवान॥

अमित भूप बलवान नाम, सुन होते पानी पानी।
किया दिग्विजय भुजा मेरी, क्षत्रीपन की काल निशानी॥
रघुवंशिन के बीच सुहागिन, छोड़ूं नहीं क्षत्राणी।
तुझ जैसा ना और कोई है, कायर मूढ़ अज्ञानी॥

दौड़

सहित चक्र लक्ष्मण को, पहुंचाऊंगा परभव को।
राम को वहीं पठाऊं, तेज दिखाकर भुजबल का,
इन सब को स्वाद चखाऊं।

दोहा

जैसी मति वैसी गति, कही श्री जिनराज।
सिर पर धौंसा भूप के, रहा काल का बाज॥
शिक्षा पर शिक्षा सभी, दे देकर गये हार।
लक्ष्मण फिर लंकेश को, बोला गिरा उचार॥

दोहा (लक्ष्मण)

अच्छा तो अब सम्भलकर, हो जाइये होशियार।
यदि शक्ति है आप में, रोक हमारा वार॥

तेरा ही यह चक्र सुदर्शन, तेरी ओर चलाते हैं।
यह वार अन्त का समझ तुम्हें, हम साफ साफ बतलाते हैं॥

पहले प्राण हरूं तेरे, फिर सीता को ले जाऊंगा।
जो करी प्रतिज्ञा आज वही, पूरी करके दिखलाऊंगा॥

दोहा

इतना कहकर अनुज ने, किया भूप पर वार।
दशकन्धर ने चक्र पर, दिया मुष्टी प्रहार॥

किन्तु काल के आगे किसी की; पेश नहीं जा सकती है।
और युक्ति चाहे हजार करो, कोई काम नहीं आ सकती है॥
चक्र सुदर्शन ने रावण का, हृदय कमल विदार दिया।
उस रणभूमि की धूलि में, रावण ने पैर पसार दिया॥
प्रस्थान कर गया परभव को, उस समय जीव दशकन्धर का।
फिर कहो तो क्या बन सकता है, खाली गंदे तन मन्दिर का॥
ज्येष्ठ कृष्ण एकादशी को, पूरे सब श्वासोश्वास हुआ।
दिन के पिछले याम प्राण तज, पंक प्रभा में वास हुआ॥

चौपाई

वर्ष सहस्र पंचदस आयु पाई।
अशुभ कर्म लेश्या दुख पाई॥
दुर्गति दाता नार पराई।
गौरव इज्जत खाक रुलाई॥

—※—

विजय

दोहा

विजय हुई श्री राम की, दशकन्धर दिया मार।
कुसुम वृष्टि कर व्योम से, सुर बोले जयकार॥

अष्टम है ये वासुदेव, प्रतिवासुदेव, जिन मारा है।
वलदेव अष्टमें रामचन्द्र, जिनका अति पुण्य सितारा है॥
धन्य राम जिन महासती, सीता का कष्ट मिटाया है।
और धन्य वीर लक्ष्मण जिसने, भाई का अंग निभाया है॥
धन्य मित्र सुग्रीव मित्र के, लिये सभी कुछ वार दिया।
वह धन्य विभीषण वीर, जिन्होंने सत्यपक्ष स्वीकार किया॥
धन्य अंजनी लाल क्योंकि, इस दल का स्तम्भ यही तो है।
रावण के सम्मुख अड़ा दिये, योद्धे रणधीर वही तो है॥

दोहा

रघुवरदल आनन्द में, राक्षस दल दुख पूर।
भाग रहे भयभीत हो, रावण दल के शूर॥
रावण जब धरती गिरा, सहसा चक्रखाय।
आंखों आगे विभीषण के, गया अन्धेरा छाय॥

वीर विभीषण ने कटार उस, समय कमर से खोल लिया।
अपने हृदय में मारन को, दक्षिण मुष्टी में तोल लिया॥
फिर सर्द श्वास भरकर दोनों, नेत्रों से नीर वहाने लगे।
इन कर्मों की है विचित्र गति, यह कहकर गीत सुनाने लगे।

गाना विभीषण का विलाप

आज हृदय की तप्त हाय, मैं बुझाऊं किस तरह।
हो गया मुझ से जुदा, यह वीर पाऊं किस तरह॥१॥
जिसकी शक्ति से धरणी क्या, कांपता था आसमान।
शेरे बबर था वीर मेरा, अब उठाऊं किस तरह॥२॥
युक्ति लाखों ही चलाईं, जिस तरह भाई बचे।
पर निकाचित कर्म, रेखा को, मिटाऊं किस तरह॥३॥

हो गया संसार सूना, एक रावण के बिना ।
आज पतझड़ बाग की, रौनक बढ़ाऊं किस तरह ॥४॥
भाई के प्रतिकूल हो, सम्मुख समर में डट गया ।
'शुक्ल' दुनियां में ये अपना, मुख दिखाऊँ किस तरह ॥५॥

शेर

महाबली योद्धा अतुल, यह आज रण में मर गया ।
मरना है तुझको एक दिन, मुझ को वह शिक्षा कर गया ॥
संसार में सब कुछ मिले, पर भाई मिल सकता नहीं ।
वह कौन सृष्टि में जिसे, अन्तक निगल सकता नहीं ॥
फिर किस लिये आश्चर्य कर, करके मैं अपने कर मलूं ।
हृदय कटारा मार के, भाई के क्यों न संग मरूँ ॥
बस आज ये हृदय और, यही कटारा है ।
चक्र लगा भाई के तो, यह मेरे पार है ॥

दोहा

देख विभीषण की दशा, शीघ्र उठे रघुनाथ ।
धैर्य यों देने लगे, पकड़ मित्र का हाथ ॥
बुद्धियान् हो मित्र तुम, क्यों बनते अनजान ।
हम तुम सबका एक दिन, बने हाल यही आन ॥

जो होना था सो हो ही चुका, अब रोने से क्या बनता है ।
और अशुभ ध्यान करने से, आत्मा कर्मों से ही सनता है ।
महाबली योद्धे मित्र सब, रण भूमि में मरते हैं ।
वह अपना आप मिटा देते, नहीं पांव पिछाड़ी धरते हैं ॥
जो खिला बाग में फूल हमेशा, खिला नहीं रह सकता है ।
इस जन्ममरण संसार में, किस को कौन अमर कर सकता है ॥

चक्रवर्ती भी दुनिया में, लद गये और लद जायेंगे।
ना गई मेदिनी साथ किसी के, सब यहां ही तज जायेंगे॥
बस इतना ही संयोग मित्र था, साथ तुम्हारे रावण का।
जो गया काल के गाल में, फिर वह मुड़ करके नहीं आवन का
बिना आपके और कौन, इन सबको धीर बंधायेगा।
जब आपकी ऐसी हालत है, क्यों न सब दल घबरायेगा॥
अब इस कटार को म्यान करो, तुम बुद्धिमान् और स्याने हो।
सब बातों में चतुर आप, सारे संसार में माने हो॥

दोहा

जरा मोह उपशान्त कर, किया कटारा म्यान।
धीर बंधाने को किया, राक्षस दल पर ध्यान॥
राक्षस दल के शूरमा, मुख्य-मुख्य बलवान्।
वीर विभीषण सभी को, बोला ऐसे आन॥

दोहा (विभीषण)

अय योद्धो अब किस लिये, होते हो भयभीत।
राम-लखन शत्रु नहीं, सब जन के हैं मीत॥

जो होना था सो हो ही चुका, अपना भय दूर निवारो तुम।
श्री रामचन्द्र के चरणों में, निज शीश आन के डारो तुम॥
औदारचित्त ये महापुरुष, शत्रु पर कृपा करते है।
फिर हम तुम तो सेवक इनके, किस लिये आप यों डरते हैं॥
कोई राजपाट धन-दौलत की, इनको कुछ भी नहीं इच्छा है।
शत्रु जन के भी हितकारी, होती शुभ इनकी शिक्षा है॥
जिस कारण जंग हुआ भारी, वह छिपी हुई कोई बात नहीं।
यदि सीता वापिस करते तो, होती यह इतनी बात नहीं॥

दोहा

सब योद्धों को इस तरह, दे उपदेश विशाल।
भ्रम भूत उन सभी के, मन से दिये निकाल ॥

विश्वास विभीषण ने देकर, योद्धों को धीर बंधाई है।
फिर देख भ्रात की लाश विभीषण, की तबियत घबराई है ॥
औदारचित्त ने राक्षस दल को, प्रेम भाव दर्शाया है।
सब तरह उन्हें आश्रय देकर, श्रीराम ने गले लगाया है ॥

दोहा

दशकन्धर के मरण की, खबर गई झट फैल।
पटरानी मंदोदरी बैठी थी, निज महल ॥

जब लगा पता पटरानी के, हृदय पर वज्रपात हुआ।
खो बैठी सारी सुध-बुध को, पत्थर मूरत सम हाल हुआ ॥
संग में सभी राणियों को ले, रणभूमि में आई है।
समवेदना लंक वासियों में, जनता दुःख बीच समाई है ॥
महाराणी का संताप देख, सारे दल को संताप हुआ।
राणी का दुख अपार देख, श्रीराम को पश्चात्ताप हुआ ॥
उस समय राम अपने मन में, ऐसे कर स्वच्छ विचार रहे
और देख-देख दुख राणी का, अपना सिर भी कुछ मार रहे

गाना श्रीराम का विचारना

आज इनकी दुर्दशा मैं, देखता हूं कि किस तरह।
जैसे पत्थर दिल नहीं, आंसू बहाता इस तरह ॥१॥
कर्मों के आगे कहो यहां, पेश किसकी जा सके।
अरिहन्त से भी ना टले, मैं तो हटाऊं किस तरह ॥२॥

श्रेष्ठाचारिणि पतिव्रता, मन्दोदरी राणी सती।
लाल जिसके कैद में, रावण मरा यहां इस तरह ॥३॥
छोड़ दूं यदि लाल इसके, शान्ति कुछ दिल को मिले।
इस पतिव्रता के अब आंसू, बुझाऊं इस तरह ॥४॥
जीता न समझा भूप तो, मृतक का बन सकता है क्या।
ला चुका ये तो "शुक्ल" परभव में जाकर विस्तरे ॥५॥

दोहा

करुणा सागर के उठी, ऐसी दिली तरंग।
स्वतंत्र बस कर दिये, सब सूरे एक संग॥

कुम्भकर्ण और इन्द्रजीत शूरे, सब मेघवाहन आदि।
आंखों से नीर बहाते हैं, सब देख झुरें निज बरबादी॥
सब गोल इकट्ठा हुआ आन, जहाँ लाश पड़ी दशकन्धर की।
वहाँ सभी राणियां आ पहुँची, हालत खराब मन्दोदरी की॥

दोहा

देख पति की लाश को, व्याकुल हुई अपार।
मोह के वश मन्दोदरी, बोली गिरा उचार॥
हा प्रीतम हा प्राणपति, हा स्वामी सुखदान।
चले कहाँ अब छोड़ कर, हमको जीवन प्राण॥

गाना (व० त०) रानी मन्दोदरी का विलाप

आज हालत ये आपकी कैसे हुई।
देखी जाती नहीं प्राणप्यारे पिया।
तुमने माना किसी का भी कहना नहीं।
आज गायब हुए हो सितारे पिया ॥१॥
एक नारी के पीछे दई जान खो।
गये परभव को करके किनारे पिया।

आज स्वतन्त्र सारा जगत् हो गया ।
सुन के मरना तुम्हारा हजारे पिया ॥२॥
अपनी शक्ति से तुम थे त्रिखंडी बने ।
आज सोये क्यों पांव पसारे पिया ।
तुम बिना अब मैं किसका सहारा लेऊँ ।
जाते लंका को आज बिसारे पिया ॥३॥
मेरे खोटे कर्म दोष किसको देऊँ ।
तुम थे सुख दुःख के पूछन हारे पिया ।
आज पापिन ये धरणी भी फटती नहीं ।
जिसमें छिप जांय सब तन हमारे पिया ॥४॥
रोवें भाई खड़े आपके सामने ।
जरा इनको तसल्ली बंधादो पिया ।
पाला पुत्रों को तुमने था जिस प्रेम से ।
इनको वैसे ही हृदय लगावो पिया ॥५॥
हाय स्वप्न मेरा सब सत्य ही हो गया ।
ना हटे मैंने हरबार वारे पिया ।
यदि मरते "शुक्ल" नेक कर्त्तव्य लिये ।
पाते दुनियां में यश तुम सारे पिया ॥६॥

दोहा

कुंभकर्ण आदि सभी, सुत राणी परिवार ।
और सभी नर नारियाँ, रोवें जारो जार ॥
दशरथ नन्दन फिर उठे, समझाने को आप ।
लगे कहन मधु वचन यों, मेटन को संताप ॥
वीर विभीषण मित्रवर, मोह अब दूर निवार ।
तेरे पीछे रो रहे, सब जन और परिवार ॥

राम—स्याने होकर के ऐसे अयाने वनें,
किया जाता है जिसका जिकर ही नहीं।
बिलबिलाने से वापिस ये आता नहीं,
लाते दिल में जरा भी सवर ही नहीं ॥१॥
जन्म लेकर हमेशा जो जिन्दा रहे,
ऐसा दुनियाँ में कोई वशर ही नहीं।
एक दिन रास्ता सबने इसी चलना है,
सिवा सिद्धों के कोई अमर ही नहीं ॥२॥

विभीषण—प्रभु हम सब को ऐसा ही मालूम है,
पर करें क्या ये मोह दिल से जाता नहीं।
जिसकी रक्षा लिए इतनी मेहनत करी,
सोही भाई नजर आज आता नहीं ॥१॥
यदि मरता ये ऐसे धर्म के लिये,
तो मैं फूला वदन में समाता नहीं।
वन के इतिहास मरना बुरे काम का।
यह महा दुःख दिल में समाता नहीं ॥२॥

दोहा (राम)

विलकुल कहना ठीक पर, वन सकता क्या वीर।
संस्कार मृतक सभी, करना पड़े आखीर ॥

आगे पीछे अहो मित्र ये, काम तुम्हीं ने करना है,
अब तो रावण की जगह देश, को तेरा ही एक शरणा है।
सामग्री सभी मंगाकर के, चन्दन की चिता चिना देवो,
जैसी भी रीति तुम्हारी है, वैसा ही शीघ्र वना देवो।

दोहा

सामग्री सब लंक से, लई तुरन्त मंगवाय,
धूम धाम से भूप की, अर्थी लई उठाय।

उस समय दृश्य वहां जैसा था, लिखने में नहीं आ सकता है।
थी भीड़ कई अक्षौहिणी की, अनुमान किया जा सकता है॥
गन्धर्व मंडली कई और, बाजों की ध्वनि निराली है।
श्रीराम उस समय संग ही थे, जब चला लंक का माली है॥
ले चले जिस समय अर्थी को, तब जमागोल अति भारा था।
उस समय एक वैराग्य भाव मे, ऐसा गायन उचारा था॥

सबका गाना

बताया प्रभु ने जगत् मुसाफिर खाना।
जो आया सो रहा न कोई, सदा न यहां ठिकाना॥ टेर॥
अवतार सारे गये, चक्री सिर मार गये,
वासुदेव गये, प्रति वासुदेव हार गये।
बलदेव गये, कामदेव अवतार गये,
केवल ज्ञानी गये महा लब्धि के धार गये।
बाहुबली गणधर आदि भव पार गये,
छत्रपति राणा योद्धा पृथ्वी के शृङ्गार गये।
ऋद्धि सिद्धि पुण्यवान् वैभव विसार गये,
संख्याते असंख्याते यहाँ, गिनती क्या दो चार गये।
वह सब ही हुये रवाना॥ १॥
गये सब राजा और सारे ही, अमीर गये,
ऋद्धिशाली गये, रंक राव क्या फकीर गये।
गये सब बादशाह, और सारे ही वजीर गये,
गये सब बली, निर्बल बलवीर गये।

ज्ञानी गये ध्यानी गये, मानी दानवीर गये,
बुद्धिमान् गये आगम पाठी पूर्वधार गये।
वादी दुर्वादी सब, मूर्ख और गंवार गये,
रोगी क्या नीरोगी भोगी भँवरे साहूकार गये।
मिला अन्त कफन का बाना॥ २॥
चौंसठ कला सारी, बहत्तर कलावान गये,
छोटे छोटे गये, और महान् से महान् गये।
बूढ़े बेशुम्मार गये, लाखों ही जवान गये,
गये जमींदार छोड़, खेतों को किसान गये।
ठेकेदार गये सभी बड़े बड़े सेठ गये,
खुमचे विक्रैये गये व्यापारी महान् गये।
काल ने तमाचे मारे, सभी चित्त लेट गये,
शुभ कर्मी ऊंचे गये पापी नर्क हेठ गये।
रह गया पड़ा खजाना॥ ३॥

दोहा

संस्कार मृतक किया, धूम-धाम के साथ।
निवृत्त हुये स्नान कर, गई बहुत जब रात॥
प्रातःकाल श्रीराम ने, सबको लिया बुलाय।
औदारचित्त फिर प्रेम से, यों बोले समझाय॥
सदा एक सा ना रहे, आयु साज समाज।
मिलजुल अब सब प्रेम से, करो लंक का राज॥
काल अनादि से यही, दुनिया का व्यवहार।
तुम सब को अब चाहिए, करना सोच-विचार॥

वीरगति को प्राप्त दशानन, परभव को है सिधार गया।
सब राजपाट का भार समझ कर, योग्य तुम्हीं पर डार गया॥

अब यही हमारा कहना है, मिल-जुल कर अपना काम करो।
और दशकन्धर की तरह आप, प्रसिद्ध लंक का नाम करो॥

दोहा

सुने वचन श्रीराम के, खुशी सभी नरनार,
कुम्भकर्ण फिर उस समय, बोले गिरा उचार।

वैराग्य

दोहा (भानुकर्ण)

राजपाट की अब नहीं, इच्छा है सुखधाम।
दुनियां में दुखपूर है, तनिक नहीं आराम॥

मेरा-मेरा करता ही प्राणी, एक दिन मर जाता है।
मित्र प्यारे क्या राजकोप, सब कुछ यहां ही धर जाता है॥
जैसा करता कर्म कोई, वैसा ही संग ले जाता है।
कुछ पूर्व पुण्य यहां भोग, और यहां का आगे जा पाता है॥
जो खिले फूल हैं बागों में, आगे-पीछे मुरझायेंगे।
ये ही स्वभाव ससार का है, कोई जाते हैं कोई आयेंगे॥
संयोग मूल दुःख जीवों का, सर्वज्ञ देव बतलाया है।
कर्मों के संग हो मूढ़ जीव ने, अपना आप गंवाया है॥
यदि दुनिया में कोई सुख होता, तीर्थंकर क्यों तजते इसको।
बिन त्यागे संसार मोक्ष का, राज कहो मिलता किस को॥
शुभ बुद्धि सदा आत्मा को, ठोकर खाने से आती है।
यदि संभल गया तो उच्चगति, वरना दुर्गति मिल जाती है।

गाना भानुकर्ण जी की वैराग्य भावना

मिले जिस वार भी मौका, निकल जाय तो अच्छा है।
फिसलता यदि कोई प्राणी, संभल जाये तो अच्छा है ॥१॥
जमाना छानकर देखा, कहीं भी सुख नहीं देखा।
इसलिये मोक्ष पथ पर जीव, लग जाये तो अच्छा है ॥२॥
विना कारण कभी दुनिया से, घृणा हो नहीं सकती।
श्री सर्वज्ञ की वाणी समझ, जाये तो अच्छा है ॥३॥
अनन्तीवार सब पुद्गल, खा-खा करके उगला है।
नहीं सन्तोष आया किन्तु, आ जाये तो अच्छा है ॥४॥
यह फिरता नरक गति नरगत, पशुगति और सुरगति में।
प्रभु फेरा अनादि का यह, टल जाये तो अच्छा है ॥५॥
चढ़ गया रंग असली अब ये, फीका हो नहीं सकता।
ध्यान आया "शुक्ल" अब. सिद्ध बन जाये तो अच्छा है ॥६॥

दोहा (श्री राम)

संयम से बढ़कर नहीं, दुनियाँ में कोई चीज।
रागद्वेष का इस विना, नष्ट न होता बीज ॥

इस श्रेष्ठ काम की तो सबसे, पहले हम आज्ञा देवेंगे।
और कर्म अरि को काट आप, निश्चय आनन्द पद लेवेंगे ॥
धन्य मात और तात आप यह, कुल जिसमें तुम जाये हो।
वैराग्य भाव में रंगे हुए, संयम मार्ग चित्त लाये हो ॥

दोहा

इन्द्रजीत को भी चढ़ा, यही मजीठी रंग।
मेघवाहन को लग रहा, यह संसार भुजंग ॥

विरक्त हुआ दिल मन्दोदरी का, कई राणियां साथ हुई।
या यों कहियें इनके दिल में, समज्ञान की आ प्रभात हुई ॥

राजपाट समृद्धि की जिनके, हृदय में प्यास नहीं।
उनको दुनियां में क्षण मात्र भी, अच्छा लगता वास नहीं॥

दोहा

कुसुमोद्यान में थे मुनि, अप्रमेय बल नाम।
चार ज्ञान थे प्रथम ही, आत्म गुण के धाम॥

था उसी रात में महा मुनि ने, ब्रह्म-ज्ञान का पास किया।
घनघाती चारों कर्मों का, तप जप संयम से नाश किया॥
कुम्भकर्ण आदिक सबने, जा चरणों में शीश नवाया है।
केवल ज्ञानी सुख दानी ने, ऐसे उपदेश सुनाया है॥

दोहा

इस संसार असार में, दुःख संयोग वियोग।
सुनो भव्य जन कान धर, जरा लगाकर योग॥

जब मिले मनोगम चीज जीव, तन-मन से खुश हो जाता है।
यदि मिले इसे प्रतिकूल वस्तु तो, देख देख मुरझाता है॥
यह संसार असार सार, इसमें न किसी ने पाया है।
जिसने इससे मन मोड़ लिया, वह मुक्ति धाम सिधाया है॥
उपदेश सार गर्भित ऐसे, अप्रमेय बल मुनि फरमाते हैं।
जिसको सुनकर ज्ञानीजन के, मुरझे दिल भी खिल जाते हैं॥
फिर इन्द्रजीत ने सर्वज्ञ के, चरणों में मस्तक डारा है।
और हाथ जोड़ बड़ी नम्रता से, ऐसे वचन उचारा है॥

दोहा

जग चक्षु सर्वज्ञ प्रभु, दीन बन्धु हित कार।
पूर्व जन्म का हाल कुछ, भाषो जगदाधार॥

दोहा (मुनि)

पूर्व जन्म का हाल कुछ, सुनो लगाकर कान ।
सर्वज्ञ देव करने लगे, ऐसे प्रकट व्याख्यान ॥

चौपाई

इस ही भरत क्षेत्र के मांहीं, कौसुम्भी नगरी सुख दाई ।
प्रथम पश्चिम नाम तुम्हारा, शुभ संगति से पाप निवारा ॥
भगदत्त मुनि पास व्रत धारा, शांत कषाय पाप विष टारा ।
विचरत फेर कौसुम्भी आये, उपवन में निज आसन लाये ॥
ऋतु वसन्त खिली फुलवारी, ठंडी पवन चले सुखकारी ।
नन्दी घोष राजा वहाँ आया, संग महाराणी अधिक सुहाया ।
पश्चिम मुनि को इच्छा जागी, राजकुमार बनूं लव लागी ।
मनुष्य जन्म का बन्ध लगाया, इक दिन काल मुनि का आया ॥

दोहा

इन्दुमालिनी राणी के, जन्म लिया उस धार ।
रति वर्धन शुभ नाम है, पुण्यवान सुकुमार ॥

प्रथम मुनि जप तप करके, जा स्वर्ग पांचवें वास किया ।
यहाँ विषय विकारों ने, रतिवर्धन को अपना दास किया ॥
अवधि ज्ञान से देख प्रथम, सुर ने आकर समझाया है ।
पूर्व भव का हाल देव ने, प्रेम से सभी बताया है ॥
जब हुई प्रेरणा भाई की तो, जाति स्मरण ज्ञान हुआ ।
और नाशवान दुनिया को तजकर, तप संयम में ध्यान हुआ ॥
ब्रह्मलोक पहुँचा जाकर, सुर का तन वैक्रिय धार लिया ।
पूर्व भव का जो था निदान, कुछ उसके फल को टार दिया ॥

दोहा

इन्दुमालिनी आकर हुई, मन्दोदरी यहाँ नार ।
स्वर्ग छोड़ तुमने लिया, जन्म इसी के धार ॥
सुने वचन सर्वज्ञ के, पुण्य उदय हुआ आन ।
यह संसार लगने लगा, महा दुःखों की खान ॥

ईशान कोण की तरफ बढ़े, आभूषण वस्त्र उतार दिये ।
केशों का अपने हाथ से लुंचन, करके सभी उतार दिये ॥
मुख वस्त्रिका में डोरा डाल कर, मुख पर उसे सजाई है ।
और रजोहरण लिया बगल बीच, कर में झोली लटकाई है ॥
दीक्षा उत्सव करवा करके, श्रीराम ने शीश झुकाया है ।
फिर देव रमण में जाने को, झटपट विमान सजाया है ॥
सब योद्धों के साथ राम, सीता के पास सिधाये हैं ।
उस तरफ कमलिनीवत् सीता ने, अपने नेत्र खिलाये हैं ॥

सियाराम

दोहा

आगमन सुन राम का, सीता मन रही फूल ।
सुख में लीन होकर सती, गाने में रही भूल ॥

सीताजी का गाना

पिया के दुःख ने मुझे, दुखिया बना रक्खा है ।
उनसे मिलने के लिये, मन स्रोत बहा रक्खा है ॥ १ ॥
भूल सकती मैं नहीं, तेरी भोली सूरत ।
मैंने तो तुमको ही सुरधाम बना रक्खा है ॥ २ ॥

प्रेम के रंग में रंगी, तुमने ऐसी अद्भुत।
प्रेम के तन्तुने इक तार, बना रक्खा है॥ ३ ॥
तेरे स्वागत के लिये, मन रोज सफर करता है।
और आँखों का फर्श, रास्ते में बिछा रक्खा है॥४॥
मन के मन्दिर में तेरी, करती हूँ आरति हर दम।
तुमने तो बदले में दिल, वज्र बना रक्खा है॥५॥

दोहा

ऐसे बैठी गा रही, मन में अति उल्लास।
बार-बार देखन लिये, दृष्टि करे विकाश॥

उधर विमान सरसर करते, देव रमण में आये हैं।
उनारे पास ही सिया जी के, जयकार के नाद सुनाये हैं॥
देख राम को जनक सुता, नेत्रों से जल भर लाई है।
और इधर राम क्या जनता ने, आंसुओं की झड़ी लगाई है॥

दोहा

रामचन्द्र ने सिया को, लीना गले लगाय।
बाकी सब उस सती को, मस्तक रहे झुकाय॥

चन्द्र प्रकाशी फूल शशि को, देख तुरन्त खिल जाता है।
या प्रातःकाल ही चकवी को, जैसे चकवा मिल जाता है॥
ज्यों सूर्य प्रकाशी देख रवि को, फूला नहीं समाता है।
वह प्रेम दम्पतिका ऐसा, रसना से कहा नहीं जाता है॥

दोहा

दुर्बल तन ऐसे हुआ जैसे द्वितीया चन्द्र।
द्वेष नही है किसी पर, इसका रण सानन्द॥

भुवनालंकृत हस्ति पर, जगदम्बा को बैठाया है।
और सिंहासन पर बैठ अगाड़ी, राम अति शोभाया है।

श्रीराम सिया के जयकारों से, देव रमण गुंजाया है ॥
है महासती ये व्योम बीच, देवों ने शब्द सुनाया है।

दोहा

लंका नगरी की यहां, शोभा कही न जाय।
प्रवेश समय चारों तरफ, ऐसी दई मजाय ॥
लंका में प्रवेश सब, लगे करन जिस वार।
ऐसे फिर गाने लगे, प्रेमभाव अनुसार ॥

सब का मिलकर मुबारकबाद देना —

गाना (तर्ज पंजाबी)

मिलकर के सब प्राणी तारीफ है गानी।
रामचन्द्र का आना भला ॥टेक॥

चल दुनिया दर्श को आई है, सब ओर से मिले बधाई है।
ध्वनि वाजिन्त्रों की छाई है, वर्षा स्वागत में आई है ॥
हां वारी बलिहारी सुखकारी, मिल कर के सब प्राणी ॥१॥

लंका में अति आनन्द छाया, श्रीराम ने दर्शन दिखलाया ॥
निज-निज घर में मंगल गाया, याचक गण मन में हर्षाया।
॥हां वारी बलिहारी ॥२॥

प्रभु दान का मेह वर्षाया है, कंगलों को धनी बनाया है।
कैदी समूह छुड़वाया है, आनन्द का बादल छाया है ॥
॥हां वारी बलिहारी ॥३॥

कृपा हम पर महाराज करो, लंका का सिर पर ताज धरो।
सब जनता का संताप हरो, हमरे सिर अपना हाथ धरो ॥
॥ हां वारी बलि० ॥४॥

हम लक्ष्मण को प्रणाम करें, सच्चे भाई वन काम करें।
सेवा हम आठों याम करें, निज आत्मा का कल्याण करें ॥
॥ हां वारी वलि० ॥५॥
हर वार मुवारिक देते हैं, सब शरणा तेरा लेते हैं।
देवो कृपा दान ये कहते हैं, शुभ "शुक्ल" ध्यान में रहते हैं ॥
॥ हां वारी वलि० ॥६॥

दोहा

जा पहुंचे दरवार में, धूम धाम के साथ।
मिले परस्पर प्रेम से, मिला मिला कर हाथ ॥

श्रीराम से वीर विभीषण ने, फिर वाणी नम्र उचारी है।
राज करो प्रभु लंका का, इच्छा वस यही हमारी है ॥
यहाँ राजे सभी विराजमान, और सभी आपको चाहते हैं
अभिषेक राज का करने की सव, सामग्री मंगवाते हैं ॥

जन समूह कहने लगा, ठीक ठीक सव ठीक।
सामग्री कहाँ दूर है, सव कुछ यहीं समीप ॥
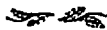
विभीषण राजताज

दोहा (कवि)

महापुरुष करते सदा, निज गौरव का ध्यान।
समविभागी नित्य समझते, परहित में कल्याण ॥

वाकी सेवा स्वीकार किन्तु, ऐसी हां कब भर सकते थे।
दे चुके वचन जिसको जैसा, उससे कैसे फिर सकते थे ॥
हँसकर वोले यों श्रीराम, मित्र क्यों हमें लजाते हो।
आ वैठो आप सिंहासन पर, मस्तक पर तिलक सजाते हैं ॥

दोहा

उसी समय श्रीराम ने, पकड़ मित्र का हाथ ।
उदार चित्त कहने लगे, बड़े प्रेम के साथ ॥

अय मित्र हमारी खातिर तूने, सब कुछ अर्पण कर डारा ।
फिर राजताज क्या चीज भला, तैंने या मैंने सिर धारा ॥
दे चुके वचन अय वीर तुम्हें, सो पूरा आज निभायेंगे ।
और ताज लंक का तेरे मस्तक, ऊपर आज सजायेंगे ॥

दोहा

उसी समय श्रीराम ने, किया यही आदेश ।
उत्सव का करदो अभी, वंक्रिय और विशेष ॥
योग्य समय शुभ नियत कर, उत्सव किया अपार ।
तिलक किया जब राम ने, होने लगे जयकार ॥

फिर ताज राम ने मित्र के, मस्तक पर आप सजाया है ।
उस समय सभी ने मिलकर के, जय खुशी का नाद बजाया है ॥
कहीं गायन मुबारिक, वादी के नर नारी खूब सुनाते हैं ।
अपराधी सब स्वतन्त्र किये, सो भी मिल खुशी मनाते हैं ॥

दोहा

विदा होन की राम ने, फेर चलाई बात ।
रघुपति से मित्र लगा, कहन जोड़कर हाथ ॥
लीक अरिसे की तरह, किया आपने प्रेम ।
आप बिना हम इस तरह, ग्रीष्म में जिम हेम ॥
सर्दी बिन महाराज बर्फ के, पर्वत भी ढल जाते हैं ।
स्वामी का फिरता हाथ नहीं, वो पान सभी गल जाते हैं ॥

कृपा आपकी से ही हमको, स्वामी है आनन्द अमन।
यह नम्र निवेदन चरणों में, इतनी जल्दी ना करें गमन ॥

दोहा

विनती मित्र विभीषण की, लई राम ने मान।
सुन करके इस बात को, जनता खुशी महान् ॥
सिंहोदर आदि राजे, निज सुता वहीं ले आये हैं।
और उसी जगह सबके लक्ष्मण संग, पाणि ग्रहण करवाये हैं ॥
श्रीराम लखन सीता को सब, लंका की सैर कराते हैं।
अब नित्य प्रति उसका स्वास्थ्य, और प्रमोद अधिक बढ़ाते हैं ॥

—***—

नारद

दोहा

इधर खुशी से लंक में, किया राम ने वास।
मातायें सब अवध में, होने लगी उदास ॥

पुण्य योग से नारद जी, वहाँ फिरते २ आये हैं।
छा रही उदासी रणवासों में, देख मुनि घबराये हैं ॥
भाव भक्ति की नारद की, सिंहासन पर बिठलाया है।
अब रंग ढंग सब देख मुनि ने, ऐसे वचन सुनाया है ॥

दोहा (नारद)

आज कहो तुम किस लिये, आंसू रही बहाय।
कारण आर्तध्यान का, देवो हमें बताय ॥

दोहा (कौश०)

दुख मोचन मुनि गम यही, घर ना आये लाल।
आती हैं चाहे खबर पर, मिलने का अति ख्याल ॥

पुत्रों का मुख देखने को, दिल मेरा बड़ा तरसता है ।
इस कारण से हे महामुनि, नयनों से नीर बरसता है ॥
तभी शान्ति मिले हमें, जब राज कुंवर यहां आयेंगे ।
नहीं तो ये प्राण तरसते ही, परभव को शीघ्र सिधायेंगे ॥
किस हालत में है वैदेही, कब उसके दर्शन पाऊंगी ।
वह धन्य दिवस होगा जिस दिन, सीता को गले लगाऊंगी ॥
इस कारण सोच समुद्र में, नित्य प्रति मैं गोते खाती हूँ ।
सुत वधु देखने की आशा में, समय लंघाय जाती हूं ॥

दोहा (नारद)

अय राणी पुत्रवधु, हैं तेरे सानन्द ।
दशकन्धर का अन्त कर, बने सुरेन्द्र मानिन्द ॥

यदि तुझे विश्वास नहीं तो, स्वयं वहाँ मैं जाता हूँ ।
जहाँ तक होगा सुतवधू तेरे, मैं जल्द बुलाकर लाता हूँ ॥
श्रीरामचन्द्र से मिलने को, यह दिल मेरा भी करता है ।
अब तो लङ्का में गये बिना, नारद को भी नहीं सरता है ॥

दोहा

इतना कह करके मुनि, गये उडारी मार ।
जा पहुँचे लङ्कापुरी, जहाँ मुख्य दरबार ॥
इधर राम से मिलन को, भरत है अतिंचिन्त ।
यों विचार थे कर रहे, बैठे आप एकान्त ॥

गाना (भरत)

गिन गिन के दिन गुजारे नहीं रामचन्द्र आये ।
रघुवर ने हमको दर्शन, अब तक नहीं दिखाये ॥१॥
चौदह वर्ष हुवे पूरे, और दिन भी आज का है ।
आने की खबर उनकी, नहीं भृत्यगण भी लाये ॥२॥

माता बड़ी कौशल्या, रोती है नित महल में ।
यह वीर की जुदाई, मुझ से सही न जाये ॥३॥
कहदे मुझे कोई आकर, वह राम आ रहे हैं ।
खुश हाल उसको कर दूं, यों "शुक्ल" मन में आये ॥४॥

दोहा

देख मुनि को लङ्क में, खुशी सभी नर नार ।
सिंहासन देकर किया, नारद का सत्कार ॥

नारद का स्वागत किया सभी ने, राम लखन हर्षाये हैं ।
और जनक सुता को भी रघुपति ने, मुनि के दर्श कराये हैं ॥
अन्न पान करवा करके, सिंहासन पर बैठाये हैं ।
तब रामचन्द्र को नारद मुनि, ने ऐसे वचन सुनाये हैं ॥

दोहा (नारद)

माताओं की ओर भी, करना चाहिये ख्याल ।
आप यहाँ आनन्द में, उनका हाल बेहाल ॥

विरह पुत्र का माताओं से, हरगिज सहा न जाता है ।
वो धन्य पुत्र जो मात तात का, हृदय कमल खिलाता है ॥
मोह के वश होकर आर्त्त ध्यान में, सारा समय बिताया है ।
द्वितीया का चन्द्रमा जैसे, ऐसे तन सभी सुकाया है ॥
प्रथम सवा नौ मास उदर में, माता पुत्र को रखती है ।
फिर बाल अवस्था की सेवा, करती करती नहीं थकती है ॥
अब आपने और विलम्ब किया, तो निश्चय प्राण गवावेंगी ।
फिर यहां रहें चाहे वहां जांय, माता न जीती पावेंगी ॥

दोहा

नारद के ऐसे सुने, रामचन्द्र ने वैन ।
बुला विभीषण को प्रभु, लगे इस तरह कहन ॥

दोहा (राम)

मित्र विभीषण अब हमें, देवें आज्ञा आप।
पुत्र विरह का हो रहा, माताओं को संताप ॥

उपकार किये जो जो तुमने, हम बदला नहीं दे सकते हैं।
प्रसन्न रहो आनन्द रहो, आशीश यही कह सकते हैं ॥
अब तो माताओं के चरणों की, रज मस्तक पर लावेंगे।
और पुत्र विरहिणी दुखियाओं के, हृदय सर्द बनावेंगे ॥

दोहा (विभीषण)

रामचन्द्र के सुन वचन, गीले करके नैन।
वीर विभीषण प्रेम से, लगे इस तरह कहन ॥

हे नाथ अवश्य सब माताओं का, हृदय शान्त करना चाहिये।
पर एक हमारी विनती पर भी, ध्यान जरा धरना चाहिये ॥
कुल सोलह दिन तक और यहाँ, रहकर पावन स्थान करो।
बस यही कृपा कर आज हमारे, ऊपर करुणा दान करो ॥
मैं अवधपुरी में लंका के, कुछ शिल्पकार भिजवाता हूँ।
मानिन्द लङ्क के अवधपुरी, पन्द्रह दिन में बनवाता हूँ ॥
फिर बैठ के पुष्प विमान में, आप वहाँ जाते शोभायेंगे।
और पीछे पीछे चरणों के सेवक, भी सारे जायेंगे ॥

दोहा

लङ्कपति की बात ये, लई राम ने मान।
नारद जी ने सब पता, दिया अयोध्या आन ॥

लङ्का के मानिन्द अवधपुरी, पन्द्रह दिन में बनवाई है।
श्री रामचन्द्र के आने से, पहले पहले सजवाई है ॥

इस तरफ राम ने भी अपना, पुष्पक विमान सजाया है।
बहु जनसमूह श्री रामचन्द्र संग, अवधपुरी में आया है॥

दोहा

स्वागत करने को गया, जनसमूह हर्षाय।
आ रहे राम यह खबर सुन फूला नहीं समाय॥

— —

अयोध्या

समस्त प्रजा का आनन्द मनाना

रामचन्द्र के दर्शन करने, चले अवध के नरनारी।
कूचे गलियों बाजारों में, नवल सजाई फुलवारी॥टेक॥

बजे नफीरी अति सुरीली, खड़काये फिर नक्कारा।
कोई बजावे सितार व ढोलक, किसी पै खंजरी इखतारा॥
गंधर्व गावें टोडी भैरों राग है धुरपत झपतारी॥१॥
रावण मारा लङ्का जीती, मित्र को फिर राज दिया।
तख्त नशीन विभीषण करके, लङ्का का सिर ताज दिया॥
सब दुष्टों को रण में मारा, देव हुए आज्ञाकारी॥३॥
आगे आगे भरत जारहे, फूल माला लटकें कर में।
सूर्यवंशी झण्डा लहरा, लपट भरी गुल केसर में॥
"शुक्ल" ध्यान कर देखो, आरही रामचन्द्र की असवारी॥४॥

दोहा

जय जय नाद करते हुए, आ पहुंचे विमान।
वर्णन नहीं कुछ कर सके, समझो छटा महान॥

उतारा पुष्पक विमान को, झट बढ़े भरत महाराय।
रामचन्द्र ने भरत को, हृदय लिया लगाय ॥

उस समय जो आनन्द छाया था, यहां कहने में नहीं आया है।
सानन्द पहुंच कर महलों में, माता को शीश निवाया है॥
अद्भुत छटा देख माताओं का, हृदय कमल प्रकाश हुआ।
मानिन्द स्वर्ग के अवधपुरी में, दृश्य एक यह खास हुआ॥
जनक सुता ने कौशल्या के, चरणों में सिर डार दिया।
निज गले लगा वैदेही को, सासु ने अतितर प्यार किया॥
कभी पुत्रों का शीश चूम रही, कभी आगे पीछे फिरती है।
कभी कौशल्या पै प्रेम भाव से, बूंद हर्ष की गिरती है॥
मिलजुल करके सब माताएँ, लक्ष्मण का घाव निहार रही।
दुख-सुख की बातें पूछ-पूछ, तन मन धन सब कुछ वार रही।
बाजार गली कूंचा-कूंचा, सब जगह यह चर्चा भारी है॥
और राम लखन वैदेही पर, बच्चा-बच्चा बलिहारी है।
श्री भरत भूप ने कैदी जन सब, रियासत भर के छोड़ दियें॥
और लिये गरीबों के देने को, दान खजाने खोल दिये।
सब सेठ नगर के थाल मोतियों के, भर-भर के लाते हैं॥
चरणों में मस्तक झुका-झुका खुश हो कर भेंट चढ़ाते हैं॥

दोहा

पुण्यवान जहाँ पर वहाँ, हर्षानन्द अपार॥
प्रेमभाव से मृदु वचन, सब जन रहे उचार॥

गाना प्रजागण का आनन्द मनाना

श्री रघुवर अयोध्या में, आज तशरीफ लाये हैं
आश्विन शुक्ला रवि द्वितिया, शोक सब के भुलाये हैं॥

चलें हैं दर्श करने को, अयोध्या के सभी वासी।
सुधी अपनी है विसराई, नहीं फूले समाये हैं॥
महकते हैं गली कूंचे, महक घर-घर में फैली है।
सजे अद्भुत दरो दिवार, मनोहर दृश्य लाये हैं॥
सभा में स्तम्भ स्वर्णों के, झलक रत्नों की न्यारी है।
जिधर देखो मकानों पर, दिये घी के जलाये हैं॥
मगन मन में हैं मातायें, देख सिया राम की जोड़ी।
भरत और शत्रुघ्न ने भी, चरणों में सिर झुकाये हैं॥
छवि उस वक्त की कोई, "शुक्ल" कुछ कह नहीं सकता।
क्या शक्ति लखनी की यहाँ, देवगण भी लजाये हैं॥

—※※—

भरत मिलन

दोहा

जय जयकारों के शब्द, गूंज रहे चहुं ओर।
भरत वीर श्रीराम से, यूं बोले कर जोड़॥

दोहा (भरत)

अब तो भार गरीब के, सिर से लेवो उतार।
राज पाट ये आपका, लेवो सभी सम्भार

धन्य-धन्य लक्ष्मण जी तुमको, धन्य हजारों वारी है।
जिसने जाये धन्य सुमित्रा, माता एक हमारी है॥
केवल एक निर्भाग्य मनुष्य मैं, दुष्कर्मों का मारा हूं।
अब तो सेवक को क्षमा करो, चरणों का दास तुम्हारा हूँ॥

दोहा

रामचन्द्र ने भरत को, प्रेम से गले लगाय।
बैठा कर फिर पास में, यों बोले समझाय॥

दोहा (राम)

मालिक हो कर कर रहे, कैसी भोली बात।
पूर्ण तैंने ही किया, वचन पिता का भ्रात॥

मिल आज परस्पर बैठे हैं, यह कृपा तुम्हारी ही तो है।
कौशल्या को वहाँ भिजवाना, यह प्रेम तुम्हारा ही तो है॥
धन्य कैकेयी मात जिन्हों के, ऐसे लायक पुत्र हुए।
रघुवंशिन के मणि मुकुट, तुम ही इक पुत्र सुपुत्र हुए॥

दोहा

प्रेम भाव से इधर यह, मिल रहे चारों वीर।
माताओं के भी उधर, वहे प्रेम का नीर॥

वार वार माताओं को, कुल वधुवें शीश निवाती हैं।
हम जैसी पुत्रवती हो तुम, यों सबु आशीश सुनाती हैं॥
अब निवृत्त हो इन कामों से फिर, मांगलिक एक सभा लगी।
और याचक गण दुखिया प्राणी, क्या सबकी किस्मत आन जगी।

दोहा

राम लखन भाई भरत, और शत्रुघ्न जान।
जनक सुता, वहाँ पांचवी, शोभ रही गुणवान॥

जनता चहुँ ओर थी खड़ी हुई, जिसका था कुछ शुम्मार नहीं।
था फर्समणि और रत्नों का, बाकी शोभा का पार नहीं॥

मीठे स्वर से कुछ नर नारी, मिल जुल के गायन उचार रहे।
सुन सुनयह वाणी मस्त हुए, शुभ भाव से जन्म सुधार रहे॥

गन्धर्वों का उपदेशप्रद गाना

नर नारी सफल अवतार करो, सुनो ध्यान से।
शिक्षा विचार करो॥ टेक॥

श्रीराम सुपुत्र कहाया है,
जिन वचन पिता का निभाया है।
कर्त्तव्य जो है दिखलाया है,
अनुकरण सभी नर नार करो॥१॥

सुमित्रा जैसी माई बनो,
और लक्ष्मण जैसे भाई बनो।
सब भाई के भाई सहाई बनों,
सब क्षीर नीर सम प्यार करो॥२॥

सती सीता की महिमा अगाध कही,
जिसने निज आत्म साध लई।
सती धर्म की महिमा याद रही,
पति धर्म पै सब न्योछावर करो॥३॥

सब राज सुखों को त्याग दिया,
और वन में पति का साथ दिया।
नहीं छोड़ा जिन रघुनाथ पिया,
सत्य धर्म पै तन निसार करो॥४॥

लक्ष्मण ने वन में सेवा करी,
श्रीराम की आज्ञा शीश धरी।

मित्र विभीषण की विपदा हरी,
तुम भी निज हृदय उदार करो ॥५॥
सत्य पुरुषों का अनुकरण करो,
जिन धर्म की आकर शरणपरो।
सब ऐसे ही पूर्ण प्रण करो,
दुखियों पर करुणा अपार करो ॥६॥
हनुमत से सेवक ना पावेंगे.
जो सत्य पै रक्त बहावेंगे।
स्वामी हित कष्ट उठावेंगे,
ऐसे सब पर उपकार करो ॥७॥
कुसंग विभीषण छोड़ दिया,
सत्यवादी का संग जोड़ लिया।
अन्याय से निज मन मोड़ लिया.
तुम सज्जन जन से प्यार करो ॥८॥
सच्चे सुग्रीव जैसे मित्र यहाँ,
और ऐसी भक्ति पवित्र कहाँ।
अब कलयुगी मित्र विचित्र कहाँ,
ऐसों का मत विश्वास करो ॥९॥
तुम भी राम लखन से योग्य बनो,
इस भारत का सब रोग हनो।
सतयुग जैसे धर्मी बनो,
शुभ ध्यान शुक्ल, सुखकार करो ॥१०॥

(समाप्तोऽयं रामायणस्य तृतीयो भागः)

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

॥ ॐ श्री वीतरागाय नमः ॥

रामायण

चतुर्थ भाग

भरत वैराग्य

※ मंगलाचरण ※

दोहा—जिन वाणी नित्य दाहिने, अरिहन्त सिद्ध जगदीश ।
परमेष्ठी रक्षा करें, त्रिपद धार मुनीश ॥

गाना मंगल—तर्ज, राजा यौवन बरसन लागे ।

अब श्री जिनके गुण गावो ।

शुद्ध मन से निश दिन जो सुमरत, तन मन हर्षत सब रोम रोम ।
करते नित्य जय जय कार शब्द, है तीन लोक में धूम ॥
कर कर्मनाश पाते प्रकाश, चरणों के दास लें मोक्ष वास ।
इन्द्रगण मिल मङ्गल गावत, चरणों में मस्तक नाय नाय ॥
नित्य नृत्य करें ध्वनि लाय लाय, पूजत भव सुरपति आए आए ।
क्या कथन करे वक्ता; शुभ 'शुक्ल' ध्यान सब ध्यावो ।

दोहा—सुनो भव्य जन जगत् के, जरा लगा कर कान ।
अवध पुरी में राम ने, किया बहुत कुछ दान ॥

भाग तीसरे में रावण का, झगड़ा सभी समाप्त हुआ ।
यश कीर्ति राम की प्रगट हुई, रावण का पाप पर्याप्त हुआ ॥

आज अयोध्या में सारे चहुँ, ओर से आनन्द बरस रहा।
नर नारी क्या बच्चा-बच्चा, श्री राम के दर्श को तरस रहा॥

दोहा—गये राम वनवास में, और आने पर्यन्त।
जो भी कुछ हुवा देखने, जमा हुवे एकान्त॥

नाट्यशाला में लंका का, जो महायुद्ध था दिखलाया।
शक्ति लक्ष्मण की चक्र सुदर्शन, दृश्य भयानक बतलाया॥
जिस समय नाट्यशाला में था, विमान उठाया रावण का।
श्मशान यात्रा समय गायन, का दृश्य था एक सुनावन का॥

गायन—दशकंधर को इस कुव्यसन ने, मुर्दार कर दिया।
कर्मों ने दोनों जहाँ में, गुनहागार कर दिया॥
यह त्रिखंडी राजनपति, रत्नों का ताज था।
सिरताज गिराकर धूली पर, नादार कर दिया॥
डरते थे योद्धे बड़े-बड़े, ऐसा प्रताप था।
यह जिस्म बड़ा बलवान् था, बेकार कर दिया॥
इसके थीं हजारों राणियाँ, आया न फिर सबर।
महाराणियों को कर्मों ने, निराधार कर दिया॥
कर्मों के आगे सूर्य चन्द्र, तारे घूमते।
मुख रूप चन्द्र जैसा था, सब ख्वार कर दिया॥
इस महापुरुष के मरने का, अफसोस है हमें।
हाय शूरवीर पै होनी ने, क्या वार कर दिया॥
फरमाया श्री जिनराज ने, विषय विष से खराब है।
इस कामदेव ने लाखों का, सुख छार कर दिया॥
स्पर्शेन्द्रिय के वश से हस्ती, फंसता कैद में।
और घ्राण विषय ने, भ्रमर को बेजार कर दिया॥
रसना के वश में होकर, मछली देती प्राणों को।

और कर्ण राग ने तीर, हिरण के पार कर दिया ॥
जलते पतंग दीपक में, नेत्रों के विषय से।
इन पांचों विषयों ने, दुःखी संसार कर दिया ॥
ऐसी इच्छा ना करना कोई, नरनारी भूलकर।
यह गायन सुना कर सबको, खबरदार कर दिया ॥
विषयों से मन हटा कर, अब शुक्ल ध्यान कर।
श्री जिन की शिक्षा ने समूह, जन पार कर दिया ॥

दोहा—खेल देख जनता हुई, आश्चर्य में लीन।
हल कर्मी जन के हुवे, भाव योग शुद्ध तीन ॥

नौ रात्री ये खेल रहा, नवराते वही मनाते हैं।
रावण मारा था वही दशहरा, दशवें दिन दिखलाते हैं ॥
यही राम-रावण लीला का खेल, एक ऐतिहासिक है।
संसार में कोई निज गुण का, और कोई परगुण का आशिक है ॥

दोहा—विरक्त भरत पर और भी, पड़ा प्रभाव विशेष।
सो भी सुनिये ध्यान से, बचा अगाड़ी शेष ॥

दोहा—पुण्यवान् का पुण्य सब, रहे सदा निज पास।
महापुरुष जहाँ पर रहे, होता वहां प्रकाश ॥

मल रहित शशी को प्रेम से, सब नर नारी स्वयं निहारते हैं।
श्रीराम को ऐसे देख रहे, दृष्टि न पीछे निवारते हैं ॥
उदारचित्त ने उसी समय, दो प्रेम के नेत्र घुमाए हैं।
मानो कि सब की आंखों में, सुरमे की तरह समाए हैं ॥
दर्शन करता करता भानु, अस्ताचल पर जा पहुंचा।
या नियम अनादि पूर्ण करना, यह भी कुछ दिल से सोचा ॥
श्री रामचन्द्र ने सन्ध्या करने को, निज आसन जमा लिया।
और लिये घड़ी दो के मानो, निर्ग्रन्थ का बाना बनाय लिया ॥

दोहा—निवृत्त हो निज कर्म से, मित्र गणों के साथ।
सैर करन को चल दिये, दीनबन्धु रघुनाथ ॥

सब दृश्य अवध का देख-देख, मन में मुस्काते जाते थे।
मार्ग में मिलते नर नारी, चरणों में शीश झुकाते थे ॥
नर-नारी क्या पशु-पक्षी सब, प्रजा में था आनन्द अमन।
यह हाल देख मन मग्न हुआ फिर, तर्फ महल को किया गमन ॥
प्रबन्ध भरत का देख-देख कर, महा प्रसन्न श्रीराम हुए।
जहां चरण धरे इस महा पुरुष ने, सिद्ध सभी के काम हुए ॥
फिर सब ने ही आराम किया, निज शयन गृह में जाकर के।
श्री भरत विचार में जा बैठे, आसन पर ध्यान लगा कर के ॥

दोहा—सब अनित्य संसार में, भापा श्री जिनराज।
बिन त्यागे संसार के, सरें न आत्म काज ॥

संसार समुद्र ऐसा है, जिसका न आदि अन्त कहीं।
अवतार पुरुष भी छोड़ गये, जब देखा इस में तन्त नहीं ॥
जो भी कुछ रचना दुनिया में, सब प्रकृति की माया है।
और नाशवान यह हाड मांस, लहू चमड़े की काया है ॥

गाना (भरत विचार में)

कर्मों के सारे, देखो, कैसे हैं जाल जी।
जो निकला इस जंजाल से, वो ही निहाल जी ॥ टेक ॥
एक मृत्युलोक क्या स्वर्ग नर्क, सारे ही लोक में।
इस मोह कर्म का शासन है, फैला विशाल जी ॥१॥
एक सिवा श्री जिन देव, न कोई भी पा सका।
इस मोह कर्म की चालें हैं, गहरी कमाल जी ॥ २ ॥
फिरते हजारों गुप्तचर, एक-एक चेतन पर।
विषयों से बचना आत्म को, बेशक मुहाल जी ॥ ३ ॥

यह दुनिया भूल भुलैया, इसका जेल खाना है।
त्रिखण्डी क्या चक्री सुर भी होते बेहाल जी ॥ ४ ॥
अपराधी पर अपराधी हम जैसे अधिकारी है।
इस उल्ट-पुल्ट से टकरा, हम होये पामाल जी ॥ ५ ॥
फंसते स्वयं यह जीव जैसे मकड़ी जाल में।
बिन अरिहन्त न हुआ हल टेढ़ा सवाल जी ॥ ६ ॥
यदि चूका नर तन पाकर के तो फिर पछताऊंगा।
मोह के वश कछुवे पर जैसे छाया शेवाल जी ॥ ७ ॥
निश्चय, शुक्ल, मुझ को हुआ दुनिया सब झूठी है।
अब तो श्री जिनवर के चरणों में ख्याल जी ॥ ८ ॥

दोहा—इसी तरह से ध्यान में, हो आया प्रभात।
सेवक जन आ सामने, खड़े जोड़ कर हाथ ॥

हाथ एक के दातुन तो, दूजे के कर में झारी है।
फूलों की माला लिये खड़ा, और कोई पान सुपारी है।
अवधेश को जब मालूम हुआ, और देखा नयन उठा-करके ॥
अति नम्रता से सेवक जन को, यों बोले समझा करके।

दोहा—अय भाई अब तो हमें, रही न इनकी प्यास।
आज्ञा लेने को चलूं, रामचन्द्र के पास ॥

सेवक स्वामी का भ्रम सभी, अब हृदय से काफूर हुआ।
और राज खजाने महलों से भी, सौ सौ योजन दूर हुआ ॥
अब तो हम सारे भ्रम छोड़, कर्मों से युद्ध मचावेंगे।
स्वतन्त्र आत्मा करने को, श्री जिन दीक्षा ले जावेंगे ॥

दोहा- वृत्तान्त सभी यह भृत्य ने, कहा राम से जाय।
उसी समय आ भरत से, बोले गले लगाय ॥

आज भ्रात जी अब तलक, मिले न मुझको आये।
या पाठ आप करने लगे, बैठे आसन लाए॥

दातुन मंजन भी किया नहीं, सेवक सम्मुख सब खड़े हुवे।
क्या शय्या पर भी नहीं सोए, सब फूल खिले ही पड़े हुवे॥
शीघ्र करो स्नान समय, दरबार का होने वाला है।
सूर्य है कितना चढ़ा हुआ, बादल भी काला काला है॥

दोहा—इन सब बातों से हुई, घृणा मुझको आज।
अब तो आज्ञा दीजिये, सारूं आत्म काज॥

यह मंजन और स्नान नहीं, आत्म निर्मल कर सकते हैं।
सम ज्ञान दर्श चारित्र तप, इसके मल को हर सकते हैं॥
अब राजमहल यह फूलों की, शय्या नहीं मन को भाती है।
यह नजर मुझे सारी दुनियां, शूलों के मानिन्द आती है॥
चढ़ गया मजीठी रंग कभी, यह नहीं उतरने वाला है।
चाहे एक कहो या लाख भरत, संयम व्रत लेने वाला है॥
कुछ सेवा न कर सका आपकी, क्षमा दोष फरमा दीजे।
संसार समुद्र से बेड़ा यह, पार मेरा करवा दीजे॥

दोहा—कैसी भोली बात यह, लगा करन तू वीर।
वचन विरह का सुनत हा, लगा कलेजे तीर॥

अभी करो साधन घर में, मुनिव्रत निशंक फिर ले जाना।
पर दुख विरह का इस हालत में, मुझे न भाई दे जाना॥
वर्ष हुए चौदह तेरे दर्शन के, लिए तरसता था।
और लिए तुम्हारे मिलने को, नयनों से नीर बरसता था॥
अब तक आज्ञा पाली तुमने, अब भी कहना स्वीकार करो।
मानिन्द मीन के तड़प रहा, मेरे मन का सन्ताप हरो॥

सुग्रीव आदि भी आ पहुँचे, सब तेरी तर्फ निहार रहे।
यह ख्याल अभी परित्याग करो, दिल में क्या सोच विचार रहे॥

दोहा—जो कुछ मुख से कह चुका, है पत्थर की लीक।
अब ज्यादा मोह आपका, भ्रात नहीं है ठीक॥

जिसको समझे तुम भरत वीर, यह भाई अब वह भरत नहीं।
दुनिया में फंसने वाली कोई, मानूंगा मैं शरत नहीं॥
जिसने था मुझे भुला रक्खा, उस मोह शत्रु का नाश हुआ।
सर्वज्ञ देव की कृपा से अब, अनुभव ज्ञान प्रकाश हुआ॥

गाना (भरत और राम)

राम—फिर हम तुमको समझाते हैं, संयम न वीर सुखाला है।
तू राज महल में फूलों की, शय्या पर सोने वाला है॥
भ०—जिनको दुनियाकि ख्वाहिश, विषय सुख उनको लगतावाला है।
पर मुझे नजर आता भव भव में, दुःख यह देने वाला है॥
राम—क्षुधातृपा सर्दी गर्मी, आदि दुख वीरन भारी है।
आगार नहीं कोई जिसमें, दर दर का बने भिखारी है॥
भ०—जब तक घृणा जिसको इससे, तो समझो दीर्घ बीमारी है।
आत्म के निर्मल करने को, यही साधन हितकारी है॥
रा०—जब रोग शोक कोई आन लगा, तो फिर क्या यत्न बनाओगे।
आयुपर्यन्त अकेले ही कैसे, वोह समय विताओगे॥
भ०—बस यही भ्रम है दुनिया में, जिसने सबको - भर्माया है।
यह अमर आत्मा ज्ञानमयी, बाकी पुद्गल की माया है॥
रा०—हमने भी देखे मस्त बहुत, पर आपसा नहीं जमाने में।
दिल में कोई सोच विचार करो, क्या लोगे हमें शताने में॥

भ०—जी हां वह नकली मस्त सभी, जो आते नजर जमाने में।
हम ज़िनवाणी पर मस्त हुवे, क्या लोगे हमें फँसाने में॥

दोहा—जो कुछ इच्छा आपकी, हमें वही स्वीकार।
किन्तु आप व्यवहार का, कुछ तो करें विचार॥

पहिले यह हृदय सर्द करो जो, मुख्य कर्तव्य तुम्हारा है।
कुछ दिन के बाद चले जाना, फिर कोई न वर्जन हारा है॥
स्वयमेव आप हम उत्सव से दीक्षा तुम्हें दिलावेंगे।
वह धन्य दिवस होगा जिस दिन हम भी इस पथ पर आवेंगे॥

दोहा—भाई मुझ को नहीं रहा किसी वस्तु से राग।
समय समय पर बढ़ रहा कर्मरूप विष बाग॥

सर्वज्ञ देव ने निश्चय से, पहले व्यवहार बताया है।
क्योंकि इसके बर्ताव बिना, न मोक्ष किसी ने पाया है॥
बस आज्ञा तो मिल गई हमें, अब आपका कहना करते हैं।
और स्वल्प दिनों के लिये भ्रात का, वचन शीश पर धरते हैं।

दोहा—एक दिन सब रण वास की, सीता आदिक नार।
सैर करन को चल दई, भरतेश्वर के लार॥

था निर्मल नीर सरोवर में, जल क्रीड़ा सभी लगीं करने।
कई नौकाओं पर घूमरहीं, कई लगी भुजाओं से तरने॥
मदमस्त हुआ सहसा हस्ती, फिरता बन्धन से बाहिर हुआ।
खूर्न। हाथी को देख भगे, चहुं ओर से हा हा कार हुआ।
जो मिला सूंड से पकड़ २ कर, उसे फैंकता जाता था॥
तब देख-देख यह हालत नर, नारी समुह घबराता था॥
जब पहुँचा पास सरोवर के, तो सभी रानियां घबराईं।
बस समझ लिया कि आज हमारा, काल आगया चिल्लाईं॥

दोहा—देकर सब को धैर्य बढ़े भरत बलवीर।
हाथी सन्मुख भरत के आया जैसे तीर॥

महाबली क्षत्रिय योधा भी बस, खड़ा वहां बेखोफ रहा।
वह हस्ती सन्मुख आन भरत को, देख-देख कुछ सोच रहा॥
पुण्योदय से उस समय करी को जाति स्मरण ज्ञान हुआ।
और पूर्व जन्म के हाल देख कर, दूर सभी अज्ञान हुआ॥
बकरी का जैसे कान पकड़, पाली आगे कर लेता है।
हस्ती भी ऐसे शान्त हुआ, अवधेश को कुछ नहीं कहता है॥
इतने में योद्धा आ पहुंचे, जो कि गजराज के पीछे थे।
कई वाजी गज पर थे सवार कई विकट गाड़ी कई नीचे थे॥

शेर—शान्त जब आकर लखा गजराज को श्रीराम ने।
शीतल स्वभावी बन गया, कैसे भरत के सामने॥

जन्मांतरों को देख कर हस्ती किया विचार।
पशुयोनि मैंने लई मनुष्य जन्म को हार॥

उस भुवनालंकृत हस्ती का, लाकर गजशाला में छोड़ दिया।
और सम दम खम को धार हृदय, मन कौतूहल से मोड़ लिया॥
कुल भूषण और देश भूषण, उस तर्फ बाग में आकर के।
हैं समवसरे केवल ज्ञानी, दई खबर भृत्य ने जाकर के॥

दोहा—सुन कर माली के वचन, मन में खुशी अपार।
दिये राम ने भृत्य को, आभूषण सभी उतार॥

समृद्धिवान हुआ माली, मालीपन उसका दूर हुआ।
अब तारण तरण जहाज आगये, सभी जगह मशहूर हुआ॥
यहां सहित सकल परिवार राम ने, जाकर दर्शन पाए हैं।
नर नारी क्या बच्चे बच्चे, सब बाग की ओर सिधाए हैं॥

दोहा—धन्य आज का दिवस यह, करें सभी गुण ग्राम।
जनता के आगे खड़े, सीतापति श्री राम॥

जब लगी ज्ञान वर्षा होने, श्रोता जन अमृत पीने लगे।
विषयों से चित्त हटा कर के, वैराग्य भाव में भीने लगे॥
और पांचों अंग निमा कर के, मुनियों के चरण में पड़ते हैं।
सम्यक्त्व बीज बोने के लिये, उपदेश मुनि यों करते हैं॥

दोहा—गतागति में जीव को, हुआ अनादि काल।
बना नरेन्द्र सुर कभी, समृद्धिवान कंगाल॥

मन वाणी और काय से, कर्म शुभाशुभ होय।
वैसा ही सुख दुःख मिले, दिया जिस तरह बोय॥
वाणी काया से प्रथम, मन की लहरें थाम।
मन जीते बिन किस तरह, बने जीव का काम॥

महा सागर की लहरों से, मन की लहरें नही कमती हैं।
वह एक रूप में रहें सदा, यह नाना रंग बदलती है॥
बाल्यकाल पर मुग्ध कभी, मन कभी जवानी पर मरता।
जरा काल को रोगग्रस्त लख, मन प्रतप्त आहें भरता॥
कभी देख निज समृद्धि को, मन फूला नहीं समाता है।
सुवर्ण भवन में वास करूं, कभी ऐसा ध्यान जमाता है॥
कभी निवृत्त बनकर औरों को, सन्तोष विशाल दिखाता है।
अनर्थ का कारण जान इसे, कभी अपने को समझाता है।
दुःखी जनों को देख कभी, उपहास्य उन्हीं का करता है॥
और दीन दुःखी को देख कभी, मन करुणा अद्भुत करता है।
विद्याधर सुर बनने की कभी. इच्छा इस मन को होती है॥
कभी कर्मबन्ध को देख तेरी, वह पूर्व धारणा सोती है।
विषयासक्त कभी मन होकर, चाह स्वर्ग की करता है॥

फिर नाशवान लख सभी जगत् को, नीच गति से डरता है।
कभी कुमति का मन बने दास और कभी सुमति को चाहता है॥
सब तीन लोक में घूम कभी, तू ध्यान हृदय में लाता है।
मन वीर कभी कायर बन जाता, कभी बने दाता कंजूस॥
बने समुद्र गहन कभी, गुण रत्नों की बनता मंजूष॥
निज स्वार्थ में अन्धा बनकर, कभी क्रूर कर्म को करता है।
और कभी पराए हित पापी, मन मारा मारा फिरता है॥
यह एक रूप मन हुआ न, अब तक आगे कभी न होवेगा।
जो करे भरोसा इस मन का, वह शीश पकड़ कर रोवेगा॥
इस मन के द्वारा तन्दुल मच्छ, वह नर्क सातवीं जाता है।
वहां भयंकर दुःख रौरव नर्क का, तेतीस सागर तक पाता है॥

दोहा—मन के मते अनेक हैं, मत करना विश्वास।
जो इस मन को वश करे, पाये मोक्ष निवास॥

किन्तु यह जब हो प्रथम, दुनियां से चित्त उदास करे।
और साथ-साथ काया वाणी को, भी शुद्ध नित्य अभ्यास करे॥
मोह जाल अनादि बन्ध तोड़, जो संयम ध्यान लगाते हैं।
वह वीर पुरुष कर्म रूप, शत्रु को मार भगाते हैं॥

दोहा—व्याख्या द्विविध धर्म की, करी वहाँ मुनिराज।
शीश झुका कर जोड़ कर, बोले रघुकुल ताज॥

दोहा—तारण तरण जहाज हो, जिन शासन शृङ्गार।
दुःख हरते संसार के, शंका तोड़न हार॥
क्या सम्बन्ध जन्मान्तर का, हे प्रभु दीन दयाल।
हस्ती का और भरत का, भाषो कृपानिधि हाल॥

तोड़ बन्ध गजराज बना, स्वतन्त्र जो मद में फिरता था।
प्रत्येक मनुष्य बल वीर देख, हस्ती के भय से गिरता था॥

जब देखा भरत नरेश्वर को, हाथी का मद मत्र दूर हुआ।
और बिना किये पुरुषार्थ ही, मद हस्ती का काफूर हुआ॥

दोहा—प्रश्न राम का सुनत ही, मुनिजन के सिर मौर।
ब्रह्म ज्ञानी कहने लगे, सुनो सभी कर गौर॥

दोहा—श्री ऋषभ देव भगवान ने, त्यागा जब संसार।
देखा देखी होगये, संग मुनि चार हजार॥

संग में हो तैयार सभी ने, पांच महाव्रत धार लिये।
और रात्रि भोजन त्याग पवित्र, सब ने शुद्ध विचार किये॥
पांच सुमति और तीन गुप्ति को, धार के शुद्ध व्यवहार किये।
तप जप संयम में लीन हुए, सब पाप अठारह टार दिये॥

दोहा—तब तक सारे शूरमा, जब तक जुड़े न जंग।
किन्तु सैकड़ों में कोई, योधा डटे निश्शंक॥

कर्म अरि के सम्मुख जाकर, महा पुरुष ही अड़ते हैं।
कायर दुर्बल का काम नहीं, जो पद पद पर गिर पड़ते हैं॥
एक एक के सम्मुख जब, बाईस परिषह पड़ने लगे।
वीरों को लाली चढ़ने लगी, दुर्बल कायर घबराने लगे॥
मुँहपत्ती मुख से उतार दई, कई लगे पाखंड रचाने को।
कोई लुरमुंडित कोई नग्न जटा, धर लग गये अलख जगाने को॥
फिर तीन सौ त्रेसठ पाखंडों का, धर्म उन्हीं से जारी हुआ।
जो फंसा इन्हीं के फंदे में, सो भी कर्मों से भारी हुआ॥
कई जड़ पूजक बन कर बोद, मंदिर मठ लगे बनाने को।
वर्ण गन्ध रस विषय स्पर्शों को, वहां लगे सजाने को॥
अन्ध श्रद्धालु पक्षपात, मिथ्यात्व में ऐसे लीन हुवे।
लगे नाचने भक्ति वश, हिंसक बने बुद्धि मलीन हुवे॥

कई धार धार करके कुभेष, निज को ऋषि मुनि कहलाने लगे।
कन्द-मूल तो दूर रहा मद मांस, तलक भी खाने लगे॥
कई तापस बन कर अग्नि से, तप तप कर पाप कमाने लगे।
अज्ञान कष्ट खुद भोग भोग, धूनी में जीव जलाने लगे॥

दोहा—कायर जन होते सदा, महा ढोंग में लीन।
मिथ्यावश इस जीव की, होती है मति क्षीण॥

छन्द—प्रह्लादन सुप्रभ दो, तापस की वृत्ति पाल कर।
चन्द्रोदय सूर्योदय, अगले जन्म हुवे आन कर॥
चन्द्रोदय का जन्म फिर, जन्मान्तर से गजपुर हुआ।
चन्द्रलेखा मात नृप भानु का, कुलंकर सुत हुआ॥
गजपुर में ही विश्व भूति के, एक अग्निकुंडा नार है।
सूर्योदय जन्मा वहां, श्रुतिरति नाम कुमार है॥
नृप पद कुलंकर को मिला, नीति में रहते थे मग्न।
सैर के लिये भूपति एक रोज, वन में किया गमन॥

दोहा—विराजमान थे बाग में, ज्ञानी मुनि महान्।
नमस्कार कर भूपति, बोले मधुर जवान॥
उपदेश कुछ सत्यधर्म का, भाषो दीना नाथ।
क्या सम्बन्ध है कर्म का, जीवात्म के साथ॥

दोहा—इस संसार समुद्र का, कहीं न आदि अन्त।
जैसे तिल में तैल यों, आत्म का वृत्तान्त॥

तेली जैसे यन्त्र से, खल तेल अलग कर देता है।
बस इसी तरह शुभ साधन से, आत्म निर्मल कर लेता है।
फूल से इतर पृथक होकर, फिर फूल नहीं बन सकता है॥
या यों समझे कि दग्ध बीज का, अंकुर नहीं जम सकता है।

दोहा—धर्म कथन द्विविध कहा, तीर्थंकर भगवान्।
साधन कर यह आत्मा, पावें पद निर्वान॥

सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्र, बिन कुछ भी नहीं बन सकता है।
और कर्मरूप शत्रु से बिन, शक्ति रण नहीं ठन सकता है।
बस शक्तिवान ही कर सकते हैं, आत्म का कल्याण सदा।
शुभ शक्तिहीन मिथ्या धर्मी, कर्मों से पृथक् न होय कदा॥

दोहा—बिना ज्ञान करनी वृथा, केवल कष्ट अनेक।
उनमें से व्यक्ति प्रगट तुम्हें बतावें एक॥
तापस इस वन खंड में, धूनी रहा जलाय।
उस में एक भुजंग है, देवो जल्द बचाय॥

उपदेश फेर सुनना बाकी, पहिले उसका संताप हरो।
है पिछले भव का पिता तुम्हारा, काम शीघ्र यह आप करो॥
जहां दया नहीं वहां धर्म कहां, सारांश यही सब धर्मों का।
नव तत्त्वका जिनको ज्ञान नहीं, वहां नित्यप्रति बन्धन कर्मों का॥

दोहा—तापस के डेरे पर गये, उस समय भूपाल।
धूनी से उस काष्ट को, देखा बाहिर निकाल॥

जब भृत्य से लक्कड़ पड़वाया तो, निकला एक भुजंग बली।
है धन्य मुनिका कथन जो इसकी, जान बची थी घड़ी भली॥
धिक् ऐसी तापस वृत्ति पर, जो निश दिन पाप कमाते हैं।
फिर साधु पन का ढोंग बना कर, वृथा ही काल गंवाते हैं॥

दोहा—ज्ञान बिना करनी सभी, कर्म बन्ध का काम।
भ्रमण करें संसार में, वृथा जला कर चाम॥
आज्ञा ले मुनि चल दिये, लगा धर्म की लाग।
देख हाल पीछे हुआ, भूपति का वैराग्य॥

सर्वज्ञ देव ने सत्य कहा, मिथ्यात्व महा विष भारा है।
मिथ्यात्व की करणी ने आत्म, संसार कूप में डारा है॥
सम्यक् ज्ञान दर्शन चरित्र, बिन आत्म दुःख पाता है।
कर्म संग हो मूढ जीव, संसार का चक्र लगाता है॥

जैसा भी कारण मिले, वैसा ही कार्य होय।
कुसंगति से आत्मा, आत्म गुण दे खोय॥
मुनि जन के उपदेश से, राजा बना सुपात्र।
रानी थी भूपाल की, व्यभिचारिणी कुपात्र॥
रानी का कुराग था, श्रुति रति के साथ।
स्त्री के प्रपंच को, नही समझा नर नाथ॥

नहीं समझा नर नाथ और, यह खोटी संगति ऐसी है।
जिसके समान जीवात्म का न दुनिया में कोई द्वेषी है॥
शुद्ध आत्म ज्ञान विना विद्या, चाहे पढ़ जावे कोई कैसी है।
मानिन्द दर्वी के विद्वान् को, पशु कहो चाहे वहसी है॥

दौड़—कुलंकर नृप घर आया, भेद रानी ने सुन पाया।
लगी दिल में घबराने
श्रीदामा पाप छिपाने कों, यो लगी अक्ल दौड़ाने॥

दोहा—पाप छिपाने के लिये, करते कपट अपार।
इस कारण अज्ञान से, रुलें जीव संसार॥

यह भ्रम पड़ गया रानी को, नृप को ज्ञानी की संगति है।
यदि इसे मिल गया भेद सभी, तो मेरी बने विषम गति है॥
ऐसे ज्ञानी गुरु के द्वारा, यदि इसे पता लग जायेगा।
तो श्रुति रति से भी पहिले, मुझ पर आपत्ति लायेगा॥

दोहा—अच्छा है कि प्रथम ही, देऊं इसको मार।
नहीं तो यह मेरा कभी, देगा चर्म उबार॥

अब प्रेम भाव से राजा का, मन अपनी तरफ झुका करके।
निष्कंटक होकर सुख भोगूं. इसको परभव पहुंचा करके॥
कुछ श्रुति रति ने भी राजा को मिथ्यात्व भरम में डाल दिया।
मुनि शिक्षा के शुभ संस्कार उन. सब को बाहिर निकाल दिया॥
चौपाई—श्रीदामा ने कारण व्यभिचार. विष देकर मारा भर्तार।
इधर आयु घटी मर गया यार, कर्म बांध करमल रही नार॥

दोहा-- रुलते भव संसार में, राजग्रही दर्म्यान।
आगे पीछे सुत हुवे, कपिल विप्र गृह आन॥

नाम विनोद बड़े का था, और छोटा रमण कहाता था।
लघु वीर गया प्रदेश में क्योंकि, विद्या पढ़ना चाहता था॥
विनोद भाई की शाखा नारी, दत्त विप्र से प्रेम हुआ।
यह काम बाण जिसको लागा, बस कभी न उसके क्षेम हुआ॥
दोहा—शाखा यक्ष मन्दिर गई, दत्त से कर संकेत।
काल नजर आता नहीं, कैसा अन्धा हेत॥

कुछ पाकर भेद विनोदपति, शाखा के पीछे धाया है।
उस तरफ रमण विद्या प्राप्त कर, उस मन्दिर में आया है॥
प्रवेश मुहूर्त कल का है यह, सोच वहां आसन लाया।
इतने में शाखा आ पहुंची, क्या भावीने मौका पाया॥

दोहा—दत्त समझ कामन बढ़ी, मिली रमण के साथ।
पीछे से आकन्त ने करी, रमण की घात॥

रमण का शस्त्र उसी समय, शाखा ने तुरत उठाया है।
और अपने आप बचाने को, निज पति को मार गिराया है॥
इस कामदेव ने बड़े बड़ों का, अन्त में सत्यानाश किया।
मर शाखा गई नर्क दोनों, भाइयों ने परभव वास किया॥

दोहा—रुल कर के संसार में, इभ घराने आय।
विनोद सेठ का सुत हुआ, नाम धनद सुखदाय॥

धनद का सुत आ रमण हुआ, और लक्ष्मी जिसकी माता है।
पूर्ण सुख साज समाज मिला, और भूषण नाम कहाता है॥
भूषण को स्त्री परणाई बत्तीस, थी इभ घराने की।
शक्ति न लेखिनी जिह्वा में, सारे शुभ गुण कथ गाने की॥

दोहा—श्रीधर ऋषि महान् ने, पाया केवल ज्ञान।
उत्सव करने देवता, लगे उधर को जान॥

भूषण भी चल दिया, श्री मुनिराज के दर्शन पाने को।
पर काल चली सम्मुख आया, आगे धर एक बहाने को॥
विष धर एक भुजङ्ग बली ने, उछल पैर पर डंक धरा।
सब नस नस में विष गया फैल, भूषण अन्तमें हा तंग मरा॥

दोहा—शुभ परिणामों में तजे, सेठ पुत्र ने प्राण।
आगे जहां पैदा हुआ, सुनो लगाकर कान॥

विदेह क्षेत्र में रत्नपुरी, नगरी थी स्वर्ग समानी।
अचल नाम था चक्रवर्ति, हिरणी तिसकी पटरानी॥
जन्मा आन प्रियदर्शन यहां, नाम दिया सुखदानी।
बालपने से प्रेम धर्म में, आगे सुनो कहानी॥
दौड़—बारह व्रत धारण कीने, दान दया में चित दीने।
पौषधोपवास व्रत करके॥
आयु पूर्ण कर पैदा हुआ, ब्रह्म स्वर्ग में जाकर के॥

दोहा—दूजा भाई धनद भी, पोतनपुर में जाय।
शकुनाङ्गी मुख्य विप्र के, पुत्र जन्मा आय॥

मृदुमति नाम रक्खा इसका, यहां खोटी संगत होने लगी।
अविनीत समझ पितु ने काढ़ा, पर माता मोह में रोने लगी॥

इस कारण फिर लाये घर में, थे सातों व्यसन धूर्त भारी।
मुनि महाराज की मिली उसे, फिर संगति थी अति सुखकारी॥

दोहा—संयम व्रत धारण किया, किन्तु सहित प्रपञ्च।
दर्जा कैसे पा सके, कहो रत्न का कंच॥

पञ्चम देवलोक पहुंचे, पर विराधक पदवी पाकर के।
तिर्यंच गति का बन्ध पड़ा, वहां माया और कमाकर के॥
पंचम दिव को छाड़ गिरी, वैताड़ में यह गजराज हुआ।
उस तर्फ अमरपद तज प्रिय दर्शन, आन भरत महाराज हुआ॥

उस हस्ती को पकड़ भूप ने, गजशाला बन्धवाया था।
जब भर यौवन में आया हाथी, तब बन्धन तोड़ भगाया था॥
जब देखा भरत नरेश्वर को तो, जाति स्मरण ज्ञान हुआ।
और सुत बान्धव सम्बन्ध समझ, कर दूर सभी अज्ञान हुआ॥

दोहा—क्षम दम खम को धारकर, शांत हुआ गजराज।
कारण यह आकर मिला, सुनो रविकुल ताज॥

दोहा—सुनते ही व्याख्यान यह, सबके खुल गये नैन।
भरत उस समय राम, से बोले ऐसे बैन॥
आज्ञा तो देही चुके, थे पहिले महाराज।
अब संयम व्रत धार कर, सारूं आत्म काज॥
रामचन्द्रजी भरत को, समझा सके ना मूल।
संयम को श्रेय मान कर, अंत्यम हुए अनुकूल॥

उसी समय वस्त्राभूषण, तन से सभी उतार दिये।
ईशानकोण की तर्फ बढ़े, सब केश लुंच कर डार दिये॥
अष्ट पड़त की मुंहपत्ति, प्रमाण का डोरा सजने लगा।
जब बांधी मुखपे स्वलिङ्ग बने, तब खुशी का बाजा बजनेलगा॥

समुत्थान सूत्र में दीक्षा धारण की, सभी विधि बतलाई है।
संकोच रूप में कहा विधि, यहां लिखने में नहीं आई है॥
और संग भरत के हलु कर्मी, जीवों ने संयम धारा है।
यह समझ लिया कि नाशवान, दुनिया सब धुंद पसारा है॥

गाना (भरत जी का संयम ग्रहण)

संयम भरत ने धारा, दुनिया से किया किनारा ॥टेक॥
अवधेश ने हुक्म सुनाया, तीन लाख सोनैया दिलाया।
ओघा पात्र मंगवाया, नाई का दुःख निवारा ॥स० १॥
स्वलिंग मुख पत्ति धारी, पंचम गति देवन हारी।
हुए चार महाव्रत धारी, प्रवचन सारा सुखकारा ॥स० २॥
सम ज्ञान कर्श चित्त लाया, चारित्र से कर्म खपाया।
पुरुषार्थ मित्र बनाया, निर्मल हो मोक्ष पधारा ॥स० ३॥
आदर्श हुए मुनि त्यागी, त्रियोग शुद्ध वैरागी।
इम करे सोही बड़ भागी, ध्यान "शुक्ल" शुद्ध सारा ॥स० ४॥

दोहा—कैकेयी ने भी उस समय, ऐसा किया विचार।
पत्र फूल फल के बिना, समझो वृक्ष निसार॥

चौपाई

झूठा जाल जगत सब छोड़ा, तप जप में आत्म को जोड़ा।
वर्ण गंध रस से मन मोड़ा, संयम रस जिन खूब निचोड़ा॥

दोहा—चार कर्म जब हन दिये, प्रगटा केवल ज्ञान।
अन्त समाधि भरत ने, शत्रुञ्जय लई आन॥

कर्म काट कैकेयी माता ने, अन्त मोक्ष पद पाया है।
शुद्ध अनशन करके हस्ती, पञ्चम सुरलोक सिधाया है॥
जो सच्चिदानन्द हुवे उनका, कर्तव्य हृदय में धरना है।
अब वासुदेव बलदेव की पदवी, का वृत्तान्त यहां करना है॥

राज्याभिषेक

दोहा—मिल जुल के सब ने किया, भारी एक दरबार।
सुग्रीव आदि आए सभी, बड़े बड़े सरदार॥

न शक्ति कलम जबान में है, उत्सव का कैसे कथन करें।
जो कहें राम अपने मुख मे, स्वीकार सभी वह वचन करें॥
कलश सुगन्धि जल का, लक्ष्मणजी के सिर पर ढुला दिया।
वासुदेव अष्टम यह कह कर, जय जय कार बुलाय दिया॥

दोहा—दूसरा ढुलाया राम पर, अष्टम यह बलदेव।
हाथ जोड़ नर असुर क्या, करें विमानिक सेव॥

गाना—त्रिखण्डी ताज पहनाना, मुबारिक हो मुबारिक हो।
किया उत्सव शहाना, मुबारिक हो मुबारिक हो॥

दोहा—लवण समुद्र से लगा, वैताढ्य गिरि पर्यन्त।
तीन खण्ड के अधिपति, भाप गये अरिहन्त॥

मुकुट बन्ध सोलह सहस्र, भूपति आज्ञा में रहते हैं।
सोलह हजार देशों के स्वामी, पुण्य किया सो लेते हैं॥
लाख बैतालिस हाथी और, इतने ही अश्व होते हैं।
संग्रामी रथ भी इतने ही, जब जुड़े जंग तब शोभते हैं॥
विकट गाड़ियें लाख बैतालिस, अद्भुत कला निराली है।
अड़तालिस करोड़ पैदल सेना, योद्धों की छवि मतवाली है॥

दोहा—धर्मी नृप के शासन में, सब धर्मी बन जांय।
धर्म नीति प्रताप से, दुःख सभी टल जांय॥

सभी लगे आनन्द करने, डाकू चोरों का काम नहीं।
जहां मर्जी जो कुछ पड़ा रहे, लेने वाला इन्सान नहीं॥

क्षीर नीर सम प्रेम सभी में, जात पात का भेद नहीं।
दान शील शुभ धर्म भावना, करते वहां कुछ खेद नहीं ॥
क्रोध मान और लोभ कपट, वहां प्रायः सभी यह पतले थे
और सदाचार में लीन हर समय, पाप कर्म से बचते थे ॥
थी सतोगुणी बुद्धि जिनकी, घृत दूध दही के खाने से।
वे बने सदाचारी रहते थे, आत्म ज्ञान पढ़ाने से ॥
अवतार बीसवे मुनिसुव्रत, स्वामी का जहां पर शासन था।
शुभ दया धर्म की शिक्षा का, प्रत्येक के दिल में आसन था ॥
क्या शक्ति कलम जबान की है, जो सारे सुखों का बयान करें।
थे फरश मणि और रत्नों के, बाकी पाठक खुद ध्यान धरें ॥

दोहा—जहाँ दया धर्म वहां धन बढ़े, धन बढ़ मन बढ़ होय।
मन बढ़ता सन्सार में, बढ़त बढ़त सब कोय ॥

राजा प्रजा क्या सब धर्मी, इसलिये अतुल सुख बढ़ने लगा।
मानिन्द रवि के पुण्य सितारा, अद्भुत गौरव चढ़ने लगा ॥
औदार चित्त ने देख समय, दिल को दरियाव बनाया है।
और सबसे प्रथम विभीषण को, लंकेश का तिलक सजाया है ॥
सुग्रीव को वानर दीप और, हनुमान् को श्रीपुर का इलाका।
कुछ क्रम से पहिले था जिनका, उनउन को राज दिया वहां का ॥
वीर विराध को पाताल लंक,और नील को ऋक्ष पुर नगर दिया।
प्रतिसूर्य को हनुपुर के साथ, कुछ प्रान्त नया एक और दिया ॥
और रथनुपुर भामंडल को, कुछ प्रान्त स्वरूपाचल का था।
देवोपगीत दिया रत्न जटी को, एक प्रान्त हलारी दल का था ॥
यथा योग्य सबको खुश करके, योद्धों को जागीरें दई।
विमुख नहीं कोई रक्खा, अन्त में सबकी तस्वीरें लई ॥

दोहा—राजनगर जागीर सब, लेकर खुशी अपार।
शत्रुघ्न खाली रहा, करते राम विचार ॥

तीन खंड में जो लगे, अच्छा तुमको देश।
राज वहां का कीजिये, यह मेरा उपदेश॥
चरण कमल में ही मुझे, भ्रात अति आनन्द।
यदि देना ही है मुझे, तो बनो वचन पावन्द॥
हां लक्ष्मण और राम का, जहां-जहां पर अधिकार।
जो मर्जी सो मांग लो, भ्रात मुझे स्वीकार॥
अधिकार का वचन निकाल के, करो वचन प्रकाश।
फेर तुम्हें बतलाए दूं, जो कुछ मेरी आश॥
पेचदार इस बात को, पहले दो समझाय।
क्या मन में है आपके, पता हमें लग जाए॥
अच्छा लो अब आपको, कहूं साफ सरकार।
मथुरा नगरी के सिवा, और न कुछ स्वीकार॥
भाई सोच विचार कर, ले बुद्धि से काम।
स्वतन्त्र मथुरापुरी, मधुराजा का धाम॥
प्रथम तो चीज पराई है, फिर कैसे तुमको दे देवें।
कोई कारण नजर नहीं आता, वृथा कैसे झगड़ा लेवें॥
बात तीसरी लंकपति ने, जब हम पर आघात किया।
उस समय मधुक ने दशकन्धर का, किसी तरह नहीं साथ दिया॥
इसलिये वीर यह ख्याल तजो, मथुरा नगरी से बढ़ करके।
हम शोभन देश तुम्हें देंगे, जो होगा सबसे चढ़ करके॥

दोहा—नम्र निवेदन कर चुका, चाहे सुरपुर होय।
मथुरा नगरी के सिवा, मुझे न भाता कोय॥

यह बात आपने ठीक कही, मथुरा का राज्य पराया है।
और कारण नजर नहीं आता, यह भी मेरे मन भाया है॥
जो रावण का न बना सहायक, सो अपना आप बचाया है।
किन्तु आधीन था रावण के, किसने स्वतन्त्र बनाया है॥

प्रति वासुदेव का अन्त करें, सो वासुदेव कहाता है।
फिर कौन रहा स्वतन्त्र हमारी, समझ नहीं कुछ आता है॥
दूत भेज कर या तो उसको, आज्ञा में प्रवेश करो।
नहीं तो मैं स्वयं समझ लूंगा, कृपया करके आदेश करो॥

दोहा राम—अय भाई तू मधु की, झेल सके न चोट।
विजय करना कठिन है, मथुरा गढ़ का कोट॥

त्रिशूल एक चमरेन्द्र ने, मधु मित्र को दे रक्खी है॥
मानो सारी दुनिया की शक्ति, निज कर में ले रक्खी है॥
इसी कारण रावण ने, अपना जामात बनाया था।
क्या पता हमें किस नीति से, आधीन न उसे बनाया था॥

दोहा राम—कई योजन तक मधु की, करे मार त्रिशूल।
वहां जाने से ही प्रथम, कर देवे निर्मूल॥

उस देवमयी शस्त्र की बतला, रोक कौन कर सकता है।
और ऐसा योद्धा कौन वहां, जाने का दम भर सकता है॥
अब इस विचार को दूर करो, भाई यह ख्याल हमारा है।
तुम खुद ही आप विचार करो, क्या ठीक यह ध्यान तुम्हारा है॥

दोहा—त्रिखंडी भूपाल की, करी आपने छार।
मधुक विचारा कौन है, दिल में करो विचार॥

धरणेन्द्र देव की दई हुई, रावण पे क्या शक्ति न थी।
और सहस्र एक साथी विद्या, पुत्रों में क्या भक्ति न थी॥
सुर सुन्दर आदि राजे सब, दशकंधर का दम भरते थे।
सब ने साथ दिया रावण का, पीछे पांव न धरते थे॥
तुमने सब शक्ति मसल दई, उस महा बली त्रिखण्डी की।
फिर क्या शक्ति मेरे आगे, उस कायर मधु पाखण्डी की॥

रघु कुल दिनेश तुम दशरथ सुत, मैं भी तो आपका भ्राता हूँ।
शक्ति बिन आगे कदम धरूं, ऐसा मैं भी नहीं चाहता हूँ॥
कृपा और आज्ञा बस आप से, बात यही दो चाहता हूँ।
फिर देखो कैसे मधुक को मैं, कांटा सा काढ़ भगाता हूँ॥
निज पराक्रम से सब शक्ति मधु की, निष्फल मैं कर डारूंगा।
मैं मान मर्दन करके उस को, अपने चरणों में डारूंगा॥

दोहा--सच मुच बच्चों की तरह, चढ़ी तुम्हें जिद वीर।
आज्ञा है जाकर करो, जैसा कहे जमीर॥

जैसा कहे जमीर किन्तु, यह शिक्षा उर धर लेना।
जैसे हो त्रिशूल पै तुम, अधिकार प्रथम कर लेना॥
बेखटके फिर सेना अपनी, ठेल अगाड़ी देना।
यदि पास मधुक के हो त्रिशूल, तो हरगिज काम बनेना॥

दौड़--त्रिशूल जब होवे भाई, आयुधशाला के मांही।
शीघ्र फुर्ति तब करना
सिवा एक त्रिशूल और शक्ति का कोई डरना॥

दोहा...जो कुछ भाषा आपने, सभी मुझे प्रमाण।
भय मुझको क्या आप जब, बैठे हैं पुण्यवान॥

सूर्य वंशी पर भाई मैं, अंगुली नहीं आने दूंगा।
अधिकार सब जगह करूं, नहीं त्रिशूल तलक जाने दूंगा॥
हाथ शीश पर धर दीजे, अब देरी का कुछ काम नहीं।
बिना लिए मथुरा नगरी, मेरे दिल को आराम नहीं॥

दोहा...निज सारथी राम ने, दिया यमवदन नाम।
वज्रावर्त लक्ष्मण ने दिया, बनें सिद्ध सब काम॥

सिद्ध बने सब काम धनुष, ले महलों में आया है।
सिंहासन पर बैठ युद्ध का, नक्शा बैठाया है॥

सोच सभी तजवीज शत्रुघ्न, दिल में हर्षाया है।
और सभी कुछ ठीक हुआ, पर एक नुक्स पाया है॥

दौड़...खबर विना घेरा लावें, तो क्षत्रापन घट जावे।
अक्ल ने चक्कर खाया
कुछ सोचन के बाद और एक ढंग नजर में आया॥

दोहा पहिले लिख एक पत्रिका, भेजूं मधु के पास।
यदि उत्तर कुछ न दिया, मिले मुझे अवकाश॥

देख पत्रिका मधु जरा भी, ध्यान नहीं कुछ लायेगा।
किन्तु वह व्यर्थ समझ पत्र को, रद्दी में गिरवायेगा॥
कारण जब बन जाता है, कार्य होने में देर नहीं।
रस्ता हम को मिल जायेगा, नीति में खतरा फेर नहीं॥

दोहा... शत्रुघ्न ने झट लिया, कागज कलम दवात।
मथुरागढ़ पत्र लिखा, सिद्ध श्री कुशलात।

यहां पर है सब कुशल, आप की कुशल सदा चाहता हूँ।
सर्व उपमावान आप, क्षत्रिय को सुन पाता हूं॥
अपरञ्च यहां जो हुआ सभी, कुछ तुम को समझाता हूँ।
देवो जल्दी उत्तर नहीं, मैं स्वयं आप आता हुं॥

दोहा... रामचन्द्र ने कर दिये, देश सभी तकसीम।
खबर आपको कुछ नहीं, क्या चढ़ रही अफीम॥

यह सभी देश मथुरा नगरी, मेरे अधिकार में आई है।
अब आप मेरे अधीन बने, इसलिए बात समझाई है॥
तीन दिवस अन्दर ही, उत्तर इसका देना चाहिये।
समय देख कर योग सम्बन्ध, अपना सब कर लेना चाहिये॥

कड़ा कवि...प्यारे जी जल्दी देवो जवाब शत्रुघ्न यह लिखवाया।
दे पत्रिका हाथ दूत को वहां पठाया ॥

दोहा...दूत अयोध्या मे चला, पहुंचा मथुरा जाय।
मधुराजा को जा दई, मस्तक प्रथम नवाय ॥

मस्तक प्रथम नवाय मधु ने, पत्र हाथ जब लीना।
पढ़ कर के सब हाल समझ कर, फैंक किनारे दीना ॥
कहा दूत से जाकर कह दो, पत्र उसने रख लीना।
बात समझ मामूली नृप ने, ध्यान नहीं कुछ कीना ॥

दौड़....दूत ने वापिस आकर, कहा सब कुछ समझाकर।
शत्रुघ्न आनन्द पाया
दल बल लेकर चल दिया, नदी तट पर विश्राम कराया ॥

दोहा... गुप्तचरों से हर समय, रखते खबर तमाम।
एक दिन आ कहने लगे, लगी होन अब श्याम ॥
वन कुबेर की सैर को, गये इस समय भूप।
भ्रमण कर रहे बाग में, रानी संग अनूप ॥

मगन हो रहे भूप सैर में, दिल में नहीं फिकर कोई।
त्रिशूल है आयुध शाला में, और खाली नृप के कर दोई ॥
आन अनुपम समय मिला, अब देरी का कुछ काम नहीं।
यदि पता लग गया कहीं विजय, होगा फिर मथुरा धाम नहीं

दोहा—सुनते ही शत्रुघ्न ने दिया कूच करवाय।
मथुरा के चारों तरफ लिया घेरा लगाय ॥

अधिकार शस्त्र शाला पे जाकर, अपना प्रथम जमाया है।
फिर तोप एक दम चला दई, मारू बाजा बजवाया है ॥

लवण कुमार ने उसी समय, आ सन्मुख युद्ध मचाया है।
इस तर्फ लगा संग्राम होन, उस तर्फ मधुचल आया है ॥
दोहा---लवण कुमर संग्राम में, परभव गया सिधार।
सुत मरना सुन मधु को, छाया रोष अपार ॥
किन्तु पुण्य विना प्राक्रम, मानिन्द फूस के होता है।
और विना पुण्य यह जीव हाथ, मस्तक पर धरकर रोता है ॥
देख रूप विकाल शत्रुघ्न, के योद्धे घबराये हैं।
जो गये सामने मधुवीर के, वह सब मार भगाये हैं ॥
दोहा---देख हाल यह मधुक का, चढ़ा शत्रुघ्न आप।
लगा मधुक से कहन यों, चढ़ा धनुष शर चाप ॥
क्यों साहिब अब किस लिये, रहे चौकड़ी भूल।
कहां गई शक्ति तेरी, दिखा हमें त्रिशूल ॥
कहां गई त्रिशूल कहो जो, चमरेन्द्र वाली थी।
जिस शक्ति पर तुमने पत्रिका, फाड़ गई डाली थी ॥
परवाह तक न करी अक्ल से, क्या बुद्धि खाली थी।
स्वाद उसी का मिला चाल, उल्टी तुम ने चाली थी ॥
दौड़- --यदि है जान प्यारी, मान लो शर्त हमारी।
आज्ञा में चलना होगा ॥
दोहा—दे त्रिशूल क्षमा मांगो, नहीं कर मल रोना होगा।
कपट कर मधु आयुध शालाला घुसे सूने घर जिम श्वान।
अब जीवित तुम को नहीं, दूंगा हरगिज जान ॥
देऊंन तुमको जान उछलकर, बातें करे अकड़ की।
सिंह कभी डर सकता है क्या, धमकी से गीदड़ की ॥
परभव भेजूं तुझे हकूमत, देकर मथुरागढ़ की।
त्रिशूल कहां तू सह न सकेगा, मार एक थप्पड़ की ॥

दौड़—वध बख्तर तड़के है, मेरे भुजबल फड़के हैं,
जरा आगे तो आओ।
क्षत्रिय का यह वार आज, खाकर परलोक सिधाओ ॥

दोहा—गर्म गर्म दोनों तर्फ़, हुई परस्पर बात।
फिर क्या था संग्राम में, चलन लगे दो हाथ ॥

गाना—संग्राम का वर्णन

तर्ज—लावणी लङ्गड़ी सिकस्त।

तीर सरासर चले समर में, खांडा खट खट खटक रहा है।
धनुष विकम्प करे जैसे कोई, फनियर फण को पटक रहा है ॥
पांव न पीछे अश्व धरे, खा शत्र अगाड़ी सटक रहे हैं।
पैर फंसाकर काठी अन्दर, बिना ही सिर धड़ लटक रहे हैं ॥

शेर—आता हुआ जब वार मधु का, शत्रुघ्न को जँच गया ॥
फुर्ति से रथ को छोड़ लग कर. भूमि से झट बच गया ॥
खाली गया वह वार अणी से, शत्रुघ्न जब बच गया।
मधु नृप के हृदय में मानों, शोर सा एक मच गया ॥
बचा के मधु का वार शत्रुघ्न, आके सम्मुख मटक रहा है।
तीर सरा सर चलें समर में, खाण्डा खट खट खटक रहा है ॥

दोड़—वज्रावर्तज धनुष को, चिल्ले लिया चढ़ाय।
संग्रामी रथ मधुक के, सम्मुख दिया अड़ाय ॥

सम्मुख दिया अड़ाय फेर, टंकार धनुष का लाया है।
फट गया गोल सब शत्रु का, पर मधु नहीं घबराया है ॥
खैंच चाप दशरथनन्दन ने, अपना तीर चलाया है।
जा लगा मधु के हृदय में, झट शरण धरण की आया है ॥

दौड़—हृदय बस फट गया सारा, छुटा है रक्त फुव्वारा।
पड़ा है रण भूमि में—
शूर वीर अलबेला यह अब पड़ा धरण सूनी में।

दोहा—तीर खा कर मधु ने, दिल में किया विचार।
सदा न यहां कोई रहा, यह संसार असार॥

चक्रवर्ति से चले गये, उन के न भूमि साथ गई।
थे सुन्दर तन अवतारों के, उनकी भी एक दिन राख हुई॥
संयोग मूल दुखका कारण, शास्त्र में यही बताया है।
अफसोस मनुष्य तन पाकर के, मैंने यह वृथा गँवाया है॥
आगे का न कुछ ध्यान किया. पिछली पूंजी को खा बैठा।
फँस कर इस झूठी माया में, आयु भी आज गंवा बैठा॥

तप किया न करसे दान दिया, विषयों में समय गंवाया है।
औरों को शत्रु समझ समझ, शत्रु को मित्र बनाया है॥
वैर विरोध को त्याग भूपने, शुद्ध भावना भाई है।
फिर समता के प्रभाव तीसरा, स्वर्ग मिला सुखदाई है॥

दोहा—शत्रुघ्न मथुरा लई, मधु दिव पहुँचा जाय।
त्रिशूल वहीं चमरेन्द्र को, दई देव ने आय॥
दई देवने आय मधु, मथुरा का हाल सुनाया।
मित्र तुम्हारा मधु शत्रुघ्न, ने परभव पहुँचाया॥
छल फरेव से मथुरा पर, आकर अधिकार जमाया।
समय हुआ मेरा पूरा, त्रिशूल आप को लाया॥

दौड़ · लीजिये शक्ति अपनी करूं प्रमाण मैं अपनी,
आज्ञा दो अब जाता हूँ।
सुत भी मारा गया मधु की खबर तुम्हें देता हूं॥

दोहा---चमरेन्द्र ने जब सुना, मधु मित्र का हाल।
कोप काल सम कर लिया, रूप अति विक्राल ॥

किया रूप विक्राल क्रोध से, मस्तक पर बल पड़े हुवे।
दांतों से होठ चबाने लगा, और नेत्र दोनों चढ़े हुवे ॥
शत्रुघ्न को मारन के लिये, इन्द्र ने कदम उठाया है।
तब वेणुदेव ने रोक इन्द्र को, ऐसे वचन सुनाया है ॥

दोहा---आप प्रभु कहां पर चले, करके कोप अपार।
हम को भी समझाइये, चलें आप के लार ॥

शत्रुघ्न मथुरा लई, मधु मित्र को मार।
इस कारण उस दुष्ट का, लाऊं शीश उतार ॥

दोहा—बेशक स्वामी आपका, मधु से प्रेम अपार।
किन्तु हमारी अर्ज पर, कुछ तो करें विचार ॥

वासुदेव बलदेव अर्धचक्रि, उनका यह भाई है।
जिनकी ताकत पर आन, मधुराजा की करी सफाई है ॥
तीन खण्ड में महाबली, रावण का पुण्य सितारा था।
हुँकार से धरा काँपती थी, उसको लक्ष्मण ने मारा था ॥
धरणेन्द्र की शक्ति भी, सब इनके आगे हार गई।
और सहस्र एक विद्या रावण की, सारी पांव पसार गई ॥
पुण्य रघुवंशियों का, नर सुर चरणों में गिरते हैं।
फिर किस शक्ति पर बुद्धिमान, हो करके आप बिगड़ते हैं ॥

दोहा—वैशल्या ने आन कर, शक्ति दई निवार।
दशकन्धर अन्याय से, गया जन्म को हार ॥

कुछ सीता माता के शाप ने, दशकन्धर को मारा है।
कुछ नियम अनादि ने भी. अपना काम सभी कर डारा है ॥

प्रति वासुदेव को वासुदेव ही, पैदा होकर हनते हैं।
और तीन खण्ड का ताज शीश धर, सबके स्वामी बनते हैं॥
अन्याय किया शत्रुघ्न ने, निर्दोष मधु को मारा है।
तो उसका भी अब काल शीश पर, आकर आज पुकारा है॥

दोहा—इतना कह कर चल दिया, चमरेन्द्र तत्काल।
मथुरा नगरी का सभी, लगा देखने हाल॥

देखा मथुरा का हाल सभी, प्रसन्न चित्त नर नारी हैं।
घर घर मंगलाचार और, व्यवहार सभी सुखकारी हैं॥
कई भूमिये महल और, अद्भुत जहां सजी अटारी है।
अति ऋद्धिशाली बड़े बड़े जहां, इभ्भ सेठ व्यापारी है॥
जहां चोर जार का काम नहीं, एक दूजे का हितकारी है।
और प्रेम परस्पर ऐसा जैसे, मिला दूध में वारी है॥
मुख पर शुभ लाली दमक रही, कुछ द्वेष न माया चारी है।
खोटी संगत का नाम नहीं, जहां शुभ शिक्षा हितकारी है॥
कष्ट किसी को जरा नहीं, सब इन्तजाम सरकारी है।
अनाथ अपाहिज भूखा प्यासा, देखा न कोई भिखारी है॥
वेश्या लुच्चे गुंडे डाकू न, शराब न मांसाहारी है।
खाते हैं दूध दही मेवा, मिष्टान्न की शक्ति भारी है॥
व्याख्यान धर्म स्थानों में, जाकर सुनते नरनारी हैं।
जहां समोसरे महाव्रत पालक, निर्ग्रंथ मुनि तपधारी हैं॥
तालाव सरोवर बाग बगीचे, खिली जहां फुलवारी है।
क्या कहूं वहां की शोभा जिसने, इन्द्र की मतिमारी है॥
सब साज बाज गायन मीठे, स्वर-ध्वनि लगे अति प्यारी है।
जिह्वा लेखिनी दोनों ने मिल, करके अर्ज गुजारी है॥
कैसे सब हाल बयान करें, एक से एक में गुण भारी है।
बस कोई उपमा दे डालो, यह आया समझ हमारी है॥

दोहा—स्वर्गपुरी सम देख सुख, करने लगा विचार।
भेष बदल संकट हरण, फिरें उधर सरकार॥

जिस ख्याल को लेकर आया था, वह ख्याल बदल गया इन्द्र का।
यह शक्ति का नहीं काम, काम राजा के पुण्य सिकन्दर का॥
असाता वेदनी कर्म प्रजा का, उदय भाव में आया है।
कुछ राग द्वेषांध हुवा इन्द्र भी, मन विचार यह लाया है॥

दोहा—मरने से धर्मात्मा, कभी नहीं घबराय।
घबरायें बिन ध्यान शुभ, श्रेष्ठगति में जाय॥

इसलिये इसे अब मारेंगे, तो श्रेष्ठगति में जावेगा।
मथुरा नगरी से भी बढ़कर, वहां सुख सभी मिल जावेगा॥
जब तक प्रजा सुख में इसकी, तब तक कुछ आर्त ध्यान नहीं।
अशुभ ध्यान के किये बिना, मिलता दुख का सामान नहीं॥
अब यही समझ में आता है, प्रजा इसकी रोगी करदूं।
चिन्ता सागर में पड़ने वाला, इसका मन शोकी करदूं॥
जब पेश न इसकी जावेगी, तब आर्त ध्यान विचारेगा।
और मनुष्य जन्म को फेर शत्रुघ्न, इस कारण से हारेगा॥

दोहा—आर्त ध्यानी कर इसे, फिर पीड़ा देऊं आन।
बदला लेने के लिये, हरूं इस तरह प्राण॥
यह कर विचार चमरेन्द्र ने, किया रोग विस्तार।
दुखित सभी प्रजा बनी, बाल वृद्ध नर नार॥

ताप किसी को चढ़ा किसी को, रीढ़ का दर्द सताता है।
और हृदय रोग से दुखी कोई, नासूर से रुदन मचाता है॥
कोई मृगी रोग से घिरा हुआ, चक्कर खाकर गिर जाता है।
कुष्ट भगन्दर बदहजमी कहीं, यक्ष्मा रोग सताता है॥

किया उपाय महाराजा ने, पर भेद नहीं कुछ पाया है।
उल्टा रूप भयङ्कर धर, व्याधि ने पैर जमाया है॥

दोहा—तेला कर शत्रुघ्न ने, आसन लिया जमाय।
कुल देवी प्रकट हुई, खड़ी सामने आय॥
किस कारण तुमने किया, याद मुझे नृपराज।
प्रगट करो मुख से जरा, अभिप्राय सब आज॥

दोहा—आनन्द मंगल में सभी, थी प्रजा इस धाम।
पर रोग अति फैला, यहां नहीं हुआ आराम॥
देवी तब कहने लगी, राजन करो विचार।
फल दिये बिन ना हटे, अशुभ कर्म परिवार॥

चौपाई - मधु राजा को तुम ने मारा, चमरेन्द्र किया कोप अपारा।
उसने रोग सभी विस्तारा, कारण यह तुम जानो सारा॥

दोहा—मेरी यह शक्ति नहीं, करूं रोग को दूर।
कारण जो था रोग का, बतला दिया जरूर॥

किसी महा पुरुष की कृपा से ही, रोग दूर हट सकता है।
नित्य धर्म करो श्री जिनवर का, जिससे संकट कट सकता है॥
लाखों चाहे प्रयत्न करो, सब के सब निष्फल जायेंगे।
कोई महा पुरुष ही आकर के, व्याधि को शान्त बनायेंगे॥

दोहा—देवी निज स्थान को, गई बता कर भेद।
शत्रुघ्न को हो रहा, मन में असह्य खेद॥

चल दिया वहां से उसी समय, कुछ सोच अयोध्या आया है।
श्री रामचन्द्र को मथुरा का, जो था वृत्तान्त सुनाया है॥
रक्षा के लिये उपाय कोई, श्री रामचन्द्र से पूछता है।
आश्वासन दे शत्रुघ्न को, श्रीराम उपाय सोचता है॥

दोहा—उधर बाग में आन कर, समोसरे मुनिराज ।
केवल ज्ञानी देश और, कुल भूषण महाराज ॥

जब लगा पता श्री रामचन्द्र को, और सभी कुछ भूल गये ।
मुनि दर्शन को चल दिये बाग में, संग बहुत से मनुष्य लिये ॥
उपदेश बाद कर नमस्कार, श्री राम ने वचन उचारा है ।
सम्बन्ध शत्रुघ्न मथुरा का, सुनने का ख्याल हमारा है ॥

दोहा राम—मथुरा से शत्रुघ्न का, क्यों इतना है प्यार ।
तारणतरण जहाज तुम, संशय मेटन हार ॥

दोहा—मथुरा में शत्रुघ्न ने, जन्म लिये कई बार ।
इस कारण शत्रुघ्न का, पिछले भव से प्यार ॥

श्रीधर नामा विप्र एक, मथुरा नगरी में रहता था ।
जिसने देखा सो कामदेव का, रूप उसी को कहता था ॥
एक दिन रानी की नजर पड़ी, झट विप्र महल में बुलवाया ।
इच्छा थी इससे प्रेम करूं, पर उधर अचानक नृप आया ॥

दोहा—देखा जब भूपाल को, रानी मन घबराय ।
उधर विप्र को भी गया, भय से चक्कर आय ॥

झट अपना आप बचाने को, रानी ने बात बनाई है ।
विश्वासघात किया विप्र से, परभव का भय नहीं लाई है ॥
जो नारी का विश्वास करे, उसने निज बुद्धि गंवाई है ।
रोनी सी सूरत बना रानी, नृप को यों कहने आई है ॥

दोहा—देखो तो महाराज यह, कौन महल मंझार ।
कहता है देवो मुझे, आभूषण सभी उतार ॥

भूषण सभी उतारो जल्दी, वस्त्र भी देवो ला करके ।
घोंट गला वरना मारूं, कहता है धौंस दिखा करके ॥

पुण्य योग तुम आ पहुंचे, कुछ उमर हमारी बाकी है।
ऊपर से बुगला भक्त विप्र, यह अन्दर से महा पापी है॥

दोहा...देख हाल सुन भूप को, चढा क्रोध विकराल।
वन्दी करवा कर उसे, दई हथकड़ी डाल॥

हुक्म दिया वध भूमि में, ले जाकर इसको मरवादो।
जिसकी मर्जी आकर देखे, सब जगह यह डोंडी पिटवादो॥
उस तरफ मुनि एक आ निकले, जिस तरफ इसे ले जाते थे।
करुणा सागर वोह महामुनि, जो इसे बचाना चाहते थे॥

दोहा... कल्याण मुनि के कथन से, दिया भूप ने छोड़।
श्रीधर ने भी व्यसन से, निज मन को लिया मोड़॥

समझ लिया कि धर्म विना, दुनिया में कोई मित्र नहीं।
अब काम पड़े तब बनें मित्र, पीछे दिखलाते छित्तर वही॥
कल्याण मुनि ने आज मुझे, कल्याण का मार्ग दिखाया है।
दुनियां को झूठी समझ विप्र ने, तप संयम चित लाया है॥

दोहा... संयम व्रत को पाल कर, पहुंचा स्वर्ग मंझार।
फिर मथुरा में आन कर, लिया जन्म यहां धार॥

चंन्द्रप्रभ नृपराज हरिकांता, एक पटरानी थी।
अचल नाम सुत पुण्यवान्, की अद्भुत पेशानीथी॥
आठ पुत्र थे और उन्हों की, मात पृथक् मानी थीं।
भानुप्रभादि आठों की, मति उलटी मस्तानी थी॥

दौड़— विरुध थे अचल भ्रातसे, द्वेश था उस की जात से
खत्म करना चाहते थे,
किन्तु पुण्य था अचलकुमर का, समय नहीं पाते थे॥

दोहा— एक दिन देखा अचल को, फंसा काल के गाल।
मन्त्री ने दौड़ा दिया, देकर कुछ धनमाल॥
प्राण बचा कर भाग चला, चल एक अटवी में आया है
लगा पांव में कांटा एक, उसने लाचार बनाया है॥
एक सावत्थी का वैश्य पिता, माता ने घर से निकाला था।
अङ्क नाम था उस वन में, वह फिरता लकड़ी वाला था॥

दोहा— कांटे से देखा अचल, हुआ अति लाचार।
निज सिर से फिर अक ने, दिया भार का डार॥

फेंक भार को दूर अचल का, कांटा तुरत निकाला है।
कुछ सुना हाल उस के दुःख का, कुछ अपना भी कह डाला है
दुखिया का हाल सुने दुखिया, तो असर बहुत कुछ होता है।
जिसने पहिले दुःख देखा सो, दुखिया के दुःख का खोता है॥

दोहा— कांटा लेकर अचल ने, दिया अंक के हाथ।
और उसे कुछ द्रव्य दे, कही इस तरह बात॥
अय भाई मुझ पर किया, जो कुछ तुमने उपकार।
समय यदि कोई मिला, देऊं सभी उतार॥

मथुरा नगरी का नरेन्द्र, तू मुझे बना सुन पावे।
कांटा यह उस समय आन कर, यदि मुझे दिखलावे॥
जो मर्जी सो मित्र उस समय, वोही तुझे मिल जावे।
अटल वचन यह क्षत्रिय का, दुःख दूर सभी होजावे॥

दौड़—वचन देकर चल धाया, कौशाम्बी नगरी आया।
पुण्य का ढंग निराला
धनुष कला वहाँ सीख रहा था, इन्द्रदत्त भूपाला॥

दोहा—इन्द्रदत्त मैदान में, सिंह गुरु संग जाय।
धनुष कला सीखन लगा, उधर अचल गया आय॥

गुरु आज्ञा अनुसार इन्द्रदत्त, कर में धनुष जंचाता है।
पर हाल देखकर अचलकुंवर, कुछ अपना शीश हिलाता है॥
फिर अंग चेष्टा देख गुरु ने, अचल पास बुलवाया है।
कुछ कला आप भी दिखलावो, यों गुरु ने वचन सुनाया है॥

शेर—धनुष को ले हाथ शर, चिल्ले चढ़ाया वीर ने।
खींच कर कानों तलक, गुरु से कहा रणधीर ने॥
यदि मैं चाहूँ तो मध्यान्ह में, सूर्य को छिपा दूं।
एक तीर से तूफान की, तस्वीर दिखादूं॥
मानिन्द प्रलय काल के, भूमि को हिलादूं।
ताजा फव्वारा काढ़ के, पानी का पिलादूं॥

दोहा—तीरन्दाजी की कला, दिखा किये सब दंग।
अचल कुंवर के सामने, लगते हैं सब नङ्ग॥

इन्द्रदत्त ने अचलकुंवर को, निज पुत्री परणाई है।
पृथ्वी नामा राजकुवारी, सर्व कला सुखदाई है।
चढ़ा सितारा अचलकुंवर का, दिन-दिन कला सवाई है।
अंग आदि देश विजय करके, कुछ शक्ति और बढ़ाई है॥
जब देखा शक्ति पूर्ण है, मथुरा पर धावा बोल दिया।
जा सीमा पर करके पड़ाव, जो था मार्ग सब रोक लिया॥
उस तरफ आठों भाइयों ने भी, अपनी सेना तैयार करी।
. दारू गोला शस्त्रादि सब, तोपों में भी बारूद भरी।

दोहा—चन्द्रप्रभ प्रधान फिर, गया अचल के पास।
नमस्कार करके किया, ऐसे वचन प्रकाश॥
कौन आप किस पर चले, अपना कटक चढ़ाय।
किसकी इसमें हार है, किसकी विजय कहाय॥

वह मनुष्य ही क्या दुनिया में जिसको, हानि लाभ का ज्ञान नहीं।
अज्ञान के वश इस आत्म को, दुर्गति तक का ध्यान नहीं ॥
जो सत्पुरुषों का कहना है, उस पर तो आप विचार करो।
चाहे प्राण कण्ठ तक आ जावें, पर इतनों पर ना वार करो ॥
कण ऋद्धि धार दूजे गँवार, तीजे जो श्रेष्ठाचीरी हो।
पंचम गोत्री और छठा कोई, जो धर्मी पर उपकारी हो ॥
सप्तम स्त्री अष्टम क्लीव, और क्षमा का जो अधिकारी हो।
दसवें कोई कर्म उदय वाला, एकादश अनाथ भिखारी हो।
द्वादशवें न्यायी भूप तेरहवें, धर्म मुनिव्रत धारी हो।
सम्यक् धारी चौदहवें, पन्द्रहवें, जो कोई समता धारी हो ॥
वैर विरोध कभी आस पास, वालों से नहीं करना चाहिये।
दुर्भाव कभी बदला लेने का, दिल में नहीं धरना चाहिये ॥

दोहा...जो जो तुममें किसी ने, किया फरेब और फंद।
तुमको सब हितकर हुआ, क्योंकि पुण्य बुलंद ॥

क्योंकि पुण्य बुलन्द किन्तु, अब मानो कथन हमारा।
तो फिर यहाँ पर जगह द्वेष की, बरसे प्रेम फुव्वारा ॥
सदा सहायक रहा आपका, आगे रहूँ तुम्हारा।
बुद्धिमान को होता है बस, काफी एक इशारा ॥
दौड़—कहा अब मानो हमारा, मिटाओ झगड़ा सारा।
आपस में मिलना चाहिये
वैर विरोध तज कर भाइयों को, गले लगाना चाहिये ॥

दोहा—जो कुछ मर्जी आपकी, मुझे वही स्वीकार।
ऐसे मिलने से उन्हें, होगा महा अहंकार ॥

तुम प्राणदान दाता मेरे, इसलिये सभी स्वीकार मुझे।
पर उन को भी कोई बूंटी दो जिस तरह ईर्ष्या द्वेप बुझे ॥

जो रास्ता आप बतावेंगे, उस पर मैं चलना चाहता हूं।
प्रतिकूल आप की मर्जी के, कुछ भी नहीं करना चाहता हूँ॥

दोहा—मंत्री ने झट परस्पर, करवा दिया तब प्रेम।
फिर क्या था दोनों तरफ, लगा बरसने क्षेम॥

राज तिलक मथुरा नगरी का, अचल भूप को करवाया।
पूर्व पुण्य जो किया जहाँ, भोगन का अवसर शुभ आया॥
भाई बान्धव क्या सभी प्रेम से, एक हुक्म में चलते हैं।
प्रत्येक चौधरी बने जहाँ,वहाँ, सारे ही कर मलते हैं॥

दोहा...मुख्य नृतकों का वहाँ, आया नट गिरोह एक।
बांसों पर नट नाचते, रहा भूपति देख॥

जिसने कांटा काढ़ा था, सो अंक नजर वहाँ आया है।
उसी समय पहिचान भूप ने, अपने पास बुलाया है।
प्रदान किये गांव कई, मन्त्री पद पर आरूढ़ किया।
यदि मित्र हो तो ऐसा हो, मित्र को सुख भरपूर दिया॥

दोहा—बिन्दु से सिन्धु करे, यही बड़ों की रीत।
कष्ट कुसंगत से मिले, जो चलते विपरीत॥
श्री समुद्राचार्य, मुनि पधारे आन।
नृप ने जा सेवा करी, सुना धर्म व्याख्यान॥

वैराग्य मजीठी रंग चढ़ा, सब राज पाट को छोड़ दिया।
यह नाशवान दुनिया झूठी, विषयों से मनको मोड़ लिया॥
पंचम देवलोक पहुंचा, तप जप करनी करके भारी
सो अचल आन शत्रुघ्न हुआ, यह भ्रात तुम्हारा हितकारी॥
अंक जीव संग्रामी रथ का, बना सारथी आ करके।
इस कारण प्रेम था मथुरा से, सब कहा तुम्हें समझा करके॥

कई जन्म यहाँ पर किये इसने, कोई प्रेम पुराना पड़ा हुआ।
पूर्व प्रेम से मांगी मथुरा, था चित्त उसी में अड़ा हुआ ॥

गाना—कर्म पूर्व जन्म के पेश, सब जीवों के आते हैं।
जीव सुख और दुःख अपने, एमालों से ही पाते हैं ॥टेक॥

कसौटी नेक बद ये परखने की एक किस्मत है।
भली याके बुरी किस्मत ये प्राणी खुद बनाते हैं ॥१॥

जीव बलवान् है जब कि ज्ञान मंत्री को ले संग में।
धर्म पुरुषार्थ करने से कर्म सब भाग जाते हैं ॥२॥

सदाचारी वफादारी से कर उपकार दुनिया में।
ज्ञानी पुरुष दुनिया के न झगड़ों बीच आते हैं ॥३॥
नरक तिर्यंच के दुःख देने वाली ये कषाये हैं।
मिले निर्वाण पद उनको जो चारों को मिटाते हैं ॥४॥
दान और शील तप करना भावना नेक हो जावें।
तरे संसार में वो ही जो प्रभु के गीत गाते हैं ॥५॥

दोहा—श्री प्रभापुर नगर में, श्री नन्दन एक भूप।
रानी जिसके धारणी, पुत्र सात अनूप ॥

बड़ा पुत्र सुरनन्द और, दूसरा श्रीनन्द कहाता था।
तिलक नाम तीसरे का, जयचन्द नाम चोथे का था ॥
पंचम सुन्दर चमर छठा, जयमित्र सातवां सुखदानी।
पुत्रों सहित नरेन्द्र को, वैराग्य हुआ सुन जिन वानी ॥

दोहा—अष्टम छोटे पुत्र को, दिया भूप ने राज।
प्रीतिकर गुरु पास जा, सारा आत्मकाज ॥

राज ऋषि जा मोक्ष विराजे, अमज्ञान को पाकर के।
द्रुत जंघा चार हुई लब्धि, सातों भाइयों को आ करके ॥

सातों मुनियों ने मथुरा, नगरी में चौमासा आन किया।
अष्टम दशम द्वादशादि तप, संयम रस को छान पिया॥

दोहा—आहार न मिलता सूझता, मथुरा नगरी मांय।
अन्य ग्राम सातों मुनि, करें पारणा जाय॥

उनकी तप जप करणी से, सब रोग शान्त हो जायेगा।
लब्धि धारक मुनि के चरणों में, जो कोई मस्तक नायेगा॥
गरुड़ सामने सर्प इस तरह, समझो रोग न पायेगा।
चमरेन्द्र कृत सब रोग हटें, घर घर में मंगल छायेगा॥

दोहा—एक दिवस सातों मुनि, पुरी अयोध्या आय।
लेन पारणा सेठ के, घर में पहुँचे जाय॥

छन्द—फिरते चौमासे में कहां, अर्हद्दत्त को शंका भई।
भावविन कर जोड़ कुछ, भोजन मिठाई सब दई।
सोचता दिल में रहा, किस काम का आचार है।
भेष तो साधु का पर, भगवान् की लोपी कार है॥
द्यु तिवर आचार्य जो, उपाश्रय में रहते थे यहाँ।
आहार करने के लिए, सातों मुनि आये वहाँ॥
मुनि द्यु तिवर आचार्य ने, स्वागत मुनि जन का किया।
प्रणाम कर भोजन चुकाने, के लिए कमरा दिया॥

दोहा—द्युतिवर ने उन्हों से, पूछा सब वृत्तान्त।
हाल सभी बतला दिया, आदि अन्त पर्यन्त॥

द्यु तिवर के सिवा किसी ने, जरा नहीं सम्मान किया।
और आत्मार्थी मुनियों ने, अपमान पै ना कुछ ध्यान दिया॥
गगन गति कर गये मुनि, मथुरा में चरण टिकाया है।
अर्हद्दत्त इस तरफ सामायिक, करन उपाश्रय आया है॥

दोहा—शिष्य सभी गुरुराज से, लगे पूछने हाल।
कौन मुनि यह कहाँ से, आये यहां पर चाल॥
जिनमत भूषण महामुनि, हैं असली निर्ग्रन्थ।
छोड़ दिया संसार सब, साध रहे शिव पन्थ॥
लब्धिवन्त महन्त जब, सुने मुनि निर्दोष।
अर्हद्दत्त करने लगा, कर मल मल अफसोस॥
अर्हद्दत्त मथुरा गया, क्षमा मांगने हेत।
मुनियों से मांगी क्षमा, सेठ ने विनय समेत॥

सम दम क्षम के धार सप्त, वह महामुनि कहलाते हैं।
आत्म निर्मल करने को, तप संयम ध्यान लगाते हैं॥
चमरेन्द्र कृत रोग सभी, अब जल्दी जाने वाला है।
पहिले जैसा समय वोही मथुरा में आने वाला है॥

दोहा— पूर्व भव वृतान्त सुन, हुए खुशी नर नार।
नमस्कार कर चल दिये, सब निज २ घर बार॥

शत्रुघ्न भूप अब खुशी खुशी, मथुरा नगरी में आया है।
सब रोग शोक उपशान्त हुआ, यह देख हाल हर्षाया है॥
सप्तर्षि के चरणों में जा, पांचों अंग निमाए हैं।
स्तुति सहित शत्रुघ्न ने, फिर ऐसे वचन सुनाये हैं॥

गाना

तर्ज—(गउआं की) रोवे विच वन वन दे
गउवां की सुनो पुकार २

सब मिल गावे गुण मुनिवर के। कर दिया बेड़ा पार २ ॥टेक॥
लबधि धारक गुरुवर प्यारे। पुण्य योग से आय पधारें।
नमे चरन हरबार बार ॥१॥ सब०

सकल रोग को दूर हटाया। जलवा लब्धि का दरशाया॥
सुखी किये नरनार नार ॥२॥ सब०

शत्रुघ्न नृप हरषित भारा। नमें मुनि को वारम्वारा॥
सप्त ऋषी सुखकार कार ॥३॥ सब०

चमरेंद्र जो रोग फैलाया। धन्य गुरु तुम दूर हटाया॥
वरत्या मंगलाचार चार ॥४॥ सब०

मथुरा पावन करने आये। जिनमत भूषण दुःख मिटाये॥
भूलेंगे ना उपकार कार ॥५॥ सब०

जंघाचार मुनिवर प्यारे। अतिशय ने सब कष्ट हटाये॥
भवोदधि से तार तार ॥६॥ सब०

हे नाथ आपकी कृपा से, यह रोग शोक सब दूर हुआ।
नरनारी बच्चां बच्चां का, चरणों में ध्यान जरूर हुआ॥
अब यही प्रार्थना है स्वामी, यहां से न कहीं विहार करें।
हम जैसे पतियों की विनती, पर भी स्वामी कुछ ध्यान करें॥

दोहा—आए हमको हो गये, यहां महीने चार।
राजन् अब हम नियम से, हैं बिल्कुल लाचार॥

नव कल्पी शुद्ध विहार, मुनिराजों का जिन फरमाया है।
जो बिन कारण मर्यादा तोड़ें, सो विराधक कहलाया है॥
जिस कारण घर बार तजा, सो भी कुछ कार्य करना है।
जो आज्ञा श्री जिनवर की है, सो सिर मस्तक पर धरना है॥

दोहा—चलता पानी स्वच्छ रहे, ठहरा गंदला होय।
त्यागी जन चलते भले, दाग न लागे कोय॥

सर्वज्ञों की आज्ञा में, जो चले वही जन सच्चा है।
बस नहीं तो पेट भराऊ ढोंगी, साधुपन में कच्चा है॥

धर्म ध्यान तप जप करने से, कभी न दुःख सताते हैं।
सब रोगों की दवा तुम्हें, एक श्री जिन धर्म बताते हैं॥

तर्ज—(रब मिलदा गरीबी नाले)

सत धर्म को पाले प्राणी। जो सुख पाना चाहते हैं।
क्यूं जनम अमोलक हीरा। नरतन वृथा गवांते हैं॥टेक॥
जितने जीव जगत के प्राणी। उनको प्यारी है जिंदगानी।
मत करो किसी की हानी। गुरुवर यूं फरमाते हैं॥१॥
दिल में रंज कभी न लाना। अभिमान को दूर भगाना।
जो तजे कपट सो श्याना। प्रभु जिनवर फरमाते हैं॥२॥
साधु श्रावक धर्म बताया। जिस पाला सो सुख पाया।
समता धर्म जैन बतलाया। जिसको सुरपति गाते हैं॥३॥
साधु पांच महाव्रत प्यारा। बारा व्रत श्रावक ने धारा।
हो गया उसका निसतारा। जिनके ये मन भाते हैं॥४॥
पराया धन कंकर अनुसारी। जानो माता सम परनारी।
सन्तोषी बन के तृष्णा मारी। ओही मुक्ति पद पाते हैं॥५॥
दुनिया से प्रेम क्या करना। होगा एक दिन निश्चय मरना।
इसलिये धर्म मन धरना। जिससे दुःख नस जाते हैं॥६॥
लगे सेवा धर्म में रहना। पड़े कष्ट जो तन पर सहना।
यही धर्म गुरु का कहना। सुखमयी राह बताते हैं॥७॥

दोहा—वैताढ्य गिरी पर्वत भला, दक्षिण श्रेणी मान।
रत्नपुरी नगरी जहां, नृप रत्नरथ बलवान॥

रत्नरथ भूपाल चन्द्रसम, चन्द्रमणी रानी थी।
मनोरमा पुत्री धर्मन, और बुद्धि लासानी थी॥
एक रोज लगा दरबार, भूप ने परीक्षा करवानी थी।
मनोरमा है चतुर सब तरह, कोयल सम वाणी थी॥

दौड़—भूप का भवन वड़ा था, जन समूह अड़ा खड़ा था।
समय परीक्षा का आया
होनहार उस तरफ आन नारद ने दरश दिखाया ॥

गाना—तुरत कर जोड़ राजा ने, सिंहासन पर वैठाया है।
परीक्षा लड़कियां देंगी, भेद सारा वताया है ॥ टेक ॥
लगी परीक्षा सभी देने, विदुषी लड़कियां क्रम से।
धर्म शास्त्र व वैद्यक की, कला संगीत गाया है ॥ १ ॥
कला चौसठ की सव ज्ञाता, काव्य छन्दों का क्या कहना।
ज्ञान सम दर्श चारित्र, और नौ तत्त्व दिखाया है ॥ २ ॥
विवेचना अष्ट कर्मों की, राजकुमारी ने दर्शाई।
प्रजा राजा मुनि क्या सव, को ही आश्चर्य आया है ॥ ३ ॥
स्याद्‌वाद न्याय की व्याख्या, सभी कह कर सुनाई है।
मुनि नारद ने भी अव नेत्रों, को ऊपर उठाया है ॥ ४ ॥
चली जव सप्त भंगी पर, अकल हैरान है सवकी।
क्या जिनवाणी सरस्वती ने, वास इसके ही पाया है ॥५॥
क्रोध और मान माया का, दिखाया खैंच कर चित्र।
फेर भूपाल ने प्रशंसा, कर प्रश्न सुनाया है ॥ ६ ॥

दोहा—कौन अरी संसार में, दुःख देवे भरपूर।
मित्र कौन ऐसा कहो, करे कष्ट सव दूर ॥

प्रमाद अरि सवके लिये, देता दुःख अति क्रूर।
उद्यम सज्जन के मिले, वने कष्ट काफूर ॥

कौन कहो ऐसा दुनिया में, जो सवको प्यारा लगता है।
और किसका नाम स्मरण करने से, अन्दर क्रोध भलकता है ॥
धर्म चीज ऐसी दुनिया में, जिसको सव कोई चाहता है।
पाप शब्द ही वुरा जगत में, नहीं किसी को भाता है ॥

दोहा—इत्यादिक भूपाल ने, किये प्रश्न कई और।
नारदजी का मन कहीं, लगा रहा है दौड़ ॥
प्रणाम कर कुमारी चली, सभी सहेली साथ।
पीछे से भूपाल ने, कही इस तरह बात ॥

दोहा—जैसी गुणवन्ती सुता, ऐसा कोई राजकुमार।
जिस के संग शादी करें, मेरा यही विचार ॥

राजा के सुन कर वचन, रहे सोचते और।
नारद जी भूपाल से, लगे कहन इस तौर ॥
जैसा चाहिये आप को, उससे भी चौ चन्द।
लक्ष्मण भाई राम का, दशरथ नृप का नन्द ॥

नारद...तीन खण्ड में लक्ष्मण जैसा, राजकुमार नहीं पावेगा।
देख देख खुश होवोगे, जब यहाँ पर ब्याहने आवेगा ॥
शक्ति किस की माँग लखन की, और कोई ले जावेगा।
इससे यदि विपरीत किया, तो हे राजन् पछतावेगा ॥

गाना....सोच सब दूर कर दो, हम उसे बिल्कुल मना देंगे।
बंधा कर मुकुट और कंगना, तेरे दर पर झुका देंगे।
लग्न लिखवा के अब यहाँ से, भेजो केशर लगा करके।
मुहूर्त देख कर बारात, हम वहां से चढ़ा देंगे ॥

दोहा...सुनी काट करती हुई, बातें सभी अपार।
रत्नरथ का कोप कर, बोला राजकुमार ॥
ओ बूढ़े बन्दर मुखे, मुंह सम्भाल के बोल।
क्यों यहां खुलवाने लगा, उन ढोलों का पोल ॥

क्यों शत्रु की प्रशंसा करके, हृदय में बर्छी लाता है।
जाति वैर जिन्हों से, उनके आगे हमें झुकाता है ॥

तेरे जैसा टुकड़े खोर ही, ऐसों के गुण गाता है।
जान बचा कर भाग यहां, क्यों अपनी मौत बुलाता है ॥

गाना---आया व्याह रचाने वाला, उन दुष्टों का।
अब जा जा जा बस चल चल चल (आय)
आंखे दाढी सब पीली, खड़ाऊं ओं के ऊपर चढ़ा हुआ।
शेखी क्या मारता है, पाजी यहाँ खड़ा हुआ।
अब जा जा जा बस चल चल चल ०

(गाना-थियेटर)

तू कौन न व्याहने वाला, इस लड़की का।
ले टीलि लीलि टीलि टीलि टीलि लीलि ॥
ला और कोई दूसरी, बना कर शक्ल।
तब न व्याहना इस, लड़की को अय बे अक्ल ॥

चल चल तू कौन न व्याहने वाला इस लड़की का।
ल टीलि लीलि टीलि टीलि टीलि लीलि ले टीलि ॥

दोहा=ओ बूढ़े तूने अक्ल, दई कहाँ पर खोय।
तुझको क्या संसार में, जो मर्जी सो होय ॥

गाना व०त० . बाबा जाकर के, आत्म का साधन करो।
हा हा खाकर के, चूमें तुम्हारे कदम ॥
बूढ़ा खूंसट हुआ, खोई सारी उमर।
अब यहाँ से पधारो, यह कीजे करम ॥
तुमको किसने कहा, व्याह सगाई लिये।
सच कहो यहां सभा में, उठा के धर्म ॥
कुछ का कुछ बकते हो, क्यों पागल की तरह
जा यहां से चला जा, कुछ करके शर्म ॥

गा० ना०...जा जा मूर्ख अनाड़ी, निर्बुद्धि अधम ।
तू है अविनीत क्योंकि, नहीं है शर्म ॥
कुछ का कुछ बकते हो, पागल की तरह ।
यह कहो उससे, जिससे हो राहो रस्म ॥
उठा धर्म मुझको, कहता तू खोटा कर्म ।
मैंने लेली है क्या तुमसे, विवाह की रकम ॥
दिल में आवे उसे ही, ब्याहो दुलारी को तुम ।
इस मर्ज की दवाई, क्या कुछ भी न हम ॥

दोहा ना०...मनोरमा अब हो चुकी, लक्ष्मण की ही मांग ।
चाहे जितना नाच और, कर ऊपर को टांग ॥

दोहा...नारद का व्याख्यान सुन, चढ़ा क्रोध विकराल ।
अर्ध चन्द्र धक्का दिया, मुनि धरण में डाल ॥

लगे लात और मुक्कों से, नारद की पूजा करने को ।
कभी ताने लाकर कहते हैं, लो राम लखन के शरने को ॥
रत्नरथ महाराजा ने, नारद जी को छुड़वाया है ।
जान बचाई भाग दौड़ कर, पुरी अयोध्या आया है ॥

दोहा...लक्ष्मण जी ने मुनि का, चेहरा लखा उदास ।
आदर से पूछन लगे, बैठा करके पास ॥

किस कारण आनन रहा, मुनि आज कुमलाय ।
कृपया हमको भी जरा, देवें भेद बताय ॥

करने को ही तो यहां, आये आज पुकार ।
पर कारण हम दुःख सहें, आदत से लाचार ॥

होन हार ले गई मुझको, कल रत्नपुरी में उठा करके ।
रत्नरथ नृप बैठा था, अपना दरबार लगा करके ॥

मनोरमा कुमारी ने परीक्षा, दई वहाँ पर आ करके।
कुछ भीड़ देख हम भी जा बैठे, नृप का आदर पा करके॥
मनोरमा की करू' प्रशंसा. शक्ति नही जबां में है।
जो दृश्य बैठ कर देखा था, मैंने वहाँ खास सभा में है॥
अद्भुत वस्त्र थे तन ऊपर, थी जवाहरात जड़ी सारी।
मानिंद सूर्य के मस्तक, पर तेज था शुभ लक्षण भारी॥
थी नागिन सी दो जुल्फ मांग, मोतिन की लगे लड़ी प्यारी॥
और मंद मंद मुस्कान छवीली, सन्मुख इन्द्राणी हारी॥
शक्ति नहीं इतनी मुझमें, कैसे सब हाल बयान करू'।
रोना आता है रघुकुल की बेइज्जती पर जो ध्यान धरू'॥

छन्द नारद हाल आगे का कहूं, तबियत तो यह चाहती नहीं।
यदि न कहूँ तो पाप है, अन्दर समाती भी नहीं॥

ख्याल था मेरा यह, लक्ष्मण की यह रानी बने।
कोयल सी जब बोले सभी, रणवास लाशानी बने॥
लेने के देने पड़ गये, आगे जरा सुन लीजिये।
और लाज सूर्य वंशियों की, भूपति रख लीजिये॥
नृप ने कहा जैसी कुमारी. पण्डिता गुणवान है।
ऐसा ही होना चाहिये, कोई कुंवर भी पुण्यवान है॥

दोहा--लक्ष्मण सा मैंने कहा, पुण्वान न कोय।
सूर्यवंशिन के सिवा, सभी जगत लो टोह॥

यह शब्द उन्हों के हृदय पर, मानिन्द तीर के जा बैठा।
नृप रत्नरथ का पुत्र उस समय, गुस्से में भर कर ऐंठा॥
कुछ लात और मुक्कों से मेरी, कुगति वहां पर कर डारी।
हैं द्वेषानल में जले हुये, रघुवंशिन को देते गारी॥

दोहा--लिये आपके हम फिरें, खोते अपनी जान।
किन्तु तुमको कुछ नहीं, रहा हमारा ध्यान ॥

इस बात में आपने क्या सोचा, हमको भी जरा बता देवें।
या भय के मारे छिप बैठें, या कुल की आन बचा लेवें ॥
अब मनोरमा को और कोई, राजा यदि ब्याह ले जावेगा।
तो रघुवंशियों का दाग, कभी हरगिज न धोया जावेगा।

दोहा--नारद ने पालिश दई, अच्छी तरह चढ़ाय।
अक्षर अक्षर अनुज के, हृदय गये समाय ॥

फिर तो लक्ष्मण का तेज राम के, कहने से भी रुका नहीं।
आखिर उनके अनुकूल हुए, जब देखा कि यह झुका नहीं ॥
झट शूर वीर तैयार हुए, जंगी रणतूर बजाया है।
सीमा पर सेना डाल फेर, ऐसे एक पत्र लिखाया है ॥

दोहा--सिद्ध श्री सर्वोपमा, रत्नरथ गुणधाम।
कल सीमा पर आपकी, आगये लक्ष्मण राम ॥

आगये लक्ष्मण राम कुशल, जो नित्यप्रति सबकी चाहते हैं।
और तुमको गुणगंभीर समय, सोचन वाला सुन पाते हैं ॥
जो कुछ तुमने कहा सुना, उसको तो क्या बतलाना है।
जो बुरी तरह पीटा अनाथ, नारद क्या सूना जाना है ॥
अब मनोरमा का डोला देदो, खुशी खुशी यह कहना है।
यदि नहीं तो बस रण भूमि में, यहां रक्त फुव्वारा बहना है ॥
अच्छा है प्रसन्नता पूर्वक, यह काम सभी सम्पन्न बने।
शान्ति से होवे काम सभी, जिससे न कोई अप्रसन्न बने ॥

दोहा ...परवाना लिख मन्त्री ने, दिया दूत के हाथ।
रत्नरथ को जा दिया, प्रथम नवाकर माथ ॥

जब पढ़ा पत्र तो क्रोधानल ने, सहसा लाट दिखाई है।
धक्का दे दूत को काढ दिया, नयनों में सुर्खी छाई है॥
रत्नरथ ने पुत्र को, समझाने में न कसर करी।
पर होनहार ने भी अपनी, गहरी आकर के नीम धरी॥
दल बल सबल विमान सजा, कर आन मोरचा लाया है।
इधर लखन ने भी अपना, दल सम्मुख जाय अड़ाया है॥
निज संग्रामी रथ का जब, लक्ष्मण ने पेच दबाया है।
तब रत्नरथ ने सम्मुख आकर, ऐसे वचन सुनाया है॥

दोहा—कौन सुभट ने आन कर, लिया नया अवतार।
दुर्जय क्षत्रिय भूप पर, पकड़ी है तलवार॥

पकड़ी कर तलवार, कौनसी क्षत्राणी ने जाया है।
यह किसने कर अभिमान, रत्नपुर पति को पत्र पठाया है॥
अब डोला लेने वाले का, तलवार से शीश उड़ाना है।
बस एक न जीता जाय, सभी को परभव आज पठाना है॥

दोहा—मैं क्षत्रिय पैदा हुआ, रघुवंशी अवतार।
मान आप का तोड़ने, आया हूँ सरकार॥

पुत्र जमाई यह दोनों, बस एक सार कहलाते हैं।
पर बुद्धिमान् इन से उल्टी, जिह्वा न कभी चलाते हैं॥
मात सुमित्रा क्षत्राणी ने, अतुल बली मैं जाया हूँ।
पत्र भेजा श्री राम ने था, मैं आज्ञा पालन आया हूँ॥

दोहा—वार्तो वार्तो में बढ़ी, दोनों की तकरार।
फिर क्या था संग्राम में, लगी बजन तलवार॥

त्रिखंडी रावण को जिसने, मार धूल कर डाला था।
अनुमान सभी कर सकते हैं, यह राजा कौन विचारा था॥

पराक्रम अनुज का देख तुरत, सन्धि का चिह्न दिखाया है।
फिर रामचन्द्र के चरणों में, भूपाल ने शीश निमाया है॥

दोहा—खुशी सहित भूपाल ने, लक्ष्मणजी के साथ।
मनोरमा परणाय कर, बना लिया जामात॥

श्री दामा राम को परणाई, दिल खोल भूप ने दान दिया।
फिर विधि सहित कर दिये विदा, और सभी योग्य सम्मान किया
दक्षि श्रेणी के विद्याधर जो, सभी भूपति साध लिये।
तीन खण्ड की बागडोर को, बैठे हैं निज हाथ लिये॥

दोहा—लक्ष्मण के रानी सभी, थी सोलह हजार।
आठ बड़ी पटरानियां, इन्द्राणी अवतार॥

आद्य वैशल्या रूपवती, दूजी तीजी वनमाला है।
कल्याण मालिका नाम चतुर्थी, दुर्गुण जिसने टाला है॥
पंचम नाम रत्नमाला, सुखमाला नाम छटी का था।
सप्तम जितप्रभा का दिल, गौरव मध्यसिंह कटि सा था॥
मनोरमा अष्टम पटरानी, पुण्यवान कहलाती थी।
धर्म ध्यान और पुण्यदान में, अपना समय बिताती थी॥

दोहा—श्रीधर पृथ्वीतिलक दो, तीजा अर्जुन नाम।
श्रीकेशी मघ पांचमा, मंगलकारी काम॥

सुपार्श्व कीर्ति छठा सातवां, विमल कीर्ति वाला था।
सत्यकीर्ति अष्टम जिसने, अशुभ कर्म को टाला था॥
एक एक रानी के पुत्र यह, अष्ट अतुल बलधारी थे।
अढाई सौ थे राजकुमार, जो शूरवीर अवतारी थे॥

दोहा—सीता और प्रभावती, रति निभा गुणखान।
चार कही श्री राम के, श्री दामा पुण्यवान॥

सुख शय्या पर सो रही. जनक सुता सुकुमाल।
रानी को ऐसे हुआ, स्वप्न में कुछ ख्याल॥

शरभ नाम विमान व्योम में. अपनी चमक दिखाता है।
युगल देव जोड़ा वहां से, एक चला तले को आता है॥
अद्‌भुत रंग दिखा करके, प्रवेश मेरे मुख करता हुआ।
फिर आया एक तिमारा सा, खुल गये नेत्र दिल डरता हुआ॥

दोहा—धर्म ध्यान ध्याते हुवे, हो आया प्रभात।
रामचन्द्र के पास जा, कही स्वप्न की बात॥
फल स्वप्न का सोच कर, बोले दशरथ नन्द।
अय रानी सुतहों तेरे, पुण्वान् सुखकन्द॥

सुरपुर से चल कर आये, वह जो पुण्यवान् दो प्राणी हैं।
बस युगल पने पैदा होंगे, यह राजकुमर सुखदानी॥
किन्तु साथ कुछ दुःख भी है, अनुमान नजर यह आता है।
जितना हो तुझसे दानपुण्य कर, जीव को यही सहायता है॥

दोहा—जनक सुता टालन लगी, सभी गर्भ के दोष।
कर्मबन्ध से हर समय, रहती है खामोश॥
सीता का बढ़ने लगा, नित्य प्रति अति सम्मान।
देख देख सौकन लगी, सब दिल में पछतान॥

यदि एक जरा सा कण कारण, वश नेत्रों में गिर जाता है।
तो सोचें आप जरा कैसे, वह मानव को तड़फाता है॥
सौकण का तो कहना क्या, यह बुरी चून की होती है।
यदि पार बसावै सौकण की, तो जड़ा मूल से खोती है॥

दोहा—सीता से प्रतिकूल अब, षड्यंत्र लगा होन।
द्वेष ईर्षा के बिना, दुनियां में घर कौन॥

शस्त्रादि का घाव औषधि, लाने से भर सकता है।
पर सौकन से जो किया घाव, कोई पूरा नहीं कर सकता है॥
यह नागिन से भी बुरी नागिनी, सौत नागिनी होती है।
शाकिनी डाकिनी से भी बढ़कर, सौत पापिनी होती है॥
अग्नि में वह ताप नहीं, जितना दुसह्य दुःख इसका है।
वह कालकूट में जहर नहीं, जितना कि इसके विष का है॥
कांजी पय का मेल कभी, न हुआ न होने पायेगा।
कलधौत* कुधात से मेल करे, तो अपना नाश करायेगा॥

दोहा---सीता के करने लगी, कपटमयी सब प्रेम।
शुक्ल अगाड़ी देखना, कैसा बरते क्षेम॥

यह कर्म महा बलवान जीव के, उदय भाव जब आते हैं।
तब बने सहायक कौन किसी का, सब के दिल फिर जाते हैं॥
जनकसुता को दुःख देने में, कारण सौतें कहाने लगीं।
कुछ कर्मबन्ध का खयाल नहीं, आपस में यों बतलाने लगीं॥

दोहा—चलो सिया के महल में, फिर होवेगी रात।
क्या कुछ लंका में हुआ, सब पूछेंगी बात॥

सब पूछेंगी बात आज सब, चलो महल उसके नारी।
कुछ आगे पीछे होकर के, सीता के महल पहुंची सारी॥
रावण ने क्या प्रपंच किया था, पूछेंगी बनकर प्यारी।
कैसे पतिव्रत धर्म रक्खा, कोई लाज शर्म तो न हारी॥

दौड़--लंका नगरी कैसी थी, शोभा रावण की कैसी थी।
हाल सब यह पूछेंगी॥

लेकर के सब भेद, ढिंढोरा फिर उसका पीटेंगी॥

---

* १ स्वर्ण।

दोहा----करके सारा मशवरा, फूली न अंग समाव।
सज धज कर आने लगी, सिया से करने बात॥
सीता ने सब का किया, स्वागत और सम्मान।
बातों बातों में लगी, अपना ढंग रचान॥
अयि सीते दशकंधर से, डरता था संसार।
उस रावण का था कहो, कैसा रूप अपार॥

कैसा सुन्दराकार कहो, नित्य पास तुम्हारे आता था।
क्या शब्द बोल धमकी देदे. क्या २ तुमको समझाता था॥
क्या खान पान मेवा आदि, सब तेरे लिये मंगाता था॥
कैसे उसके शुभ लक्षण, तुझको रंग रूप दिखाता था।

गाना

तर्ज--प्रभु वीर ने हमको फरमाया नित्य पंच प्रमेष्टी नमो॥२॥

क्या बात कही तुमने मुखसे, क्या शर्म जरा नहीं लाई हो।
अनुचित बातें सब बोल रहीं, जब की तुम यहां पर आई हो॥
तुम आई हो यहां पर जब की, क्या अक्ल गई मारी सब की।
कुछ सोच करा बन्दी रत्न की, क्या ओछी बात सुनाई है॥
मैंने देखा नहीं कोई मुख छाती, क्या मूर्ख थी धोखा खाती।
नहीं कसम अंगूठे की खाती, ना ऊपर नजर उठाई है॥

दोहा----किया इशारा एक ने, दूजी को समझाए।
कागज साही लेखनी, सम्मुख रक्खो लाए॥

कागज दवात मंगा करके झट, कलम सिया आगे कीनी।
चित लगा तुम्हारे महलों में, क्या पवन चले धीमी धीमी॥
उस रावण के चरण अंगूठे का, इस कागज पर नक्शा कीजे।
कैसा था बलवान हृदय, हम को भी कुछ दिखला दीजे॥

दोहा—भोली सीता ने किया, चित्र अंगूठा अंग।
सभी भाव दिखला दिये, भरा बीच में रंग॥

भरा बीच में रंग सिया की, बुद्धि नहीं बरनी जावे।
वह चित्र देखकर चित्रकार भी, अपने मन में शरमावे॥
ऊपर से प्रेम दिखाती हुई, सौकन निज महल सिधाई हैं।
समय देख श्रीराम सामने, बातें वही चलाई हैं॥

गाना

सीता की सौतों का राम को बहकाने की कोशिश करना

तर्ज—सच्चा भक्त बन जाऊँ, प्रभु देश धर्म गुरुजन का।
मैं तो बात सिया की पाई, नहीं जाती बात सुनाई।
ध्यान इसे रहता रावण का, भेद न तुम को इसके मन का!
यह तो धर्म डिगा कर आई॥ मैं तो॥ १॥
रखती न ध्यान धर्म में सीता, ताक किया कागज का रीता।
तस्वीर चरण की बनाई॥ मैं तो॥ २॥
यह रावण का चरण दिखाया, अंगूठे का चित्र बनाया।
दिल में नहीं शरमाई॥ मैं तो॥ ३॥

दोहा—स्त्रियों के इस तरह, होवे सदा क्लेश।
कौन मगज खाली करे, दे इनको उपदेश॥

दे इनको उपदेश सदा, रटती है इसी कहानी को।
कोई दोष नजर में नहीं आता, क्या सुने इन्हों की वाणी को॥
पूछेंगे इसकी बात कहा हम, कभी सिया-महारानी को।
और कहा-तुम सब दूर करो, अपनी अपनी नादानी को॥

दोहा—क्रोधित हो रानी गई, खास महल दरम्यान।
पास बुला सबको लगी, उल्टा ज्ञान पढ़ान॥

श्रीराम ने इस बात पर, तनिक न लाया कान ।
ऐसा करना चाहिए, हमें सुनो अब आन ॥
सुनलो सारी आन आज, ऐसा मैं यत्न बनाऊँगी ।
सीता के हाथों का नक्सा, घर घर में सभी दिखाऊँगी ॥
इस अंगूठे को देख देख, प्रेमी का स्मरण करे सिया ।
बेशक रावण संग लंका में, सीता ने व्यभिचार किया ॥
लेजा बांदी तू तस्वीर री, रावण के चरण अंगूठे की ॥ टेक ॥
सकल घरों में जाकर दिखाओ, अय दासी अब देर न लाओ ।
यह उपाय आखीर री है ॥लेजा ॥१॥
नगर नगर में चर्चा फैलादूं, इन महलों से सीता कढादूं ।
तुम धारो सब मन धीर री ॥ लेजा ॥ २ ॥
सीता का सत देख लिया मैं तब, यत्न अब ऐसा किया मैं ।
क्या अच्छी तदबीर रा ॥ लेजा ॥ ३ ॥

दोहा...लेकर के तस्वीर को, बांदी चली सचेत ।
रस्ता ऐसे तप रहा, जैसे बालू रेत ।

शिखर दोपहरी धूप तेज से, काया सब कुमलाई है ।
बह रहा पसीना ऐसे जैसे, हिम पिघल कर आई है ॥
नारही होश मन व्याकुल है, गर्मी से घिरनी खाई है ।
बोली खुद बैठी महलों में, मुझ पर आपत्ति लाई है ॥

दोहा...प्रत्येक से यों कहने लगी. क्या लाई हूं देख ।
सीता तो बदकार है, तुम समझी थी नेक ॥

दासी तुम समझी थी नेक, पाप सीता का प्रकट होआया है ।
उस कामी रावण से जिसने, अपना सब धर्म डुबोया है ॥
कभी बात न चली महल में, सब हम से भेद छिपाया है ।
यह रवी वंश में है कलंक, जो बीज पाप का बोया है ॥

दोहा .. सीता को करने लगी, जगह जगह बदनाम ।
फिरते फिरते हो गई, बांदी को भी शाम ॥
सीता को पैदा हुआ, एक दिन दोहला आन ।
श्री रामचन्द्र का इस तरह, लगी सभी समझान ॥

दो० सीता...इच्छा करती है मेरी, सब सखियों के साथ ।
एक महल में बैठकर, सुनो अगाड़ी नाथ ॥

सीता—भांति भांति के भोजन और, मेवा मिष्टान्न मंगा लेवो ।
और अच्छी शोभा सहित यहां, उत्सव की जगह बना देवो ॥
फल फूल सुगन्धी सहित बाहर, अन्दर से सभी सजा द वो ।
स्वर ताल सहित स्तुति गायन. ऐसा प्रबन्ध करा देवो ॥
करवा कर अन्न जल पान सभी को, फिर मैं अन्न जल पान करूं ।
और धार्मिक संस्थाओं में, कुछ अपने कर से दान करूं ॥

दोहा---प्रबन्ध राम ने भृत्य से, करवाया तत्काल ।
सीता को जाकर कहा, मण्डप का सब हाल ॥

सब रानी रणवासों की क्या, अवधपुरी थी संग सभी ।
कई देख देख कहते थे, पहिले बंधा न था यह रंग कभी ॥
जनक सुता की जो आशा थी, दोहले की सब बन आई ।
बहुदान पुण्य क्रिया हुई शाम, तब महलों के अन्दर आई ॥

दोहा—इच्छा है मेरी प्रभु, चलें बाग प्रभात ।
आप भी कष्ट उठाइये, जाने का मम साथ ॥

तारों की छाया में करती मैं, सैर चलूं दिल चाहता है ।
सभी दासियां संग बाग में, चलें यही मन भाता है ॥
आज्ञा भेजो माली को, झटपट जो खोले दरवाजा ।
और कहो भृत्य से जोड़ यान को, महलों के सम्मुख आजा ॥

दोहा—आज्ञा पाकर भृत्य झट, लाया यान जुड़ाय ।
और भृत्य जा बाग में, यों बोला समझाय ॥
अय माली झट हो खड़ा, त्याग निद्रा घोर ।
आलस्य में क्यों पड़ा है, होने वाला भोर ॥

भाई आंखें खोल बाग की, सब देखो तुम क्यारी ।
सिया राम की अभी, आ रही बागों में असवारी ॥
इधर फव्वारा खोल नीर का, खिल जावे फुलवारी ।
काट छांट कर जल्द बना ले, गुलदस्तों की क्यारी ॥

दोहा—यहां सवारी अवध से, होकर के तैयार ।
रामचन्द्र और दासियां, चली संग सिया नार ॥

मन्द मन्द चलती वायु, प्रसन्न चित्त करने वाली ।
कुछ अन्य दिनों से थी सवेरे, कुछ चाली भी थी मतवाली ॥
वसन्त ऋतु भी अपने यौवन में, इतराई फिरती थी ।
मानिन्द मोतियों से उड़ते, जुगनु से झलक निकलती थी ॥
दोनों पासे भरकर अंजली, फूलों की डाली खड़ी हुई ।
कई मन्द मन्द मुस्कान सहित, टेढ़ी दरखत पर पड़ी हुई ॥
उभय तर्फ ठंडे मार्ग पर, वृक्ष पंक्तियाँ अड़ी हुई ।
ऊपर से ऐसे हिलें शिखर, मानो आपस में लड़ी हुई ॥

दोहा—महेन्द्रोदय बाग में, जा पहुँचे श्रीराम ।
छोड़ सवारी बाग में, घूमन लगे तमाम ॥

सब संग दासियों के सीता, जिस तरफ घूमने जाती है ।
उस तरफ डालियें सीता के, चरणों में फूल चढ़ाती हैं ॥
इस तरफ इन्हों पर यौवन था, उस तरफ वसन्त न कमती थी ।
स्वागत करने को वनस्पति, मानों सम्मुख आ नमती थी ।
पक्षी चहुं ओर मीठे स्वर से, खुशी खुशी सब बोल रहे ॥

जहां पुष्प खोल मुख हंसते थे, कई हंसने को मुख खोल रहे ।
जैसे मेरु पर नन्दन वन में, सुरगण आनन्द करते हैं ॥
इसी तरह महेन्द्रोदय बन के, गुण अर्ति हरते हैं ॥

दोहा—एक जगह सब बैठ के, लगे लेन विश्राम ।
होनी ने तब सिया को, दिया आन पैगाम ॥

नेत्र दाहिना सिया का, ऊपर से लगा फड़कने को ।
यह हाल देख महारानी का, दिल भी कुछ लगा धड़कने को ॥
आर्त ध्यान के चिन्ह जरा, सीता के मुख पर होने लगे ।
श्री रामचन्द्र जी जनक सुता की, आकृति को जोहने लगे ॥

दोहा—सोचा इसको देर तक, रह न सके चुपचाप ।
हाल पूछने के लिये, बोल उठे स्वयं आप ॥
किस कारण सीता हुआ, चेहरा जरा उदास ।
जो भी दिल का ख्याल है, सभी करो प्रकाश ॥

महेन्द्रोदय बाग उदासी, सारी दूर नसाता है ।
फिर ऐसा कहो कौनसा दुःख, जो तुमको आन सताता है ॥
मन का दुःख या काया का, दोनों में किसका कारण है ।
जो भी कुछ तुमको फिकर हुआ, करदो सब साफ उच्चारण है ॥

दोहा—लगा फुरकने इस समय, प्रभु दाहिना नैन ।
साफ नजर आता मुझे, होगा कोई कुचन ॥

क्या खबर मुझे कुछ और रही, कर्मों की देनी बाकी है ।
यह आंख फुरकना नहीं, कोई कर्मों की आई झांकी है ॥
इस कारण मुझको अर्ति है, यह मन धैर्य नहीं धरता है ।
जिन वचनों पर विश्वास मुझे, जो करता है वह भरता है ॥

दोहा—प्रिये अधीर न हो इतनी, तुम हो चतुर सुजान ।
जान बूझ क्यों वृथा ही, दुःख को लगी बुलान ॥

मतलब अंग फुरकने का भी, कई तरह का होता है।
बाकी कर्मों की गति भुगतता, जीव जिस तरह बोता है॥
जो हुआ सभी कुछ देख लिया, होगा सो देखा जावेगा।
सौ रोगों का रोग शुक्ल, यह तुमको फिकर सतावेगा॥
दुःख सुख में साहसिक रहो, यह जिनवरजी का कहना है।
जो बन्ध निकाचित् कर्मों का, भुगते बिन कभी न रहना है॥
आर्त ध्यान मिटाने को, शुभ धर्म ध्यान ध्याना चाहिये।
और वृथा भ्रम में पड़कर, आत्म को नहीं कल्पाना चाहिये॥
दान पुण्य करने से, निद्यत कर्म सभी टल जाते हैं।
तपी जपी के सम्मुख तो, यह कर्म हाथ मल जाते हैं॥
इस सुस्ती को छोड़ प्रिया, अब सावधान चोला करलो।
दान पुण्य करने में अब, कुछ हाथ और पोला करलो॥

दोहा—बैठ यान में चल दिये, रामचन्द्र सिया नार।
महलों में जा इस तरह, करने लगी विचार॥

गाना (सीता की उदासी में कर्म स्वरूप विचार)
तर्ज—पाप का परिणाम प्राणी भोगते संसार में "सोहनी"

अए कर्म मुझ पर मुसीबत, और क्या २ लायेगा।
यह डर मुझे तेरा खबर, किन उलझनों में फंसायेगा॥१॥
फाड़ हृदय मेरा तू, देखले निर्दय कर्म।
तुझसा निठुर दुनिया में, कोई दूसरा न पायेगा॥२॥
प्रथम दिया भाई का दुःख, दूजे स्वयम्वर का दिया।
तीजे दिया वनवास का दुःख, जोड़ कौन लगायेगा॥३॥
चौथे दिखाया द्वीप राक्षस, हायरे तूने कर्म।
सुन रोम होते हैं खड़े, कैसे कोई कथ गायगा॥४॥

आंख फुरकाई है पंचम, फिर से तूने आज के।
कुछ तो बतादे कौनसी आपत्ति मुझ पर लायेगा ॥५॥
कैसा कहां होता है सुख, मैं आज तक देखा नहीं।
इस जन्म में तू भी मेरा, पीछा न तज कर जायेगा ॥६॥

दोहा—इसी तरह से फिकर में, बैठ रही मन मार।
दान पुण्य करने लगी, दिन दिन प्रति सिया नार ॥

आयंबिल तपस्या करे कभी, संयम शुभ ध्यान लगाती है।
सामयिक नित्य नियम, और श्रेष्ठ भावना भाती है ॥
और कर्म निकाचित बिन भोगे, होनी कैसे टल सकती है।
वमन उछल ने पर औषधि भी, रोक नहीं कर सकती है ॥

दोहा—रामचन्द्र के साथ थे, योद्धा ढयोढीवान्।
सच्चे सेवक थे सभी, शूर वीर बलवान् ॥

नाम एका विजय शूर दूजे का था सुखदेवनजी।
पिंगल तीजा चौथा मध्यानन, पंचम कालक्षेपनजी ॥
षष्टम शूल सुधर नामक, सप्तम अवधान कहता था।
सावधान पहरे पर इनसे, शंक काल भी खाता था ॥

दोहा—एक दिवस कहीं सिया का सुन आये अपवाद।
करते करते बात यह, हो आया प्रभात ॥

शय्या से उठ रामचन्द्रजी, उसी तरफ चल आये हैं।
तो देख राम को सहसा, ढयोढीवान् सभी घबराये हैं ॥
समझा कि आज हमारी बातें. सुनके स्वामी आये हैं।
प्रतिकूल सिया के हम से, कोई शब्द प्रभु सुन पाये हैं ॥
इसी भ्रम को धर हृदय में, सब ही लगे कांपने को।
दशरथ नन्दन इस आकृति को, दिलमें लगे जांचने को ॥

मन में यह विश्वास हुआ, भय इनके मन पर भारी है।
पूछन के लिये रघुपति ने, फिर ऐसे गिरा उचारी है॥

दोहा—क्यों भाई तुम किस लिए, कांप रहे हो आज।
साफ साफ हमसे कहो, अपने दिल का राज॥

आज तलक यह हाल तुम्हारा, कभी न मैंने देखा था।
जो कम्पन वायछिड़ी तुम पर, यह रोग किम तरह बैठा था॥
सत्य सभी कुछ बतलावो, कोई भय न जरा मन में करना।
नहीं सांचको आंच कभी लो, सत्य धर्म का तुम शरना॥

दोहा—मुख छोटे बातें बड़ी, पड़े किस तरह पार।
शक्ति कहने की नहीं, साफा साफ सरकार॥

सम्मुख कहने की शक्ति, हम में स्वामी नहीं पड़ती है।
यदि नहीं कहें तो स्वामी द्रोह के, पाप से आत्मा डरती है॥
इस उल्ट पेच को देख देख, यह मन काया घबराती है।
अब भई छछुन्दर सर्प, न खाई जाय न छोड़ी जाती है॥
जो भी कुछ हमने कहना है, सो स्वामी को दुखदायी है।
सब दोष हमारे क्षमा करें, चरणों में यही दुहाई है॥

दोहा—कैसा ही तुमने किया, होवे आज कसूर।
अभय दान हमने दिया, करो भ्रम सब दूर॥

सत्य सभी कहदो जल्दी, देरी लाने का काम नहीं।
सत्य बराबर दुनिया में, सुखका कोई दूजा धाम नहीं॥
झूठ और प्रपंच बड़ा, दुःखदाई जाल भयंकर है।
सत्यशील सन्तोषी जन को, सब ही देश स्वयंवर है॥

दोहा—स्वामी सब सुन लीजिये, जरा लगाकर कान।
जो भी कुछ हमने सुना, अवध पुरी दम्र्यान॥

अपवाद सब जगह सीता का, स्वामी सुनने में आता है।
हैं गौरवहीन शब्द ऐसे, जहां कान दिया न जाता है॥
वह जिह्वा नहीं हमारे मुख में, जिससे सब हाल बयान करें।
जो भी कुछ हमने सुना आप, उस पर भी न कुछ ध्यान धरें॥

दोहा—जिस कारण लंकेश ने, हरण करी सिया नार।
बिन भोगे कैसे रहा, इसमें कौन विचार॥

स्वादिष्ट वृक्ष पर पक्षी, ताड़न करने पर भी आते हैं।
भूखों को भोजन मिलने पर, खाए बिन कभी न जाते हैं॥
सुगन्ध लिये बिन फूलों की, भमरा कैसे रह सकता है।
आंधी आने पर हिला नहीं, यह वृक्ष कोई कह सकता है॥
लेखनी और पुस्तक नारी, पर हस्त में होती है गते गते।
इस न्याय सिया पतिव्रत धर्म की, कैसे रख सकती है विजये॥
किसी शूरवीर योद्धा आगे, अबला कैसे बच सकती है।
क्या सिंह के सम्मुख आने से, बकरी बच कर भग सकती है॥
जल मिलने पर तृपातुर, कैसे प्यासा रह सकता है।
अग्नि संग तो घृत पिघलेगा, पर कभी नहीं जम सकता है॥
शराबी को तो स्त्री चाहिये, पुत्री बहिन तलक नहीं टलता है।
कामांध काम को तजे नहीं, चाहे संसार में रुलता है॥
अब सोचो रावण के यहां पर, सीताजी थी चिरकाल रही।
फिर कैसे कहो यह जनक दुलारी, शीलरत्न की खान रही॥

दोहा—बड़े घरों को छूत का, लगता नहीं लवलेश।
छोटों के ऊपर सदा, मढ़ते सभी कलेश॥

बड़ा सरोवर गन्दा होने, पर भी स्वच्छ ही रहता है।
चलते जल को निर्मल कहते, चाहे विष्ठा लेकर बहता है॥
कई गमी ग्रहण में बेचारे, पानी को जल्द डुलाते हैं।
मधु तेल घृत सामग्री को, हरगिज न कोई गंवाते हैं॥

छोटी धातु के बर्तन को, सब मांज मांज शुद्ध करते हैं।
चांदी सोने को झूठ नहीं, लगती सब अन्दर धरते हैं॥
शक्तिशाली जन निर्बल को, तो लुच्चा गुण्डा कहते हैं।
और जो मर्जी सो करें बड़े, पर शुद्धाचारी रहते हैं॥
चिरकाल रही रावण घर, सीता फिर भी सती कहाती है।
यह बड़े पुरुष की रानी है, क्या पेश किसी की जाती है॥
अब नम्र हमारी विनती पर भी, ध्यान प्रभु धरना चाहिये।
जिससे अपवाद यह दब जावे, वह काम शीघ्र करना चाहिये॥

दोहा—श्री ऋषभदेव से आज तक, शुद्ध रहा यह वंश।
दाग न लाया किसी ने, रहे सभी प्रशंस॥

जनकसुता के कारण, सारा वंश कलंकित बनता है।
अब लगी कीर्ति नष्ट होने, यह कहे सामने जनता है॥
एक सिया हुई न हुई, रानियों की कुछ आपको कमी नहीं।
और एक बार यह गिरी हुई इज्जत, फिर किसी की बनी नहीं॥

दोहा—इन बातों ने राम का, हृदय दिया विदार।
उत्तर में गम्भीर बन, यों बोले सरकार॥
जो भी कुछ तुमने सुना, साफ सुनाया आन।
इस पर मैं प्रसन्न हूं, देख तुम्हारी बान॥

रविवंश पर अय भाई, हम धब्बा नहीं आने देंगे।
इसका गौरव सबने रक्खा, फिर हम कैसे जाने देंगे॥
इन प्राणों की परवाह नहीं, फिर कौन विचारी सीता है।
निर्मल है कीर्ति दुनिया में, बस वही मनुष्य एक जीता है॥

दोहा—एक खास था गुप्तचर, जिसका था विश्वास।
रघुवर ने एकान्त में, कहा इस तरह भाप॥

गाना (रामचन्द्र जी का गुप्तचर से कहना)

तर्ज—होजा फिदा धर्म पर।

घर घर में फिर के आओ, कुछ देर न लगाओ।
खुफिया पुलिस के वस्त्र, तन पर अभी सजाओ ॥ टेर ॥
कहते हैं पुरुष क्या क्या, सुनो बात कान सारी।
रैयत का हाल सारा, आकर हमें सुनाओ ॥ १ ॥
क्या जिकर है हमारा, करता हो कोई बातें।
जो बात हो यथार्थ, मुझको भी फिर दिखाओ ॥ २ ॥
तुम भेष को बदल कर, फिरना तमाम रातें।
दूंगा इनाम तुझको यह, रहस्य सारा लाओ ॥ ३ ॥

दोहा—आज्ञा सुन श्रीराम की, भेष बदल कर दूत।
लगा नगर में घूमने बन कर वो अवधूत ॥
एक माजरा देख कर, आया खुफिया दौड़।
चरण कमल में शीश धर, बोला यों कर जोड़ ॥

गाना (गुप्तचर का रामचन्द्र से कहना)

आनन्द में अवध है झूठी न बात राई ॥
निन्दा है पर सिया की, घट घट में है समाई ॥ टेर ॥
क्या बात मैं सुनाऊँ, हृदय में दुःख भरा है।
धोबी के आज घर में, कुछ हो रही लड़ाई ॥ १ ॥
औरत से कह रहा था मैं रामचन्द्र न हूँ।
रावण पै रही सीता, फिर घर में ला बसाई ॥ २ ॥
बातें अयोग्य सुन कर, मैं चल पड़ा वहां से।
कुछ अंश मात्र, बातें आकर तुम्हें सुनाई ॥ ३ ॥

दोहा—परीक्षा कारण चल दिये, भेष बदल सरकार।
गली गली में घूमते, बन कर पहरेदार ॥

अपवाद सिया का फैल रहा, जैसे चिकनाई पानी पर।
कोई कहता है धिक्कार राम, और सीता की जिन्दगानी पर ॥
कई कहते हैं सुन्दर शरीर, को दोष नहीं कोई लगता है।
और धिक ऐसों का नाम. बना गन्दा नाला सा बनता है ॥

दोहा—आगे बढ़ एक महल के, तले बैठ गये राम।
ऊपर बातें कर रहे, एक पुरुष दो वाम ॥
बसते हैं धर्मात्मा, तुम जैसे महाराज।
स्वर्गपुरी जैसा समय, अवधपुरी में आज ॥

जहां चोर जार का नाम नहीं. सब पुण्यवानों का रहना है।
मैं आई जबसे देख रही, सब जवाहरात का गहना है ॥
इस नगरी में पुण्यवान ही, आकर पैदा होते हैं।
अन्य जगह उत्पन्न होकर, बेशक कर्मों को रोते हैं ॥
जिससे सारे सुख बतलाऊं, वह जिह्वा नहीं मेरे मुख में।
सब ही आकर मिल जाते हैं, यहां एक दूजे के सुख दुःख में ॥
शुद्ध सामयिक नित्य नियम, प्रेम से सब नर नारी करते हैं।
और पांचों अंग झुका करके, गुरु के चरणों में गिरते हैं ॥
कुछ पुण्य किया था मैंने भी, चरणों की सेवा पाई है।
जो मात पिता ने तुम जैसे, पुण्यवान के संग परणाई है ॥

दोहा—बेशक सिया राम हैं, महा पुरुष पुण्यवान।
जिन की कृपा से मिला, सब को सुख सामान ॥

महा सती सीता माता, रघुकुल में पुण्य निशानी है।
मानिन्द स्वर्ग के बनी हुई, यह अवध पुरी सुख दानी है ॥
यह वही अवध है दशकंधर, का भय यहां पर भारी था।
छिपता फिरता था महाराज, दशरथ राजा लाचारी था ॥

चोर-जार भी उसी समय, सब अपना दाव चलाते थे।
लुच्चे गुंडों से भले पुरुष, मुशकिल से जान बचाते थे॥
वीर विभीषण ने लंका से, शिल्पकार भिजवाये थे।
मानिंद लंक के अवधपुरी, को यहां बनानें आये थे॥
वहां सिया राम के आने से, कुछ पहिले थी तैयार करी।
पुण्य राम सिया लच्मण के से, नगरी मालो माल भरी॥
ऋषभदेव से आज तलक, यह शुद्ध रवि वंश कहाता है।
और लिये प्रजा के भूप यहां, का अपना रक्त बहाता है॥

दोहा—सीता जैसी नार यहां, हुई नहीं कोई और।
शील रत्न की खान है, पतिव्रता सिर मौर॥

यह सिया राम का पुण्य सभी, नगरी जो ऋद्धिवान हुई।
और स्वर्गपुरी के मानिन्द यह, दुनियां में एक विशाल हुई॥
रघुवंशिन का पुण्य सितारा; प्रजा आनन्द करती है।
जहां व्यभिचारी राजा रानी, वहां आपत्ति आ पड़ती है॥

दोहा—सुनकर इस व्याख्यान को, रह न सकी चुपचाप।
तेजी से करने लगी, दूसरी नार आलाप॥
बस जी रहने दीजिये. सेठ साहिब यह बात।
ऐसा न हो गिर पड़े, ऊपर से कहीं छात॥

दो चार और हों सीता सी, महाकष्ट यहां पर आजावे।
प्रलय काल की तरह गर्क हो, अवध रसातल को जावे॥
हां रूप रंग कह सकते हैं, सीता जैसी कोई और नहीं।
पर पतिव्रता में सेठ साहिब, हरगिज सीता सिरमोर नहीं॥
इन बातों की क्या खबर आप, गद्दी पर लेटे रहते हैं।
चिरकाल रही यह रावण के, फिर भी पतिव्रता कहते हैं॥
सेठ साहिब खुल गया ढोल का, पोल सभी रणवासों में।

क्या धूल उड़ाकर आई है जो, गई थी संग वनवासों में ॥
लंकपति से प्रेम सिया का, अबतक भी न दूर हुवा।
कर्त्तव्य बड़ी पटरानी का, हर घर में यह मशहूर हुआ ॥
चरण युगल चित्र सीता पै, दशकंधर का निकल आया।
क्या पता आपको सेठ साहिब, घर-घर में सब को दिखलाया ॥

दोहा—सुन्दरताई पर फिरे, मुग्ध हुवे श्री राम।
खबर नहीं रविवंश की, उड़ रही धूल तमाम ॥

दश अंधों में अंधा बेशक, राम राग में अन्धा है।
कुछ पता नहीं दुनियां में, हो रहा अच्छा या कि मन्दा है ॥
शक्ति से बदबू किसी की, ढकी न ढकने पाएगी।
यदि थोड़े दिन भी रही सिया, तो वंश की खाक उड़ाएगी ॥

दोहा—राग सुगन्ध खांसी खुरक, द्वेष खून मद पान।
कभी छिपाये न छिपे, प्रगटें सन्मुख आन ॥

सो सेठ साहिब कुछ ख्याल करें, यह पाप कहीं छिप सकता है।
जो दाग लगा रविवंशिन पर, इस हालत में मिट सकता है ॥
प्रशंसा करने वाला भी, कर्मों का बन्धन करता है।
वह गिरा हुआ पशुओं से, जो बदनामी लेकर मरता है ॥
धिक्कार है ऐसे बड़प्पन पर, लानत हजार जिंदगानी पर।
धिक् धिक् है बड़े घरानों को, धिक् पटरानी अभिमानी पर ॥

दोहा—श्री राम आगे चले, छोड़ इसे दरम्यान।
धोबी का एक आ गया, सुन्दर बड़ा मकान ॥

दोहा—धोबी को थी हो गई, बहुत घाट पर देर।
घर आने पर न मिली, धोबीन घर में फेर ॥

विवाह के वस्त्र देने थे, जिस कारण देर लगाई थी।
कुछ था क्षुधा का जोर बढ़ा, जिससे आत्म घबराई थी ॥

कुछ पहर रात के बीते पर, मटकू की मां घर आई थी।
इस कारण धोवन पर चाबुक, धोबी ने खूब जमाई थी॥

दोहा—इधर उधर से रुदन सुन आ पहुँचे नरनार।
गुस्से में धोबी भरा, बोला वचन उचार॥
ओ बेहूदी बेशर्म, पगली गन्धी हैवान।
समझा क्या तूने हमें, बिल्कुल ही अनजान॥

बिल्कुल ही अनजान फिरे, कुत्ती सी इधर उधर को।
भय नहीं तुझ को रहा किसी का, सूना तज गई घर को॥
चुपकर छिनाल आज में समझा, तेरे सभी मकर को।
समझ लिया क्या मेरा कुल, तैंने जैसा रघुवर को॥

दौड़—निकलजा मेरे घर से, उड़ादूं सर को धड़ से।
रचा क्या तूने फंदा—
रामचन्द्र जैसा मुझ को भी, समझ लिया क्या बन्दा॥

दोहा—अब तुम को मिलना नहीं, मेरे घर अवकाश।
रामचन्द सा मैं नहीं, रक्खूं तुझ को पास॥

गाना—पीठ यहां से दिखा जल्दी, शक्ल तेरी न भाती है।
चली जा पापनी सन्मुख, मुझे क्यूं मुह दिखाती है॥
बड़े लोगों के घर में देखलो, ना शर्म कुछ होती।
वे कर लेते हैं मनमानी जो, मनमें उनके आती है॥१॥
गई रावन के घर सीता, उसे फिर राम घर लाये॥
उन्हें न पूछते कोई, बुराई छिप ही जाती है॥२॥
बर्तन पीतल का सब मांजे, न मांजे स्वर्ण का कोई।
न दूंगा आने घर माही, मुझे क्या राम पाती है॥३॥

— ※※※ —

रामचन्द्र के सीता के प्रति विचार

दफे हो दूर हो दुष्टन् नालायक वेशहूरन तू।
जो कुलटा कामिनी होवे, सदा ठोकर ही खाती है॥
चाहे मैं गरीव हूं धोवी तो भी पर्वा नहीं तेरी।
निकल जा मेरे घर से तू, वुरी का कोई न साथी है॥६॥

दोहा—वज्राघात हृदय हुआ, सुन धावी की वात।
रामचन्द्र निज महल में, आपहुंचे प्रभात॥

कर मंजन स्नान सामयिक, नित्य नियम का काम किया।
फिर करके अन्न जल पान जरा, सुख शय्या पर आराम किया॥
चतुर गुप्तचर रामचन्द्र ने, सभी जगह फैलाये हैं।
वही वात और वही कहानी, सुनकर सारे आये हैं॥

दोहा—सुनते ही श्रीराम के, दिल में उठी तरङ्ग।
मन ही मन कहने लगे, होकर के अति तङ्ग॥
अहो कर्म तूने किया, कैसा डेरा आन॥
महा कष्ट भोगे मगर, छुटे न अव तक प्राण।

वचपन में भामंडल का, दुःख सीता ने वर्दाशत किया।
फिर कर्म स्वयंवर रचवा करके, कष्ट उसे यह खास दिया॥
खाक छनाई वन वन की, अय निष्ठुर तूने फिरवाकर।
लाखों का रक्त वहाया फिर, रावण से हमको भिड़वाकर॥

दोहा—कष्ट अतुल हम पर पड़े, कह न सके जवान।
फिर भी तू वेढव लगा, आगे और सतान॥

गाना—अय कर्म तूने अचानक, यह मुझे धोखा दिया।
घर का न छोड़ा घाट का, यह क्या, अजव मौका लिया॥१॥

अपवाद प्यारी का हुआ. कुल की भी बदनामी हुई ।
इस बात पेचीदा ने मेरा, मांस तन का खा लिया ॥२॥
निर्दोष सीता को निकालूं, यह सरासर भूल है ।
न निकालूं तो रविवंशन पे, धब्बा लगा लिया ॥३॥
कर्म जो चिकना बन्धा, हरगिज वह टल सकता नहीं ।
किस कदर होनी ने चहुं तर्फो, से घेरा ला लिया ॥४॥

दोहा—ऐसा मन में रामजी, बैठे करें विचार ।
देख आकृति राम की, बोले अनुज उचार ॥
क्यों भाई तुम किस लिए, हो गये आज उदास ।
क्या कारण इसका सभी, करिये आप प्रकाश ॥

राम—दुःख अपने की मैं कथा, धूल कहूँ या खाक ।
होनहार टलती नहीं, यत्न करो चाहे लाख ॥
करते करते सोच उड़ गये, तोते मेरी अक्ल के ।
होनहार ने आज इस तरह, मारा मुझे पथल के ॥
अपवाद सिया रविकुल का सुनकर, रहा हाथ मल मल के ।
सिवा प्राण कुछ रहा न तन में, सब गुण गये निकल के ॥
दौड़—लाज हेम हीरे हारों में, रहे न एक चारों में ।
तर्फ एक करना होगा
लाज रखो रघुकुल की नहीं, जोते जी मरना होगा ॥

दोहा लक्ष्मण—भ्रात सत्य के सामने, कैसे ठहरे झूट ।
आगे चतुर सवार के, कैसे उछले ऊँट ॥

किस की शक्ति है दुनियां में, रघुवंशिन का अपमान करे ।
और क्या मजाल है जनक सुता के, विरुद्ध यदि कोई नाद करे ॥
पुण्य अखण्ड प्रचंड आज, संसार में वीर तुम्हारा है ।
कौन फिकर तुमको, जब तक, दुनियां में लक्ष्मण प्यारा है ॥

दो० राम—पुण्य हमारे में अभी, है कुछ कसर जरूर।
शक्ति का करना नहीं, चाहिये कभी गरूर॥
वह जादू असली होता है, औरों के सिर चढ़ बात करे।
महा आँधी उसको कहते हैं, जो दिन के होते रात करे॥
बुद्धिमान् वही होता है, जो बुद्धि का प्रयोग करे।
पुण्य उसे कहते हैं जिससे, शत्रु जन भी शुद्ध योग करे॥
दो० राम—तीर्थंकर न कर सके, अभव्य को भव्य जीव।
अग्नि को ठंडा करे, शीतल नीर सदैव॥
शक्ति के दिखलाने से, अपवाद नहीं रुक सकता है।
हां नरमाई से नर तो क्या, देवों का मन झुक सकता है॥
पर घर भंजन हार लोक होते, क्या मुझको अक्ल नहीं।
पर जनक सुता को रखने की, कोई भी बनती शक्ल नहीं॥
दो० लक्ष्मण—जनक सुता में दोष क्या, करलो स्वयं विचार।
अबला को घर से बाहर, क्यों करते सरकार॥
पानी में पत्थर तर जावे, अग्नि में कोई जले नहीं।
सागर मर्यादा तज देवे, स्थल पर से पानी ढले नहीं॥
कमल बेल पत्थर पर भी, जड़ जमा करे विस्तार कहीं।
अनहोनी बातें बने सभी, पर सीता लोपे कार नहीं॥
अमृत बन जावे कालकूट, चन्द्रमा अग्नि बरसावे।
चकवा चकवी नित्य रहें पास, न विरह रात्रि का आवे॥
दिशामूढ भानु होवे, मेरु स्वभाव से चल जावे।
उल्लू को दिन में नजर पड़े, अभिमान सिंह का ढल जावे॥
अल्प मति श्रुति ज्ञानी हो, कायर मैदान में डट जावे।
सत्यवादी विश्वास किसी को, देकर के फिर नट जावे॥
चंचल मन से कोई पुरुष, सुखकार हमेशा ध्यान धरे।
पर सीता बदले शील रत्न के, तन मन धन कुर्बान करे॥

दो० राम—निज गुण निज मुख से कह् ,गुणी बना न कोय ।
परमुख से गुण की ध्वनि उठे, साही गुण होय ॥

गुण सहित अश्व की देशान्तर, जाने से शोभा बढ़ती है ।
मिट्टी में पड़ने से हीरे की, चमक कभी नहीं घटती है ॥
अन्य जगह जाने में क्या, कोई खौप सिंहनी खाती है ।
सुगन्ध पर पर्दा पाने से क्या, गन्ध कहीं छिप जाती है ॥
सोने पर डाल सुहागा, फिर अग्नि में खूब तपाते हैं ।
मल रहित कीमती पासे का, सोना तब उसे बनाते हैं ॥
इसी तरह यदि सीता में, गुण हैं तो स्वयं दिखावेगी ।
स्वर्णवत् निर्मल बन करके, संसार में इज्जत पावेगी ॥

दो० राम—मैं नहीं चाहता सिया के, करूँ गुणों का नाश ।
बज्र हीरा होता है, लगे चोट ज्ब पास ॥

इस समय जो झूठा प्रेम करूं निश्चय सीता का दुश्मन हूँ ।
गौरव सीता का रहे जिस तरह, उसी बात में खुश मन हूँ ॥
कर्मों का कर्जा रहा सहा, चुपचाप जरा चुक जाने दो ।
जो भी आपत्ति आयेगी, सह लेगी सब कुछ आने दो ॥

दोहा- जो कुछ भाषा आपने, सो है बिल्कुल ठीक ।
किन्तु हमको ही जरा, देवो आज यह भीख ॥

यह वोही सिया जिसकी खातिर, वनवास में रोते फिरते थे ।
आंखों से आंसू चलते थे. मूर्छा खा खा कर गिरते थे ॥
वहां लाखों पुरुषों का अपने, हाथों मे रक्त वहाया था ।
और एक सिया की खातिर इतना, अत्याचार कराया था ॥
सब जगह आपकी नरमाई ने ही, यह फूल खिलाये हैं ।
बदला न अभी वह स्वभाव, जिसने सब दुःखी बनाये हैं ॥

दुनियां सब दुष्ट दुरंगी को. डण्डा ही सदा दबाता है।
जो करे इन्हों से लालपाल, वह अपना आप गंवाता है॥
तन से छाया घन से बिजली, क्या दूर कभी हो जाती है।
क्या धर्म लिये मरने वाले, की भी किसमत सो जाती है।
सागर क्या निजगुण तज कर के, छोटे तालाव बन जाते हैं।
औदार चित्त क्या जरा जरा, सी बातों पर तन जाते हैं॥
विद्यमान है वीर विभीषण, निश्चय उनसे करलेवें।
हां निकले दोष यदि कोई तो, फिर सीता को तज देवें॥

विभी०—समझ इशारा अनुज का, पास विभीषण आन।
आदि अन्त पर्यन्त तक, लगे सभी समझान॥

दोहा—सर्वज्ञ क्षमा और अहिमणि, सती शील प्रधान।
यह निजगुण तजते नहीं, तज देते हैं प्राण॥

वह जिह्वा नहीं मेरे मुख में, जिससे माता के गुण गाऊं।
संसार में आती नजर नहीं, दे उदाहरण क्या समझाऊं॥
मैंने अपने नेत्रों से नित्य, सीता का तेज निहारा है।
वचनों का कोड़ा दशकन्धर पे, समय समय पर मारा है॥
तुम जैसों का भी दशकन्धर, आगे हृदय घबराया था।
इस महासती क्षत्राणी ने, रावण से भय नहीं खाया था॥
वास्तव में इस आत्मशक्ति से, विजय आपने पाई थी।
किस खयाल में बैठे आप कोई, हम तुम की नहीं बड़ाई थी॥

दोहा—माता का अपमान है, करूं सफाई पेश
सीता में स्वामी नहीं, कालिस का लवलेश

सतियों में है शिरोमणि, सीता विश्वावीस।
तजो वहम दिल का सभी, कृपा करो यह ईश॥

शील रत्न की शक्ति से, बढ़ कर न कोई शक्ति है।
और अष्टापद के आगे सब सिंहों की भी क्या हस्ती है॥
आत्म शक्ति वालों को संसार, न मिल कर गिरा सके।
अभव्य आत्मा को तीर्थंकर, भगवन्त भी नहीं तरा सके॥

दोहा—ज्ञात सभी कुछ है, मुझे क्या बतलाते और।
होनी के आगे कहो, चले किस तरह जोर॥

गाना—जानता हूँ इसमें सीता की, खता कुछ भी नहीं।
पतिव्रता में दोष का लव--लेश तो कुछ भी नहीं॥१॥

पांच सौ चेले मुनि खदक, के घानी में पिले।
किस तरह टालें कर्म, चलता जफा कुछ भी नहीं॥२॥
भगवान् आदिनाथ को, एक वर्ष न अन्न जल मिला।
क्या दोष उनका कर्म से, होती वफा कुछ भी नहीं॥३॥
है अनादि नियम क्षत्रिय, पुरुष तीर्थंकर बने।
उन्नीसवां स्त्री बना क्या, नियम था कुछ भी नहीं॥४॥
अंजना के साथ सबका, प्रेम था वहां किस तरह।
शत्रु बने सब क्योंकि, कर्मों से नफा कुछ भी नहीं॥५॥
बेशक मैं रोता था वनों में, अब क्या रोऊँगा नहीं।
'शुक्ल' भावी टल नहीं सकती, पता कुछ भी नहीं॥६॥

दोहा—नर्म गर्म कह सभी ने, समझाये सब तौर।
एक न मानी किसी की, रघुकुल के सिर मौर॥
वज्र के मानिन्द किया, हृदय निष्ठुर तमाम।
मन ही मन में कह रहे, मन को यों श्रीराम॥

गाना—आज सिया के लिये मेरे दिल, बेशक तू खंजर बन जा।
उत्तर अंकुर देत किसी को, दिल कल्लर बंजर बन जा॥१॥

चाहे प्रेम सिया का रग रग में, है कूट कूट कर भरा हुआ।
पन खरबूजे वत् ऊपर से, क्रोधी जन का अफसर बन जा ॥२॥
कुछ धर्माधर्म नहीं जग में मन, जरा कल्पना ऐसी कर।
इस उल्ट पेच मे बचा जान, हैरान तू ही रहेबर बन जा ॥३॥
चीर फाड़ के वक्त मसीहा, रहम दूर कर देता है।
तू भी मन आज सिया की खातिर, तेज धार शस्त्र बन जा ॥४॥
जुल्म सितम चाहे कितना हो, इक लक्ष्य सामने वंश का रख।
जितना मर्जी कोई समझावे, नर्मी को तज पत्थर बन जा ॥५॥
कृतान्त वदन के साथ वनों में, जल्द सिया को पहुंचा दे।
इसी फैसले पर जम दिल, पत्थर वत् क्या वज्र बन जा ॥६॥

छंद—सेनापति कृतान्त को, श्रीराम ने बुलवाय के।
रहस्य सब एकान्त में, समझा दिया बैठाय के
कागज के ऊपर लिख दिया, एक लेख खूब बनाय के॥
कृतान्त वदन के हाथ देकर, यों कहा समझाय के।

(गाना राम)

श्रीराम का यूं समझाना हुवा, कृतान्तको ऐसा सुनाना हुवा ॥टेक॥
देखो रखना यह ध्यान, कहूं कान दरम्यान।
करना किसी को न बयान, जो गुप्त तुम्हें जितलाना हुवा ॥१॥
जाके वन मंझार, छोड़ो सीता यह नार।
मत सुननी पुकार, हुक्म पूरा करो फरमाना हुवा ॥२॥
तजी सीता की प्रीत, देखो दुनियां की रीत।
कौन करे प्रतीत, सतीजी को दुःख सागर बहाना हुवा ॥३॥
हुवा सुन के हैरान, कृतान्त वदन तब जान।
हुवा वहां से रवाना, क्यों के भूपति का हुक्म बजाना हुवा ॥४॥
देखो कर्मों की चाल, करते छिन में बेहाल।
इसका टालो जंजाल, सीता जी का वनों में जाना हुवा ॥५॥

सीता वनवास

दो० राम—यान विकट में सिया को, और दासी विरवाल।
ले जावो वन खण्ड में, मौन धार तत्काल॥

रथ से वहां उतार उन्हें फिर, हाल यह सभी बता देना।
यदि और तुम्हें कुछ कहे सिया, तो पत्र उन्हें सुनादेना॥
है कर्मों की चाल बता करके, वापिस रथ ले लेना।
यह नित्य नियम का आसन, और पुस्तक का जो बस्ता देना॥

दोहा—सेनापति रथ ले गया, जनक सुता के द्वार।
सीता सरल स्वभाव थी, झटपट हुई तैयार॥

यह कर्म महा बलवान्, जीव को नाना रंग दिखाते हैं।
कभी रङ्ग महल में सुख विनोद, कभी वन की खाक छनाते हैं।
झट रथ की कला दबाई तो, गंगा सागर के पार हुये।
जब मध्य अरण्य में पहुँचे, आगे चलने से लचार हुये॥

चौपाई—रथ से उतरो हे जगदंबा, देखो नैन उठाय अचम्भा।
है वनखण्ड भयानक लम्बा, देख तेरा दुःख मम दिल कम्पा॥

दोहा—जनक सुता ने जिस, समय देखा नयन उठाय।
दृश्य भयानक देख कर, यों बोली घबराय॥

दोहा—अए भाई रथवान यह वेयावान उद्यान।
साफ साफ जो बात है, करो सभी व्याख्यान॥

छन्द—पहिले थे जिस वनवास में, वैसा ही आता है नजर।
सोऊं या जांगू आ रहा, या स्वप्न कोई क्या खबर॥
अवध के महलों में हूँ, क्या स्वप्न आया था मुझे।
जल रहा हृदय मेरा यह, तप्त अब कैसे बुझे॥

तू ही बता कृतान्त अब, श्री राम लक्ष्मण हैं कहां।
देकर दगा क्या राम लक्ष्मण, भी मुझे तज गये यहां॥

रो रहा रथवान सम्मुख, मैं इधर हूं रो रही।
हे प्रभु कर्मों की गति यह, क्या खबर क्या हो रही॥

आई थी मैं तो भ्रमण को, माहेन्द्रोदय उद्यान में।
किन्तु खड़ी हूं इस भयानक, अरण्य के मध्यान्ह में॥

हैरत में हैरत हो रही, क्या माजरा नायाब है।
वन भृत्य रथ दासी मैं पंचम, क्या अजब यह ख्याब है॥

दोहा—सब रोगों से है, बुरा परतंत्रता रोग।
पराधीन नर को रहे, सदा निरन्तर शोग॥

पाप कर्म के उदय भाव से, पराधीनता मिलती है।
फिर निशदिनरहता भयदिलमें,हृदयकीकलिनहीं खिलती है॥

पराधीन स्वप्ने सुख नाहीं, महा पुरुष बतलाते हैं।
कर्म बन्ध के काम सभी, जन भृत्यों से करवाते हैं॥

सर्दी गर्मी आंधी बारिश, से मारे मारे फिरते हैं।
फिर भी स्वामी घुर घुराय, कर बेचारों पर गिरते हैं॥

पराधीनता के वश में कई, अनर्थ करने पड़ते हैं।
सप्तभयां में भृत्य एक, आजीविका भय से डरते हैं॥

हे मात जरा अब धीर धरो, इस रोने से क्या बनता है।
सब कष्ट देख कर के तेरा, पत्थर का कलेजा छनता है॥

कुछ धीर धरोगी तुम पहिले, तबही कहने में पाऊंगा।
नहीं तो यह देख रुदन तेरा, मैं रो रो कर मर जाऊंगा॥

दोहा—पर दुःख भंजन कारणे, सीता दिल को थाम।
बोली लो कह दो मुझे, भाई हाल तमाम॥

दुःखदायी सब मात जी, कहूँ तुम्हें जो हाल।
अवध पुरी तुम से छुटी, छोड़ो रंज मलाल ॥

क्या कहूं हाल माता तुम को, आत्मा मेरी घबराती है।
इस कर्म रेख आगे सीता, क्या पेश किसी की जाती है ॥
लङ्कपति ले गया इसी का, भ्रम सभी जन करते हैं।
शील हुआ खंडित वहां तुम पे, दोष सभी यह धरते हैं ॥
घर घर में क्या नरनारी में, सब जगह यह चर्चा भारी है।
और गली गली कूचे कूचे, बच्चों तक यही बिमारी है ॥
भेष बदल श्रीराम रात को, गली गली में फिरते थे।
अपशब्द तुम्हारे प्रतिकूल, उनके कानों में गिरते थे ॥
रामचन्द्र को लक्ष्मण जी ने, सभी तरह से समझाया।
भावी वश रघुकुलदिनेश पर, एक नहीं दिल में लाया।
गौरव रघुकुल का रखने को, तुमको यहां बाहर निकाला है।
हो बुद्धिमान् माता तुमको, पर्याप्त जरा इशारा है ॥

दोहा—सेनापति के वचन सुन, गिरी मुर्च्छा खाय।
हो सचेत फिर फिर सिया, पड़े धरण पर जाय ॥
सेनापति भी दुःखित हो, मन में अति घबराय।
हो सचेत बोली सिया, मन में यों अकुलाय ॥
आश्चर्य मुझको हुआ, रहा न शोभन ध्यान।
अहो कर्म कहां से कहां, लाकर पटकी आन ॥

सीता का विलाप

गा० सी०—आहे कर्म तूने मुझे, कैसे रुला के मारा।
जिस्म चकचूर हुआ, जिगर यह पारा पारा ॥१॥
मुझ-सा दुःखिया न कोई, होगा कर्म दुनिया में।
कैसा पापी यह धरा, तूने है मुझ पै आरा ॥२॥

पशुओं के भी सहायक, आते हैं नजर दुनिया में ।
मेरा यह कष्ट नहीं, दुनियां में मेटन हारा ॥३॥
आज उपालम्भ किसी, को देऊँ तो क्या ।
कर्मों के चक्कर में मेरा आया. है पुण्य सितारा ॥४॥
मेघ धारा से पहाड़ों, तक भी तर होते हैं ।
बून्द चातक न लहे, साफ ग्रन्थों में उचारा ॥५॥
आज संसार का, आधार रविकुल है ।
रहना मेरा ही नहीं, कर्मों को आज गवारा ॥६॥

दोहा—क्यों भाई कुछ और भी, कहा तुम्हें श्रीराम ।
सो भी बतला दो मुझे, पति का हुक्म तमाम ॥

दोहा पत्र एक मुझको दिया है स्वामी ने मात ।
खबर नहीं मुझको लिखी क्या इसमें है बात ॥

दोहा—ले पत्र रथवान से, पढ़ा सिया ने खोल ।
लेख में ऐसे राम ने, लिखे शब्द अनमोल ॥

दोहा जड़ चेतन का लोक में, जो जो नित्य स्वभाव ।
नित्य स्वभाव का न हुआ, न होगा कभी अभाव ॥

जो आत्म सो ज्ञान ज्ञान, सो ही आत्म कह लायेगा ।
यह निजगुण ज्ञान आत्म का, न गया कभी न जायेगा ॥
संयोग अग्नि का मिलने से, जल उष्ण हुआ कहलाता है ।
पर निज गुण उसका शीतलता, वह कभी कहीं नहीं जाता है ॥
इसी तरह निश्चय में न मैं, तेरा न तू कुछ मेरी है ।
बाकी सब रंग बिरंगी यह, कर्मों की चढ़ी अन्धेरी है ॥
किन्तु ऐसी अवस्था में अब तक, हम तुम नहीं आये हैं ।
क्योंकि आत्म प्रदेशों पर, कर्मों के बादल छाये हैं ॥

दोहा—अब आगे कुछ है सिया, पढ़ना करके गौर।
निम्न लिखित जो उदाहरण, भाव इन्हों में और॥

कुछ वह स्वभाव हैं दुनिया में, जिनका विभाव भी होता है।
वैसा ही फल मिलता, जैसा बीज आत्मा बोता है॥
सम्यक् ज्ञान दर्श चारित्र, को जो हृदय धरते हैं।
प्रवाह से कर्म अनादि का, भी अन्त वही जन करते हैं॥
अन्तक्रिया करने वालों के, चार भाग बतलाये हैं।
सर्वज्ञ देवने देखो तो, किस तरह जीव समझाये हैं॥
अल्प कर्म वाले प्रथम, चक्री की तरह बतलाये हैं।
स्वल्प वेदना लम्बी आयु, भोग परम सुख पाये हैं॥
शिष्य पांच सौ खंदक के, पालक ने घानी पिलवाये।
सम दम क्षम को धार अटल, आसन जा मुक्ति में लाये॥
स्वल्पायु और महा कर्म, इस को भगवन् फरमाते हैं।
अन्त क्रिया अब तीजी का भी, कुछ भेद तुम्हें दर्शाते हैं॥
महा कर्मी दीर्घायु वाले, सन्तकुमार कहलाए हैं।
सोलह रोगोंने हे सीता! वह, सात सौ वर्ष सताए हैं॥
चौथी क्रिया अल्प कर्म, वाले प्राणी में आती है।
अष्ट कर्म कर नाश आत्मा, अक्षय मोक्ष पद पाती है॥
हम तुम दोनों इस दुनिया में महा कर्म भोगने वाले हैं।
इस कर्म मिमांसा के प्यारी, दुनिया में रंग निराले हैं॥

दोहा—कर्म शुभाशुभ जो किये, पूर्व भव के मांय।
विन भोगे छुटते नहीं, लाखों करो उपाय॥

निश्चय में है बात यही, बाकी संसार में कारण हैं।
कर्म भोगने पड़ें चाहे, सुरनर मुनि लब्धि चारण हैं॥

और बहुत क्या बतलाऊं तुम, जिन शास्त्रों की वेत्ता हो।
निश्चय में कोई मनुष्य नहीं, दुःख में विभाग जो लेता हो॥

दोहा—निश्चय नय की बात यह, आगे सुन व्यवहार।
सामंजस्य दोनों कहे, आगम के अनुसार॥

व्यवहार जिन्हों का शुद्ध उन्हीं का, निश्चय निर्मल होता है।
जो करे एक से घृणा वह, मिथ्यात्व नींद में सोता है॥
व्यवहार बिना दुनिया का, कोई चलता कारोबार नहीं।
यही तो एक कसोटी है, इस बिन होता भवपार नहीं॥

दोहा—प्रेम तुम्हारे से मेरा, हुआ न होगा दूर।
भावी वश अन्तर पड़ा, आगे पढ़ें जरूर॥

उदाहरण देते हैं जिनका, मतलब आप समझलेंगी।
प्रेम मेरा प्रगट होगा, शिक्षायें तुम्हें मदद देंगी।
बूंटी एक लज्जावती वहां, वनस्पति कहलाती है।
कभी अपना गुण न तजे पुरुष, की छाया से मुर्झाती है।
सोना गुण न तजे सुहागे, से झट मेल बनाता है॥
पर सिक्के से न मिले चाहे, वह अपना आप गंवाता है।
अग्नि जल को तपा तपा, करके स्टीम बनाता है॥
पर निज गुण शीतलता का, जल के तन से कभी न जाता है।
काल अनन्त एकेन्द्रीय में, यह जीव अतुल दुःख सहता है॥
फिर भी निज गुण ज्ञान आत्मा, की सत्ता में रहता है।
जड़ चेतनभी हे जनक सुता, अपना कोई तजे स्वभाव नही॥
बस इसी तरह से प्रेम मेरे का, तुझ से हुआ विभाव नहीं।

गाना—जिसने गौरव न अपना, बचाया सिया।
उसने वृथा ही जन्म, गंवाया सिया॥टेर॥

सिंह अपशब्दों को प्यारी, झेल सकता ही नहीं।
काल के भी सामने हो, पीछे टल सकता नहीं॥
इस के गुण को सभी ने, सराहा सिया ॥१॥
टुकड़े करने से भी हीरे की चमक जाती नहीं।
सत्पुरुषों को स्वप्न में, भी बदी आती नहीं॥
चाहे जितना किसी ने, सताया सिया ॥२॥
आग में धरने से कुंदन को, चमक जाती नहीं।
तोड़ देने से भी मोती, की दमक जाती नहीं॥
चोगा हंसों का, येही बताया सिया ॥३॥
बादलों से कड़क बिजली की, कभी रुकती नहीं।
ढकने से पर्वतके आतिश,की भड़क छुपती नहीं॥
किसने गिरीशृंग को, वहां से हटाया सिया ॥४॥
खौफ खतरे में बदल, सकता नहीं धर्मी का खूं।
रगड़ने से जा नहीं, सकती कभी चन्दन की बू॥
निर्मल स्फटिक रत्न, कहाया सिया ॥५॥
देश आत्म कुल का गौरव, जिनकी रगरग में बसा।
पीछे हट सकता नहीं, धर्मी मुसीबत में फंसा॥
कर्म शत्रु उसी ने, मिटाया सिया ॥६॥
क्या हुआ गरदिश में यदि, तेरा सितारा आज है।
धीर धर दिलमें शुक्ल, खुल जायेगा वह राज है॥
गुण धैर्य में सब ने, बताया सिया ॥७॥

दोहा—मानिंद स्फटिक रत्न के मल नहीं तुम में कोय।
किन्तु कृत्य पूर्व कर्म, गया प्रकट अब होय॥

सर्वज्ञ देव ने मित्र कहा है, कसर मिटाने वाले को।
और अरि बताया राग भाव से, पाप छिपाने वाले को।

वस यही भावना है मेरी, तुम में न कोई कसर रहे।
फिर अंगुली करने वाला तुम पर, बुरा न कोई बशर रहे॥
आप भविष्य में सतियों के, लिये उदाहरण वन जाओगी।
संसार में नाम प्रगट होगा, और अन्त मोक्ष पद पावोगी॥

प्रिया तुमको संकट देकर के, आराम न कोई पायेगा।
और समय समय पर आकर के, सबको ही कर्म सतायेगा॥
हूँ निशंक मैं यहां बैठा, मन मारा मारा फिरता है।
वस बुद्धिमान् के लिये पर्याप्त, होता जरा इशारा है॥

दोहा----अय भाई रथवान् अब, तुम मत बनो अधीर।
जो जो पड़े अवस्था, सो सो सहे शरीर॥

स्वामी की आज्ञा पालन करना, शुभ कर्त्तव्य तुम्हारा था।
यहां अन्य किसी का दोप नहीं, योंही वस कर्म हमारा था॥
श्री रामचन्द्र के चरणों में, कह देना मेरी वात सभी।
इस जन्म में आशा टूट गई, परभव में देना दर्श कभी॥

जो कुछ आपने किया मेरे संग, सोच के ठीक किया होगा।
या पिछले भव का बदला मुझ से, आपने कोई लिया होगा॥
फेरों के समय जो किये प्रण, सो मुझ से नहीं पले होंगे।
या आपके ध्यान से हे स्वामिन्, कुछ देर के लिये टले होंगे॥

वस यही भावना है मेरी, पुण्य रूप आप का वाग रहे।
एक सीता हुई न हुई तो क्या, रघुकुल को न कोई दाग रहे॥
निश्चय में कर्म हमारा आपने, वात ठीक वतलाई है।
व्यवहार की तो पर हे स्वामी, कुछ आती नजर सफाई है॥

व्यवहार को रखते हुए आप, मालूम तो मुझ से कर लेते।
कुछ ख्याल नहीं मुझको आता, चाहे शूली पर धर देते॥

कोई सेना तो नहीं मुझ पर थी,जो आपकेसाथ में जंग लड़ती।
धरना देकर के हे स्वामी मैं, आप को तंग नहीं करती ॥

दोहा— क्रोध नहीं मैं आप पर, करती कुछ लवलेश।
शाप नहीं देती तुम्हें, करके कोई क्लेश ॥

महलों पर से गिर करके, अपना अपघात नहीं करती।
कभी अग्नि में प्रवेश नहीं, न पानी में पड़ कर मरती ॥
शस्त्रादिक से भी तो मेरी, ऐसे अपघात नहीं होती।
विष आदि खाकर के मैं, चुपचाप नहीं अन्दर सोती ॥
और ऐसे दोषारोपण से, घबरा कर कभी नहीं रोती।
बाद में जो मर्जी करते, मुझको कोई उजर नहीं होती ॥
यह अच्छा था निज हाथों से, तलवार मेरी गरदन धरते।
पर करके यों अपमान मेरा, सहसा तुम पृथक् नहीं करते ॥
सब मेरी शुभ आशाओं पर भी, तुमने पानी फेर दिया।
और चुने हुवे मन के बेरों को, कैसे आज बिखेर दिया ॥

दोहा—आशा थी कुछ दिनों में, होंगे राजकुमार।
बरतेगा इस खुशी का, घर घर मंगलाचार ॥

व्योम कुसुवत् सब मेरी, आशाएं निष्फल कर डारी।
हे ! कर्म कहां हाथी विमान, अब नहीं गधे की असवारी ॥
यह क्या साधा व्यवहार आज, निराधार वनों में छोड़ दई।
सब प्रीत काच की रेखावत्, कैसे आपने तोड़ दई ॥

बड़वानल सागर के जल को, नित्य उठ खूब जलाता है।
फिर भी वह सागर बडवानल को, कभी न दूर भगाता है ॥
अभ्र छायावत् प्रीत आपकी, आज सामने दूर हुई।
या यों समझें जल छाछ की मानिन्द, आपकी प्रीत जरूर हुई।

सब तरह आपका संशय करती, दूर चाहे करवालेते ।
कम से कम कोई गुण लखकर, धीरज से काम जरा लेते ॥
बस और कहूँ क्या आप से मैं, तुम जिन शास्त्र के वेत्ता हो ।
अति पुण्यवान रघुकुल दिनेश, तुम तीन खंड के नेता हो ॥
सिन्धु से गम्भीर सौम्य शशि, शीतल स्वभाव में चन्दन हो ।
तेज प्रताप प्रचण्ड आपका, पुण्यवान रघुनन्दन हो ॥
बसन्त ऋतु सम तुमने, सबके हृदय कमल खिलाये हैं ।
क्या दोष आपका मुझ निर्भागन को, यदि सुख नही पाये हैं ।

दोहा सीता—पूर्व भव मिथ्यात्व में, बांधे कर्म अपार ।
पांचों आश्रव न तजे, दुखी किये नर नार ॥

शरने चार नहीं अथे, न धर्म चार प्रकार किया ।
त्रिकरण शुद्ध न किये योग, औरों को दुःख अपार दिया ॥
करी ना वश पांचों इन्द्रीय, हर समय चार विकथा करी ।
तीव्र कषाय करी चारों जिस, कारण मुझ पर व्यथा पड़ी ॥
है दोष सभी मेरे कर्मों का, स्वामी का लवलेश नहीं ।
ऋण कर्मों का दिये बिना, आत्मा का मिटे क्लेश नहीं ॥
संयोग मूल दुःख जीवों को, अरिहन्त देव यों कहते हैं ।
इस मोहनी कर्म के वशीभूत हो, वृथा जीव दुःख सहते हैं ॥

दोहा सीता—जिस कुल घर यां नगर में, बड़ा देश में होय ।
इसकी रक्षा करन से, रक्षा सब की होय ।

इसलिये राम की सेवा करना, मुख्य कर्त्तव्य तुम्हारा है ।
लक्ष्मण जी को भी कह देना, शिक्षाप्रद वचन हमारा है ॥
बस और नहीं कुछ कह सकती, यह सर मेरा चकराता है ।
तन में न शक्ति रही मेरे, बस गिरी तिमारा आता है ॥

दो० कवि—इतना कह करके सिया, गिरी मूर्छा खाय ।
देर बाद आ चेत में, यों बोली घबराय ॥
बेशक स्वमी के लिये, बनी आक का फूल ।
ऊपर लाली दमकती, अन्दर विष का मूल ॥

स्वामी फूल गुलाब किन्तु, मैं लिये उन्हों के कांटा थी ।
वह स्फटिक रत्न हीरे जैसे, मैं अनघड़ पत्थर भाटा थी ॥
बावना कौशिक चन्दन का, सब कोई लेने वाला है ।
ऐरण्ड निकम्मी लकड़ी को, कोई जगह न देने वाला है ॥

दोहा सीता—सज्जन ऐसा चाहिये, जैसे रेशम तन्द ।
धागा धागा खंड हो, विरह न करे पसन्द ॥

श्रीराम तो बेशक हैं सज्जन, मैं ही निर्भाग नकारी हूँ ।
है रङ्ग मजीठी प्रेम उन्हों का, मैं कर्मों की मारी हूँ ॥
पाप कर्म के उदय भाव से, वेद स्त्री पाता है ।
जिसका न जोर कहीं चलता, वह इस पर धौंस जमाता है ॥

दोहा सीता—दोष नहीं कुछ राम का, सुन सेनापति वीर ।
उपालम्भ सबका हुआ, गुलो आज आखीर ॥

गाना—करूं किस पे जाकर मैं, किस की शिकायत ।
कहो कौन मेरी, करेगा हिमायत ॥ १ ॥
मुझे ख्याल है तो, सिर्फ एक ही है ।
प्रभु ने सुनी न हमारी शिकायत ॥ २ ॥
पिया को यह कहना, मुझे माफ करदें ।
यदि मुख से निकली, तुम्हारी शिकायत ॥ ३ ॥
कर्म कर्जा मेरा न पिछला ही उतरा ।
तो आगे किसी की, करूं क्या शिकायत ॥ ४ ॥

जो उपकार मुझ पर, किया था पति ने ।
क्या कृतघ्न हूँ मैं, जो करूंगी शिकायत ॥ ५॥
मुझे कोई दुःख है तो, इस बात का है ।
करे न कोई मम, पति का शिकायत ॥ ६ ॥
खत्म सब कहानी, व शिकवे हमारे ।
गई छूट प्रभु की यह, हम से शिकायत ॥ ७ ॥
मुबारिक यह तुमको, तुम्हारी अवध हो ।
सुनेगा अरण्य ही, हमारी शिकायत ॥ ८ ॥
फलो फूलो स्वामी, रहो खुश हमेशा ।
यहां मेरी वनचर सुनेंगे शिकायत ॥ ९ ॥
यह निर्मल सदा ही, रहे कुल तुम्हारा ।
करेगा न कोई अब, इस की शिकायत ॥१० ॥
सबर के सिवा बस, करूं तो करूं क्या ।
जबां पे न लाऊंगी, कोई शिकायत ॥ ११ ॥
सदा रंग बरसे, तुम्हारी अवध में ।
मेरी भावना यही, समझो शिकायत ॥१२ ॥

दोहा—सज्जन जन सुन लीजिये, जरा लगा कर कान ।
रोती तज रोता चला, वापिस अब रथवान ।

चौपाई—वन में फिरती जनक दुलारी, हिंसक जीव जहां दुःखकारी ॥
देख भयानक दृश्य अपारी, तृपातुर विपदा की मारी ॥
यूथ भ्रष्ट हिरणी सम डोले, शब्द भयानक वनचर बोलें ॥
चीता एक शिकार टटोले, बैठी आप वृक्ष के ओले ॥

दोहा—कभी कभी गस खागिरे, रहे न कुछ भी होश ।
या रोती निज कर्म को, या रहती खामोश ॥

कर्म आते हैं किसी को, जब सताने के लिये ।
युक्ति कोई चलती नहीं, उन को हटाने के लिये ॥१॥
थाल स्वर्ण के कभी, छत्तीस व्यंजन के भरे ।
अब तरसती है सिया, एक दाने दाने के लिये ॥ २
स्वर्ण की झारी में सुगन्धित, नीर मिलता था कभी ।
आज फिरती है सिया जल, बून्द पाने के लिये ॥३॥
राजमहलों में सरदखानों में, रहती थी कभी ।
आज न सामान तप्त, लूं हटाने के लिये ॥ ४ ॥
फूलों की शय्या पर सदा, सखियां सुलाती थीं जिसे ।
आज धूली पर पड़ी कुछ, न सिरहाने के लिये ॥ ५ ॥
कल खड़े कर जोड़ रथ, विमान सेवक थे सभी ।
अब कोई मिलता नहीं, रस्ता बताने के लिये ॥ ६ ॥
पूछते थे कल सभी, महारानी क्या चाहिये तुम्हें ।
अब यहां कोई नहीं, धीरज बँधाने के लिये ॥ ७ ॥
ढूंढ भाल विचार देखा, कर्म रेखा है अटल ।
'शुक्ल' एक जिन धर्म है, इनसे बचाने के लिये ॥ ८ ॥

दोहा—वृक्ष तले बैठी सिया, रोवे जारो जार ।
अहो कर्म कैसी करी, छुड़वाए भरतार ॥

गाना (सीता)

अरि कर्मों ने कैसा सताया मुझे.
ऐसा झूठा कलंक लगाया मुझे ॥ टेर ॥
क्या खबर मेरा सभी से, वैर था किस जन्म का ।
आता नजर मुझको नहीं, कोई कर्म इस जन्म का ॥
जिसने ऐसी मुसीबत में, पाया मुझे ॥ १ ॥

वचन और सब प्रण भी, तैंने बहाए नीर में।
राम जैसे की भी तूने, फर्क डाला धीर में॥
तो ही वन में, अकेली पठाया मुझे॥ २॥

चाल है कर्मों की यह, मुझको कलंकित कर दिया।
बेदर्द विधना ने भी लाकर, किस जगह पर धर दिया॥
कैसी विपदा में आज .फंसाया मुझे॥ ३॥

किस जगह किस तरफ जाऊं, अए कर्म यह तो बता।
आता नजर कोई नहीं, पूछेंगे किससे क्या पता॥
भूखी प्यासी को चक्कर सा आया मुझे॥ ४॥

दोहा—इतना कह कर के सिया, गिरी धरणी मंझार।
देर बाद आ चेत में, रोवे जारो जार॥

जब लगे कोई डर नमोकार, मन्त्र को पढ़ने लगती है।
जब रोती है तब आंखों से, पानी की धारा बगती है॥
देख सिया का रुदन वहां, पत्थर का कलेजा छजता है।
अब देखो कष्ट टलने का भी, आकर क्या कारण बनता है॥

दोहा—दासी कहे रानी सुनो, क्षुधा रही सताय।
इस दुर्गम उद्यान में, करना कौन उपाय॥

पीपल का यह वृक्ष सामने, देख नजर जो आता है।
आप यहां बैठें मैं उसके, फल लाऊं मन चाहता है॥
पानी का भी संयोग मिला तो, वहां देख कर आऊंगी।
यदि पात्र नहीं तो चीर, भिगोकर लाकर तुम्हें पिलाऊंगी॥

दोहा सीता—बहु बीजे सब फलों का, मेरा तो है नेम।
तेरी तू जाने बहिन, जो आत्म को क्षेम॥

आज अष्टमी है पानी भी, कोई सचित पीना ही नहीं।
नियम भंग करके मुझको, अच्छा लगता जीना ही नहीं॥
हां मैं यहां पर बैठी हूँ, तुम वहां पर देर लगाना नहीं।
एक परमेष्ठी का शरणा लो, बस दिल में कुछ घबराना नहीं॥

दोहा—आज्ञा ले दासी चली, चढ़ी वृक्ष पर जाय।
फल तोड़ने से प्रथम, बोली यूं अकुलाय॥

छन्द—पहले खिला करके सिया को, पीछे खाती थी सदा।
साथ उनके ही नियम, करती थी मैं भी यदा कदा॥
संग उनके मरना जीना ही, मेरा कर्त्तव्य है।
जो करे सीता वही, करना मेरा मन्तव्य है॥
ऐसा कह उतरी तले, विश्राम छाया में लिया।
जो कहे सीता वही, करना प्रण मन में किया॥

दोहा—पहले ना तुझको सिया, ले गई वन में साथ।
कर्त्तव्य अब पालन करूं, रहूँ संग दिन रात॥

इस अन्तर में कष्ट दूर, होने का कारण बनता है।
उपयोग शुद्ध जिनके, शुभ प्रकृति का ताना तनता है॥
निज कर्म आत्मा के शत्रु, बाकी तो निमित्त कहाने हैं।
पाप उदय हों कष्ट, पुण्य के उदय ठाठ शहाने हैं॥

दोहा—विभीषण का खास था, सिद्ध पुरुष एक मित्र।
ये भी नारद की तरह, था शुद्ध व्यक्ति विचित्र॥

नारद होता कलहप्रिय, पर यह समता रस पीता था।
विद्याधर शुद्धात्मा, जिसने कामदेव को जीता था।
वीर विभीषण ने इसको, था गुप्त रूप से समझाया।
और गुप्त रूप से सीता की, रक्षा के कारण पहुँचाया॥

दोहा– रहस्य पुरुष ये सिया का, रखता था नित्य ध्यान।
कष्ट असह्य नापड़े, कोई अचानक आन।।

श्री वज्रजंघ मिलाप

दोहा—'पुंडरिकपुर' का भूपति 'वन्धु श्री' अंगजात।
'वज्रजंघ' शुभ नाम है, 'गजबाहन' नृप तात।।

गजबाहन का पुत्र 'रत्नसुन्दर' एक पटरानी थी।
धर्मन रूप अपार देख, इन्द्राणी शरमानी थी।।
पतिव्रता सुविनीत नियम, तप जप में अगवानी थी।
प्रजा पालक थे भूप स्वर्ग, सम सभी राजधानी थी।।

गाना (राजा वज्रजंघ की श्रद्धा का वर्णन)

देव अरिहन्त की शिक्षा, दया में धर्म जाना था।
था निश्चय आप्त वचनों पर, गुरु निर्ग्रन्थ माना था।।१।।
व्रत बारह के थे धारक, रवि सम तेज था जिनका।
लक्षण समदृष्टि का पहिला, मित्र सारा जमाना था।।२।।
गुणी के गुण को लखते थे, रहें मध्यस्थ निर्गुणों से।
शुद्ध वचन मन काया से, वह करुणा का खजाना था।।३।।
सिवा निज नार के माताएँ, भगिनी सम थी सभी नारी।
सदा सत् संगति ही में, जिन्हों का आना जाना था।।४।।
'सुमति' प्रधान था जिनका, निपुण नीति सर्व गुण में।
दूध घी फूल फल मेवा सभी, का स्वच्छ खाना था।।५।।
यथा राजा तथा प्रजा, सभी थे धर्मी नर नारी।
त्याग सातों कुव्यसनों का, 'शुक्ल' सब मन समाना था।।६।।

दोहा—इत्यादि गुण का धनी, वज्रजंग भूपाल।
कारण हस्ती पकड़ने, आया वन में चाल।।

साथ सुमति प्रधान और, कुछ सैनिक योद्धे भारी हैं।
और विकट गाड़ियों में, खाना पीना तम्बू सरकारी हैं॥
हस्ती लेकर यह आ निकले, जहां रोती जनक दुलारी थी।
देख सिया को कुछ योद्धों ने, ऐसी गिरा उचारी थी॥

दोहा— क्या वन की देवी कोई, बैठी आसन मार।
चमक दमक चेहरा करे, शशि वदन अनुहार॥

वन रूपी रजनी में यह, मनिंद शशि के शोभ रही।
तेज प्रतापप्रचंड महा, भानु के मन को चोभ रही॥
इसमें शीतलता छटक रही, उसमें गर्मी का दूषण है।
यदि वह है रत्न व्योम का तो, यह भी इस वन का भूषण है॥
वह दुःखदाई है किसी किसी को, यह सब को सुखदाई है।
उसे ग्रहण भी लगता है, इसकी नित्य कला सवाई है॥
ज्योतिष चक्र से या कोई, कल्प लोक से आई है।
शुभ लक्षण हैं सब तेज जिन्होंने, शोभा अति बढ़ाई है॥
स्वर्णतार सच्चे मोती अद्भुत, पोशाक जड़ी सारी।
हैं हार गले में पचरंगी, माला भी शोभ रही न्यारी॥
और कभी कभी यह चहूँ ओर, क्या नजर घुमाकर देख रही।
कुछ कारण नजर नहीं आता, वन में आकर क्यों बैठ रही॥

दोहा—सीता का था उस समय, नमोकार में ध्यान।
फिर से आकर के लगा, आर्तध्यान सतान॥

शब्द भयानक रोने के, जिस समय भूप को आने लगे।
तो सोच सोच फिर सब के सब, अनुमान इसी का लाने लगे।
वह वज्रजंघ सत्य धर्मी राजा, सप्तस्वरों का ज्ञाता है।
कुछ सोच समझ इस तरह भूप, मन्त्री को वचन सुनाता है॥

चौपाई—गर्भवती यह रानी कोई, जो इस समय चिंता से रोई।
आप्त वचन में भेद स्वर जोई, खबर नहीं विधना क्या होई॥

दोहा—पता लेन उस सती का, चले उसी की ओर।
सुन आहट कुछ सिया के, दिल में मच गया शोर॥

सोचा कि अरण्य भयानक में, यह चोर लूटने वाले हैं।
अपना धर्म वचाने लिये, आभूषण सभी निकाले हैं॥
सब सम्मुख उनके फैंक दिये, यह देख भूपति आया है।
और नम्रता से जनक सुता ने, ऐसे वचन सुनाया है॥

दोहा—अए भाई तुम इस तरफ, आए हो जिस काम।
लो आभूषण यह सभी, पहुँचो निज-निज धाम॥

करोड़ों का यह माल तुम्हें, इस जन्म के लिये पर्याप्त है।
किस लिये क्यों और मनुष्यों पर, डालोगे जाकर आफत है।
अनुग्रह करके मुझको कोई, रास्ता तो जरा बता देवो।
कुछ होगा भला तुम्हारा यह, आभूषण सभी उठा लेवो॥
वह साथन मेरी आजावे, पीपल की गालें खा करके।
आने वाली है क्षुधातुर, कुछ अपनी भूख मिटा करके॥

दोहा—शब्द और कर्त्तव्य लख, भूपति करे विचार।
महासती निश्चय कोई, जिस पर कष्ट अपार॥

दोहा—धर्म लीन अवला कोई, शील रत्न की खान।
समझ ठीक कहने लगा, वज्रजंग बलवान्॥

दोहा—बहिन जरा भी मत करो, दिल में सोच विचार।
भाई हूँ मैं धर्म का, अर्ति दूर निवार॥

पता, चिन्ह अपना कहदो, किस कारण वन में आई हो।
क्या कष्ट मिला तुमको कोई, जिससे इतनी घबराई हो॥

मत फिकर करो अपने मन में, मैं कष्ट तुम्हारा टारूंगा।
जो भी मुख से कह चुका वहिन, मैं वचन कभी नहीं हारूंगा॥
यह गहने तुम्हें मुबारिक हों, मुझको इनकी दरकार नहीं।
हां परोकार के सिवा मेरे, दिल में दूजा व्यवहार नहीं॥

दोहा—दुखियारी का देख दुःख, लगा कलेजे तीर।
मन हीं मन रोने लगा, भर नयनों में नीर॥
मन्त्री गुण भूपाल के, करने लगा प्रकाश।
और सिया को इस तरह, देने लगा विश्वास॥

दोहा—पुंडरीकपुर का भूप है, वज्रजघ शुभ नाम।
गज लेने के वास्ते, आए हैं इस धाम॥

नवतत्त्व पदार्थ के ज्ञाता, सर्वज्ञ वचन के श्रोते हैं।
पुण्य यहां पिछला पाया, शुभ बीज अगाड़ी बोते हैं॥
द्वादश व्रत के हैं पालक, पर नारी भगिनी माता है।
सर्वस्व तलक ला करके भी, पहुँचाते पर को साता है॥
भृत्य और अधिकारी क्या, सब के सब इनके धर्मी हैं।
और खोटे व्यसन तजे सारे, इसलिये सभी शुभ कर्मी हैं॥
वह जिह्वा नहीं मेरे मुख में, जिससे सब गुण व्याख्यान करूं।
बस और तो क्या यह कहें वहां, कुर्बान मैं अपने प्राण करूं।
प्रजा की कौड़ी तक खाना, बस इनके लिये गंदगी है।
शीतल चन्दन जैसा स्वभाव, नहीं आती कभी रंजगी है॥
अपना करके काम आप, खाना बस इन को भाता है।
तन मन धन सर्वस्व प्रजा के, हित में सहर्ष लगाता है॥
जिसको जैसा कहते मुख से, वैसा करके दिखलाते हैं।
यदि गिरे पसीना जहां किसीका, अपना खून वहाते हैं॥

और दुःखी जनों को देख हृदय में, स्वयं आप मुरझाते हैं।
जब तक न उनका कष्ट मिटे, तब तक नहीं अन्न जल पाते हैं

दोहा—सीता को आने लगा, जरा जरा विश्वास ।
भूपति फिर करने लगे, अपने भाव प्रकाश ॥

दोहा—बहिन पता कुछ आपका, देवो हमें बताय।
किस कारण विपदा पड़ी, आई इस वन मांय ॥

दोहा- अए भाई अपना पता, खाक कहूँ या धूल ।
कर्मों की मारी फिरूं, रही चौकड़ी भूल ॥
जनक भूप की हूं सुता, और विदेहा मात ।
सीता मेरा नाम है, भामंडल नृप भ्रात ॥
पिछले जन्मों में किये, मैंने पाप अपार ।
जाती हूँ मैं जिस जगह, करते कर्म लाचार ॥

गाना—सीता का अपनी विपदा को बताना (कव्वाली)

तर्ज— चुरा कर ले गया कोई मेरी जंजीर साने की)

जिधर घूमी मैं दुःख देने, उधर ही कर्म आ निकले ।
किन्तु यह प्राण इस तन से मेरे, अब तक भी न निकले ॥१॥
बालपन में जुदाई अपने, भाई की सही मैंने ।
उठा कर ले गया पितु को, कोई पर्वत पे जा निकले ॥२॥
तंग आकर पिता ने, था स्वयंवर व्याह रचा मेरा ।
मेरा यह जी जलाने को कर्म, वहां पर भी आ निकले ॥३॥
ख्याल था साथ पुण्यवानों के, अब कुछ न दुःख पाऊंगी ।
कर्म ने फिर धकेला दूर, कहीं अटवी में जा निकले ॥४॥
वनों का दुःख कहूँ कैसे, कलेजा मुंह को आता है ।
चुराया मुझ को रावण ने तो, हम लंका में जा निकले ॥५॥

पति ने जो किया उपकार, कैसे भूल जाऊं मैं।
बचाया है धर्म मेरा तो हम, फिर अवध आ निकले ॥६॥
सबर फिर भी न आया, दुष्ट इन बेदर्द कर्मों को।
कलंकित कर निकाला मुझको, यहां इसवनमें आ निकले ॥७॥
कर्म मेरे उदय आये, किसी का दोष क्या इस में।
रुदन मेरा "शुक्ल" सुन कर, इधर से तुम भी आ निकले ॥८॥

दोहा—समझ लिया मैंने सती, तुम हो अति गुणवान्।
वहिन समझ लो आप के, कष्टों का अवसान॥

सिवा धर्म के वहिन जीव का, कोई न जग में साथी है।
नदी नाव संयोग विछुड़ जावे, जिस तरह बराती है॥
भामंडल समझो मुझ को, अपने दिल का संताप हरो।
धर्म ध्यान में रहो सदा, अरिहंत देव का जाप करो॥
तू महासती गंभीर सती, तेरे गुण कैसे गाऊं मैं।
अहो भाग्य तुमरे चरणों की, रज निज मस्तक लाऊं मैं॥
मिथला नगरी से बढ़ कर समझो, यह पिहर तुम्हारा है।
धन्य भाग धन्य घड़ी, मिले दर्शन कुछ पुण्य हमारा है॥
रघुकुल दिनेश तुमको तजकर, न नींद सुखों की सोएंगे।
और कलंक लगाया जिन्होंने तुमको, सिर धुन-धुन कर रोएंगे॥
सुसर गृह से रूसे लड़की, तो पिहर में आ जाती है।
बस यहां से आगे ठौर कहीं, सतियों को नजर न आती है॥

इतने में ही आगई, वह दासी विरवाल,
शुभ प्रकृति ने लिया, पलटा तुर्त कमाल।
दोनों ने उपवास शुद्ध कर लिये थे चौविहार,
शुद्ध तपस्या के सामने, बने कर्म लाचार।

दोहा—सीता का अब टल गया, जो था सभी क्लेश।
पुंडरीकपुर में ले गया, आदर सहित नरेश॥

ऐसे धर्मी के घर में, रानी भी फूल हजारा थी।
हां राजा था यदि धर्म शशि तो, वह भी नेक सितारा था॥
नृप से बढ़ कर के रानी ने, सीताजी का सत्कार किया।
मस्तक दिया डार सार चरणों में, मेवा और मिष्टान्न दिया॥
नित्य ननद ननद करती रानी, सेवा में निशदिन रहती है।
सीता भी उसको भाभी, और भाई राजा को कहती है॥
मुखपत्ति मुख पर बांध, समय पर संध्या नित्य प्रति करती है।
बिना किये नित्य नियम कभी वह, जल की घूंट न भरती है॥
एक हाथ में ले पुस्तक, पढ़ दूजे से समझाती है।
देती सब को उपदेश इस तरह, अपना समय बिताती है॥

दोहा—खबर लेन सिया बहिन की, आया जब भूपाल।
दूरंदेशी सोच यों, कहे सिया निज हाल॥

दोहा—भाई शरने आपके, आई हूँ यहां चाल।
एक बात पर आप को, रखना होगा ख्याल॥

अव्वल तो भाग्य कहां इतने, कोई मुझे देखने आवेगा।
यदि आया भी तो देख वनों, में वापिस ही मुड़ जावेगा॥
इस हालत में मैं भाई, हरगिज न अयोध्या जाऊंगी।
यदि जाऊंगी तो गौरव से, नहीं तो यह प्राण गंवाऊंगी॥

दोहा—जो भी कुछ आशा मेरी, व्योम कुसुमवत् जान।
यदि वह पूरी न हुई तो, करुं यहां अवसान॥

प्रकट करुं आशाओं को, बुद्धिमानी से बाहिर है।
कहने से सार नहीं रहता, यह उदाहरण जग जाहिर है॥

कहना उसको जो करे कहना, नहीं करे तो फिर क्या कहना है।
बैठो उस पे जो लखे गुणको, नहीं तो बेइज्जती से रहना है॥
गुण अवगुण की पहिचान नहीं, वहां पांव नहीं धरना चाहिये।
बेइज्जती का टुकड़ा खाने से, तप जप करके मरना चाहिये॥
इसलिये आप ने कुछ दिन तक, जो देना मुझ को शरना है।
तो राम से मेरी जाकर के, न कोई विनती करना है॥
सत्य मेरा प्रगट होगा, यह समय एक दिन आवेगा।
नहीं तो पूर्व कृत कर्म का, कर्जा ही टल जावेगा॥
निश्चय मुझ को जिनवाणी पर, यह कष्ट काटने वाली है।
अब शुक्ल मुनि ने भी आकर, इस बात पे धूनी डाली है॥

दोहा—जो कुछ आज्ञा आप की, पालूं बहिन ज़रूर।
आप से जो प्रतिकूल, वह मुझे नहीं मंजूर॥

कह चुका वीर भामंडल सम, मैं सच्चा वीर धर्म का हूं।
सर्वज्ञ देव की कृपा से, कुछ ज्ञाता सभी कर्म का हूँ॥
जैसा हूँ वैसा हाजिर हूं, सेवा करने को खड़ा हुआ।
एक सिवा धर्म के दुनिया में, बाकी है भी क्या पड़ा हुआ॥

दोहा—सिया यहां रहने लगी, आर्त सभी निवार।
वहां पहुँचा रथवान भी, रामचन्द्र के द्वार॥

॥ सीता के वियोगजन्य दुःख से सन्तप्त रामचन्द्र ॥

दोहा—रामचन्द्र थे विरह में, निर्बल दुखित शरीर।
सेनापति कहने लगा, भर नयनों में नीर।

नौ० दोहा कृतान्त वदन सेनापति

सूर्यवंश कुल मणि मुकुट हे, स्वामी जगताज।
आज्ञा आप की सब तरह, बजा दई महाराज॥

वजा दई महाराज किन्तु, मन मेरा घबराता है।
कहा नहीं कुछ जाय, इस समय मस्तक चकराता है॥
पांव नहीं जमते धरती पर, तन गिरना चाहता है।
लगने पर भी पियास, न पानी हलक तले जाता है॥

गाना-कृतान्त वदन सेनापति की दुख से घबराहट वर्णन

तर्ज—(पड़ी है नाव चक्कर में तिरा दोगे तो क्या होगा)।

आह ! माता यह मुख से कह, गिरा एक चक्कर खा करके।
तुरन्त फिर रामने पूंछे, सभी आंसू बिठा करके॥१॥
किया उपचार शीतल नीर, मुख पर राम ने छिड़का।
दिया पंखे तले मखमल की, गद्दी पर लिटा करके॥२॥
दृश्य वनका भयानक घूमता था आगे आंखों के।
पिलाई तर बतर चीजें, दई गर्मी मिटा करके॥३॥
हुआ दिल धड़कने से बन्द, फिर कुछ चेत में आया।
गिरा श्री राम के चरणों में, निज मस्तक झुका करके॥४॥

दोहा—क्या कुछ सीता ने कहा, क्या था उसका हाल।
हृदय यदि अब ठीक है तो, कहो सभी तत्काल॥

दोहा—देख अरण्य को होगई, माता तौर बेतौर।
समझ भेद व्याकुल हुई, सुनो रवि कुल मौर॥

मूर्च्छा पर मूर्च्छा आने से, कई बार धरनी पर गिरती थी।
देख भयानक वन काला, भयभीत हुई अति डरती थी॥
नयनों से पानी बहता था, अपने कर्मों को रोती थी।
बनती थी हाल बेहाल कभी, आराम जान को खोती थी॥
वह जिह्वा नहीं मेरे मुख में, जिससे सब हाल बयान करूं।
सिर चकराता है आज मेरा, जब उनके दुःख पर ध्यान धरूं॥

जो जो सीता ने बतलाया, सोही मैं कथा चलाता हूं।
सारी याद न रही मुझ को, कुछ २ चुन कर बतलाता हूं ॥

॥ दोहा कृतान्त सीता की तरफ से ॥ (सीता संदेश)

दोष नहीं कुछ राम का, निश्चय मम कर्म अपार।
किन्तु नहीं व्यवहार पर, आपने किया विचार ॥

कृतान्त (सीता सन्देश)

व्यवहार और नीति का तो, लवलेश नजर नहीं आया है।
जो बिना खबर इस तरह आज, अटवी में मुझे पहुँचाया है ॥
अपना अपघात नहीं करती, कुछ दोष न देती स्वामी को।
वह केवल आप की आज्ञा से, तज देती मैं राजधानी को ॥
बस और कहूं क्या स्वामी को, पर्याप्त यही इशारा है।
कुछ सोच समझ कर ही मुझ को, स्वामी ने आज निकारा है ॥
जिस तरह आपकी मर्जी हमने, उसी तरह से रहना है।
पर एक जरूरी बात याद आई, सो तुम को कहना है ॥

दोहा कृतान्त (सीता सन्देश)

अन्य जनों के कहने से, तजा मुझे भर्तार।
इसी तरह कुछ और न, तज देवें सरकार ॥

राज खजाने महल नार यह, फेर हाथ आ सकते हैं।
भाई बन्धु और मित्र आत्मा, सङ्ग नहीं जा सकते हैं ॥

एक धर्म ही ऐसा है, जो संग जीव के जाता है।
अष्ट कर्म मल टाल इसी से, अक्षय मोक्ष पद पाता है ॥
अन्य किसी के कहन से, धर्म न तजियो पीव।
सुख दाता संसार में, ये ही अमर सदैव ॥

क्षमा सभी अब कर देना, जो कुछ अपराध हमारा हो।
यही भावना है मेरी, युग युग में भला तुम्हारा हो॥
खत्म शिकायत हुई आज से, सारी खत्म कहानी है।
प्रसन्न रहो सुख शान्ति से, और अवधपुरी राजधानी है॥
सर्प वीन पर मस्त इस तरह, राम शीश को पटक रहे।
और श्वेत श्वेत मोती की, मानिंद आंसु नीचे टपक रहे॥

दोहा—सुन सुन कर के मूर्च्छा, रघुवर को गई आय।
जरा देर के बाद फिर, यों बोले अकुलाय॥
दोहा—आज किया मैंने बुरा, सीता दई निकाल।
निर अपराधिन पर दई, क्या आपत्ति डाल॥

एक सिया के बिना, सभी महलों में घोर अंधेरा है।
कर्मों ने कैसे आन अचानक, भंग रंग में गेरा है॥
आते याद सिया के गुण, हृदय में बर्छी लगती है।
इस प्रेम ने ऐसे, तंग किया आंसुओं की धारा वहती है॥
दोहा—एक नहीं दो चार क्या, गुण थे भरे अनेक।
जिसका गुण मैंने नहीं, धारा हृदय में एक॥

मैत्री भाव सभी पर सीता, तीन योग से रखती थी।
सत्य वचन कहने में उसकी, शक्ति अद्भुत बढ़ती थी॥
पर पुरुष देखने में अन्धी, विकथा सुनने में वहरी थी।
कुवचन कहने में थी गूंगी, बुद्धि सागर सम गहरी थी॥
पर घर जाने में थी पंगुली, नहीं कर थे पर धन हरने में।
सब थी कषाय चारों पतली, न भय था उसको मरने में॥
सम्मति देने में मंत्रीवत्, थी काम संवारण को दासी।
और पाप जरा से को भी वह, समझे थी गर्दन की फांसी॥
सब एक से एक बढ़कर गुण थे, वह चौसठ कला की ज्ञाता थी।

दोहा—हाल देख यह राम का, बोले लक्ष्मण वीर।
चिन्ता को अब छोड़ कर, चलो विपिन रघुवीर॥

दोहा—गई बात को जाने दो, आगे करो विचार।
सीता को लाने लिये, चलें अभी सरकार॥

अन्य किसी के जाने से, सीता न वापिस आएगी।
रात सामने आती है, फिर कैसे जान बचाएगी॥
रहने दो सभी युक्तियों को, कृतान्त के साथ चले जाओ।
विमान सामने खड़ा हुआ, सीता को जल्दी ले आओ॥

दोहा—बैठें तुरत विमान में, झट पट अब श्रीराम।
कृतांत राम को ले गया, उसी समय वन धाम॥

इधर उधर क्या चहुं तर्फ, श्रीराम वनों में फिरते हैं।
सीता का नाम निशान नहीं, आंखों से आंसु गिरते हैं॥
जहां सिंह बघेरे हाथी चीते, फिरते दौड़ लगाते हैं।
यह हाल देख श्रीरामचन्द्र, विश्वास इस तरह लाते हैं॥

दोहा--महा भयानक सब तरह, है दुर्गम उद्यान।
सीता अबला किस तरह, बचा सके थी प्राण॥

प्रथम तो देख भयानक वन. सीता ने प्राण तजे होंगे।
फिर मांसाहारी जीव वहां, सीता की ओर भगे होंगे॥
जानवरों ने भक्ष लई, सीता का समझो अन्त हुआ।
जनक सुता हो गई जुदा, बस खत्म सभी वृतान्त हुआ॥
सीता का अवसान हुआ, बाकी तो सभी बहाना है।
छान छान वन ढूंढ लिया, यहां से न अब कुछ पाना है।
विमान को उल्टा फेर लिया, लाचार अवध में आये हैं।
दुखित हृदय से रामचन्द्र ने, ऐसे वचन सुनाये हैं।

दोहा—कर्म हीन को कब मिले, शुभ वस्तु का योग ।
यदि मिल भी जाव' कभी, होता शीघ्र वियोग ॥

(गाना)

आज किस्मत ने हमें, नाच नचाया कैसे ।
सुख का एक दिन न मिला, हमको सताया कैसे ॥१॥
वर्ष चौदह तो महा, कष्ट के काटे बन में ।
वहां भी कर्मों ने कई, बार फंसाया कैसे ॥२॥
युद्ध रावण से हुवा, शक्ति भाई कों लगी ।
तूने हृदय यह मेरा, आज जलाया कैसे ॥३॥
खून लाखों का किया, जिसके कारण हमने ।
आज उस से ही मेरे, मन को फटाया कैसे ॥४॥
लाखों के सम्मुख मुझको, भर्तार बनाया उसने ।
फर्ज मेरे से मुझे, किस्मत ने हटाया कैसे ॥५॥
सब ने समझाया मगर, एक न मानी मैंने ।
अक्ल मेरी पे हाय, पर्दा यह छाया कैसे ॥६॥
मेरा अपराध भी सीता से, क्षमाने न दिया ।
आज होनी ने अजब, ढंग रचाया कैसे ॥७॥
मिथिलेश सुता रघुकुल, की वधु श्रेष्ठ सती ।
शुक्ल विधिना न टली, तन को गंवाया कैसे ॥८॥

दोहा—कर्तव्य अपने पर रहे, रामचन्द्र पछताय ।
लक्ष्मण जी कहने लगे, ऐसे सम्मुख आय ॥
क्यों भाई हमने प्रथम, समझाया हरबार ।
किन्तु न मानी किसी की, ऐसा चढ़ा खुमार ॥
यह उसी बात का मिला तुम्हें, फल आंसु भर भर रोते हो ।
न सोये अब तक नींद सुखों की, सोवोगे न सोते हो ॥

सख्ती करने के समय तुम्हें, नरमी कुदरत सिखवाती है।
नरमी की जहां जरूरत है, क्या खबर कहां छिप जाती है॥
इस नरमी के कारण मिथिला में, जनक भूप के वचन सुने।
दूसरे अवध को छोड़ गये, वनवास जहां फल फूल चुने॥
तीसरे आप की नरमी ने, वहां पर आपत्ति डाली थी।
बबर शेर के पंजों से, मुश्किल से सिया निकाली थी॥
नरमी की यहां जरूरत थी, अब सख्ताई पर अड़ बैठे।
और तीन खंड की आज, रोशनी सीता को गुम कर बैठे॥
अब हाथ मलो चाहे पछतावो, इन बातों से क्या बनना है।
जैसा बोया है बीज आपने, वैसा ही फल पाना है॥

दोहा—किन्तु भाई एक बात, पर आया मरा ध्यान।
सीता बिल्कुल मर गई, क्या तुम को है ज्ञान॥

वह महा सती गम्भीर सती, और आत्म शक्ति वाली है।
सत्य धर्म सहायक है उस का, आयु भी अब तक बाली है॥
क्या शक्ति वनचर जीवों की, रावण जैसों से मरी नहीं।
सब कष्ट सती ने सहे, अतुल पर आत्महत्या करी नहीं॥
इसलिये आप मन धीर धरो, सीता न मरने वाली है।
क्या दोष आपका औरों का, कोई अशुभ कर्म की चाली है॥
अर्कजटी सुग्रीव नरेश को, जैसे नग में पाया था।
श्री जनक सुता को हे भाई, उसने सब पता बताया था॥
पुरुषार्थ कहा मुख्य हमें, कहीं फिरने से ही पाएगी।
मत फिकर करो निश्चय मुझको, सीता तुमको मिल जाएगी॥

दोहा—वन में फेर तलाश कर, आ बैठे मन मार।
कुदरत से सब को मिले, आखिर सबर करार॥

दोहा – हस्ती जग में वहुत हैं, ऐरावत गज एक।
अश्व उच्चैश्रवा कहां, घोड़े फिरें अनेक॥

चौ० —गंधोदक है एक जगत् में, जलाशयों का पार नहीं।
क्षीरोदधि समुद्र जैसा उदधि कोई और नहीं॥
मणियों में चिन्तामणि कही, दानों में अभयदाना बड़ा।
देवों में अरिहन्त देव और, तपस्या में ब्रह्मचर्य बड़ा॥

दोहा—मन्त्रों में मन्त्र कहा, परमेष्ठी नमोकार।
कल्पवृक्ष जैसा नहीं, वृक्ष कोई सुखकार॥

नग में एक सुदर्शन नग, कुछ और नगों का अन्त नहीं।
वीतराग के धर्म सिवा, बाकी धर्मों में तन्त नहीं॥
हैं पतिव्रता नारी अनेक, पर सीता सी नहीं पाएगी।
अब 'शुक्ल' अगाड़ी इसी सती की, कथा सुनाई जाएगी।

दोहा।कवि—युगल पने दो सुत हुए, सिया के पिछली रात।
रूप रंग संस्थान में, एक जैसे दोनों भ्रात॥

इस समय सिया की खुशियों का, सर्वज्ञ देव ही ज्ञाता है।
खुश खबरी सुन कर बज्रजंघ, नृप फूला नही समाता है॥
राज चिह्न के सिवा सभी, आभूषण तुरत उतारे हैं।
हार सहित सब ही आभूषण, दासी को दे डारे हैं॥
मस्तक तिलक किया दासी के, दासीपन को दूर किया।
धर्म संस्थाओं को नृप ने, दान बहुत भरपूर दिया॥
रियासत भर के थे जितने कैदी, सब स्वतन्त्र कराए है।
था जन्मोत्सव का पार नहीं, घर घर में मङ्गल गाए हैं॥

दोहा—अनंगलवण शुभ नाम है, शशी वदन सुखकार।
मदनांकुश था दूसरा, सुन्दर राजकुमार॥

देवलोक से चचकर आये, पुण्यवान अति प्यारे हैं।
पांच धाय माता पालें, और सभी खिलावन वारे हैं॥
देख अवस्था राजा ने, फिर विद्या उन्हें पढ़ाई है।
हुए बहत्तर कलाओं के ज्ञाता, सब शास्त्र कला सिखाई है।
तीक्ष्ण बुद्धि देख देख, अध्यापक प्रेम बढ़ाते हैं।
और नमस्कार त्रिकाल कुंवर, मामे को करने जाते हैं॥
रत्न सुन्दरी रानी भी अति, प्रेम उन्हों पर करती है।
समय समय पर खान पान, सामान अगाड़ी धरती है॥

दोहा—देख देख सुत अपने, सीता खुशी अपार।
मन ही मन करने लगी, ऐसे जरा विचार॥

दोहा—वन से आ मैंने दिया, सासु चरणों में शीश।
कहा सासु ने था मुझे, शुभ ऐसा आशीश॥

हम जैसे पुत्र जन्मोगी, वैशल्या भी थीं साथ मेरे।
और वामनकोशी तेल उस समय, लगा हुआ था साथ मेरे॥
प्रत्यक्ष सासु के आशीसों का, फल मैं सम्मुख पाई हूँ।
बाक़ी हैं मेरे कर्म अशुभ, किसी जन्म से लेकर आई हूँ॥
भाग्यहीन मैं कहां सासु के, चरणों में नित्य प्रति पड़ती।
तब ही यह जन्म सफल होता, कुछ उनकी मैं सेवा करती॥
धन्य घड़ी धन्य दिन होगा, जब सासु के दर्शन पाऊंगी।
जो लगा हुआ मेरे कलङ्क, इसको भी दूर हटाऊंगी॥

दोहा—सीता ऐसे कर रही, अपना निजी विचार।
सिद्ध पुरुष वही आगया, जनक सुता के द्वार॥

एक हाथ में झोली थी, दूजा कर खाली लटक रहा।
मुख पर मुखपत्ती लगी हुई, मस्तक लाली से दमक रहा॥

था रजोहरण बायीं कक्ष में, और उसकी दंडी नंगी है।
आकाश गामिनी है विद्या, अनुव्रत धारी मन रंगी है॥
चादर और चोल पट्टा, साधु की तरह दिखाता है।
समझ गई सीता अनुव्रती, भोजन कारण आता है॥
जप तप करके विद्या साधी, ज्योतिष का पूरा ज्ञाता था।
था रामचन्द्र से मुख्य प्रेम, ब्रह्मचारी जग विख्याता था॥

दोहा—प्रेम भाव से सिया ने, दिया उसे अन्न पान।
हाल पूछने के लिये, बोली मधुर जबान॥
कहां घूम कर आ रहे, भाई कहो तमाम।
नाम काम अपना कहो, जाते हो किस धाम॥

सिद्धार्थ—सिद्ध पुत्र कहते मुझे, असल सिद्धार्थ नाम।
निर्ग्रन्थों के दर्श को, फिरूं एक यह काम॥

सर्वज्ञ देव की वाणी कुछ वहां, पर कानों में गिरती है।
और भिक्षा करके उदर पूर्ण, करना मेरी वृत्ति है॥
अपना कुछ हाल कहो भगिनी, यह कौन अवस्था धारी है।
नेत्रों में पानी भरा हुवा, निकली आवाज कुछ भारी है॥

दोहा सीता—हां भाई कुछ कर्म का, है ऐसा ही दौर।
विधना ने आगे कहो, चले किस तरह जोर॥

आदि अन्त पर्यन्त सियां ने, अपने दुःख सुनाये हैं।
राजकुमार उस तरफ मात को, शीश झुकाने आये हैं।
माता ने दोनों राजकुमर, श्रावक के चरणन लाये हैं।
उस समय सिद्धार्थ ने सीता को, ऐसे वचन सुनाये हैं॥

दोहा सिद्धार्थ-पुत्र तेरे पुण्यवान हैं, भगिनी दिल मत गेर।
सभी ठीक हो जायगा, है कोई दिन का फेर॥

अतुल बली योद्धा दोनों, सब नक्ष तेज अति पड़े हुवे।
यथा योग्य शुभ लक्षण हैं और दांत परस्पर अड़े हुवे॥
सर्वज्ञ देव ने बतलाये, शास्त्रों में जो शुभ लक्षण हैं।
सब आते नजर इन्हों में हैं, और बुद्धि के बड़े विलक्षण हैं॥

दोहा---विनती एक भाई मेरी, इस पर देवें ध्यान।
विद्या इनको दीजिये, विधि सहित कुछ ज्ञान॥

सुनी प्रार्थना सीता की, सिद्धार्थ का दिल नर्म हुआ।
कुछ पुण्य सितारा बच्चों का भी, और शुभ कर्मोदय हुआ॥
विद्या विविध प्रकार उन्हों को, विधि सहित सिखलाई है।
और कुछ दिन में ही सिद्धार्थ ने, सारी पास कराई है॥

दोहा—देखा कि अब होगये, विद्वान् सुकुमार।
सीता के सुपुर्द किये, बोला वचन उचार॥

सिद्धार्थ-दोनों सुत तेरे हुये, विद्याओं में पास।
कुछ दिन में भगिनी तेरा, होगा पुण्य प्रकाश॥

मनुष्यमात्र तेरे पुत्रों को, नहीं जीतने पावेगा।
अन्तिम निराश होगा इन पर, जो आक्रमण करके आयेगा॥
नाम प्रगट तेरा संसार में, अए सीता करने वाले हैं।
सुत विनयवान् हैं भव्य जीव, न किसी से डरने वाले हैं॥
पुत्र समर्थ तेरे हैं, अब मेरी ड्यूटी पूर्ण हुई।
तेरी सेवा में रहा नित्य, मेरी चिन्ता भी चूर्ण हुई॥
हे जगदम्बा उपकारी, एक विभीषण वीर है दुनिया में।
समदृष्टि अद्वितीय, वज्रकरण सा और न सुनिया में॥

दोहा—इतना कह करके चला, सिद्धार्थ निज काम।
सीता से सम्मान का, केवल लिया इनाम॥

लवणांकुश की शादी

वज्रजंघ की थी सुता, शशिकिरिणा शुभ नाम ।
माता जिसकी रेवती, पुण्यवान अभिराम ॥

अनंग लवण के संग भूप ने, निज कन्या परणाई है ।
दिल खोल नृप ने दान दिया, पहले से प्रीत सवाई है ॥
मदनांकुश की शादी का, अब दिल में ध्यान जगाया है ।
कलम दवात लिखने को, पत्र कागज हाथ उठाया है ॥

दोहा वज्रजंघ-सिद्ध श्री सर्वोपमा, विराजमान गुण खान ।
वज्रजंघ की प्रार्थना, पर कुछ करना ध्यान ॥

प्रणाम करो स्वीकार, गुणोदधि हमने तुमको जाना है ।
सुता कनकमाला को तुमने, अन्त में कहीं विवाहना है ॥
मदनांकुश जैसा राजकुमार, दूसरा कहीं नहीं पाना है ।
कृपया उत्तर जल्दी देवो, यदि तुमने विवाह रचाना है ॥
नम्र निवेदन किया आपसे, न कोई धौंस जमाता हूं ।
और केवल आपसे हां} न का ही, उत्तर लेना चाहता हूँ ॥
आज आपकी सेवा में, इस कारण दूत पठाया है !
खाली न इसको भेजोगे, मेरे दिल यही समाया है ॥

दोहा—लिख पत्र महाराज ने, दिया दत के हाथ ।
और जबानी इस तरह, कही भूप ने बात ।

शुद्ध महीपुर तुम जाओ, पृथु भूप को पत्र दे देना ।
और नमस्कार अपना करके, प्रणाम हमारा कह देना ॥
करें यदि स्वीकार अमृता, रानी से भी कह आना ।
नहीं तो जैसा उत्तर देंगे, लेकर चुपचाप चले आना ॥

दोहा—दूत पत्र लेकर गया, राजा के दरबार।
नृप के सम्मुख रख दिया, करके प्रथम जुहार॥

जिस समय पत्र को पढ़ा, भूप ने मस्तक पर बल डाले हैं।
गुस्से में चेहरा लाल हुआ, नेत्रों ने रंग निकाले हैं॥
पत्र को फाड़ धरण फेंका, ऊपर को नयन उठाये हैं।
फिर वशीभूत हो क्रोध अरि के, ऐसे वचन सुनाये हैं॥

दोहा—अक्ल बेच खाई कहां, वज्रजंघ ने आज।
बिन सोचे किसने धरा, इसके सिरपर ताज॥

अक्ल आँख दोनों के अन्धे, ने क्या पत्र पठाया है।
भेजा है दूत खिजाने को, कुछ भय न मुझ से खाया है॥
कुल जातकी खबर नहीं जिनकी, क्या खबर कहांसे आये हैं।
आगे पीछे का नाम नहीं, जिनको कुलटा ने जाये हैं॥
अर्धचन्द्र धक्का देकर के, दूत को बाहिर किया जावे।
मोरी के रास्ते लेजाओ, ये ही सम्मान दिया जावे॥

दोहा—बेइज्जत करके दूत को, भेज दिया तत्काल।
वज्रजंघ को आन कर, सभी बताया हाल॥

बेइज्जती अपनी और सीता की, सुनते ही आमर्ष आया है।
तब हुक्म दिया सेनापति को, मारु बाजा बजवाया है॥
दल बल से सबल विमान, मोर्चा रणक्षेत्र में लाया है।
उस तर्फ पृथु राज ने भी, सब अपना कटक सजाया है॥

दोहा—पृथु भूप का सहायक था, पोतन पुर का भूप।
दोनों ने आकर वहां, रापा जंग स्वरूप॥

जब आन परस्पर मेल हुआ, तो चमका तेज दुधारा भी।
कहीं अग्निबाण कहीं धुन्द बाण, कहीं चलता सांग कटारा भी॥

उस तर्फ शक्तियां दो भारी, इस तर्फ एक कहलाती है।
वज्रजंघ की फौज भगी, जब देखा पेश न जाती है॥

दोहा—वज्रजंघ के सुतों ने, देखा जब यह हाल।
तेजी में आकर चढ़े, होकर के विकराल॥

मानिंद सिंह की कूद पड़े, सब दल में हाहाकार हुआ।
जहाँ तोप दनादन चलती है, गैसों का उड़े अपार धुंआ॥
पृथु भूप की फोज भगी, तब इन्होंने हल्ले बोल दिये।
भानु अस्ताचल पर पहुँचा, शूरों ने शस्त्र खोल दिये॥

दोहा—प्रातः काल ही फिर लगा, होन कठिन संग्राम।
योद्धा दोनों ओर से, गये बहुत परधाम॥

पृथु भूप ने तेजी से, आकर घमसान मचाया है।
और वज्रजंघ की सेना को, बिल्कुल ही आन दबाया है॥
पैर उखड़ गये सेना के, तब वज्रजंघ घबराया है।
बलहीन पक्ष हुआ मातुलका, लवणांकुश ने सुन पाया है॥
क्योंकि सूर्य वंशजों का वह, तेज कहां छुप सकता है।
क्या क्षत्राणीका दूध जौहर, दिखलाए बिन रुक सकता है॥
तन पर बख्तर सजा लिया, तलवार कमर में लटक रही।
अद्भुत संस्थान अनुपम था, मस्तक पर लाली छटक रही॥
सज धज पास माता के आए, चरण युगल में शीश निमाए।
नेत्र स्नेह से सियाने उठाए, लवण कुमर ने वचन सुनाए॥

दोहा—माता आज्ञा दीजिये, अब मत लावो देर।
यदि समय चूका अभी, पछतावोगे फेर॥

पछतावोगे फेर धर्म, गौरव दोनों जायेंगे।
मामा लिया दबाए अरि ने, घेरा यहां लायेंगे॥

उपकारी को कष्ट हुआ तो, क्या मुख दिखलायेंगे।
देवो आज्ञा आज अरि पै, खंजर खटकायेंगे॥

दौड़—खुशी से हुक्म चढ़ाओ, भय न कोई मन में लाओ
जन्म तेरे लीना है।
दूध लजावें माता का, धिक्कार फेर जीना है।

दोहा—बातें सुन कर आपकी, बेटा प्राण आधार।
सत्य कहूं मुझ को हुई, अनुपम खुशी अपार॥

मुझ को खुशी अपार, किन्तु मत बेटा देर लगाओ।
जहाँ गिरे पसीना मामा का, वहाँ अपना रक्त बहाओ॥
प्राण तलक लग जाए चाहे, मतुल का गौरव बचाओ।
तेज दूध मेरे का पुत्र, रण में आज दिखाओ॥

दौड़—पराजित शत्रु को करना, पैर पीछे नहीं धरना।
धर्म का लीजो शरणा—
पीठ दिखाकर बेटा क्षत्रिय, कुळल दागी मत करना॥

दोहा—माता मन में कीजिये, ठीक तसल्ली आज।
एक आप की कृपा से, बनें सिद्ध सब काज॥

यदि हैं भक्त माता के तो, नहीं शंका काल की खाएंगे।
आशीश आप की से माता, मैदान जीतकर आएंगे॥
कौन चीज भूपाल पृथु, दुनिया हमसे दहलाएगी।
अब देखो यह तलवार मात, रण में क्या रंग दिखलाएगी॥

दोहा—बेशक बेटा दिल मेरा, है इस समय कठोर।
करना मैं चाहती नहीं, आप का मन कमजोर॥

कायरता सिखलाने वाले, शिक्षक शत्रु होते हैं।
फिर तन मन धन वह गौरव, खोकर शीश पकड़कर रोते हैं॥

यही सोच कर तुम्हें लाल मैं, विजय माल पहनाती हूँ।
कंगना दोनों के हाथ मे, और मस्तक पर तिलक सजाती हूं ॥

गाना—(व० त०)

ऐसा कह हार दोनों को पहना दिये।
और विजय का तिलक फिर सजाने लगी ॥
मस्तक चुचकार करके बड़े प्यार से।
थापी देकर वचन यों सुनाने लगी ॥
दूध के भी ना टूटे तुम्हारे कुमर।
कह कर अग्नि में तुम को कुदाती हूँ मैं ॥
जाओ वेटो खुशी से समर भूमि में।
पहिली बातों को फिर से सुझाती हूं मैं ॥
सर चला जाय वेशक तो परवाह नहीं।
आन जाय न कुल की सुनाती हूँ मैं ॥
लाज रखना मेरी कूख की लाडलो।
अपना हृदय सबर से बुझाती हूँ मैं ॥

दोहा—माता छोटे देख कर, दिल अपने मत भूल।
छोटे बच्चे सिंह के, मारें गज स्थूल ॥

रण भूमि में जब उतरेंगे, सन्नाटा सा छा जावेगा।
जननी ने कोई जना नहीं, जो सम्मुख पांव टिकावेगा ॥
जो कहा मात सो ही निश्चय, करलो करके दिखलायेंगे।
नहीं तो चुल्लू भर पानी में, बस डूब कहीं मर जायेंगे ॥

दोहा—नमस्कार कर मात को, चले युगल दो वीर।
मामा को उत्साह दिया, और वंधाई धीर ॥

फिर टूट पड़े अरिदल पर, तब हाहाकार मचा भारी।
अग्निवाण, तूफानवाण जैसे, घनघोर घटा भारी ॥

अब लवणांकुश का देख तेज, शत्रु का दल सब भाग पड़ा।
हथियार डाल दिये योद्धों ने, पृथु भूप देख रहा खड़ा-खड़ा॥
समझा जब इनको काल रूप, नृप ने भी पांव हटाये हैं।
तब लवणांकुश ने देख हाल, भूपति को वचन सुनाये हैं॥

क्यों साहिब अब किस लिये, होते तौर बेतौर।
गौरव है यदि वंश का तो, लाओ शक्ति और॥

ला शक्ति कुछ और, कदम पीछे न जरा हटाना।
नहीं तो इस क्षत्रापन पर, थूकेगा सभी जमाना॥
अज्ञात वंश वालों से भी, नेत्र तो जरा मिलाना।
पीठ दिखा कर क्षत्रापन को, दाग न कोई लगाना॥

दौड़—आज भुजबल फड़के हैं, बन्ध बख्तर कड़के हैं।
जंग का स्वाद न आया,
हाथ उठाकर मुर्दों पर, बस आज प्रथम पछताया॥

दोहा—देखा जब भूपाल ने सारा जंग मैदान।
सन्धि का फिर दे दिया. अपने आप निशान॥

दोहा—पराक्रम से ही वंश की, हुई मुझे पहिचान।
दोष क्षमा करके सभी, कीजो अभय प्रदान॥

दोहा—माफी देने का पृथु, मुझे नहीं अधिकार।
मातुल के चरणों लगो, अपना मस्तक डार॥

वज्रजंघ के चरणों में फिर, माफी की दरख्वास्त करी।
और पुत्री का डोला देने को, पत्रिका लिखकर पास धरी॥
वज्रजंघ नृप की शर्तें सब, पृथु भूप ने मानी हैं।
द्वेषानल जहां चमकी थी, वहां बहे प्रेम का पानी है॥

दोहा—नारदजी भी आगये, फिरते उसी स्थान।
प्रेम भाव सबने किया, आदर और सम्मान॥

वज्रजंग से नारद ने, कुछ रहस्य जरा सुन पाया है।
फिर पृथु भूप के पास मुनि-ने, निज आसन जा लाया है॥
कहो मुनि मदनांकुश किस, वंश का राज दुलारा है।
भेद बताने को नारद ने, ऐसे वचन उचारा है॥

दोहा—नित्य उठ करता है सदा, अन्धकार का नाश।
आता है सबको नजर, देख रवि प्रकाश॥

आदिनाथ का बड़ा पुत्र जो, चक्री भरत कहाता था।
सूर्ययश था पुत्र भरत का, तेज सहा नहीं जाता था॥
सूर्ययश से सूर्यवंश यह, चला तभी से आता है।
राम पिता सीता माता और, कुल रविवंश कहाता है॥
गर्भ में जब यह दोनों थे, कुछ लोगों ने अपवाद किया।
उसी समय श्रीरामचन्द्र ने, सीता को बनवास दिया॥
वह महासती है पतिव्रता, कालिश कैसे लग सकती है।
कभी तेज सूर्य का घटे नहीं, चाहे कुछ दुनियां बकती है॥

दोहा—सूर्य वंश सुन पृथु को, छाई खुशी अपार।
डोला लड़की का किया, उसी समय तैयार॥

धूम धाम से विवाह किया, कुश को जामात बनाया है।
दिल खोल भूप ने दान दिया, राजा से प्रेम बढ़ाया है॥
वज्रजंघ राजा की जो शुभ, थी विचार सो फल आई।
पहिले थी जैसी आज मधुरता, पृथु भूप को दर्शाई॥

दोहा—नारद मुनि कहने लगा, लवणांकुश को बात।
चलो मिलावें आप को, राम लखन के साथ॥

चौ०—राम लखन तुमको दिखावें, अवध पुरी यदि जाना चाहवें।
वह अतुल बली महाशूर कहावें, सुर नर जिनकी सेवा बजावें॥

दोहा—आप मिलावें इस तरह, मिलते कायर क्रूर ।
तेज दिखाए बिन कभी, मिले न असली शूर ॥

माता जी को न मिली जगह, वहां कैसे मिलने जावेंगे ।
तलवार से पहिले जगह बना, फिर माता को ले जावेंगे ॥
आने वाला है दूर नहीं, वह समय फेर बतलायेंगे ।
निर्दोषन को बन में तज देने, का भी कुछ मजा चखायेंगे ॥

दोहा—ठीक नहीं तुमने किया, बता दिया सब भेद ।
समय बिना इस बात को, पहिले दिया कुरेद ॥

आगे को यही प्रार्थना है, कुछ देर ज़रा ज़रते रहना ।
चंद दिनों के बाद फेर, जैसे मर्जी करते रहना ॥

अपने गुण आप बताने से, गौरव का रहता नाम नहीं ।
अवधेश को ऐसे मिलने में, बाकी रहती कुछ शान नहीं ॥
मन्त्र मौन ही फल देता, प्रसिद्ध करने में असर नहीं ।
माता का गौरव बढ़ायेंगे, क्यों कि हम में कुछ कसर नहीं ॥
अब देखे तो हम माता की, धारों का तेज दिखावेंगे ।
तलवार से पहिले जगह बना, कर माता को ले जावेंगे ॥

दोहा—लवणांकुश की बात सुन, नारद खुशी अपार ।
हां में हां भरने लगे, बोले वचन उचार ॥

दोहा—ठीक सभी तूने कहा, जनक सुता के लाल ।
आज तुम्हारे सामने, शंका खाता काल ॥

जंग जुड़े नहीं छुपे शूरमा. भानु बादल छाने से ।
कभी बात बनाए बद नहीं छुपता, दाता मांगत आने से ॥
कर्म छिपे नहीं धर्मी से भी, बक पापी ध्यान लगाने से ।
प्रेम के नैन छिपे न छिपाए, अवगुण भेप बनाने से ॥

समझ गये हम राम साथ, तेरा जंग जुड़ने वाला है।
हम भी देखेंगे अवधपुरी में, क्या गुल खिलने वाला है॥
इतना कह कर नारदजी ने, तो अपना प्रस्थान किया।
इस तर्फ इन्होंने भी वहां में, कुछ चलने का सामान लिया॥

दोहा—इधर उधर के देश कुछ, साधन का था ख्याल।
लोंकात्तपुरी के पास जा, दई छावनी डाल॥

कुबेर भूप को जीत फेर, लम्पाक पति को विजय किया।
भ्रातृ शतक पर आक्रमण करके, विषमस्थली को घेर लिया॥
गंगा नदी के उतर पार, कैलाश की ओर सिधाये हैं।
सिंहलजख कुन्ताल यह तीनों, देश जीत सुख पाये हैं॥
भूतलवादी कालांबुनदी, नन्दन यह भी सब देश लिये।
भीम चूल शलभानल, तीनों राजे साथ विशेप लिये॥

दोहा—सिन्धु का जिनने लिया, सर कर परला कूल।
छोटे छोटे भूपति, हुए बहुत अनुकूल॥

अब खुशी खुशी श्री वज्रजंघ, निज पुण्डरीकपुर को आये हैं।
और लवणांकुश ने माता के, चरणों में शीश झुकाये हैं॥
देख तेज निज पुत्रों का, सीता माता खुश होती है।
जब स्मरण हों पिछली बातें, तो मन ही मन में रोती है॥
माता की सब चिन्ताओं को, श्री लवणांकुश ने पाया है।
श्री वज्रंजघ मामाजी को, दोनों ने वचन सुनाया है॥

दोहा—मामाजी अब अवध को, देखन का है ख्याल।
राम लखन देखे नहीं, कैसे शूर विशाल॥

रण करने का स्वाद आज तक, हमको कहीं न आया है।
अवधेश की शक्ति देखेंगे, हृदय में यही समाया है॥

उस समय आप जो कहते थे. अब काल है दर्श दिखाने का।
कुछ देर नहीं अब एक ध्यान है, आपकी आज्ञा पाने का॥

दोहा—जो कुछ करना आपने, मुझे वही स्वीकार।
किन्तु ऐसे काम में, करना ठीक विचार॥

आज्ञा देने में तुम को है. कुमर मुझे इन्कार नहीं।
मैं कारण बनूं क्लेशों का, और निकलेगा कुछ सार नहीं॥
यह झगड़ा सभी घरेलू है, औरों का इस में दखल नहीं।
लड़ना तो उन से दूर रहा, वहां काम करेगी अक्ल नहीं॥
त्रिखंडी उन से हार गये, हम तुम तो हैं किस पानी में।
मिलना तो मिलो प्रेम से, क्यों दुःख पावोगे नादानी में॥
कुछ विघ्न हुआ वहां पर तुमको, यहां जनकसुता दुःख पावेगी।
आपस में इनको लड़ा दिया, बदनामी मुझ को आएगी॥
मेरी तो यही सम्मति है, सीता से आज्ञा ले आवो।
देने को मैं तैयार साथ, जो भी कुछ तुम करना चाहो॥

लवणांकुश और राम का युद्ध

दोहा—उसी समय दोनों कुमर, गये मात के पास।
नमस्कार कर के किये, अपने भाव प्रकाश॥

दोहा—खुश हो कर दे दीजिये, आज्ञा हम को मात।
अवधेश पिता के दर्श को, चलें करें दो बात॥

दोहा—जान गई आकृति से, बेटा प्राण आधार।
दर्श करन का आप का, बिल्कुल नहीं विचार॥
आता नजर मुझे ऐसा, तुम जाते जंग मचाने।
जंगी बख्तर पहिन शस्त्र, बांधे सब आज ठिकाने॥

मुझ कर्मों की मारी को, क्यों लगे पुत्र कल्पाने।
बेटा करो विचार लगे क्यों, सोता काल जगाने॥

छन्द—दर्शन को जावो लाडलो, मैं रोकती तुम को नहीं।
जंग करने चले स्वीकार, यह मुझ को नहीं॥
जिन की शक्ति से धरण और, स्वर्ग लर जाता सभी।
सोते कर्म मेरे कुमर फिर, न जगा देना कभी॥

दोहा—विनय करें कर जोड़ कर, चरण निवायें शीश।
आज्ञा देनी मात जी, होगी विश्वावीस॥

दोहा—नरमाई से मात जी, मिलते कायर क्रूर।
मिलें तेग की धार से, योद्धा क्षत्री शूर॥

करने को संग्राम मात, अवधेश से हम जावेंगे।
दई न तुम को जगह, उन्हें कर अपने दिखलावेंगे॥
दुनिया से भी पुत्र मात, तेरे न दहलावेंगे।
काढ दई थी उस के पुत्र, हम कभी न कहलावेंगे॥

गाना—लवणांकुश का माता को धैर्य देना (व० त०)

माता पुत्र तेरों को विजय कर सके।
ऐसा दुनिया में कोई बसर ही नहीं॥
राम लक्ष्मण के संग सारी दुनिया चढ़े।
तो भी दिल में हमारे, खतर ही नहीं॥
हो के क्षत्राणी माता क्यों कायर बने।
मेरी शक्ति की तुम को खबर ही नहीं॥
शक्ति भुजबल की उन को दिखाये बिना।
माता आयगा हम को सबर ही नहीं॥

गाना—सीता का पुत्रों से कहना (वहर तवील)

तुम हो रणधीर दोनों मेरे लाडलो।
और लड़ने में तुम न रक्खोगे कसर ॥
उन से कर के समर कोई जीता नहीं।
चहे कैसा ही हो कोई सुर या असुर ॥१॥
यह तो निश्च कि सिर धड़ की बाजी लगे।
यहां हुआ कहीं होता या होगा समर ॥
मुझ को दोनों तरफ से महा कष्ट है।
अब करूं तो करूं क्या बताओ कुमर ॥२॥

दोहा—माता मरना जन्मना, लगा हुआ है लार।
भय मरने का शूरमा, करते नही लगार ॥

जो खिला बाग में फूल माता, सोतो एक दिन कुमलायेगा।
आ जन्म लिया जिसने माता, कृतान्त सभी को खायेगा ॥
जिनका न गौरव दुनिया में, धिक्कार उन्हों का जीना है।
सागर का कड़वा जल अच्छा, निरादर का पय क्या पीना ॥

दोहा—गौरव बेटा किसी का, खोस सके ना कोय।
यश अपयश जैसा किया; पूर्व वैसा होय ॥

पिता सामने पुत्रों का तो, विनय सदा ही सोहता है।
गौरव उसका बढ़ता संसार में, तीन लोक को मोहता है ॥
मात पिता के सन्मुख लड़ने, से गौरव गिर जाता है।
पुण्य सितारा गिरने से फिर, सब का दिल फिर जाता है ॥

दोहा—समय समय पर मात जी, शोभें सारी बात।
सर्दी गर्मी समय पर, होती है बरसात ॥

रुग्ण मनुष्य के हे माता, हृदय को देखा जाता है।
फिर उसे वैद्य भी नरमी या, सख्ती से दवा पिलाता है ॥

प्रमाद मान की हे माता, दुनिया में बड़ी बिमारी है।
नरमी से वहाँ न काम बने, जिसको चढ़ रही खुमारी है॥
किसमिस की तरह औषधी, मीठी सब से श्रेष्ठ कहाती है।
बादाम के मानिन्द दूजी, जो अन्दर से अच्छी पाती है॥
ऊपर नर्मी अन्दर सख्ती, जैसे की बेर छुहारा है।
चौथे मानिन्द सुपारी के, आप्त ने वचन उचारा है॥
मात पिता से पहिली संख्या, की ही विनय हमारी है।
या दूजी संख्या की समझे, दिल से न दूर बिसारी है॥
हे मात सिंह का बच्चा पंजों, से ही विनय बजाता है।
क्षत्रिय का विनय समर में ही, शस्त्रों से परखा जाता है॥
बेशक वह है सिंह मात तो, हम भी उनके बच्चे हैं।
तुम निर्भय हो जाओ माता, हम किसी रण में नही कच्चे हैं॥

दोहा—नमस्कार कर के चले, दे माता को धीर।
सीता को धरनी पड़ी, दिल में धीर आखीर॥

सीता आंसू गेरती, हो कर के हैरान
क्योंकि दोनों तर्फ है, अपना ही नुकसान॥

जंगी बिगुल बजा दिया, हुवे वीर तैयार।
योद्धाओं को छा रही, दिल में खुशी अपार॥

था वज्रजंघ और पृथु नरेश्वर, संग में पोतनपुर वाला।
लम्पाक कालाम्बु पति और, सुकन्तचूल था मतवाला॥

शलभानल आदि नरेश, लवणांकुश के संग आए हैं।
श्री राम लखण की सीमा पर, जा तम्बू डेरे लाए हैं॥

विमान गगन में घूम रहे, संग्रामी रथों का पार नहीं।
और विकट गाड़ियां गूंज रही, तोपों का हुआ पसार कहीं॥

राम लखन की सेना ने भी, आन मोर्चा लाया है।
और नारद का भेजा भामण्डल, पास सिया के आया है॥

चौ०--पुण्डरिक पुर भामंडल आया, सीता को निज शीश निमाया।
दुःख परस्पर सुना बताया, सीता ने तब वचन सुनाया॥

दोहा—जो कुछ कर्मों ने करी, भाई मेरे साथ।
सिर धुन धुन रोई अति, पकड़ पकड़ कर माथ॥

निश्चय में है किस्मत मेरी, कारण श्री राम कहाए हैं।
वनवास में मुझे निकाल दिया, कुछ ख्याल नही दिल लाए हैं॥
अब जैसे तैसे भ्रात कष्ट के, दिन मेरे सब दूर हुवे।
और लवणांकुश भानजे आप के, शूर वीर मशहूर हुवे॥

दोहा—अब दुःख अपने की कथा, खाक कहूँ या धूल।
भाई इस दम चौकड़ी, रही सब तरह भूल॥

कुमर गये दोनों रण करने, जिद्द अपनी में आकर के।
अब किसी तरह से हे भाई, समझाओ उनको जा कर के॥
जंग वहां पर राम लखन संग अब होने वाला होगा।
अन्तिम अपनी सब हानी है, अपना ही मुँह काला होगा॥

दोहा—नारद ने अच्छा किया, मुझको दिया बताय।
लवणांकुश को मैं अभी, देऊंगा समझाय॥

बुरा किया दोनों ने किस के, साथ समर की ठानी है।
सुरा सुर न उनको जीत सके, क्या पेश मनुष्य की जानी है॥
नाग पवनिये दिये छेड़, यह बच्चों की नादानी है।
बिना खबर सुत अपनों की, खो बैठेंगे जिन्दगानी है॥

दोहा—भामण्डल सीता सती, दोनों बैठ विमान।
उसी समय पहुँचे वहां, जहां था रण मैदान॥

लवणांकुश ने देख मात को, चरणन शीश झुकाया है।
विनय सहित भोजनशाला में, खाना तुरत खिलाया है॥
बोलो यह भामंडल भाई, जो मामा सगा तुम्हारा है।
शिक्षा इसकी हृदय धरना, क्योंकि हमदर्द हमारा है॥

दोहा—भामंडल ने लवण को, समझाया हर बार।
किन्तु न माना एक भी, सीता का सुकुमार॥

भामंडल स्वयं ही समझ गया, और जंगी भरती भरने लगा।
लिये युद्ध के भामंडल, पुरुषार्थ अपना करने लगा॥
पता नहीं होनी को क्या, मंजूर सियः यों कहने लगी।
छिड़ गया उधर संग्राम घोर, रण में तलवारें बहने लगी॥

दोहा—रामचन्द्र की फौज सब, भागी जान बचाय।
लवणांकुश के सामने, गये सभी घबराय॥

सुग्रीव विभीषण बड़े-बड़े योद्धा फिर सम्मुख आये हैं।
इस तरफ बली भामंडल ने भी, अपने शस्त्र उठाए हैं॥
जब आन परस्पर मेल हुआ, तो शूरवीर हर्षाए हैं।
और देख वीर भामंडल को, सुग्रीव ने वचन सुनाए हैं॥

दोहा—आश्चर्य मुझको हुआ, एक बात को देख।
हमसे क्यों मित्र फटा, तू भामण्डल एक॥

रामचन्द्र का सेवक तू, बहनोई सगा तुम्हारा है।
लंका पर करी चढ़ाई तबसे, तुम से प्रेम हमारा है॥
क्यों प्रतिकूल हुआ लक्ष्मण से, हमको पता न पाया है।
यह कौन इन्होंसे क्या नाता, जो हम पर चढ़ कर आया है॥

दोहा—अब भी मैं श्रीराम के, हूं मित्र अनुकूल।
हुआ न होऊँगा कभी, उनसे मैं प्रतिकूल॥

तुम हम मित्र पुराने हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।
वैसा ही प्रेम हमारा है, तुम से टूटा कुछ नेह नहीं॥
किन्तु प्यारा हो ब्याज मूल से, बुद्धिमान् यों कहते हैं।
और सोच समझकर शूर वीर, बस, न्याय पक्ष को लेते हैं॥

दोहा—सुत दोनो श्रीराम के, सीता के अंगजात।
लवणांकुश मम भानजे, युगल जात दो भ्रात॥

रामचन्द्र ने सीता पर जो, महा विपत्ति डारी थी।
न अवधपुरी में मिली जगह, वन-वन फिरती दुखियारी थी॥
यह दोनों सिंह उसी के हैं, श्रीराम को कुछ भी खबर नहीं।
निज मातका बदला लिये बिना, इनको बस आता सबर नहीं॥

दोहा—तुम भी अब इस पक्ष को, करो मित्र स्वीकार।
सीता के दर्शन करो, फैंको सब हथियार॥

काम बिगड़ न जाए कहीं, इस कारण शस्त्र उठाया है।
रहस्य बात का मित्र आज, हमने तुमको बतलाया है॥
अब हम तुमने ही मिल करके, इनकी संधी करवानी है।
फिर किस कारण किससे लड़कर, आपस की करनी हानि है॥

दोहा--भामण्डल से जब सुनी, सभी बात सुखकार।
संग उन्हों के जा मिले, फैंक सभी हथियार॥

सेना सहित सभी योद्धा, जा भामण्डल के साथ मिले।
यह दृश्य देख सब सेना क्या, श्रीराम लखन के हृदय हिले॥
एक तर्फ जा लवण वीर ने. राम की सेना घेरी है।
तरफ दूसरी होकर कुश ने, अपनी की हथ फेरी है॥

दोहा—आए काबू में कई, भगे डार हथियार।
रामानुज दोनों चढ़े, होकर के लाचार॥

क्या जादू है कोई शत्रु पर, जो सबको वश करते हैं।
जिन पर था विश्वास वोही जा, अरि चरणों में पड़ते हैं॥
सब करते करते यों विचार, श्री राम समर में आये हैं।
तब लवणांकुश ने उधर, सामने आकर वचन सुनाये हैं॥

दोहा—नजर कोई आता नहीं, रघुवंशिन को सूर।
लंकपति को मारकर, इतना चढ़ा गरूर॥

इतना चढ़ा गरूर किसी, नीति का भी न ख्याल रहा।
कुछ सोचो सदा किसी का यहां, न एक सरीखा हाल रहा॥
सहस्र अक्षौहिणी हनी वहां, यहां पर भी कुछ दिखलायेंगे।
शक्ति देखे बिन आप की बस, हम भी न यहां से जायेंगे॥

दोहा—लवणांकुश को देख कर, राम लखन हैरान।
रूप रंग संस्थान को, दिल में लगे सराहन॥
क्या दोनों आकर हुवे, नल कुबेर अवतार।
संस्थान सब एक सा, सुन्दर रूप अपार॥

क्या नन्हीं सी उमर किन्तु, तेजी का लगता पार नहीं।
भोलापन मुख पर बरस रहा, गुस्से के कोई आसार नहीं॥
चाहे शत्रु हैं पर इन से हमारा, दिल मिलने को चाहता है।
बस देख देख इनको अन्दर, से प्रेम उबलता आता है॥

दोहा—क्या जादू के आगये, बनकर दोनों वीर।
बख्तर शस्त्र सब किस, तरह सोभ रहे हैं तीर॥

सुग्रीव आदि सब योद्धों पर, भी यही मोहिनी डारी है।
कुछ असर हमारे दिल पर भी, वोह करने लगी बिमारी है।
हम पहिले इनको समझा दें, क्यों वृथा प्राण गमायेंगे।
नहीं तो शत्रु से प्रेम ही क्या, परभव इनको पहुंचायेंगे॥

दोहा—किस राजा के पुत्र तुम, किसके हो अंगजात।
छोटे मुख से कर रहे, बड़ी बड़ी जो बात॥

शेर राम—नाम लवणांकुश सिवा, हमको खबर कुछ भी नहीं।
सहसा जगाया काल आ, तुमको खबर कुछ भी नहीं॥

दोहा लवणांकुश—हीरे को क्या गर्ज है, कहे खान और जात।
सम्मुख आ गजराज के, सिंह करे गर्जात॥

शेर लव०---अबला डराई है सदा, जाना मर्म कुछ भी नहीं।
वोही जगाते काल को, जिनका धर्म कुछ भी नहीं॥

शेर राम—जा दूध पीवो मात का, रो रो के प्राण गवायेंगी।
यह मार है तलवार की, तुमसे न सही न जाएगी॥

शेर लव०---खेल बच्चों का समझ, धोखा न बिल्कुल खाइये।
सम्भल कर के ही जरा, आगे को पांव उठाइये॥

दोहा—अए लड़कों तुम खूब हो, बातों में होशियार।
फिर भी कहता हूँ तुम्हें, कठिन समर की मार॥

क्षत्रापन हो गया अदा, अब साता तुम्हें पिछाड़ी है।
और किस पर हम हथियार उठावें, उमर तुम्हारी वारी है॥
तब तक है कल्याण की जब तक, शस्त्र नहीं सम्भाले हैं।
त्रिखण्डी रावण जैसों के सब, मान हमी ने गाले हैं॥

दोहा-लवणांकुश पृथ्वी टरे अम्बर टरे, रवि शशि टरजांय।
समर किये बिन आपसे, हम टलने के नांय॥

छोटे बच्चे सिंहों के, हस्ती के सम्मुख जाते हैं।
क्षत्राणी के छोटे बच्चे, सब समर खेलने आते हैं॥
समझ गये हम आज आप; कुछ रण करने से डरते हैं।
और पीछा अपना छुटवाने को, ऐसी बातें करते हैं॥

दो०-लक्ष्मण— बालक हठ इन को चढ़ा, क्या समझाते वीर।
मरने दा यदि आगया, इनका आज आखीर ॥

अभी दूध के दान्त नहीं, माहिर हैं कुछ इस फन के।
चित्त से बाहिर करें बात, मेंढ़क से उछल उछल के॥
बदल बदल कर आंख हमें, धौंसावें लड़के कल के।
एक बार न झेल सकें, रह जावेंगे कर मल के॥

सवैया लक्ष्मण)

मूर्ख बाल गुमान भरे मन माहि, न खोएं किसी की शंका।
काल को आए डराय रहे शठ, तेग दिखाए हुए रण बंका॥
अन्न जल आज उठा इनका, लंकेश का काल हुआ जिम लंका।
क्या पेश चले जब आयु घटी, सिर काल ने आन बजाया डंका।

दौड़—दया तुम पर लाते हैं, जिस लिये समझाते हैं।
क्योंकि दोनों बच्चे हो
इस रण के फन में अए लड़कों, बिलकुल तुम कच्चे हो॥

दोहा—बसजी बस यह दया की, है ऊपर की बात।
दया करी सो देखलें, हृदय पर धर हाथ॥
बालक हम को समझ कर, धोखा न खा जांय।
आज समर में अकल के, सब तोते उड़ जांय॥

तोते सब उड़जाएं, यदि हम हैं कुछ असल नसल से।
सुग्रीव आदि सब भूप कहां हैं, सोचें ज़रा अक्ल से॥
तेज़ दिखाएंगे हम तुम को, आज तेग के बल से।
पड़ा नहीं था पाला अब तक, आपका किसी सबल से॥

गाना (व० त०) कह के बालक ही बालक डराते हमें।
इनकी शक्ति की कुछ भी खबर ही नहीं॥

कितना होता पवनियां सर्प का जिस्म।
भारी नागों में इतना जहर ही नहीं ॥१॥
तुमने रावण से मारे तो डरते हो क्यों।
आओ करनी में रखना कसर ही नहीं ॥
तुम भी भाई हो दो हम भी भाई हैं दो।
रहता दुनियां में कोई अमर ही नहीं ॥२॥

अच्छा आई कजा तो फिर हम क्या करें।
आए खोटे उदय अब तुम्हारे कर्म ॥
हमने समझाये तुम बाज आये नहीं।
ताने खा खा के कब तक करेंगे रहम ॥
अब संभल कर के तैयार जल्दी से हो।
क्योंकि जाने को दोनों हो मुल्के अदम ॥
वरना भागो यहां से बचा जान को।
जाओ माता का मेटो तुम रंजो अलम ॥

दोहा —लवणांकुश ने जब सुने, लक्ष्मण जी के बैन।
धनुष बाण खैंचा तुरत, अरुण वर्ण कर नैन ॥

दोहा —कृतान्त सारथी राम का, लवण का वज्रजंग।
वीर विराध था लखण का, अंकुश पृथु निशंक ॥

राम लवण का युद्ध और, लक्ष्मण अंकुश थे जुटे हुए।
अस्त्र सस्त्र विमान परस्पर, चले सरासर छुटे हुए ॥
नमस्कार का तीर राम के, चरणों बीच पठाया है।
श्री रामचन्द्र का वार लवण ने, आता हुआ बचाया है ॥

दोहा —लक्ष्मण जी के शरण में, कुश ने भेजा तीर।
नमस्कार करके हुआ, सावधान बलवीर।

राम लखन के वार सभी, खाली के खाली जाते है ॥
इस तरफ निशाना बचा बचा, यह दोनों वार चलाते हैं।
विमान गगन में घूम रहे, योद्धा धरती पर लड़ते हैं ॥
महा भयानक देख युद्ध, कायर भूमि पर पड़ते हैं।

देवाधिष्ठित अस्त्र सभी निज, कुल पर कभी न चलते हैं।
देख वार सब के सब खाली, राम लखन कर मलते हैं ॥

दोहा—अस्त्र शस्त्र दे गये, आज सब तरह जवाब।
साक्षात ही लड़ रहे, या आया कोई ख्वाब ॥

छन्द—राम वार सब खाली गये क्यों, समझ में आता नही।
सिर पर चढ़ा आता अरि, शंका जरा खाता नहीं ॥
क्या खेल जादू का हमारे, साथ यह सब हो रहा।
या कोई अशुभ कर्मों का दौरा, शुभ कर्म है सो रहा ॥

वज्रावर्तज धनुप भी, मुख फेर बैठा हार के।
अखिल दलन मूसल रत्न, भी गिर पड़ा सिर मार.के ॥
अंकुश अरि गंजन महा, यह भी दगा अब दे गया।
दीखता है आज सब, मैदान शत्रु ले गया।

दोहा—इसी तरह लक्ष्मण बली, कर रहा सोच अपार।
आज अरि के सामने, पड़े किस तरह पार ॥

दोहा—आज हमें सब तरफ से, आ रहा आर्तध्यान।
महा सबल योद्धा अरि, देखन में नादान ॥

युक्ति कोई आज नहीं चलती, सिर में चक्कर सा आया है।
होनहार ने आज खबर क्या, कैसा जाल बिछाया है ॥
किस वज्र के हैं बने हुए, शत्रु न मारे जाते हैं।
आक्रमण करते हुए आज, बस हमें दबये आते हैं ॥

दोहा—लक्ष्मण जी कुश पर चढ़े, खाकर जोश अपार।
कुश ने झट पट कर दिया, लक्ष्मण जी पर वार॥

लक्ष्मण जी का वार गया खाली, कुश का हृदय पर बैठा है।
मूर्छागत सहसा होकर के, लक्ष्मणी जी रथ में लेटा है।
वीर विराध ने इसी समय, संग्रामी रथ को फेर लिया।
और कैम्प में ले जाने को, रथ सीधी सड़क पर गेर लिया॥

दोहा— कुछ दूरी पर जाय के, लक्ष्मण हुए सुचेत।
बोले वीर विराध से, चलो अभी रण खेत॥

लक्ष्मण जी ने फेर से आकर, योद्धों को जोश दिलाया है।
और संग्रामी रथ अपना कुश के, सम्मुख आन मिलाया है॥
कुश देख लखन को हर्षाया, और अपना धनुष उठाया है।
तब दशरथ नन्द लक्ष्मण जी, ने ऐसे वचन सुनाया है।

दोहा—अय लड़को तुमको रहा, अब तक पुण्य बचाय।
चक्र सुदर्शन वार से, अब बचने के नाय॥
शेर—अमोघ चक्र देख लो, पहिले दिखाता हूँ।
हस्ती तुम्हारी आज, दुनिया से मिटाता हूँ॥
चक्र के सिवा बस खतम, शक्ति जान पाता हूँ।
देखो चला कर, तोड़ में, इसको बगाता हूँ॥
तुम से हजारों भी नजर, इससे मिला सकते नहीं।
सिर जुदा धड़ से करे, दम भी हिला सकते नहीं॥
पुरुषार्थ सारा आपका, निष्फल बना दूंगा।
हजारों आप जैसों का, यहां पर दिल हिलादूंगा॥

दोहा—सुने काट करते हुए, कुश के ऐसे बैन।
चक्र घुमाया अनुज ने, बना रक्त दो नैन॥

सन सनाट करता तब चक्र, कुश की तरफ सिधाया है।
देख चक्र को लवणांकुश का, सारा दल घबराया है॥
प्रदक्षिणा देकर के कुश की, लक्ष्मण के कर पर जा बैठा।
या जैसे पक्षी उड़ करके फिर, निज स्थान पर आ बैठा॥

दोहा—फेर चलाया अनुज ने, खा कर जोश अपार।
कुल वंश पे कर सकता नहीं, चक्र सुदर्शन वार॥

वार तीसरी फेर अनुज ने, मारा चक्र घुमा करके।
परिक्रमा देकर उसी समय, लक्ष्मण कर बैठा आकरके॥
देख वार तीनों खाली, रामानुज अति हैरान हुए।
लगी अक्ल चक्कर खाने, दिल में कुछ ऐसे ध्यान हुए॥

दोहा—आज सब तरह हो गये, शक्ति में कमजोर।
शत्रु सिर पर चढ़ रहे, मचा मचा कर शोर॥

छंद—था भरोसा चक्र पर, सो भी दगा अब दे गया।
क्या खबर है आज शक्ति, कौन सारी ले गया॥
अस्त्र कभी खाली न जाते, वंश अंश को टाल के।
कर दिये निष्फल अरि ने, आज जादू डाल के॥
बलदेव वासुदेव क्या, पैदा हुवे दो वीर हैं।
उमर है छोटी जिन्होंकी, युद्ध में अति धीर हैं॥
सब पराया राज्य यह, होने में अब क्या देर है।
यदि रहा यह हाल तो, बस कुछ ही दिनों का फेर है॥

दोहा—बन्द लड़ाई हो गई, हुई जिस समय रात।
तैयारी होने लगी, होते ही प्रभात॥

दातुन मंजन से निवृत्त हो, श्रीराम सभा में बैठे हैं।
तैयार हुए अनुक्रम से लाकर, शस्त्र योद्धा गेरे हैं॥

सिद्धार्थ के सहित उधर से, नारद चल कर आये हैं।
चेहरा देख उदास राम का, मुनि ने वचन सुनाये हैं॥

दोहा—चेहरा खिलता था कभी, देखत हर्ष अपार।
किन्तु आज किस सोच में, बैठे गर्दन डार॥
पूर्व पुण्य पूरा किया, मिला सभी सुख साज।
सकल सिद्ध कार्य हुए, भूप तुम्हारे आज॥

सिद्ध हुआ सब काम आपका, सुयश चहुँ दिशा छाया है।
पर कृपणता ने आज आपके, दिल पर डेरा लाया है।
अतुल खुशी का आज दिवस, मनवांछित तुमने पाया है।
किन्तु यहाँ पर उत्सव का कोई, चिन्ह नजर नहीं आया है॥

दोहा—जगह खुशी की आपको, हो रहा आर्तध्यान।
उड़े हुये सब दीखते, चेहरे के अवसान॥

कुछ तोपें आज खुशी की, तुमने हे राजन् दगवानी थी।
और उत्सव की सब समग्री, एकत्र यहाँ करवानी थी॥
अवधपुरी में आज अद्वितीय, नूतनता दिखलानी थी।
शुभ दान पुण्य खुल्ले दिल से, देकर नौबत बजवानी थी॥

दोहा— राम लखन समझे मुनि, ताने रहा लगाय
इसको हांसी सूझती, देश हमारा जाय॥
वीर परस्पर सज रहे, करने को संग्राम।
नारद जी को इस तरह, बोल उठे श्रीराम॥

दोहा—आज मुनि क्यों घाव पर, रहे नमक बुरकाय।
रघुवंश का आज सब, जो था गौरव जाय॥

छन्द—आज पराक्रम थक गये हैं, सब तरह आते नजर।
शत्रुओं का भेद अब तक भी, न कुछ पाया मगर॥

सुग्रीव भामंडल पे क्या, जादू अरि ने है किया ।
अस्त्र शस्त्रों ने भी हमको, आज बस धोखा दिया ॥
जीते बड़े मैदान थे, शंका कभी खाई नहीं ।
पर आज दो लड़कों के आगे, पार बस पाई नहीं ॥

दोहा— जैसी जिसकी नीत हो, वैसी होय मुराद ।
जैसे हों माता पिता, वैसी हो औलाद ॥

सीता को तुमने दुःख दिये, यह उसका ही फल पाया है ।
उस महा सती के लालों ने, तुमको हैरान बनाया है ॥
लवणांकुश दोनों भाई, सीता के पुत्र कहाते हैं ।
अपनी माता का दूध लजाना, रघुवंशी नहीं चाहते हैं ॥
देवाधिष्ठित शस्त्र सभी, निज वंश पे कभी नहीं चलते हैं ।
समय खुशी के आज आप, कर सोच वृथा कर मलते हैं ॥
आदिनाथ के पुत्र भरत बाहुबल का, जब युद्ध हुआ ।
न चला चक्र बाहुबल पे क्योंकि, नहीं वंश विरुद्ध हुआ ॥
बस पुत्र सपुत्र सिंहनी का ही, साथा सिंहों के लड़ता है ।
गंध हस्ती का ही बच्चा, हाथी के सम्मुख अड़ता है ॥

दोहा—नारद का यह वचन सुन, हर्ष न हृदय समाय ।
मूर्च्छा खा धरणी गिरे, लीना तुरत उठाय ॥

उस खुशी को कैसे दर्शाएं, यहां लिखने में नहीं आता है ।
शक्ति न लेखनी जिह्वा की, सर्वज्ञ देव ही ज्ञाता है ॥
शस्त्र सब राम ने फैंक दिये, सब जंगी वस्त्र उतारे हैं ।
झट हस्ती रथ विमान सुतों को, लाते लिये शृंगारे हैं ॥

दोहा—राम लखन दोनों चले, और हजारों साथ ।
लवण उधर से चल दिये, मदनांकुश सङ्ग भ्रात ॥

भामंडल सुग्रीव उधर, लवणांकुश के संग आये हैं।
राम लखन के चरणों में, दोनों ने शीश निवाये हैं॥
रामानुज ने पकड़ पुत्र, दोनों निज हृदय लगाये हैं।
और प्रेम के आँसू उसी समय, सबके नेत्रों में आये हैं॥

दोहा—देखा जब यह सिया ने, मिट गया सब संताप।
बैठी तुरत विमान में, पुंडरीकपुर गई आप॥

श्री रामचन्द्र ने आकर एक, भारी दरबार लगाया है।
नर नारी क्या बच्चे बूढ़े, जन समुद्र देखने आया है॥
लवणांकुश को नर नारी, बच्चे बूढ़े क्या सभी निहार रहे।
सीता को दोष दिया जिस जिसने, निज आत्मा धिक्कार रहे।
राजकुमारों को राजे सब, झुक झुक विनय बजाते हैं।
सम्बन्धी सारे आ करके, अति प्रेम से लाड लडाते हैं॥

दादी चाची सब प्रेम भाव से, दोनों का शीश चूम्बती हैं।
छोटी माताएँ प्रेम भाव से. चारों ओर घूमती हैं॥
देख देख कर लवणांकुश को, सब आश्चर्य पाते हैं।
भाट चारण स्तुति करने वाले, कथ कथ मंगल गाते हैं॥

पुत्र जैसी चीज नहीं, संसार में कोई प्यारी है।
शोभन लक्षण बत्तीस अंग पर, रूप कला कुछ न्यारी है॥
पुत्र नहीं जिनके घर में, वहाँ सदा अन्धेरा रहता है।
मेरु समान भी धन होकर, सुत विन काया को दहता है।

जय जय शब्दों की ध्वनि सहित, अब नगरी में प्रवेश किया।
कैदी जन छोड़ दिये नृप ने, सब दान खूब दिल खो दिया।
बाजार दो तरफी छज्जों पर, माताएँ जहाँ अपार खड़ी।
स्वागत करने के लिये व्योम, में मेघ घटा सुखकार चढ़ी॥

देख देख उस उत्सव को, इन्द्र भी लज्जा खाता है।
सोच रहा इनका जलूस, यह मेरी शान घटाता है।

दोहा— इसी तरह सहर्ष सब, पहुँच गये दरबार।
भूम भाम चहुँ ओर से, आ पहुंचे नर नार ॥

अवधपुरी में आज प्रेम की, वारिस अद्भुत बरस रही।
अर्ति सभी विदा होकर, कर मल मल अपने तरस रही ॥
अङ्गद लखन विभीषण और, सुग्रीव आदि सब आ करके।
श्री रामचन्द्र को लगे कहन, यों नम्र वचन समझा करके।

दोहा...अब तक सीता ने सहे, वन में कष्ट अपार।
वर्तमान अब हाल पर, स्वामी करें विचार ॥

किसी तरह पक्षिणी अण्डों को, दिन रात बैठकर सेती है।
फिर इधर उधर से घूम घाम कर, चोगा लाकर देती है ॥
हिरणी अपने बच्चों को नित्य प्रति, देख देख खुश होती है।
देख विरह को खाना पीना, त्याग रात दिन रोती है ॥
निर्बुद्धि सुत पर से भी, तो माता का प्रेम न जाता है।
पागल पुत्र को भी देखे बिन, खाना उसे न भाता है ॥

दोहा—सीता के जैसे लाल न, दुनिया में कोई और।
जनक सुता अपना समय, काटेगी किस तौर ॥

प्रथम मास सवा नौ, जिसने गर्भवास में पाले हैं।
फिर निराधार होने पर भी, कैसे गुण इनमें डाले हैं ॥
अब सोचो आप जरा दिल में, कैसे वह समय बितावेगी।
पुत्र विरहिनी मात सिया, तज खान पान मुर्झायेगी ॥
अब उनको भी हे नाथ, तसल्ली देकर ले आना चाहिये।
या पुत्र वहां भेजें उनके, या आप वहां जाना चाहिये ॥

दोहा राम—हर तरह से आपका, सब है ठीक विचार।
पूर्व वाला अब तलक, हुआ न ठीक विचार॥

वही समस्या कठिन सिया, और कुल की शान घटावेगी।
पहिले से ज्यादा इसमें अब, आपत्ति फिर कुछ आवेगी॥
क्या दोष जानकर छोड़ी थी, अब क्या गुण करके लाए हैं।
इसका उपाय भी बतलादो, जो विनती करने आए हैं॥

दोहा—इस दुनिया के बीच में, भांत-भांत के लोग।
कहा असाध्य सबने जिसे, लगे हैं भ्रम के रोग॥

हीरे की जौहरी परख करे, मूर्ख ने रोड बताना है।
गुणियों की सेवा करे गुणी, दुष्टों ने खूब सताना है॥
एक रंग दुनिया सारी न, हुई न हाने पावेगी।
नेकों के दिल में नेकी और, बद के दिल बदी समावेगी॥
जिसकी जैसी है प्रकृति, आयु पर्यन्त न जाएगी।
अमृत से सींचो नीम चाहे, अन्तिम कड़ुआई आएगी॥
दुनिया का दौर दुरंगा है, सर्वज्ञदेव न मिटा सके।
और एक अभव्य आत्मा को भी, करके भव्य न दिखा सके॥

दोहा—जो कुछ भी तुमने कहा, है सब ठीक जवाब।
किन्तु दुनियादार को, रखनी चाहिये आब॥

जिसने निज गौरव भुला दिया, उसकी दुनिया में आब नहीं।
जब आब नहीं शुभ ध्यान कहां, फिर रहे किसी पर दाब नहीं॥
निज गौरव को रखकर ही तो, उपकार कोई कर सकता है।
फिर कष्ट हजारों आ जावें, दुनिया से नहीं डर सकता है॥
व्यवहार शुद्ध अपना रखना, यह सबके लिये जरूरी है।
व्यवहार बिना दुःख देने वाली, होती सदा गरूरी है॥

बिना दोष के आंख दबानी, वीर पुरुष नहीं चाहते हैं।
क्षत्रिय कुल पर न दाग लगावें, खेल जान पर जाते हैं॥

दोहा—हम तुम सबको ज्ञात है, सीता में नहीं दोष।
औरों पर भी न हमें, करना चाहिए रोष॥

शंका से ही श्रेष्ठों का गुण, अवगुण देखा जाता है।
सामुद्रिक का ज्ञान सभी, रेखा देखन से आता है॥
रखते हैं सभी कसौटी पर, निर्मल सोने को शंका से।
धौंसे की परीक्षा करते पहिले, चोट लगा कर डङ्का से॥
जवाहरात के तोलन को, होती एक कण्डी छोटी है।
धर्म की परीक्षा करने को भी, होती कोई कसौटी है॥

सीता के पतिव्रत नियमों में. कुछ जन समूह को शंका है।
व्यवहार में है भी ठीक क्यों कि, वह रही अकेली लंका है॥
परीक्षा देकर ही अपना, गौरव सीता रख सकती है।
वरना ऐसी है कौन जगत में, पेट नहीं भर सकती है॥
सहर्ष बात स्वीकार करे, तो फिरसे पूछो जाकर के।
निज पर यदि उन्हें भरोसा है, तो परीक्षा देवें आकर के॥
निश्चय है मुझको सीता, इस बात से न घबरायेगी।
और खुशी खुशी परीक्षा देने, कारण यहां जल्दी आवेगी॥

दोहा—आज्ञा पा श्री राम की, कपिपति बैठ विमान॥
पुण्डरिकपुर को चल दिये, धर हृदय शुभ ध्यान॥

इधर राम ने पास बाग के, एक मैदान बनाया है।
और अद्भुत मण्डप सजवाकर, सामान सभी रखवाया है॥
वहां जनक सुता को जाकर के, सुग्रीव ने शीश झुकाया है।
फिर विनय सहित अति नम्रता से, ऐसे वचन सुनाया है॥

दोहा—माता तुम को धन्य है, धन्य हजारों वीर।
सती सती त्रिखण्ड में, हो रही गूंज अपार॥

हो रही गूंज अपार, लाल तुम ने ऐसे जाये हैं।
देख तेज श्री राम लखन, दोनों ने भय खाये हैं॥
नाम किया तेरा प्रसिद्ध, अति योद्धा कहलाये हैं।
नम्र निवेदन आप से कुछ, हम करने को आये हैं॥

दौड़--अवध में दर्श दिखाओ, पावन सब देश बनाओ।
खुशी सब का दिल होवे—
पुरी अयोध्या मात तुम्हारे, बिन बिल्कुल न सोहे॥

दोहा—जो कुछ मैं तुम को कहूँ, सो यदि हो स्वीकार।
तो फिर मुझ को भी, नहीं जाने में इन्कार॥

अग्नि का कुंड बना देवें, सब खैर काष्ट गिरवा कर के।
कोई शेष न बाकी रहे अवध, सारी वहां बैठे आकर के॥
रघुकुल दिनेश फिर कहेंमुझे, सबके सम्मुख झुंजला करके।
यदि सच्ची हो तो कूद अग्निमें,दो निज धर्म दिखा करके॥

दोहा—बातें सब होंगी वहां, विनती करो स्वीकार।
अवधपुरी क्या जगत को, आपका है आधार॥

दोहा—वही अवध वहीं महल, वही स्वजन वही नाम।
जनक सुता मैं हूं वही, वही लखन वही राम॥

लवणांकुश जाकर मिले पिता से, खुशी मेरे मन भारी है।
अब अवध पुरी में ऐसे जाऊं, मुझे साफ इन्कारी है॥
एक मेरे कारण रवि वंश, शुद्ध कुल को धब्बा आता है।
इसलिये किसीकोदुःख देना, यह मुझको भी नहीं भाता है॥

जैसा भी मुझ पर समय पड़ा, सहलिया और कुछ सहलूंगी ।
कहना सुनना क्या किस का हे, अपने कर्मों को कह लूंगी ॥
कौन किसी के पास कष्ट में, आया और कब आता है ।
छोड़ अन्धेरे में तन का, साया भी दूर पलाता है ॥

दोहा—माता अब यह ख्याल, सब मन से करदो दूर ।
भेजे आये श्री राम के, हम चरणों की धूर ॥

वह समय सभी अब बीत गया, क्यों दिल में इतनी डरनीहो ।
और जली दूध की छाछ का भी, विश्वास आप नहीं करती हो ॥
प्रबल सिंह है पुत्र तुम्हारों से सब दुनिया डरती है ।
वह आत्म शक्ति हे जगदम्बा, काम तुम्हारी करती है ॥

दोहा—जिस कारण काढी मुझे. आरोपण कर दोष ।
जब तक वह न दूर हो, मुझे नहीं संतोष ॥

फिर अवधपुरी में शुद्ध हुए, बिन भाई मैं नहीं जाऊंगी ।
सब पूर्व कृत कर्म मेरे, न दोष किसी को लाऊंगी ॥
बनवास दिया है स्वामी ने, सहर्ष वही स्वीकार मुझे ।
न दिल है न कुछ इच्छा न मुख, जाने का मैं कहूं तुझे ॥

दोहा—परीक्षा कारण ही सही, चलो आप उस धाम ।
अग्नि कुंड जैसा, कहो रचवा देगें राम ॥

दोहा—यह तो मैं भी कह चुकी, मुख से स्वयं उचार ।
मेरी इच्छा अनुकूल जो, मुझे वही स्वीकार ॥
कुंड एक क्या पांच मैं, करुं सभी स्वीकार ।
निश्चय मुझ को धर्म पर, यही सदा सुखकार ॥

दोहा - खुशी सहित विमान में, बैठ गई सिया नार ।
माहेन्द्रोदय बाग में, लाकर दई उतार ॥

उसी समय आ लक्ष्मण ने, चरणों में शीश निमाया है।
और वीर विभीषण आदि सब, राजों ने दर्शन पाया है॥
अब नर नारी बच्चे बच्चे, सब तर्फ बाग की धायें हैं।
एक से एक ने आगे हो, सीता को शीश झुकाये हैं॥

दोहा—महल हथारन की करी, सब ने विनय अपार।
लेकिन सीता ने करी, एक नहीं स्वीकार॥

चौपाई—पास सियाके रघुपति आया, जनक सुताने शीश निमाया।
देखत नयन नयन भर आये, रामचन्द्र ने वचन सुनाये॥

दोहा – प्रिये रानी तैंने सहे, आज तलक दुःख भूर।
कारण इस में मैं बना, तेरा नहीं कसूर॥

दुःख सहे उधर तैंने वन में, तो मैं ने क्या सुख पाया है।
मेरी जिह्वा नहीं कह सकती, जितना दुःख उठाया है॥
अब तेरी इच्छा सहित और एक कष्ट मैं देना चाहता हूँ।
महा खेद आज इस बात को कहते, जरा न लज्जा खाता हूँ॥

दोहा—अग्नि कुंड यह आप की, मर्जी के अनुसार।
फिर भी तुम अपना सिया, करलो निजी विचार॥

दोहा—प्राण पति प्रीतम मेरे, जीवन प्राण आधार।
जो कुछ भी मैंने कहा, सहर्ष मुझे स्वीकार।

आप तो रक्षक हैं सब के, किस्मत ही बुरी हमारी थी।
यदि यही कुंड पहिले होता, तो क्या मुझ को इन्कारी थी॥
स्वर्ण भी निर्मल करने को, अग्नि में तपाया जाता है।
फिर आत्मा का मल हरे बिना, कहो कौन मोक्ष पद पाता है॥
इसी तरह से आज मुझे, दुनिया अजमाया चाहती है।
तो अग्नि कुंड में खुशी खुशी, से सीता छाल लगाती है॥

इस में विघ्न डालने वाला, भी शत्रु कहलालेगा।
उपकारी उस को मानूंगी, जो मुझ को साहस दिलायेगा॥

दोहा—चन्दन काष्ट गिराय कर, अग्नि दई लगाय।
जली हुताशन इस तरह, लपट सही न जाय॥

देख तेज उस अग्नि का, जनता का हृदय कांप गया।
सुग्रीव लखन आदि सब के, मानों हृदय पर सांप गया॥
सब कहते हैं हो गई परीक्षा, आप में कोई कसर नहीं।
संसार में दोष लगाने वाला, तुम को कोई बशर नहीं॥

दोहा—सागर टरे मेरु टरे, धरनी भी टर जाय।
मैं बिल्कुल टरती नहीं, पडूं अग्नि के मांय॥

बिना हाड़ की इस जिह्वा को, हिलते लगती देर नहीं।
जो समय आनके मिला मुझे, अनमोल यह मिलना फेर नहीं॥
एक बार अग्नि में कूदूंगी, फिर बाद में देखा जायगा।
पहिले में क्या कह सकती हूं, कि क्या मेरे मन भायगा॥

दोहा—सज्जन गण सुन लीजिये, जरा लगा कर कान।
और एक घटना हुई, उसी समय में आन॥

वैताढ्य गिरी उत्तर की श्रेणी, हरि विक्रम नृप रहता था।
जयभूषण था सुत पुण्यवान्, जो पर कारण दुःख सहता था॥
किरण मंडला नार वासना, उसको अधिक सताती थी।
हेम शिखर पति के मामे के, सुत से मिलनी चाहती थी॥

दोहा—इश्क मुश्क खांसी खुरक द्वेष खुन मद पान।
कभी छिपाए न छिपे प्रगट होय अवसान॥

जयभूषण को लगा पता, मेरी नारी व्यभिचारिण है।
राज्य से बाहिर निकला था, उस कुल्टा को इस कारण है॥

होकर दुखित वह रानी मरी, आयु का खेल तमाम हुआ।
वह राक्षसी व्यन्तरणी, और विघ्नदृष्टा नाम हुआ॥

दोहा—जय भूपण तज दिया, बुरा जान संसार।
संयम व्रत को धार कर, तप जप किया अपार॥

अवधपुरी के बाग में आकर, ध्यान मुनि ने लाया था।
वहां उसी राक्षसी ने आकर, मुनिराज को खूब सताया था॥
सम दम खम को धार मुनि, निश्चल रहे ध्यान लगा करके।
केवल ज्ञान हुआ जिन को, घनघाती कर्म खपा करके॥

दोहा—आए उत्सव करन को, स्वर्गपुरी से देव।
इन्द्रादिक करने लगे, समोसरण स्वयमेव॥

इधर सिया तैयार खड़ी थी, अग्निकुंड में पड़ने को।
एक देव भेद लख इन्द्र को, यों लगा वेनती करने को॥
अग्निकुण्ड में पड़ने को, स्वामी सीता तैयार खड़ी।
निर्दोष सती पर आज विपत्ति, देखो आन अपार पड़ी॥

दोहा—सुनते ही शक्रेन्द्र ने, लाया निज उपयोग।
उसी समय कहने लगे, टालन को यह शोक॥

दोहा—अग्निकपात जावो अभी, जरा न लावो वार।
कष्ट सती पर जो पड़ा, आवो सभी निवार॥

दोहा—आज्ञा पा सुर कुण्ड के, झटपट पहुँचा पास।
शीलवान के होते हैं, देवनपति भी दास॥
पढ़ा सती ने उस समय, परमेष्ठी नमोकार।
शरना ले अरिहन्त का, बोली वचन उचार॥
वीतराग भगवान को, सर्व जगत का ज्ञान।
केवल ज्ञानी साधु सुर, तुम भी देना ध्यान॥

रजनी साक्षी चन्द्रमा, तारा मंडल साथ।
नित्य प्रति आते हो, यहां तुम भी हे दिवानाथ ॥
लोकपाल लेते खबर, चारों समय तमाम।
जितने जग में पुरुष हैं, टाल एक श्री राम ॥

सिवा राम के अन्य पुरुष, मन वच काया कर चाहा हो।
स्वप्न मात्र भी अशुभ ध्यान, मेरा विषयों पर आया हो ॥
विषय वासना वर्धक का, कोई शब्द जिह्वा पर लाई हूँ।
लगा आज से होश संभाली, तब क्या जब से जाई हूँ ॥

दोहा—मेरे पतिव्रत धर्म में, साक्षी हो सब आप।
यदि मुझे कोई लगा, विषय सम्बन्धी पाप ॥
पक्षपात मेरा कोई, करना नहीं लगार।
दोष यदि मेरा कोई, तो जल बल होऊँ छार ॥

नहीं तो अग्निकुण्ड आज, एक जलाशय शुभ बन जावे।
यदि अंश मात्र भी दोष कोई, तो तन मेरा सब जल जावे ॥
ध्यान है द्वादश व्रतों पर, अब है आगे को धरती हूँ।
स्तुति एक पढ़ते ही भगवन्, अग्निकुण्ड में पड़ती हूँ ॥

तर्ज—मरता मरता रे मातनी आजादी गावे।
इस हवन कुण्ड पे रे, सिया परमेष्ठी गुण गावे ॥ टेक ॥

पंच परमेष्ठी सिया और कुछ, मुझ को नहीं भावे ॥
अरिहन्त देव को रे, सिया हृदय से सिर नावे ॥ इस ॥ १ ॥
ज्वाला अपना तेज प्रभु, यह कैसी दिखलावे ॥
हो आपकी कृपा रे, प्रभु यह पानी बन जावे ॥ इस ॥ २ ॥
प्रलय काल की भीति आकर के, हम को घबरावें ॥
सिद्ध प्रभु को रे जपन से, सब विलीन पावें ॥ इस ॥ ३ ॥

आचार्य श्री की शिक्षा से, कर्म वीर कहलावें ॥
सर्वस्व लगा कर रे, शील की महिमा प्रगटावे ॥ इस ॥४॥
उपाध्याय के ज्ञान की महिमा, आत्म शक्ति पावे ॥
मरते मरते रे शील सत्य की, महिमा चाहवे ॥ इस ॥ ५ ॥
तारण तरण जहाज मेरे, निर्ग्रन्थ मुनि कहलावे ॥
"शुक्ल" ध्यान से रे सदा, परमानन्द पद पावे ॥ इस ॥६॥
कितनी शक्ति शील धर्म में, आज प्रगट बतलावें ॥
इतिहास भविष्य में रे, सभी को मार्ग दर्शावे ॥ इस ॥ ७ ॥

दोहा—अग्निकुण्ड में सती ने, मारी सहसा छाल।
ज्वाला का सुर ने किया, निर्मल जल तत्काल ॥

सिंहासन की रचना सुरने, अद्भुत एक विकुर्वी है।
आस पास जल से चहुँ तर्फा, भरी हुई सब उर्वी है ॥
पंकज ऊपर हंसनी ज्यों, ऐसे बैठी जनक दुलारी है।
देख दृश्य यह जय जय की, जनता ने ध्वनि उचारी है ॥

दोहा—शील रत्न की देख कर, महिमा सकल जहान।
लगे परस्पर एक को, एक ऐसे समभ्कान ॥

दोहा—शील रत्न जैसी नहीं, शक्ति है कोई और।
कर्म काटने के लिये, शील शस्त्र सिर मौर ॥

शीलवान पर तन्त्र मन्त्र यन्त्र, कोई नहीं चल सकता है।
आपत्ति जो कोई पड़े आन, अन्त में सबको मल सकता है ॥
आज सामने अग्नि का, जिसने पानी कर डारा है।
जनक सुता ने जनता का, संशय सब दूर निवारा है ॥
इस ही आत्मशक्ति ने, त्रिखण्डी रावण को मारा था।
शील रत्न की शक्ति ने. लक्ष्मण का कष्ट निवारा था ॥

और हनुमान ने लंका का, आशाली कोट विडारा था।
अक्षकुमार रावण का बेटा, धरनी बीच पछाड़ा था॥
फिर देखो दशदन्धर के, मस्तक का ताज गिराया था।
इसी सिया की शक्ति से, वह जान बचाकर आया था॥
इस महासती को दोप लगा कर, घर के बाहर निकाला था।
उस समय बताओ किसने वहां, जाकर के दिया सहारा था॥
शीलवान का शील सदा, रक्षक भगवन् बतलाते हैं।
आपत्ति सारी दूर भगे, शास्त्र सभी दर्शाते हैं॥

दोहा—पतिव्रत के दो हुवे, आन अमोलक लाल।
जिनकी आज बराबरी, कौन करे भूपाल॥

राम लखन भी जिनके सन्मुख, लड़ करके पछताते थे।
वह इसी सती की शक्ति थी, सुत रण में तेज दिखाते थे॥
जनक पिता को धन्य मात, वैदेही जिसने जाई है।
नगर धन्य कुलवंश धन्य, और धन्य जिसने परणाई है॥
धन्य धन्य ये महासती, आकाश में देव पुकार रहे।
जिन जिन ने दोप लगाया था, वह निज आत्म धिक्कार रहे॥
सब क्षमा मांगते आकर के, चरणों में शीश निमाते हैं।
कई देकर के उपदेश शील, पालन का नियम दिलाते हैं॥

दोहा—भूचर खेचर भूपति, करें सभी प्रणाम।
पास सती के आन के, यों बोले श्री राम॥

दोहा—वीतराग की कृपा से, सिद्ध हुआ सब काज।
आज सभी के सामने, खुल गया असली राज॥

यह खुशी मेरे मन भारी जां, उतरा कलंक तेरे शिर का।
सूर्यवंश की लाज रही, निश्चल गौरव मेरे घर का॥

बाकी जो तुमको दुःख दिये, मैं क्षमा सभी की चाहता हूं।
शीतल स्वभाव चन्दन तेरा, हर समय देख यह पाता हूं॥

दोहा— ऐसी बातें मत कहो, लगता मुझको दोष।
मेरा कुछ भी है नहीं, जरा किसी पर रोष॥

यह सभी आपकी कृपा है, जो कष्ट सामने दूर हुआ।
और आपके नाम के साथ साथ, मेरा भी कुछ मशहूर हुआ॥
कृपा आपकी ने स्वामी, मेरा अपवाद मिटाया है।
बचा अग्नि से सिंहासन पर, तुमने आज बिठाया है॥
भूमि रज की क्या शक्ति है, भानु की प्रभा को मन्द करे।
उपकार सभी यह वायु का, जो चढ़ी व्योम आनन्द करे॥
जब आन सर्प के मस्तक पर, मेंढक भी नाच दिखाता है।
स्वभाव सभी यह मंत्र का, जो अहि न डसे मिटाता है॥
वसन्त ऋतु में कोयल की, क्या मीठी वाणी होती है।
यह गुण आम्र कलिका में है, जो कंठ के मल को खोती है॥

दोहा—पारस के प्रसंग से, लोहा भी सोना होय।
क्षीर नीर के मेल को, दूध कहे सब कोय॥

महापुरुष की संगत से, पापी जन भी तर जाते हैं।
जो लगे रहें शुभ कर्मों में, वह नाम अमर कर जाते हैं॥
प्रत्येक जीव सब कर्मों के, फल को दुनियां में पाते हैं।
बिन भोगे छूट नहीं सकते, सर्वज्ञ देव बतलाते हैं॥

दोहा—मेरे कारण जो सहे, आप ने कष्ट अपार।
क्षमा आप से है, प्रभु मांगूं बारम्बार॥

उदारचित्त महाराज सदा, शान्ति करते ही आये हैं।
लिये अन्य के आपत्ति निज, सिर पे धरते ही आये हैं॥

सुग्रीव विभीषण हनुमान, आदि सब की आभारी हूँ।
उपकार एक लक्ष्मण जी का, देने से मैं लाचारी हूँ॥
सभी अवध के नर नारी, अब क्षमा मुझे बतलायेंगे।
ऐसा यह दान सभी देकर, मुझको कृतार्थ बनायेंगे॥
दोहा—हृदय से सिया कर रही, सब से क्षमा की आस।
जनता सीता से करे, माफी की दरखास॥
सुरमे की मानिन्द सीता जी, सब के नयनों में समा गई।
अरिहन्त देव की सम दम क्षम, वाणी हृदय में जमा लई॥
मन वच काया से नर नारी, झुक झुक चरणों में पड़ते हैं।
श्री राम लखन सुग्रीवादिक, इस तरह प्रार्थना करते हैं॥
दोहा—हाथी रथ विमान क्या, हैं सब ही तैय्यार।
अवधपुरी में चलन का, जल्दी करो विचार॥
तप्त हृदयों को हे सीता चल, कर के शान्त बनाओ तुम।
अवध बाग पतझड़ सब को, फिर से फल फूल लगाओ तुम॥
पुष्प कली सब मुर्झाई, हृदय के कमल खिलाओ तुम।
सुनसान पड़े उन महलों में, कर के उत्सव दिखलाओ तुम॥
दोहा—छान बीन कर के सभी, देख लिया संसार।
मृगतृष्णावत् जीव सब, भोगें दुःख अपार॥

सीता का वैराग्य

गाना

तर्ज:—(पाप का परिणाम ····)

अनुभव से मैं संसार की, सब मित्रताई देखली।
आश थी जिन से अधिक, उनकी सफाई देखली॥१॥
बेरहमी से छोड़ी मुझे जन, शून्य उस बन खंड में।
प्रेम दर्पण रेखावत्, नीति सफाई देखली॥२॥

सच्च है दुर्भाग्य से, संसार सब मुंह मोड़ले।
कर्म वस जो देखनी थी, सब बुराई देखली ॥३॥
सुखे दिया अद्भुत मुझे, देखो हृदय को चीर कर।
मन के दर्पण से सभी, की आशनाई देख ली ॥ ४ ॥
छान कर देखा जमाना, दुनिया में तो सुख है नहीं।
पूर्व कर्मों ने आपत्ति, जो दिखाई देख ली ॥ ५ ॥
भूल कर के भी किसी को, अपना समझना पाप है।
ठोकरें खा खाके बस, सब की रसाई देख ली ॥ ६ ॥
छोड़ कर के भ्रम सारा, 'शुक्ल' अपना ध्यान कर।
सर्वज्ञ वाणी के सिवा, नकली पढ़ाई देख ली ॥ ७ ॥

दोहा सीता—नाथ आज मेरा हुआ, ध्यान और से और।
निज आत्म अन्दर लखा, एक ठग दूजा चोर ॥

यह शत्रु काल अनादि से, मुझ को भरमाते आते हैं।
कभी नर्क गति में ले जाकर, मुझ को अत्यन्त सताते हैं॥
तिर्यञ्च गति के दुःख स्वामी, नहीं जिह्वा से कहे जाते हैं।
एक गर्म दूजा मीठा नहीं तरस, किसी पर लाते हैं॥

दोहा सीता—मुश्किल से यदि मनुष्य का जन्म जीव ले धार,
राग द्वेष फिर भी इसे, लें निज फंदे में डार॥

मोह कर्म अरि के फन्दे में, आत्म को खूब फंसाते हैं,
फिर निकल नहीं सकता दिल से, यह ऐसा असर जमाते हैं॥
दुनिया की रंग विरंगी चीजों, पर इस का भरमाते हैं।
दृष्टान्त न जिस का मिला, 'शुक्ल' यह ऐसे मस्त बनाते हैं॥
कोई निज हाल मस्त कोई माल मस्त, कोई ऐश्वर्य के पाने में।
कोई रंग महल में मस्त फिरे, कोई मस्त है विवाह कराने में॥

कोई क्रोध मस्त कोई मान मस्त, कोई मस्त है दगा कमाने में।
कोई नाच रंग में मस्त फिरे, कोई हार श्रृङ्गार बनाने में॥
कोई आभूषण को पहिन मस्त, कोई मस्तक तिलक लगाने में।
कोई कृपणता में मस्त कोई, लालच से गला कटाने में॥
अन्याय पन्थ पर सदा मस्त, कोई अपना ठाठ बनाने में।
कोई दुर्व्यसनों में परम मस्त, कोई मांस गन्दगी खाने में॥
जूआ खेलने में मस्त कोई, वेश्या गन्दी पे जाने में।
कोई परनारी पर पुरुष मस्त, कोई रंगकर वस्त्र सजाने में॥
मदिरा पीकर के मस्त कोई, औरों को दोष लगाने में।
कोई भंगवे वस्त्र पहिन मस्त, कोई मस्त है जटा रखाने में॥
कोई जग्न मस्त कोई मग्न मस्त, कोई मस्त मांग के खाने में।
कोई दुःख देने में मस्त किसी की, हस्ती सफा मिटाने में॥
कोई अद्भुत दृश्य को देख मस्त, रहता है इसी ठिकाने में।
मैं जिन वाणी पर मस्त हुई, अरि कर्म का वंश मिटाने में॥
बस राग द्वेष के वशीभूत, यह जीव मस्त हो जाता है।
दुःख भोग भोंग कर मस्ती में, अनमोल रत्न खो जाता है॥

दोहा सीता—सुरपुर की इच्छा कभी, होती इसे अपार।
बाजीगर के खेल ज्यों, वह भी सदा असार॥

आयु के पूरा होने पर, सुरपुर भी तजना पड़ता है
यह वृथा जीव मेरी मेरी कर, मान में यों ही अकड़ता है॥
भव भ्रमण अनादि अनन्त चार, गति चौरासी का चक्कर है।
सम्यक् ज्ञान दर्श चारित्र, विन खाता दुःख टक्कर है॥

दोहा सीता—सुर नर क्या अरिहन्त के, तन नहीं जावे लार।
महा दुःख संसार में, कुछ नहीं निकले सार॥

संयोग मूल दुःख जीवों को, सर्वज्ञ देव बतलाते हैं।
अज्ञान अन्ध में पड़े हुए, न स्वर्ग अपवर्ग पाते हैं॥
राग द्वेष के फंदे में, निश्चय अब मैं नहीं आऊँगी।
छोड़ दिया संयोग अवध के, महलों में नहीं जाऊँगी॥

दोहा राम—शब्द विरह के हे प्रिया, मुख से कहो न भूल।
दुखित हृदय पर लग रहे, जैसे तीक्ष्ण शूल॥

गाना—ऐसी बातें जबां पर, न लाओ सिया।
मेरे दिल को दुखी न बनाओ सिया॥

तेरी शिकायत क्या करूं, कोई नजर आती नहीं।
तू किसी का दिल दुःखाना भी, जारा चाहती नहीं॥
चल कर महलों की शान बढ़ाओ सिया।
शेर के पंजे में पड़ कर भी धर्म तोड़ा नहीं॥
प्रेम मेरा उस समय पर भी, जरा छोड़ा नहीं।
अब भी मुझ से न दिल को चुराओ सिया॥
मेरी खातिर भागती दुःख साथ, वन वन में फिरी।
अब बनाया सख्त दिल किस, सोच सागर में गिरी॥
जख्मी दिल पर न, नमक लगाओ सिया।
मैंने तजा था तुझको क्या, दिल फट गया इस बात से॥
और ही तुमको या कोई, रंज मेरी जात से।
अपने मन का तो भाव बताओ सिया॥
इस हुतासन कुंड में तुमने लगाई छाल है।
महल में चलने से फिर आपको इन्कार है॥
पिछली बातों को दिल से भुलाओ सिया।
नीर अग्नि का किया तुझ में नहीं कोई कसर॥

है धर्म अवतार तू प्रत्यक्ष में आया नजर।
मुरझे हृदय सभी के खिलाओ सिया॥

दोहा सीता—पहिले ही मैं दे चुकी, सब का उत्तर तमाम।
दुनिया से रखा नहीं, मैंने कुछ भी काम॥

राम—मत रंग में भंग डाल सिया, मैं बार बार समझाता हूँ।
एक वार अवध के महलों में, ले जाना तुमको चाहता हूं॥

सीता—आगे पीछे भंग रंग में, अवश्यमेव ही पड़ना है।
यह महल नहीं बन्दी खाने में, वृथा मुझे जकड़ना है॥

राम—प्रिये त्याग अवस्था में आयु, पर्यन्त कोई विश्राम नहीं।
रूखी वृत्ति ऐसी है जिस में, कोई भी आराम नहीं॥

सीता—जी हां यह बिलकुल ठीक किन्तु, संयम बिन सुधरे कामनहीं
जिनको आराम की इच्छा है, उनको मिलता सुख धाम नहीं।

राम—कोई रोग लगा यदि आन तुम्हें, तो फिर क्या यत्न बनाओगी
दुःख दर्द मिटाने का सीता, संयोग वहां न पाओगी

सीता—अग्नि कुंड से बढ़कर के, वहां रोग कौन सा आवेगा।
यदि आया भी तो तप रूपी, अग्नि में जल जावेगा॥

राम—जंगल में सोना धरती का, नहीं गद्दी तकिया पाना है।
सर्दी गर्मी का दुःख भयानक, दिल तेरा घबराना है॥

सीता—यह सभी आपकी कृपा ने, पहिले ही मुझे सिखाया है।
वनवास में रह करके अपने, तन को मैंने अजमाया है॥

राम—दर दर की बने भिखारिन तू, और मांग के टुकड़ाखाना है।
क्यों कटुक वचन सहे लोगों के, नाहक निज मान घटाना है

सीता—चक्रवर्ती क्या तीर्थंकर भी, भिक्षा ही करके खाते हैं।
जबतक ना मान हटे मन से, तब तक ना मुक्ति पाते हैं॥

दोहा राम--भाग्य हीन अंगूर तज, खावे खट्टे बेर।
अवध ठिकाना छोड़ कर, पछतावोगी फेर॥

सीता का उत्तर ठिकाने का

॥ गाना ॥ तर्ज--चुराकर ले गया कोई मेरी जंजीर सोने की

ठिकाना वे ठिकानों का, कहां कहदूं ठिकाना है।
हैं रमते राम दुनिया में, सभी किसका ठिकाना है॥टेक॥

हैं वस्तु तीन दुनिया में, प्रकृति जीव परमात्म।
ठिकाना उनका क्या जब तक, नहीं इनको पिछाना है॥१॥
लक्ष परमात्मा का रखकर, हटा व्यवधान कर्मों का।
नियत उपादान कारण और, फिर साधन जुटाना है॥२॥
ठिकाना एक सिद्धस्थान के, नहीं और कहीं देखा।
गतागत मारा ताड़ी में, कहां आसन बिछाना है॥३॥
महा अज्ञान वश चेतन,प्रकृति जाल में फंस कर।
चराचर में फिरे किन्तु, नहीं निज को पिछाना है॥४॥
ये आकर्पण सदा होता है, जैसे लोहे चुम्बक का।
फंसा ऐसे ही चेतन जड़ में, पर बस आना जाना है॥५॥
गई दुनिया चली जावेगी, चलती देखलो प्रत्यक्ष।
मिले जैसी जगह हमको, समय वहाँ पर विताना है॥६॥
अमीरी में न आनन्द था, गरीबी में न सुख दुःख है।
मुसाफिर हैं सभी हम ने, कहां फिर घर बसाना है॥७॥
सदा कर्त्तव्य पालन कर, चलेंगे लक्ष के सम्मुख।
न सोयेंगे न खोयेंगे, सफर करके दिखाना है॥८॥
जंग है कर्म शत्रु से, फेर विश्राम कब लेंगे।
आत्म पुरुषार्थ से शत्रु, रहित मार्ग बनाना है॥९॥

विदा किया मोह स्वार्थ का, फेर अपना पराया क्या।
जहां की स्पर्शना होगी, वहाँ विस्तर लगाना है ॥१०॥
न शत्रु है न मित्र है, हमारा कोदुनिया में।
निवृत्ति भाव से जीवन, हमें संयमी वनाना है ॥११॥
शील शृंगार है अपना, और शृंगार सव फीके।
परीसे सह के तप जप से, कर्म दल को खपाना है ॥१२॥
कहो क्या संग लाये थे, कोई ले जाएंगे भी क्या
पड़ा रह जाएगा सव यहां, हमें परभव में जाना है ॥१३॥
प्रलोभन आत्मा करके, हजारों चोटें खाते हैं।
हमें पर परणति तज कर, सदा आनन्द पाना है ॥ ४॥
कर्म जंगमें "शुक्ल" आपत्तियां, आना स्वभाविक है।
मगर सम दम व क्षम से ध्यान, शुभ दो हमने ध्याना है ॥१४॥

दोहा—रामचन्द्र ने सव तरह, समझाई हर वार।
किन्तु न मानी एक भी, सतवन्ती सिया नार ॥

चौ०--जयभूषण मुनि पास सिधाये, चरण कमल जा शीश निमाये।
समवसरण छवि वरणि न जाये, ब्रह्म ज्ञानी ने वचन सुनाये ॥

दोहा—इस संसार समुद्र का, वार न है कहीं पार।
जो इस की चाहना करे, उस की मिट्टी ख्वार ॥

दोहा—वीतराग का जव सुना, रघुपति ने उपदेश
हाथ जोड़ कर विनय, से ऐसे कहें नरेश ॥

दोहा—देता है प्रभु आपको, वस्त्र का कोई दान।
भोजन चार प्रकार का, रहने लिये मकान ॥

जनक सुता का दान आज, यह मेरा भी स्वीकार करो।
संसार समुद्र से इसको, दीक्षा देकर भव पार करो ॥

इस दुनियां से भयभीत हुई, यह शरण आपकी आई है।
सर्वज्ञ आप से क्या छानी, यह वैदेही की जाई है॥

दोहा—ईशान कोण की तर्फ हा, लुंच किये सब केश।
मुखपत्ति मुख बांध कर, किया आर्या का भेष॥

जयभूषण केवल ज्ञानी ने, दीक्षा का पाठ पढ़ाया है।
समुठान सूत्र में कथन सभी, यहां लिखने में नहीं आया है॥
विधि सहित सीता माता ने, चार महाव्रत धारे हैं।
अब तप संयम में लीन हुई, सब आश्रव दूर निवारे हैं॥
तीन योग से सुव्रता, गुरुणी की विनय बजाती है।
सम दम क्षम को धार ज्ञान, शक्ति नित्यमेव बढ़ाती है॥
बार बार श्री राम केवली, के चरणों में पड़ते हैं।
अति नम्रता से हाथ जोड़ कर विनती ऐसे करते हैं॥

दोहा—आप जगत में हे प्रभु, तारन तरन जहाज।
प्रश्न पूछना एक मैं, चाहता हूँ महाराज॥

सुलभबोधी या दुर्लभबोधी, मैं किस में कहलाता हूँ।
चर्म अचर्म शरीरी का भी, निर्णय भगवन् चाहता हूँ॥
भव्य और अभव्य इन्हीं में, मेरी संख्या किस में है।
और चारित्र लेना मैंने, किसी और जन्म या इसमें है॥

वासुदेव प्रति वासुदेव, चक्री और बलदेव।
भव्य सभी होते सदा, अवतार कहें स्वयमेव॥

सुलभ बोधी हे राजन तुम, भव्य जीव कहलाते हो।
जो कुछ करते नियम उसे, हृदय से पालना चाहते हो॥
छोड़ सभी खट पट दुनिया का, संयमव्रत को धारोगे।
तुम चर्म शरीरी इसी जन्म में, राजन् मोक्ष सिधारोगे॥

दोहा—कारण से कार्य सभी, होते दुनिया मांय ।
मिलना है कारण तुम्हें, मोह तजने का आय ॥

बलदेव की पदवी का राजन् . अवसान जिस समय आवेगा ।
उस समय आप को संयम लेने, का कारण मिल जावेगा ॥
आप्त के सुनकर वचन राम, के हृदय में सुख भारी है ।
अवसर देख विभीषण ने, फिर ऐसे गिरा उचारी है ॥

पूर्व जन्म वर्णन

दोहा—नाथ आप को धन्य है, धन्य श्री जैन धर्म ।
अल्पज्ञों के आप से, मिटते अशेष भ्रम ॥

कौन कर्म अनुसार हरी, रावण ने जनक दुलारी थी ।
फिर लक्ष्मण के हृदय बर्छी, अमोघ विजय क्यों मारी थी ॥
दशकन्धर को लक्ष्मणजी ने, रण भूमि में मारा था ।
पूर्व का कुछ था सम्बन्ध, या नया वैर अब धारा था ॥
भामण्डल सुग्रीवादिक यह, लवणांकुश जो सारे हैं ।
किस कर्मानुसार सभी के सब, श्री राम के भक्त यह भारे हैं ॥
तारण तरण जहाज आप, सब जीवों के हितकारी हो ।
कुछ व्याख्या पूर्वभव सुनने से, शंका सब दूर हमारी हो ॥

दोहा—कान लगाकर के सुनो, आज सभी नर नार ।
कर्म शुभाशुभ भोगते, जग में जीव अपार ॥

चौ०—दक्षिण भरत 'क्षेमपुर' जान, 'नयदत्त' सेठ बसे सुखदान ।
नार सुनन्दा चतुर सुजान, धनदत्त वसुदत्त सुत पुण्यवान ॥

दोहा—'याज्ञवल्क' एक मित्र था, दोनों का प्रधान ।
अब आगे जो कुछ हुआ, सुनो लगा कर कान ॥

'सागर' वणिक इसी नगर का, दूजा रहने वाला था।
'गुणधर' नामक पुत्र 'गुणवती', कन्या रूप विशाला था॥
सागरदत्त ने पुत्री की, 'धनदत्त' से करी सगाई थी।
'रत्नप्रभा' नारी को पर, लालच ने आज दबाई थी॥

दोहा—'श्रीकान्त' एक सेठ था, बूढ़ा साहूकार।
रत्नप्रभा ने व्या हदई, कन्या उसके लार॥

याज्ञवल्क मित्र ने. मित्रों को यह बात बताई है।
वह मांग आपकी अए मित्र, श्रीकान्त सेठ ने व्याही है॥
वसुदत्त छोटे भाई का, सुनकर गुस्सा आया है।
कोई समय देख श्रीकान्त सेठ के, मारन को चल धाया है॥

दोहा—वसुदत्त ने क्रोध से, मारा एक प्रहार।
श्रीकान्त ने शत्रु के, मारा खेंच कटार॥

विंध्या अटवी में हिरण, हुवे पैदा यह दोनों जाकर के।
फिर गुणवन्ती भी आयु पूरण, कर हिरणी हुई आकर के॥
उस हिरणी के लिये उन मृगों ने, लड़ कर प्राण गंवाये हैं।
जन्म मरण के चक्कर में, कर्मों ने खूब सताये हैं॥

दोहा—धनदत्त ने जाकर लखि, वसु भ्रात की लाश।
भ्रात विरह में अति फिरा, होता कहीं उदास॥

एक दिवस रजनी समय, साधु जन के पास।
क्षुधा वश करने लगा, भोजन की दरखास॥

महाराज मुझे है इस समय, भोजन की दरकार।
यदि हो तो कुछ दीजिये, थोड़ा मुझे आहार॥

अय भाई ले लीजिये, है सन्तोष आहार।
हम जैसे बस आप भी, देवें समय निवार॥

सन्तोप सिवा दूजा भोजन, नहीं मुनि रात को करते हैं।
दिन में न संचय करें रात, को पास न अपने धरते हैं॥
रात्रि भोजन करने वाले, मनुष्य निशाचर होते हैं।
फिर साधु होकर करें तो, करनी पानी बीच डबोते हैं॥

दोहा—मनुष्य मात्र को चाहिये, रात्रि भोजन त्याग।
उनका तो कहना ही क्या, जिनके दिल वैराग्य॥

दुर्लभ मिलता मनुष्य जन्म, फिर पुण्य से आयु मिलती है।
मानिन्द वर्फ के सो भी तो, देखो प्रति दिवस पिघलती है॥
सन्तोप विना तृष्णा प्राणी की, कभी न मिटने पाती है।
अग्नि में जितना घी डालो, उतनी ही लपट दिखाती है॥

दोहा—राजा और यम देवता, पेट समुद्र घर।
भरे न भरने के कभी, याचक वैश्वानर॥

महापुरुप भी पेट रूप, इस गढ़े को भर भर हार गये।
सब अनुभव अपना कर करके, वस अन्त में सिर को मार गये॥
अनन्त वार यह सर्व लोक का, सारा पुद्गल खाया है।
किन्तु फिर भी हे भाई, इस जीव को सबर न आया है॥
अब भी यदि ये हाल रहा तो, मनुष्य जन्म खुस जायेगा।
फिर नहीं खबर कि कालान्तर के, बाद फेर कब पायेगा॥
जिसने निज आतम को दमा नहीं, औरों के पास दमाना है।
वस पछतावोगे फेर सोच लो, समय हाथ नहीं आना है॥

दोहा—सुने वचन मुनिराज के, हुई ठीक श्रद्धान।
कुछ-कुछ आत्म को लगा, होने अनुभव ज्ञान॥

त्याग किया रात्रि भोजन, और देश व्रतों को धारा है।
जा स्वर्ग सुधर्म में देव हुवा, जहां संपत्ति और सुख भारा है॥

अब आगे का सब हाल सुनो, जहां पर जन्मा यह जाकर के।
अच्छी संगत के अच्छे फल, ही लगे सर्वदा आकर के॥

दोहा—'महापुर' नामक नगर था, 'मेरुसेठ' सुजान।
सेठानी थी 'धारिणी', जन्मे उसमे आन॥

'पद्मरुचि' था नाम ज्ञान, विद्या बुद्धि का सागर था।
द्वादश व्रत धारे जिसने, सुमति करुणा का आगर था॥
परोपकार के लिये हमेशा, निशिदिन तत्पर रहता था।
और देख दुखित को दुखित हुवे, के नयनों से जल वहता था॥

दोहा—एक दिन रस्ते में पड़ा देखा बैल अनाथ।
ऊपर सिर पर थी खड़ी, आने वाली रात॥

अति शोचनीय थी दशा और, अज्ञानी लोग सताते थे।
रास्ते में जो था पड़ा हुआ, ऊपर से आते जाते थे॥
और हेमन्त ऋतु भी अपने यौवन में, इतराई फिरती थी।
आँखों से आँसू दुखित बैल के, मुख से लारें गिरती थी॥

दोहा—पद्म रुचि ने बैल को, एक तरफ ले जाय।
ऊपर की जा वेदना, सारा दई मिटाय॥

इधर उधर जो लगा हुआ था, दूर सभी दुर्गन्ध किया।
औषध आदि खान पान, और छाया का प्रवन्ध किया॥
किन्तु आयुष्य पूर्ण हुई को, कहो कौन बधाने वाला है।
जैसा कर्म करं वहाँ जाता, प्राणी जाने वाला है॥
मन्त्रराज का दे शरणा, उस बैल का कार्य सारा है।
त्रिर्यंचगति को त्याग मनुष्य. तन रत्न आन के धारा है॥

दोहा—'छत्रछाय' भूपाल के 'श्रीदत्ता' पटनार।
'वृषभध्वज' पुत्र हुआ, पुण्यवान सुकुमार॥

क्रीड़ा करता राजकुमार, एक दिवस वहाँ पर आ पहुँचा।
जहाँ बैल मरा था देख एक कुटिया, कुछ मन ही मन सोचा॥
जाति स्मरण ज्ञान हुआ, देखा उपयोग लगा कर के।
बनवा कर एक भवन वहाँ, शुभ रत्नालय दिया बना कर के॥

दोहा—पद्म रुचि को कुमर ने, अपने पास बुलाय।
हृदय लगा कर प्रेम से, यों बोले मुस्काय॥
परोपकारी तुम मेरे, गत भव के गुरु राज।
कृपा तुम्हारी से मिला, नरतन सब सुखसाज॥

महा कष्ट त्रियंच गति का, आप ने सभी हटाया है।
संसार समुद्र से तुमने ही, मुझे किनारे लाया है॥
संसार में चीज नहीं कोई, जिसको दे प्रत्युपकार करूं।
गुरुराज आपके चरणों में, अपना यह आज निढाल धरूं॥
राजपाट क्या जिस्म तलक, यह सभी आपकी माया है।
पर्याप्त मुझको केवल आपके, चरण कमल की छाया है॥

दोहा—महाराज आपका यह सभी, पुण्य उदय हुआ आय।
बाकी मिलते हैं सभी, कारण दुनिया मांय॥
मैंने तो अपने हृदय की पीड़ा, उस समय मिटाई थी।
निश्चय में अपनी औषधि थी, व्यवहार में तुम्हें पिलाई थी॥
नमोकार मंत्र तुमने श्रद्धा था, जो जिनवर की वाणी है।
बस यही जीवको मनुष्य जन्म, क्या, मोक्ष सुखों को दानी है॥

दोहा—दोनों ने धारण किये, द्वादश व्रत सुख कार।
आयु पूर्ण कर गये, दूजे स्वर्ग मंझार॥

वैताढ्यगिरि 'नंदावर्त नगरी, अद्भुत एक नजारा था।
और कनक प्रभा' थी पटरानी, 'नन्देश्वर' राजा प्यारा था॥

पद्मरुचि जाकर जन्मा, दूसरे स्वर्ग से आ कर के।
'नयनानन्द' नाम धरा सुतका, शुभ मात पिता ने चाह करके॥

दोहा– राज संपदा भोग कर, फिर संयम लिया धार।
पंचम सुर फिर जा लिया, जिस्म वैक्रिय धार॥

पूर्व विदेह 'क्षेमा नगरी,' एक खास राजधानी थी।
'विमलवाहन' था भूप चतुर, 'पद्मावति' पटरानी थी॥
'श्रीचन्द्र' हुआ पुत्र जिन्होंने, मुख्य दया मानी थी।
सभी तरह आनन्द, श्री जिनवर की मेहरबानी थी॥

दौड़—'समाधिगुप्त मुनि आया, चरण जा शीश निमाया।
समक्ष जग धुन्द पसारा—
मुनि पास श्रीचन्द्र कुँवर ने तप संयम व्रत धारा॥

दोहा—ब्रह्म लोक पंचम लिया, धार दूसरी काय।
दिव तज दशरथ सुत हुवे, रामचन्द्र यह आय॥

'वृषभध्वज' का जीव आन, सुग्रीव यही तो जन्मे हैं।
इस कारण श्री रामचन्द्र की, भक्ति इनके मन में है॥
जैसा कोई बोवे कर्म बीज, उसका वैसा फल पायेंगे।
अब 'श्रीकान्त' का हाल तुम्हें, पहिले यहां कुछ दर्शायेंगे॥

दोहा—'मृणालकन्द' एक नगर, 'वज्रकंठ' नरेश।
'हेमवती' रानी भली, सुन्दर सारे वेष॥

वही श्रीकान्त जन्मान्तर से, इनके यहां राजकुमार हुआ।
'शम्भु' नाम धरा जिस का, अति रूप कला सुखकार हुआ॥
राज पुरोहित 'विजय' नाम, थी रत्न चूलिका पुरोहितानी।
'वसुदत्त' इनके आकर, 'श्रीभूति' पुत्र हुआ सुखदानी॥

दोहा—'सरस्वती' नामक ब्राह्मणी, 'श्रीभूति' की नार ।
गुणवती ने इसके उदर, जन्म लिया शुभ धार ॥

'वेगवती' था नाम, कला सब, चौसठ की वह ज्ञाता थी ।
राग द्वेष के वशीभूत, मृषावादिनी विख्याता थी ॥
कर्मों के संग मूढ हुआ, यह जीव अतुल दुःख पाता है ।
और जिसने नीचे गिरना हो, वह पर निन्दक बन जाता है ॥

दोहा—एक मुनि वहां नित्य प्रति, करते थे शुभ ध्यान ।
जनता सब आपि का, करती थी सम्मान ॥
'वेगवती' ने एक दिन, निन्दा करी अपार ।
जनता से कहने लगी, ऐसे गिरा उचार ॥

दोहा—ढोंगी है बिल्कुल बुरा, यह साधु मक्कार ।
मैंने देखा सामने, करता हुआ व्यभिचार ॥

समझ दुराचारी उसकी, बहुतों ने संगत छोड़ दई ।
कइयों ने निन्दा करी खूब, कइयों ने तबियत मोड़ लई ॥
देख धर्म की हानि कुछ, साधु के मन में ख्याल हुआ ।
यह दूषण दूर हटाने को, प्रतिज्ञा पर अब ध्यान हुआ ॥

दोहा—यही प्रतिज्ञा आज से, करता हूँ भगवान् ।
दूषण दूर हुवे बिना, खोलूंगा नहीं ध्यान ॥

सूज गया मुख वेगवती का, सुर ने हाल बेहाल किया ।
और समझ गये सब इस पापिन ने, मुनि को झूठा आल दिया ॥
मुख से नहीं बोल निकलता है, स्रोत सबके सब बन्द हुवे ।
और लगे काँपने नर नारी, घर के भी सारे तंग हुवे ॥

दोहा—झूठा था मैंने दिया, मुनिराज को आल ।
बोली सबके सामने, आया मेरा काल ॥

फिर मुनिराज से जाकर के, सबने अपराध क्षमाया है।
निर्मल आत्म है साधु की, सबके दिल यही समाया है॥
दोष दूर होगया समझ, मुनिराज ने अन्न जल पान किया।
वेगवती को भी ऋषिराज ने, निर्भयता का दान दिया॥
वेगवती श्री भूति सबने, देशव्रत को धारा था।
कर्म बन्धन का हेतु महा, मिथ्यात्व को दूर निवारा था॥

दोहा—शम्भु नृप मोहित हुआ, वेगवती को देख।
इसी तरह बनती सदा, खोटी विधना रेख॥

मिथ्यात्वी समझ के श्रीभूपति ने, विवाह न उसके साथ किया।
शक्ति से छीनी वेगवती, और श्रीभूति का घात किया॥
दुःखदाई होऊं राजा को, श्रीभूति निदान कर डाला है।
कुछ दिन में वेगवती को नृप ने, घर से बाहर निकाला है॥

दोहा—निराधार बाला हुई, होती फिरे उदास।
आर्यिका जाकर बनी, हरिकान्ता सती पास॥

पंचम देवलोक पहुंची, शुभ तप जप ध्यान लगा कर के।
महा ब्रह्मलोक तज जनक भूप के, जन्मी सीता आ करके॥
सब झूठा दूषण मुनिराज को, इसने वहां लगाया था।
अपवाद यहां पर हुआ सिया का, उस भव का फल पाया था॥
भव भव में रुला अपार भूप, शंभु का हाल सुनाना है।
जिसने आकर के लंकपति, दशकन्धर नाम कहाना है॥

दोहा—'कुशध्वज' नामक विप्र था, 'सावित्र' तसु नार।
शम्भु इनके सुत हुआ, 'प्रभास' नाम सुखकार॥

संयम लिया प्रभास ने, 'विजयसिंह' मुनि पास।
महाव्रत धारण किये, कर मिथ्यात्व विनास॥

दुष्कर करनी करी मुनि ने, सभी परिषह जीते हैं।
और संयम व्रत में निश्चल मन से, वर्ष वहुत से वीते हैं॥
एक 'कनकप्रभ' विद्याधर, राजा दर्शन करने आया था।
तव ऋद्धि उसकी देख प्रभास, मुनि का मन ललचाया था॥

दोहा—तप जप का मुझको मिले, इसी तरह फल आय।
निदान कर पैदा हुआ, स्वर्ग तीसरे जाय॥

स्वर्ग तीसरा छोड़ यहां, जन्मा दशकन्धर आकर के।
याज्ञवल्क तू हुआ विभीषण, आये प्रथम वता कर के॥
और श्री भूति था विप्र जो कि, शम्भु राजा ने मारा था।
वह वशीभूत कर्मों के होकर, पहली नरक सिधाया था॥

दोहा—नर्क भोग पैदा हुआ, विदेह क्षेत्र में जाय।
'पुनर्वसु' खेचर वना, विद्याधर सुखदाय॥
'पुण्डरीक' एक नगरी है, महाविदेह मंझार।
चक्री 'त्रिभुवनानन्द' को, जाने सब संसार॥

'अनंगसुन्दरी' उस चक्रवर्ती की पुत्री एक कहाती थी।
थी रूप कला में अद्वितीय, सर्वज्ञ देव गुण गाती थी॥
पूर्व पुण्य से रूप ऋद्धि, सव साधन था शोभन पाया।
धर्मरत गौरव वाली, सदाचार था मन भाया॥
उडंकू विमान में वैठ एक दिन चली सैर को जाती थी।
भोगी भँवरे गोठी ले दो, पुरुषों की टोली आती थी॥

दोहा—दोनों विद्याधर हुये, मोह कर्म वस लीन।
राज कुमारी का लिया, विमान व्याज से छीन॥
दोनों विद्याधर कुमारी को, वस में करना चाहते थे।
किन्तु दुष्ट विचारों को वो, सफल न करने पाते थे॥

इस अन्तर में था पुनर्वसु, विद्याधर सम्मुख आ पहुँचा।
देख कष्ट में अबला कुँवारी को, अपना कर्तव्य सोचा॥

दोहा—पुनर्वसु का परस्पर, हुआ उन्हों से जंग।
किन्तु भाग निकले वहां, दोनों होकर तंग॥

राज कुमारी के उड़कू, विमान को कर बेकार गये।
उल्टा षडयंत्र रच डाला, क्योंकि असफल हुए हार गये॥

पुनर्वसु ने लड़की को, अपने विमान में बिठलाई है।
उसके स्थान पहुँचाने को, चलने की कला दिखाई है॥
पीछे से चक्रवर्ती की, दौड़ विमानों की आई।
यह देख हाल लड़की, अपनी इज्जत के कारण घबराई॥
थी निश्चय शुद्ध आत्मा, पर यह दुनियाँ बड़ी दुरंगी है।
फिर षडयंत्र कोई रच डाले, फिर तो व्यवहार बिरंगी है॥
जातिवान कुलवान सदा, चाहे खेल जान पर जाते हैं।
पर निश्चय और व्यवहार में, कोई धब्बा नहीं लगाते हैं॥

दोहा—सुभटों ने उसका किया, झटपट पीछा जाय।
दोनों लख इस हल को, दिल में गये घबराय॥

फिर सोचा कि मैं पुनर्वसु अपरचित्त संग पाजाऊंगी।
और पीछे पिता पास जाकर, अपना क्या मुख दिखलाऊंगी॥
ऐसा सोच अनंगसुन्दरी, उस जंगल में कूद पड़ी।
अब बिना धर्म मेरा बचाव, होगा नहीं ऐसी सूझ पड़ी॥

दोहा—दुबक छुपक निकली कहीं, संयम व्रत लिया धार।
संग्रह नित्य करने लगी, तप जप व्रत सुख कार॥

पुनर्वसु जैसे तैसे हुआ, दाव पेच से निकल गया।
किन्तु दुखी था उपकारी हृदय जिसका हो विकल गया॥

परमार्थ करने पर भी कभी कष्ट सामने आता है।
कर्मों के कुछ क्षयोपशम से, सीधा रास्ता मिल जाता है॥

दोहा—संयम व्रत धारण किया, हो कर के लाचार।
तप जप शुभ करनी करी, मन अपने को मार॥

तप संयम करनी निदान, से वासुदेव पद पाते हैं।
उस पूर्व बात का स्मरण कर, अब निदान करना चाहते हैं
मैं अनंग सुन्दरी को पाऊं, ऐसा निदान कर डारा है।
फिर छोड़ के इस औदारिक तन का, जिस्म वैक्रिय धारा है॥

दोहा—देवलोक पुण्य से मिला, सभी सुख भरपूर।
किन्तु सभी अनित्य यह, बने एक दिन दूर॥

छोड़ स्वर्ग नृप दशरथ के. घर जन्मा लक्ष्मण आकर के।
यहां पूर्व पुण्य फल भोग रहे, हैं वासुदेव पद पाकर के॥
श्री अनंग सुन्दरी ने भी तो, तप संयम खूब कमाया था।
और अन्तसमाधि मरणत्याग, तनको शुभ ध्यानलगाया था॥

दोहा—एक अजगर ने सती को, बना लिया निज आहार।
स्वर्ग दूसरे काल कर, पहुँची समता धार॥
त्याग स्वर्ग आकर हुई, वैशल्या सुख कार।
प्रेम लखन संग इस तरह, पूर्व पुण्य अनुसार॥

चौपाई—गुणवती का गुणधर भाई, प्रथम नाम संज्ञा बतलाई।
कुण्डल मंडित जन्मा जाई, विषयों ने आत्म भरमाई॥
एक दिन पास मुनि के आया, साधु ने उपदेश सुनाया।
त्याग कुव्यसनों का करवाया, गृहस्थधर्म जिसके मन भाया॥

दहा—देशव्रत धारण किया, किन्तु राज्य में ध्यान।
कुंडल मंडित मर कर हुआ, भामंडल यह आन॥

जनक भूप का पुत्र सती, सीता का भ्रात कहाता है।
अब लवणांकुश का हाल सुनो, संयोग चला क्या आता है॥
काकन्दी था नगर वहां पर, 'वामदेव' एक धर्मी था।
एक 'श्यामा' नार कहाती थी, परिवार सभी शुभकर्मी था॥

दोहा—श्यामा के दो पुत्र थे, पुण्यवान सुखकार।
नाम 'सुन्द' 'वसुनन्द' था, सुन्दर रूप अपार॥

वहाँ एक मास का लेने पारणा, मुनिराज घर आया था।
तब उल्ट प्रणामों से दोनों, भाइयों ने आहार वेहराया था॥
पुण्य प्रकृति बांध लई, आयु का खेल तमाम हुआ।
उत्तर कुरु में भोग के सुख, फिर प्रथम स्वर्ग जा धाम हुआ॥

दोहा—काकंदी का भूपति, 'रतिवर्द्धन' शुभ नाम।
थी पट नार 'सुदर्शना, राजा को अभिराम॥

प्रथम स्वर्ग से आ कर के, दोनों ने यहां पर जन्म लिया।
और जन्मोत्सव का खुशी खुशी, राजाने सब सामान किया॥
नाम 'प्रियंकर' और 'स्वयंकर', दोनों के शोभाते थे।
संसार से चित्त उदास हुआ, संयम व्रत लेना चाहते थे॥

दोहा—त्याग अनित्य संसार को, महाव्रत लिये धार।
सम दम खम को धार के, तप जप किया अपार॥

नवग्रैवेक स्वर्ग में जाकर, सुख मनोगम पाये हैं।
'लवणांकुश दोनों भाई उस, स्वर्ग से चलकर आये हैं॥
पुंडरीकपुर में जनक सुता, ने दोनों पुत्र जाये थे।
यहां अनुव्रत धारी सिद्धार्थ ने, दोनों भ्रात पढ़ाये थे॥
यही सिद्धार्थ पूर्व दूसरे, भव की मात सुदर्शना थी।
इसी प्रेम अनुसार पढ़ाने की, आ मिली स्पर्शना थी॥

दोहा—जन्मान्तरों की वात सुन, गये भव्य जन कांप ।
कइयों ने संसार का, त्याग दिया सन्ताप ॥

संयमव्रत को धार लिया, आत्म के निर्मल करने को ।
कई वीतराग की अमृत वाणी, लगे हृदय में धरने को ॥
देशव्रत को धार कई, दिल में आनन्द मनाते हैं ।
सम्यक् दृष्टि वन गये वहुत, तीर्थंकर के गुण गाते हैं ॥

जैसी भी जिसकी शक्ति थो, उसने वैसा व्रत धार लिया ।
और कर्म वन्ध का कारण सव, ने मिथ्या भ्रम निवार दिया ॥
उसी समय रघुकुल दिनेश फिर, पास सिया के आये हैं ।
अति नम्रता से विधि सहित, शिक्षाप्रद वचन सुनाये हैं ॥

दोहा—सती तुम्हारे जन्म को, धन्य धन्य हरवार ।
मोह कर्म चाण्डल के, सिर में डारी छार ॥

कुछ कहना तुमको जैसे, सूर्य को दीपक दिखाना है ।
किन्तु फेर भी व्यावहारिक, हमने कर्त्तव्य वजाना है ॥
अवतक तुमने जो कष्ट सहे, संयम का उनसे भारी है ।
ना पाल सके यहां वड़े वड़े, योद्धों ने हिम्मत हारी है ॥
क्रुद्ध सिंह के सम्मुख भी, जाना आसान वताया है ।
कालकूट को अमृत जैसा, खाने में सुन पाया है ॥
हो सकता है कोई पर्वत को, मस्तक से तोड़ फैंक देवें ।
और इन्हीं हाड़ के दांतों से, लोहे के चने चवा लेवें ॥
तलवार पकड़कर के उल्टी, शत्रु को मार गिरा देवें ।
और महासमुद्र में हाथों से तर, कर कोई प्राण वचा लेवें ॥
किसी निमत्त से कर सकता है, इन अनहोनी वातों को ।
पर संयम व्रत को कहा कठिन, जीते जो आठों कर्मों को ॥

दोहा—हृदय से तुमने तजा, यह संसार असार।
तो अब दुनिया का नहीं, करना जरा विचार॥

स्वलिंग बन गयों आज से जो, तुमने मुखपत्ति धारी है।
तो अपने प्राणों से भी इसको, रखनी होगी प्यारी है॥
जिसने इसे चिसार दिया, आगे जो इसे विसारेगा।
उस से धोबी का श्वान भला, दूजे दिन मति संभारेगा॥
बुद्धिमान् समदृष्टि जन को, एक इशारा काफी है।
दुष्ट आत्मा तो जैसे, सुल्फई चिलम की साफी है॥

दोहा—इतना कह श्री राम ने, लिया सती को साथ।
अवध पुरी को चल दिये, लेकर निज संग साथ॥
अनिक पति कृतान्त भी, लकर संयम भार।
दुष्कर करनी कर गया, पञ्चम स्वर्ग मंझार॥

साठ वर्ष तक जनक सुता ने, तप जप खूब कमाया है।
तेतीस दिवस का अनशन कर, जा स्वर्ग बारहवां पाया है॥
स्त्रीवेद छेदन कर के, बाईस सागर तिथी पाई है।
अच्युत इन्द्र बना सभी पर, हुक्म अधिक पुण्याई है॥

लवणांकुश की शादी

दोहा—वैताढ्य गिरी पर नगर था, कंचन पुर सुप्रसिद्ध।
विद्युतकान्ति भूपति, पुण्यवान समृद्ध॥

मंदाकिनी और चन्द्रमुखो दो, सुता भूप को प्यारी थी।
अब शादी कारण करी स्वयम्वर, मण्डप की तैयारी थी॥
पुत्रों के परिवार सहित श्री, राम लखन बुलाये हैं।
और यथा योग्य स्वागत कर सब का, मण्डप में बिठलाये हैं॥

दोहा—वर माला ले पुत्रियें, आई मंडप मांय।
यथा योग्य समझा रही, सब कुछ माता धाय॥
मंदाकिनी ने लवण को, पहिनाई वर माल।
अंकुश के गल में दई, चन्द्रमुखी ने डाल॥

लक्ष्मण के पुत्रों का भी, बैठा था समूह बड़ा भारा।
जल गये ईर्ष्या से सारे, निज निज मस्तक पर बल डारा॥
गुस्से में चेहरे लाल हुये, सब लड़ने को आमादा थे।
था मान पिता की पदवी का, और संख्या में भी ज्यादा थे॥

दोहा—अनुचित चेष्टा सुतों की, देखी लक्ष्मण वीर।
बोले यों श्री राम से, लघु भ्रात रणधीर॥

क्रोध का परिणाम

गाना (तर्ज—पाप का परिणाम पापी भोगते)

देखिये भगवान शिशुगण, कैसे पागल हो गये।
तुच्छ पाकर पुण्य मर्यादा, से गाफिल हो गये॥ १॥
या इन्हों की खोटी शिक्षा, ऐसा फल लाई है यह।
रघुवंशियों में वंश द्रोही, आके शामिल हो गये॥ २॥
स्वार्थियों ने लाभ हानि, को विचारा ही नहीं।
खान में सोने की लोहा, पीतल पैदा हो गये॥ ३॥
कैसे क्षेत्र कुसमय खोया है, गौरव वंश का।
कर्त्तव्य तज कर भाई का, भाई के दुश्मन हो गये॥ ४॥
लाड़ करते इन से खुद भी, रात दिन थकते न थे।
नीच बुद्धि कुल कलंकी, बिल मुकाबिल हो गये॥ ५॥
अन्याय करते मैं न देखूंगा, इन्हें अब इस तरह।
प्रेम प्याले थे जो अमृत, अब हलाहल हो गये॥ ६॥

अब लवण के चरणों में गिर के, बच सकते हैं यह।
या मौत के इनको 'शुक्ल' परवाने हासिल हो गये ॥७॥

दोहा—चचेरे भाइयों का लखा, लवणांकुश ने जोश।
नम्र वचन कहने लगे, तज भाषा के दोष ॥

लवणांकुश—जाति गौरव वंश का, करना चाहिये ध्यान।
नीति विनय व्यवहार सब, समय क्षेत्र का ज्ञान॥

प्रथम तो निज पर का प्रश्न उदार चित्त नहीं लाते हैं।
लाचार यदि आ भी जावे तो, फिर भी समय बचाते हैं॥
शर्म धर्म भी दुनिया में, आत्म का रक्षक होता है।
विपरीत इन्हों से चलने वाला, निज गुण सारा खोता है॥
बुद्धिमान् को तनिक इशारा, ही बतलाया जाता है।
अब रघुवंशिन का पुण्य घटा, यह नजर सामने आता है॥
वडवानल से तेज सुनो, भाइयो-द्वेषानल होती है।
गौर व इज्जत क्या राज पाट, मुख जड़ामूल से होती है॥

दोहा—देख मूर्खता सुतों की, चढ़ गया रोष अपार।
पुत्रों को धिक्कारते, बोले वचन उचार॥

गाना—बने सब आन निर्बुद्धि, शर्म तुमको न आई है।
धूल में अपनी और कुल की, सभी इज्जत मिलाई है ॥१॥
लाज रघुकुल की रखने को, राम ने राज त्यागा था।
तुच्छ एक आज वरमाला पे, तुमको तेजी आई है ॥२॥
प्रेम दुनिया से बढ़कर है, हमारे सारे भाइयों में।
किन्तु तुमने यह कैसी आज, द्वेषानल दिखाई है ॥३॥
बड़े भाई की पत्नी को, सदा मैं माता कहता हूं।
तुम्हें धिक लेना वरमाला, बड़ों से दिल में समाई है ॥४॥

तुम्हें अधिकार क्या उठने, का था विन राम के पूछे।
दोष यह खून से बढ़कर, जो मर्यादा घटाई है ॥५॥
अंश रघुवंश के हो तो, क्षमा अब मांग लो सारे।
नहीं तो राज में रहना, तुम्हें मेरी मनाई है ॥६॥
राम का भय आन कुल की, 'शुक्ल' दिल में समाई है।
तुम्हारी वरना छिन मात्र में, कर देता सफाई है ॥७॥

दोहा—देख रहे थे राम जी, बैठे सभा मंझार।
दिल ही दिल में कर रहे थे इस तरह विचार ॥
अरिहन्त देव ने सब तरह, दिये जीव समझाय।
व्यवहार कसौटी से कोई, देखे यदि लगाय ॥

जहां सत्य प्रेम की वृद्धि हो, बस धर्म वहां पर बढ़ता है।
और क्षमा शील के होने से, आत्म का गुण नही घटता है।
क्रोध प्रेम का नाश करे, अभिमान विनय को खोता है।
वह मित्रता का वमन करे, जो फरेब नशे में सोता है ॥
लोभ दुष्ट यह महा बुरा, सब ही कुछ नाश बना डारे।
संभूम चक्रवर्ती की तरह, संसार में रुला रुला मारे ॥

दोह राम—सूर्यवंश में आज तक, रहा अखंड प्रेम।
अब आगे आता नजर, रहे न पूरा क्षेम ॥

जहां विनय नहीं वहाँ धर्म घटे, फिर दान पुण्य घटजाता है।
और गिरे हुए गौरव वालोंसे, सहसा मन फट जाता है ॥
द्वेषानल यह बुरी बला है, जिस जगह जरा सी आती है।
वहाँ फूट डालकर रूप भयंकर, सब कुछ नाश बनाती है ॥

दोहा— बुद्धिमान् होता वही, चले समय अनुसार।
समय देख श्रीराम जी, बोले वचन उचार ॥

दोहा राम—क्या बच्चों की बात पर, रोष किया तूं वीर।
लखन आप को चाहिये, होना अति गम्भीर ॥

ऐसी बातें सब बालपन में, प्रायः, पाई जाती हैं।
वेफिकर अवस्था यही तो, बिल्कुल अलमस्त अहाती है ॥
समझाना हो यदि बच्चो को तो, प्रेम से समझाना चाहिये
इस तरह रोष में आकर के, दिलभी न मुर्झाना चाहिये ॥

दोहा—आज मर्म की बात एक, सुन ऐ लक्ष्मण वीर।
पुण्य सूर्यवंश का, हुवा आज आखीर ॥
ऐसा कह श्रीराम ने, झगड़ा दिया मिटाय।
अब अपना अपराध भी, सबने लिया क्षमाय ॥

अब खुशी-खुशी श्री राम लखन, सब पुरी अयोध्या आये हैं।
पर वासुदेव के पुत्र कुछ, अपने मन में शर्माये हैं ॥
संसार से चित्त उदास हुआ, आज्ञा ले संयम धार लिया।
श्री मुनि महाबल से दीक्षा ले, आत्मकार्य सार लिया ॥

दोहा— भामंडल भूपाल जी, बैठे महल मंझार।
शुद्ध भावना भावते, ऐसा किया विचार ॥

वैताढ्य गिरि की दोनों श्रेणी, मैंने बस में करली हैं।
दुनिया के सुख भी भोग लिये, रानी भी कितनी वरली हैं ॥
किन्तु साथ मेरे दुनिया से, कुछ नहीं जाने वाला है।
और काल बुलावा एक दिवस, मुझको भी आने वाला है ॥

दोहा—इतना कहते ही पड़ी, विद्युत सिर पै आय।
भारत छोड़ पैदा हुआ, देवकुरु में जाय ॥
सजधज कर विमान में, भ्रमण गये हनुमान।
वापिस आते को मिला, कारण ऐसा आन ॥

अस्ताचल को जा रहा, छिपने को रवि विमान,
हनुमान को उस समय, आया ऐसा ध्यान ॥

तरुण रवि था किस तरह, तेज क्रांतिवान् ।
नजर कोन था मेलता, जब था मध्य युवान ॥

अब सभी क्रान्ति क्षीण हुई, क्यों कि यह छिपने वाला है।
फिर निबड़ तम घोर अन्धेरा, यहां पर बिछने वाला है ॥
आयु के पूर्ण होने पर एक, दिन मैं भी छिप जाऊंगा ।
मिट गये अनन्ते मुझ जैसे, मैं भी ऐसे मिट जाऊंगा ॥
अष्ट महा शत्रु मेरे उन पर, न कुछ भी ध्यान दिया ।
औरों को शत्रु मान मान, निर्दोषों का घमसान किया ॥
क्रोध मान माया लालच, यह सब को ही भर्माते हैं ।
ऐसा महाजाल इन्हों का है, सत्पथ पर जाते शर्माते हैं ॥

दोहा—है निशंक संसार यह, निश्चय सभी असार ।
चक्री तीर्थंकर सभी, तज गये आखिर कार ॥

छोड़ दूं संसार तबही, मोक्ष पद पाऊंगा मैं ।
वरना इस चक्कर से हरगिज, पार न पाऊंगा मैं ॥ १॥
नर्क तिर्यंक मनुष्य क्या, सुरपुर में पूर्ण सुखनहीं ।
अवसान में रोवे सभी, चूका तो पछताऊंगा मैं ॥ २ ॥
जो भी कुछ आता नजर, पुद्गल की माया है सभी ।
अरिहन्त की कृपा से इस पर, अब न मुर्झाऊंगा मैं ॥ ३ ॥
शिक्षा जिनवर की 'शुक्ल' नस नस के अन्दर रम गई ।
अब तो सच्चिदानन्द ही, बन के दिखलाऊंगा मैं ॥ ४ ॥

दोहा—राजपाट दे पुत्र को, धर्म रत्न गुरु पास ।
उत्सव सहित सभी गये, दिल में अति उल्लास ॥

ईशाण कोण की तर्फ बढ़े. सब केश लुंच कर डारे हैं।
मुखपत्ति मुख पर बांध, हस्त बाय मे पात्र धारे हैं।।
यथा योग्य सब विधि पूर्ण करके, फिर सम्मुख आया है।
श्री धर्म रत्न गुरुराज ने तब, दीक्षा का पाठ पढ़ाया है।।

दोहा—चार महाव्रत धार के, किया ज्ञान अभ्यास।
फिर तप जप में लग गये, करने अरि का नाश।।

चौक०—पद्मसुरागादि रानी कइयां ने, संयम भार लिया।
गुरुणी जी श्री लक्ष्मी की, आज्ञा को सिर पर धार लिया।।
मिश्री की मक्खी के मानिन्द, ऐसे नर नारी कहाते हैं।
दुनिया के विषय सुख छोड़ सभी, वह त्याग अवस्था चाहते हैं।।

दोहा—नाश किया चारों कर्म, घनघाती बलवान्।
उसी समय हनुमान को, हो गया केवल ज्ञान।।

जिन को केवल ज्ञान हुआ सो, गये मोक्ष सुख पायेंगे।
अब राम लखन के प्रेम सम्बन्धी हाल अगाड़ी आयेंगे।।
कर्मों में सबका महाराजा, एक मोहिनी कर्म कहाता है।
जिस समय उदय इसका होता, वह सब को ही भर्माता है।।

दोहा—हनुमान ने जिस समय, संयम व्रत लिया धार।
सुनते ही श्रीराम ने, ऐसे किया विचार।।

दोहा राम-किस कारण हनुमान ने, त्याग दिया संसार।
विषय सुख अनमोल तज, महा कष्ट लिया धार।।

दोहा—शक्रेन्द्र पहिले स्वर्ग, सभा सुधर्मा मांय।
देख रहा था भारत को, निज उपयोग लगाय।।
रामचन्द्र के धर्म से, प्रतिकूल परिणाम।।
देख इन्द्र कहने लगा, सुन रहे देव तमाम।।

दोहा शक्रेन्द्र—रामचन्द्र जी कर रहे, उल्टा आज विचार।
आश्चर्य मुझको हुआ, अद्‌भुत आज अपार ॥

चर्म शरीरी राम आज, उपहास्य धर्म का करता है।
इस राग द्वेष में बंधा जीव, नहीं कर्म बंध से डरता है ॥
इस बात को अब में समझ गया, कि प्रेम लखन संग भारी है।
और प्रेम के वश में हुये राम ने, उल्टी मति मन धारी है ॥

दोहा शक्रेन्द्र—राम लखन जैसा नहीं, प्रेम कहीं पर और।
भारत क्षेत्र सब छान कर, देख लिया चहुं ओर ॥

मनुष्य मात्र क्या देव नहीं, कोई प्रेम उन्हों का हटा सके।
प्रपंच करो हजार चाहे पर, उनका दिल नहीं फटा सके ॥
श्रीराम बिना श्री लक्ष्मण जी, एक क्षण भर नहीं रह सकते हैं।
और एक वचन भी भाई के, प्रतिकूल नहीं सह सकते हैं ॥

दोहा—दो देवों के बात यह, दिल में बैठी नाय।
शक्रेन्द्र को इस तरह, बोले सन्मुख आय ॥

दो० दो देवता—मृत्यु लोक का प्रेम है, बच्चों जैसा खेल।
लोहे को चिकना पना, क्या दिखलावे तेल ॥

सब देखो अब हम राम लखन का प्रेम तुड़ा कर आते हैं।
इस बात की साक्षी सभी परिषदा, को करवा कर जाते हैं ॥

प्रेम लखन का रामचन्द्र जी, से काफूर बना देंगे।
और एक से एक को प्रतिकूल कर, दोनों को बतला देंगे ॥

दोहा—इतना कह कर चल दिये, अवध पुरी की ओर।
प्रेम तुड़ाने के लिये, खूब लगाया जोर ॥

असल रंग पर नकल का, चढ़ा न बिलकुल रङ्ग।
फिर ऐसी युक्ति करी, अन्त में होकर तङ्ग ॥

अब था विचार यह देवों का, जाकर क्या मुख दिखलावेंगे।
यदि प्रेम नहीं टूटा इनका, तो शर्मिन्दे हो जावेंगे॥
देवों ने फिर झूठी एक, माया ऐसी रच डारी है।
और मृतक तन एक बनाय राम का, रुदन मचाया भारी है।

दोहा—हा प्रीतम हा रामजी, हा बेटा हा बाप।
छोड़ हमें क्यों चल बसे, स्वर्ग धाम में आप॥
दुःखदायी यह शब्द जब, पड़े लखन के कान।
चमके सहसा सुनन को, लाया अपना ध्यान॥

इतने में रोते सिर धुनते, सब भृत्य सामने आये हैं,
सब देख हाल यह अनुज सोच, सागर में और समाये हैं॥
और ऊँचे स्वर से सब ने हा, दुःखदाई रुदन मचाया है।
फिर गद्गद् स्वर से भृत्यों ने, लक्ष्मण को वचन सुनाया है॥

दोहा देवमायाभृत्यः—

महा शोक प्रलय हुई, हाय हाय सरकार।
आज राम परभव गये, देकर दगा अपार॥
सोच के कुछ बातें करो, बकते मूढ गँवार।
शब्द अपशकुन का कहा, गर्दन लेऊँ उतार॥
देखो तो वह सामने, पड़ी राम की लाश।
राज कुमर रानी सभी, रोते हैं तज आश॥

शेर—आज सचमुच नाथ स्वामी, राम परभव चल दिये।
सब की आशाओं के अंकुरे विधि ने मल दिये॥
क्या क्या हैं हैं मर गये, आज राम भगवान।
'जी हां' का प्रत्युत्तर पा, तजे लखन ने प्राण॥

पत्थर की मूर्ति के मानिंद, सिंहासन पर थे पड़े हुवे।
और स्वर्ण हीरों के आलम्बन, पिछलों पर थे सिर धरे हुवे॥

थे नेत्र दोनों मिंचे हुए, और कर गोढ़ों पर तने रहे।
दो सिंहासन के अग्रभाग में, पांव जमीं पर जमे रहे॥
आयु का खेल तमाम हुआ, और श्वासोच्वास खत्म सारे।
यह देख हाल देवों के भी, मन में हुवे जख्म भारे॥
चौथी पृथ्वी पर जा पहुंच, उत्तर की दिशा घूम द्वारे।
कोई जैसा प्राणी कर्म करे, वैसे सम्बन्ध मिलते सारे॥

दोहा—देख लखन की मृत्यु को, लगे देव पछतान।
जैसे हृदय में लगे, जहर बुझे शत बाण॥
आज हमारे से हुवा, कैसा अनर्थ घोर।
अब होने वाला यहां, हाय हाय का शोर॥

यहां परीक्षा कारण हमने, महा पाप कर डारा है।
अब देख हाल हंस का क्या, होगा जिसका भाई प्यारा है॥
निश्चय इन जैसा दुनियां में, प्रेम नजर नहीं आया है।
जो इन्द्र ने बतलाया था, उस से भी प्रेम सवाया है॥

दोहा—सुरपुर को सुर चल दिये, होकर के लाचार।
पुरी अयोध्या में लगा, होने हाहा कार॥

माताएं क्या सभी रानियां, ऊंचे स्वर से रोने लगीं।
अधिकारी जन क्या सारी प्रजा, आँसुओं से मुंह धोने लगीं॥
रुदन भयंकर सुनते ही, श्री रामचन्द्रजी आये हैं।
और कुछ तेजी में आकर के, मुख से यों वचन सुनाये हैं॥

दोहा—क्यों तुम सब पागल हुवे, अपशकुन किया अपार।
जीता है भाई मेरा, मूर्च्छा है दुःखकार।

राजवैद्य क्या अन्य कई, श्रीराम ने तुरत बुलाये हैं।
और सिंहासन से शय्या पर, निज कर से लखन सुलाये हैं॥

कभी बुला कर ज्योतिषियों से, काल चक्र लगवाते हैं।
कभी सयानों को बुलवा कर, मन्त्र यन्त्र करवाते हैं॥
'मर गया' यदि कोई कहे शब्द, उस पर झुंझला कर पड़ते हैं।
मोह नशा देख श्री राम का, यहां सारे के सारे डरते हैं॥
हो गया असाध्य रोग कह करके, सभी ने जान बचाई है।
श्री रामचन्द्रजी उसी समय, झट गिरे मूर्छा आई है॥

दोहा—शीतलता कर राम को, दिया तुरत बैठाय।
हो सचेत फिर लखन को, बोले गले लगाय॥
क्यों भाई कुछ तो कहो, अपने दिल का हाल।
कौन रोग ने कर दिया, तेरा हाल निढाल॥

क्या तू मुझ से रूस गया, या कोई गुप्त बीमारी है।
या कोई चोट तेरे हृदय पर, लगी आन कर भारी है॥
जो कुछ हालत आज तुम्हें, लंका में यही बिमारी थी।
अमोघ विजय दशकंधर ने, शक्ति हृदय में मारी थी॥
अब भी तुम पर क्या कोई, शत्रु ने मन्त्र चलाया है।
क्या उसने आज तुम्हारे को, ऐसा लाचार बनाया है॥

दोहा—लक्ष्मणजी का विरह रहा, सब का हृदय विदार।
रामचन्द्रजी भी लगे, करने और विचार॥
शत्रुघ्न सुग्रीवजी और, विभीषण वीर।
रामचन्द्र को इस तरह, लगे बंधाने धीर॥

दोहा—भगवन् इस तन में नहीं, जीव लखन का सार।
स्वामी जल्दी से करो, अब इसका संस्कार॥

संयोग लखन का इस भव का, जितना था उतना खतम हुआ।
इनके वियोग का हे स्वामी, सब के दिल भारी जखम हुआ॥

बांध धीर को धीरवान, औरों को धीर बन्धाओ--तुम।
इस मृतक तन का यथा योग्य, अग्नि संस्कार कराओ तुम ॥

दोहा—लगे राम को यह वचन, हृदय तीर समान।
उत्तर यों देने लगे, कुछ तेजी में आन ॥

दोहा--बस बस बस बोलो जरा, अपनी जबान सम्भाल।
मूर्च्छा में लक्ष्मण पड़ा. वीर सुमित्रा लाल।
मर गये तुम्हारे कोई होंगे, जल्दी से उन्हें जलाओ तुम।
बस यहां बैठन का काम नहीं, अब बाहिर चले सब जाओ तुम ॥
अपशब्द बोलते क्या तुम को, बिल्कुल ही शर्म नहीं आती।
और बदले में सुख देने के, सब जला रहे मेरी छाती ॥

दोहा—रामचन्द्र जी हो रहे मोह, में अति गलतान।
लवणांकुश कहने लगे, रामचन्द्र को आन ॥
चचा साहिब की मौत का, सारे मचा कोल्हाल।
अवधपुरी का हो रहा, पिता हाल बेहाल ॥

गाना—दरो दीवार से आती पिता, आवाज मातम की।
मौत आगे चले तदबीर क्या, किसी वैद्य हाकिम की ॥१॥
ठिकाना एक न इस जीव का, मानिन्द बिजली के।
कभी यहां पर कभी वहां पर, कहीं पर जा कभी चमकी ॥२॥
छोड़ तन सुर असुर नर क्या, श्री अरिहन्त जाते हैं।
सिवा मिट्टी में मिलने के: नहीं तजबीज इस तन की ॥३॥
अनन्त यहां हो चुके त्रिखंडी, क्या छः खंड के मालिक।
निशां उनका यदि है तो सिर्फ, एक घास है वन की ॥४॥
जीव से रहित तन मिट्टी, लिये क्यों आप बठे हैं।
करो मृतक सभी क्रिया, चिता बनवा के चंदन की ॥५॥

दोहा—बस खबरदार इस अक्ल को, रक्खो अपने पास ।
मुझे नहीं मंजूर यह, महा बुरी दरखास ॥

गाना—

किसी ने आज क्या तुम को, नशा कोई चढ़ाया है ।
इस कदर बोलने का, हौसला जिसने बढ़ाया है ॥१॥
किसी को देख तकलीफों में, जो हांसी उड़ाते हैं ।
वही पड़ करके सड़ते हैं, यह हमने आजमाया है ॥२॥
मौत का शब्द दुःखदाई, सदा हर एक प्राणी को ।
तीर सीने मेरे वोही आज, तुमने लगाया है ॥३॥
यदि तुम राज्य की खातिर, बुरा चाहते हो लक्ष्मण का ।
संभालो सब हुकूमत क्या, खजाने रत्न माया है ॥४॥
एक ही जन्म में सब कुछ, मिले हर बार प्राणी का ।
सहोदर का "शुकल" मिलना, असंभव ही बताया है ॥५॥

दोहा—पिता क्षमा कर दीजिये, यदि कुछ समझे और ।
एक हमारी विनती, पर कुछ कीजिये गौर ॥

अब आज्ञा हम को दे दीजे, दुनिया से चित्त उदास हुआ ।
तप संयम ध्यान लगाएंगे, बस यही इरादा खास हुआ ॥
इसी तरह से पिता एक दिन, काल हमारा आना है ।
और यही समय यदि निकल गया, तो फिर पीछे पछताना है ॥

दोहा—आज्ञा लेते समय भी, ताना रहे लगाय ।
उसी तरह का शब्द कह, मुझ को रहे जलाय ॥

जिस जिसको दीक्षा लेनी है, उन सब को आज्ञा मेरी है ।
इन्कार नहीं मुझ को कोई, लेने वालों की देरी है ॥
किन्तु भाई को छोड़ नहीं, दीक्षा दिलवाने जाऊंगा ।
मैं बिना वीर को खुशी किये, कुछ भी नहीं करने पाऊंगा ॥

दोहा—प्रणाम कर के पिता को, लवणांकुश सुकुमार।
मोह जाल सब तोड़ कर, दोनों हुवे तय्यार॥

चौपाई—अमृत घोप मुनि पास सिधाये, लवणांकुशने शीश निमाये।
मुनि ने कर्म भेद बतलाये, सुन कर रोम राम उठ आये॥
संयम ले तप जप किया भारा, अष्ट कर्म दल को संहारा।
आप तरे औरौं को तारा, सच्चिदानन्द सिद्ध पद धारा॥

दोहा—रामचन्द्र माह में हुवे, फिरें अति गलतान।
कभी मनाते हैं कभी, करवाते स्नान॥
मौत अनुज की अन्य जन, सुन पाए नृप राय।
घी के दीपक बल गये, अरिजन के घर मांय॥

इन्द्रजीत और सुन्द आदि के, सुत बलवान कहाते थे।
क्योंकि शत्रुता पुरानी थी, दिल में सो लेना चाहते थे॥
और थे आज्ञा में इनकी, शक्ति आगे शीश झुकाते थे।
जा चाहते थे दिल से करना, वह मौका कभी न पाते थे॥

कारणवश थे विभीषण, रामचन्द्र के पास।
पीछे से इन सभी ने, अवसर किया तलाश॥

बांध गोल अपना भारी, सब अवधपुरी पर आये हैं।
विमान गगन में घूम रहे, मानिन्द घटा के छाये हैं॥
विकट गड़ियें रथ संग्रामी, दारू गोलों का पार नहीं।
और बख्तर तन पर धारे जिन पर, शस्त्र करता वार नही॥

दोहा—उसी समय श्री राम ने, धनुष लिया कर धार।
जंगी बिगुल बजा दिया, हुए शूर तैयार॥

सुग्रीव विभीषण आदि योद्धे, उसी समय चढ़ धाये हैं।
प्रबन्ध सभी करके जल्दी, अपने विमान सजाये हैं॥

शत्रुघ्न वीर आदि का पहरा, लक्ष्मणजी पर भारी है।
और पुण्यवान का पुण्य, सहायक बने सदा हितकारी है॥

दोहा—देव जटायु का कंपा, सिंहासन तत्काल।
अवधि ज्ञान से अवध का, देखा सारा हाल॥

प्रत्युपकार करने की खातिर, उसी समय चल आये हैं।
विस्तार वैक्रिय फौज सुन्द, आदि सब मार भगाये हैं॥
इधर विभीषण आदि, योद्धाओं ने अरि दबाये हैं।
सन्धि का दिया निशान तुरत, क्योंकि शत्रु घबराये हैं॥
शर्म सार हो गये अति, दुनिया से चित्त उदास किया।
फिर सुन्दादिक ने संयम व्रत, मुनि अतिवेग के पास लिया॥

दोहा—मोह के वश श्रीराम ने, धरा भ्रात सिर हाथ।
लक्ष्मणजी को इस तरह, कहन लगे नरनाथ॥
तुम भाई मूर्च्छित हुवे, दे गये पुत्र जवाब।
शत्रु भी आकर लगे, करने बात खराब॥
राम-जटायु ने लखा, मोह में जब गलतान।
उदाहरण कर इस तरह, लगा आन समझान॥
कमल शिला पर रोप कर, सींचा सूखा वृक्ष।
बीज अकाले कल्लर में, बोज रहा प्रत्यक्ष॥

बालू पील पील घानी में, ऊपर पानी छिड़क रहा।
कभी जल में डाल मधानी को, दोनों हाथोंसे रिड़क रहा॥
श्री रामचन्द्र का मूर्खता पर, ध्यान जिस समय आया है।
तब समझाने का रघुनन्दन ने, मुख से वचन सुनाया है॥

दोहा—स्याना होकर कर रहा, बच्चों वाला खेल।
निकला न निकलेगा कभी, बालू में से तेल॥

कमल शिला पर खिले, नहीं, न सुखा वृक्ष हरा होवे।
कल्लर में खेती बढ़े नहीं, चाहे नित्य नीर भरा होवे॥
जैसे पत्थर की मूरत से, अन्त में फल कुछ नहीं पाता है।
यूँ खाली नीर बिलोने से, भाई मक्खन नहीं आता है॥

दोहा—यदि मेरे पुरुषार्थ यह, सब ही निष्फल जांय।
तो फिर मृतक लखन भी, जीने के कभी नांय॥

दोहा—अक्ल बोलने की तुझे, पापी बिल्कुल नांय।
कैसा खोटा शब्द तू, मुझ को रहा सुनाय॥

चल हट परे यहां से नहीं, तुझको परभव पहुँचा दूंगा।
उल्ट पुल्ट बातें करना यह, सारी अभी भुला दूंगा॥
सच कहा मूर्ख के समझाने में, ज्ञान गांठ का खोना है।
विखिन्न चित्त वाले को जो, भी कुछ कहना सब रोना है॥

दोहा—देव जटायु के हुवे, निष्फल सभी उपाय।
कृन्तातदेव फिर इस तरह, आया रूप बनाय॥

एक मृतक स्त्री को लेकर, राम के सन्मुख आया है।
दो चार बात कुछ कह करके, उसको एक चीर उढाया है॥
देख हाल रघुकुल दिनेश, श्रीराम जरा मुस्काये हैं।
अनभिज्ञ मनुष्य कोई समझ, राम ने ऐसे वचन सुनाये हैं॥

दोहा राम—अय भाई यह मर चुकी, किसे रहा समझाय।
संस्कार इसका करो, अब जीने की नाय॥

दोहा कृ०—वचन अमंगल मत कहो, मुख से हे सरकार।
दिल से कभी न उतरती, जीवित है मम नार॥

दोहा राम—प्यारे से प्यारा कभी, मरा न आवे कोय।
भूत भविष्यत् हाल क्या, देखो चहुंदिशी जोय॥

दोहा क्र०—परोपदेश को चलत है, सबके हाथ जबान ।
निज कर्त्तव्यों पर नहीं, करते कुछ भी ध्यान ॥

जीता हुआ लखन को कहते, मृतक इसे बनाते हैं ।
तुम महापुरुष हो करके भी, यह क्या मुझसे बतलाते हैं ॥
पहिले अपने को देख भाल, फिर औरों को कहना चाहिये ।
यदि नहीं तो सबको मस्त भाव से, हे स्वामिन् रहना चाहिये ।

दोहा—श्री रामचन्द्र ने जब दिया, इन बातों पर ध्यान ।
लक्ष्मण जी के मरण का, हुआ यथार्थ ज्ञान ॥

गाना

क्या आशा है जीवन की अब पत्ता पता बैरी हुआ अपना ।
मोड़ गये मुख वनपक्षी भी, हवा पलट गई एक दम ऐसी ॥
घटा गम की उठी घनघोर ॥१॥
भाग्य चन्द्र राहु ने ग्रस लीना कठिन कष्ट कर्मों ने दीना ।
यह कैसा काल कठोर ॥२॥

दोहा—राग सभी संसार का, होता क्षण भंगूर ।
बिन त्यागे इसको कभी, मिले न सुख भरपूर ॥
त्रिषष्ठिशलाका पुरुषों के, तन में यह गुण बतलाया है ।
षट् मास तलक न बिगड़ सके, आकृति और शुभ काया है ॥
उसी समय दोनों देवों ने, चरणन शीश निवाया है ।
और अवध पुरी में आने का अपना सब भेद बताया है ॥

दोहा—संस्कार मृतक सभी, किया राम लाचार ॥
मोह कर्म चांडाल के, दई धूल सिर डार ॥
दुनिया की अब राम को, रही न कुछ दरकार ।
पास बुला शत्रुघ्न को, बोले वचन उचार ॥

दोहा राम--भरत वीर त्यागी बने, लक्ष्मण कर गये काल।
राज करो यह आप सब, सुनो हमारा हाल ॥

संसार से चित्त उदास हुआ, संयम व्रत लेना चाहता हूं।
और अवधपुरी का ताज भ्रात, यह तुमको देना चाहता हूँ ॥
काम यहां का आप बिना, नहीं कोई सम्भालने वाला है।
और तुम से बढ़कर काल भाव, को कौन जानने वाला है ॥

दोहा शत्रुघ्न--आप को जो अच्छा लगे, वही मुझे मंजूर।
जिससे घृणा है तुम्हें, मै भी उससे दूर ॥

यदि राज भार अच्छा है तो, फिर आप क्यों तजना चाहते हो।
और बुरा आपने समझा तो, क्यों हमको आप फँसाते हो ॥
ना साथ गया यह राज लखन के, साथ न मेरे जायेगा।
है कौन मुझे रखने वाला, जब काल बुलावा आयेगा ॥

दो० शत्रुघ्न—साथ आपके भ्रात मैं, धारूं संयम भार।
देख लिया है ज्ञान कर, सब संसार असार ॥

दोहा—लवण कुमर का पुत्र था, अनंगदेव गुणवान्।
धीर वीर गंभीर वर, धर्मी अति पुण्यवान् ॥

अगंदेव को राजतिलक कर, ताज शीश पर धारा है।
जयकारों के सहित राज्य, अभिषेक किया अति भारा है ॥
निवृत्त होकर इन कामों से. दीक्षा के लिए तैयार हुए।
थे साथ राम के मित्र भ्रात, प्रेमी राजा कई लार हुए ॥

दोहा - शत्रुघ्न सुग्रीव जी, और विभीषण वीर।
राजे सब श्रीराम संग, चले विराध रणधीर ॥

पटरानी परिवार सब, समवशरण के मांय ॥
खुशी खुशी पहुंचे सभी, करें सेव मन लाय ॥

चौपाई-मुनि सुव्रत के शासन मांही, मुनिवर अरहदास सुखदाई ॥
चरण कमल में पहुँचे जाई, नमस्कार कर विनती सुनाई ॥

दोहा—चार गति संसार में, घूमें काल अनन्त ।
दुःख का कर सकती नहीं, जिह्वा सब वृत्तन्त ॥

(गाना—राम का मुनियों से प्रार्थना रूप स्तुति)

आज दुखियों की तरफ, ध्यान तो लगा लेना ।
दुष्ट कर्मों से प्रभु, आज तो छुड़ा देना ॥१॥

कर्म व्याधि को मिटाने के लिये वैद्य हो तुम ।
करे जो रोग निवारण, वो ही दवा देना ॥२॥

गतागति चक्र में अनादि, से घूमाते हैं कर्म ।
दयानिधि करके दया, आप ही बचा लेना ॥३॥

राग और द्वेष ने, भव भव में रुला के मारा ।
अंश इनका भी प्रभु, आज से मिटा देना ॥४॥

संसार समुद्र की, लहरों में बहे जाते हैं ।
इनसे बचा करके प्रभु, मोक्ष में पहुँचा देना ॥५॥

जन्म मरण से अनन्त, जीव बचाये जिसने ।
"शुक्ल" के दिल में वही ज्ञान तो बसा देना ॥६॥

दोहा (अर्हदास मुनि)

आप ही करता भोगता, कर्म शुभा शुभ जीव ।
कारण दोनों के लिये, होते अमर सदैव ॥

जो सहित वासना कर्म करे, शुभ दुनिया के सुख पाते हैं ।
और अशुभ कर्म से निर्विवाद, यह प्राणी कष्ट उठाते हैं ॥
निरिच्छा शुभ कर्मों से बस, सदा निर्जरा होती है ।
निर्मल संयम वृत्ति इस, आत्म के मल को धोती है ॥

चार महा व्रत ग्रहण करो, संयम सत्रह विधि धारो तुम।
पांच सुमति और तीन गुप्ति, गोपन स्वभाव यह डारो तुम॥
सब बारह भेद कहे तप के, इन से, कर्मों को मारो तुम।
धर्म "शुक्ल" दो ध्यान धरो, पहिले दो अशुभ निवारो तुम॥
चार गुण सम दृष्टि के दश विध, यति धर्म को पालो तुम।
द्रव्य क्षेत्र और काल भाव, समयानुसार सम्भालो तुम।,
नव बाड़ सहित ब्रह्मचर्य व्रत, हृदय में उसे जमालो तुम।
कपट क्रोध मद लोभ त्याग, पुद्गल से प्रेम हटालो तुम॥
राग द्वेष दो कर्म बीज, भव भव दुःखदाई होते हैं।
जो फंसे इन्हों के फंदे में, फिरते संसार में रोते हैं॥

दोहा—मुनिराज के सुन वचन, चढ़ा मजीठी रंग।
ईशान कोण की तरफ कुछ, बढ़े सभी एक संग॥

वस्त्र और आभूषण जो थे, तन पर सभी उतार दिये॥
फिर केश पंच मुष्टि लुंचन, कर सिर के सारे डार दिये॥
चादर पहिन चोलपट्टा, मुख पत्ति मुख पर धार लई।
बायें कर झोली शोभ रही, दहिनो बांह तले पसार दई॥

दोहा—रजो हरण बायीं बगल, सबने लिये दबाय।
मस्तक ला कर जोड़ सब, बोले सम्मुख आय॥

गाना—देख लिया संसार निराला॥ टेक॥

अंधकार में हाथ फैलाया, कहीं का कहीं अपन को पाया।
प्रवचन मात की बैठ गोद में, देखा रूप महा विकराला॥देख॥१॥
मृग तृष्णा के माननिंद भटका, कहीं था वैभव कहीं था खटका।
अज्ञान गया हुआ ज्ञान पसारा, निज मार्तण्ड किया उजियाला॥२
विधि साध्य साधन की पाई, इष्ट आराधन युक्ति आई॥
झूठा माया जाल फुव्वारा, जाल महा उलझाने वाला॥देख॥३॥

दोहा—दीक्षा देने की घड़ी, लगी जिस समय खास।
अर्हदास गणधर श्री, बोले ऐसे भाष्य ॥

सब के सब सावद्य कारी, योगों का त्याग कराया है।
फिर मुनिराज ने विधि सहित, दीक्षा का पाठ पढ़ाया है ॥
चार महा व्रत धार सभी, साधु निर्ग्रन्थ कहाने लगे।
सब शक्ति के अनुसार नित्य, तप संयम ध्यान लगाने लगे ॥

दोहा—साठ वर्ष गुरु चरण में, रहे राम पुण्यवान् ॥
चौदह पूर्व का पढ़ा, गुरु कृपा से ज्ञान ॥

षष्टम अष्टम आदि तप, श्रीराम ने किया अति भारी।
थे विनय वान सब गुण पूर्ण, गुरु वचनों के आज्ञाकारी ॥
फिर दई अकेले विचरण की, आज्ञा गुरु ने परीक्षा करके।
पीठ ठोक हित शिक्षा दी, मस्तक पर अपना कर धरके ॥

दोहा—देश प्रान्त और नगर में, लगे विचरने राम।
बिना एक शुभ ध्यान के, और नहीं कुछ काम ॥

एक दिवस फिर लगा लिया, दृढ़ आसन कर ध्यान।
चौदह राजु लोक का, पाया अवधि ज्ञान ॥

अब जो कुछ है संसार में, सब नजर सामने आने लगा।
फिर अपने पूर्व जन्मों का उपयोग, राम मुनि लाने लगा ॥
धनदत्त और वसुदत्त का, भव नजर सामने आया है।
उस समय राम ने मन ही मन में, ऐसा ख्याल जमाया है ॥

दोहा राम—जिस भव में मैं धनदत्त था, लक्ष्मण था वसुदत्त।
मेरे कारण था मरा, अटल कर्म की गत ॥

अब भी यहां आकर हुआ, भाई लक्ष्मण लाल।
चौथी पृथ्वी पर हुआ, पैदा करके काल ॥

कुमार अवस्था सौ वर्ष, मण्डलीक शत तीस।
वर्ष लगे सब दिग विजय, करने में चालीस॥

वासुदेव पदवी में बाकी, सारी उमर विताई है।
और द्वादश सहस्र वर्ष सब, आयु धर्मदेव बतलाई है॥
सर्वज्ञदेव ने, इसीलिए, संसार अनित्य बतलाया है।
जिसने इसको त्याग दिया, अपवर्ग उसीने पाया है॥

दोहा राम—अवृत्त में कर्म कर, पहुंचा अंजन द्वार।
सम दम क्षम विन कर्म पर, चले न कोई वार॥

ना टले कर्म ना टलते हैं यह, सोच ध्यान को मोड़ लिया॥
फिर उसी तरह निज आत्म को, निज आत्म में जाड़ लिया।
चौदह भक्त पारणे कारण, मुनि नगर में आये हैं।
'स्पन्दनस्थल के नर नारी, सब दर्शन करने धाये हैं॥

दोहा—सारे शहर में मच गया, भारी था एक शोर।
उसी समय एक हो गई अद्‌भुत घटना और॥

गजशाला से खुल गया, मस्त हुआ गजराज।
यहाँ जनता भारी जमा, आ रहे यहाँ मुनिराज॥

देख के हस्ती को घबराये, नर नारी सब दौड़े हैं।
और इस हलचल से चमक उठे, जो चमकन वाले घोड़े हैं॥
जिसको जहाँ पर मिला रास्ता, भागे जान बचाने को।
करुणा निधान श्रीराम मुनि, महाराज लगे पछताने को॥

दोहा—देख दृश्य यह राम जी, वापिस गये पधार।
अटवी में जा इस तरह, करने लगे विचार॥

प्रथम तो जनता को हुई, मेरे कारण त्रास।
फिर जो मैं वापिस हुआ, सब ही किये निराश॥

वन में ही यदि मिला आहार, तो बेशक भोजन पाऊँगा।
अब महा कष्ट पड़ने पर भी, मैं बस्ती में नहीं जाऊँगा॥

निर्दोष जहाँ पर मिले मुझे, थोड़ा सो ही सुखदाई है।
जिसमें हो कष्ट किसी को कुछ, वह विष मुझको दुःखदाई है
अनादि काल से प्रकृति को, नित्य प्रति खाता आया हूं।
वस तब ही तो इस जन्म मरण से, छुटकारा नहीं पाया हूँ॥

किस कारण फिर निज पर को, मैं वृथा कष्ट देऊँ जा करके।
घनघाती कर्म खपावेंगे, शुद्ध उत्तम ध्यान लगा करके॥

दोहा—इसी तरह मुनि हो गये, शुद्ध विचार में लीन।
कर्म अरि भागन लगे, बन कर तेरह तीन॥
स्पन्दनस्थल का भूपति, अति नंदी शुभ नाम।
आकर पड़ाव वहां पर किया, जिस वन में श्रीराम॥

अब लेने पारणा राम मुनीश्वर, इसी जगह पर आये हैं।
नृप खुशी हुआ देकर भोजन, फिर पांचों अङ्ग नवाये हैं॥
अहो सुपात्र दान महा-सुर, ऐसे शब्द सुनाने लगे।
गंधोदक की वृष्टि कर के, तप संयम के गुण गाने लगे।

दोहा—मुनिराज ने फिर दिया, विविध धर्म उपदेश।
सर्व जनों संग सुन रहे, दत्त चित्त धर्म नरेश॥

सुन गृहस्त धर्म द्वादश प्रकार का, प्रतिनन्दी ने धारा है।
और सात कुव्यसन तजे सबने, महा मिथ्या भ्रम निवारा है

वस मुनिराज ने वापिस आकर, तप संयम में ध्यान दिया।
अतिनन्दी नृप ने भी वहां से, अगले दिन ही प्रस्थान किया॥

दोहा—भिन्न-भिन्न आसन किये, मुनि बहुत उपवास।
मास कभी दो मास और, कभी किये चौमास॥

दिन में ताप रवि के सम्मुख, होकर के नित्य सहते हैं।
रात्रि में आसन लाकर के नित्य मेव ध्यान म रहते हैं॥
अंगुष्टों के भार कभी, संयम में ध्यान लगाते हैं।
और निज स्वभाव में लीन हुए. कर्मों का अंश मिटाते हैं॥

दोहा—चौरासी आसन किये, इसी तरह ऋषिराज।
विचरत कोटि शिला पर, जा पहुँचे महाराज॥

चौ०—निश्चल मन कर ध्यान लगाया, शुक्ल ध्यान शुभ चौथा पाया
अवसान कर्म चारों का आया, घातक जिनका नाम बताया॥

दृढ़ ध्यान में राम को, देखा है जिस वार।
उसी समय सीतेन्द्र ने, ऐसा किया विचार॥

दोहा—श्री रामचन्द्र का हो गया, यदि निर्विघ्न ध्यान।
तो फिर लगती देर क्या, होने में ब्रह्म ज्ञान॥

कर्म काट फिर इसी जन्म से, सिद्ध अवस्था पावेंगे।
हम रहे यहां गोते खाते, वह मोक्ष धाम को जावेंगे॥
बेहतर है श्री रामचन्द्र का, यह शुभ ध्यान चला लेऊं।
बस गिरा मोक्ष की श्रेणी से, अपना मैं साथ बना लेऊँ॥

दोह—उसी समय गये राम पे, सीतेन्द्र तत्काल।
वसन्त ऋतु सम कर दई, अद्भुत ऋतु कमाल॥

गैंदा गुल दाड़िम गुलाब के हैं, फूल कहीं पर खिले हुवे।
और जूही बेल चमेली थे, अनुक्रम से सारे मिले हुवे॥
थे निम्बू और नारंगी खिरनी, आम अनार का पार नहीं।
और इससे बढ़कर मृत्युलोक में, लगे और कहीं सार नहीं॥
हैं चौदह लाख हरि की जाति, कहां तलक बतलावेंगे।
बस नंन्दन वन से अधिक समझ, दे उदाहरण समझावेंगे॥

दोहा—मलयाचल से आ रही, लेकर मरुत सुगन्ध ।
कोयल शब्द सुना रही, भमरे करें आनन्द ॥
सीता से बढ़कर किया, यौवन और शृंगार ।
जो देखे उसके बिना, समझे सभी असार ॥

नल कुबेर कुमरी समान, सुन्दर स्वरूप बनाया है ।
मानिंद मोर की गर्दन के नेत्रों, में सुरमा पाया है ॥
और उदाहरण न मिले कहीं, ऐसे सब वस्त्र पहिने हैं ।
इसी तरह से यथा योग्य, तन पर धारे सब गहने हैं ॥

दोहा—मृत्यु लोक में न हुआ, न होगा ऐसा रूप ।
सब सुर धारण किया, सुन्दर रूप अनूप ॥

जैसा साज बाज के सहित आन के, राम सामने खड़ी हुई ।
था हार गले में हीरों का, चौंपें दांतों पर किली हुई ॥
अग्रभाग में कानों के, नागिन की पट्टियें झुकी हुई ।
सब रंग विरंगी पंक्ति जवाहर, की साड़ी पर अड़ी हुई ॥
थे छहुं राग छत्तीस रागनी, जसे कोयल कूक रही ।
सब नाच रंग स्वर ताल गायन में, जरा मात्र न चूक रही ॥

दोहा—उनंचास प्रकार के, बजें वादित्र सार ।
नाटक तन मन किये, सब बत्तीस प्रकार ॥

असली रंग पर चढ़ नहीं सकता नकली रंग ।
राम चले नहीं ध्यान से, सीतेन्द्र हुआ दंग ॥
रंग-रंग कहते जिन्हें, अन्तिम बने कुरंग ।
ज्ञान श्री सर्वज्ञ का, असली एक सुरंग ॥

यह रंग जिन्हों पर चढ़ा हुआ ना और उन्हां पर चढ़ता है ।
वह अन्त में सब होते फीके इसका नित्य गौरव बढ़ता है ॥

वीतराग का ज्ञान रङ्ग चढ़, गया सो ऋषि कहाते हैं।
बाकी दुनिया में पेटु सब क्या, क्या नहीं ढोंग रचाते हैं॥
भेष भूप का धरें कई पर, भूप नहीं बन सकते हैं।
नारी का रूप अनेक धरें एक, पुत्र नहीं जन सकते है।
असली के सम्मुख आखिर में, नकली का गौरव गिरता है।
सूर्य प्रकाशी कमल जिस तरह, रवि बिना नहीं खिलता है॥
शुद्ध असली रङ्ग हजारों बारी, धोने से नहीं जाता है।
और किसी तरह भी उसके ऊपर, धब्बा दाग न आता है॥
जिन पर न असली रङ्ग चढ़ा, विषयों से वह भी हार गये।
रुल गये अनन्ते चक्कर में, शुभ करनी खाक में डार गये॥
स्वर्ण को जितना सेक लगे, उतना ही निर्मल पाता है।
और चोट हजारों लगने पर, बहुमूल्यवान बन जाता है॥

दोहा—राग द्वेष को राम ने, बिल्कुल दिया मिटाय।
काम वासना सब तरह धूल में दई मिलाय॥

वीतराग हुवे श्री राम, अब कौन हिलाने वाला है।
वज्र हीर की हस्ती को, घन कौन मिटाने वाला है॥
जब सीतेन्द्र का नाच रंग गायन, सब कुछ बेकार हुआ।
फिर मिष्ट वचन से सीता ने, हो कर के यों लाचार कहा॥

दोहा—पिछली जो गलती मेरी, क्षमा कीजिये नाथ।
फेर नहीं ऐसा करूं, रहूँ आप के साथ॥

उस समय आपकी आज्ञा न, मानी अज्ञान में भूल गई।
शोभन सब उत्तम भोग तजे, क्या मेरी इज्जत धूल रही॥
अब के तुम मुझको अपनालो, फिर कभी न धोखा खाऊंगी।
खुश करदो मन मेरा स्वामी, किंकर बन हुक्म बजाऊंगी॥

दोहा—दल बल भुज बल कुटुम्ब, बल क्यों छोड़े भरतार।
वर भोगों को त्याग कर, उठा लिया सिर भार॥
एक दूसरे से बढ़कर, संसार के सुख बतलाती है।
सब चटकमटक कर बात विषय की,काम जगाना चाहती है॥
पत्थर की मूर्त से भी क्या, कुछ कभी किसी ने पाया है।
इसी तरह सीतेन्द्र ने भी, अपना समय गंवाया है॥

राम केवली

दोहा—निश्चय जब मुनिराज का, पूर्ण उतरा ध्यान।
कर्म चहुं घातक हने, प्रगटा केवल ज्ञान॥
था पूर्व दिशा से निकल रहा, भानु तमनाश करण हारा।
प्रारम्भ ध्यान में रामचन्द्र ने, था पद्मासन को धारा॥
माघ सुदि शुभ द्वादशी के दिन, केवल प्रगटा आकर के।
तब उत्सव किया महा भारी, वहां सुर असुरों ने चाह करके॥
दोहा—सीतेन्द्र चरणों में गिरा, पांचों अंग निमाय।
प्रश्न इस तरह से किया, सब अपराध क्षमाय॥
किया आपने हे प्रभु ! जन्म मरण का अन्त।
कितने भव मेरे सभी, कथन करो वृत्तान्त॥
शंबुक रावण लक्ष्मण का भी, हाल पूछना चाहते हैं।
राग द्वेष में फँसे जीव, कर कर्मबन्ध दुःख पाते हैं॥
वीतराग बिन कौन सभी, संशयों को मेटन हारा है।
सर्वज्ञ बिना इस लोकालोक का, कोई न देखन हारा है॥
दोहा—जीव अनादि काल से, कर रहा उल्टा खेल।
राग द्वेष है जब तलक, छुटे न तब तक मैल॥
कोई निज के लिये कर्म करता, कोई अन्य की खातिर मरता है।
और मिश्रित कार्य करे कोई, संसार में विपदा भरता है।

सत्य शील संतोष क्षमा, शुभ कर्मों से नित्य डरता है।
फिर क्रोध मान के वशीभूत हो, नीच गति जा पड़ता है॥

दोहा—शम्बुक रावण लखन जी, करके द्वेष महान्।
वल इन्द्र के जा बने, तीनों ही महमान॥

चौथी पृथ्वी पर तीनों का, युद्ध परस्पर होता है।
और वैसा ही फल मिले, जिस तरह बीज आत्मा बोता है।
श्री लक्ष्मण रावण निकल वहां, से मर्त्यलोक में आवेंगे॥
यहां 'विजय पुरी' नगरी में दोनों, मनुष्य जन्म को पावेंगे।

दोहा—विजयपुरी में 'सुनंद' के, 'रोहिणी' नामा नार।
जन्मेंगे यहां आन के, दोनों सुत सुखकार॥

नाम 'सुदर्शन' लक्ष्मण का, रावण 'जिनदास' कहावेंगे।
शुद्ध देशव्रत को पाल स्वर्ग, पहिले में दोनों जावेंगे॥
'विजया' नगरी में फिर दोनों, सुरपुर से चल कर आवेंगे।
फिर 'हरिवास क्षेत्र' में जाकर, जन्म युगल शुभ पावेंगे॥

दोहा—युगल जन्म के भोग सुख, लेंगे सुरपुर जाय।
आगे का वृत्तान्त भी, सुनलो कान लगाय॥
'विजयापुर' का भूपति 'कुमार वार्त' गुणखान।
पटरानी 'लक्ष्मीवती' चौसठ कला निधान॥

'जयप्रभ' और 'जय कान्त बनेंगे, लक्ष्मी के सुत आकर के।
वह संयम व्रत कर स्वर्ग छठा, लेंगे फिर दोनों जाकर के॥
इस अवसर में स्वर्ग छाड़, तुम भरत क्षेत्र में आवोगे।
और 'सर्वरत्नमति चक्रवर्ति,' ऐसा शुभा नाम कहाओगे॥

दोहा—सुरपुर तज तेरा बने, रावण राज कुमार।
'इन्द्रायुध' शुभ नाम से, होगा यश विस्तार॥

लखन पुत्र बन 'मेघरथ', नाम लहे सुखकार।
प्रति पालक दुखी जनों, का धर्मी रूप अपार॥
चक्री तुम संयम लेकर के, वैजयंत स्वर्ग में जाओगे।
वहां एक तीस सागर आयुष्य का, अतुल स्वर्ग सुख पावोगे॥
उसी जन्म में इन्द्रायुध, तीर्थंकर गोत्र बांधेगा।
ज्ञान समाधि धार सभी, कर्मों पे तरकश साधेगा॥

दोहा—अगले भव में आन फिर, जिन पद लेगा धार।
भव्य जीव होंगे कई, वाणी सुन भव पार॥

उसी समय वैजयंत छोड़, तुम गणधर पदवी लेवोगे।
संसार तरोगे आप और, उपदेश तरण का देवोगे॥
घनघाती सब कर्म काट, केवल प्रकटेगा आकर के।
अंत मोक्ष पद पावोगे, सैलेशी भाव बना करके॥

दोहा—संयम लेकर मेघरथ, पहुंचे स्वर्ग मंझार।
आगे इसका भी सुनो, करके जरा विचार॥
पुष्कर नामक द्वीप है, पूर्व विदेह के मांय।
पदवी चक्री की लहे, मेघरथ वहां पर जाय॥

तीर्थंकर पद भोग उसी, भव में निर्वाण सिधारेंगे।
कर्म अरिदल का बिल्कुल ही, सर्वनाश कर डारेंगे॥
उसी दिवस से लक्ष्मणजी, सादि अनन्त कहलावेंगे।
शुभ अष्ट महागुण वाली पदवी, सिद्ध अवस्था पावेंगे॥

दोहा—सीतेन्द्र को सुन हुआ, सभी पदार्थ ज्ञान।
नमस्कार कर चल दिये, तीनों को समझान॥

जा देखा चौथी पृथ्वी पर, तो खूब परस्पर लड़ते हैं।
शंबुक रावण 'क्रोधातुर हो,' लक्ष्मण ऊपर जा पड़ते हैं॥

रूप वैक्रिय धार धार, आक्रमण परस्पर करते हैं।
'शुक्ल' कर्मना छूट सकें सब, करनी के फल भरते हैं ॥

दोहा—जिह्वा कर सकती नहीं, सभी दुःखों का बयान।
देख हाल सुर यों लगा, तीनों को समझान ॥

दोहा—पिछले कर्मों से मिला, तुम्हें बुरा स्थान।
इस से आगे किस जगह, करना है प्रस्थान ॥

जन्मान्तर से तुम दोनों, आपस में लड़ते आये हो।
अब तीन खण्ड का छोड ऐश्वर्य, वास यहां पर पाये हो ॥
द्वेष ईर्षा में न कोई, हुआ, सुखी न होवेगा।
नर्क निगोदों में फिर फिर, यह जीव हमेशा रोवेगा ॥

गाना

कभी मिलता नहीं आराम, जीवों को लड़ाई में।
सदा रहता है आनन्द-प्रेम और दिल की सफाई में ॥
द्वेष छल ईर्ष्या निन्दा, इन्हीं को नीच करते हैं।
जो उत्तम हैं वह रहते हैं, क्षमा और शीलताई में ॥२॥
अनादि काल से यह जीव, लड़ते भिड़ते आये हैं।
इसी कारण तो फिरते हैं नर्क तिर्यंच-काई में ॥३॥
क्रोध और मान में आकर, अमोलक रत्न तन खोया।
यहां पर भी परस्पर लड़ रहे अज्ञानताई में ॥४॥
पतित जीवों का दुःख हरती, सदा सर्वज्ञ की शिक्षा।
तुम्हें कल्याण कारी, 'शुक्ल' आकर के सुनाई है ॥५॥

दोहा—कथन राम सर्वज्ञ का, समझाया जिस वार।
शम्बुक रावण लखन ने, गुस्सा दिया निवार ॥

नियम अनादि अटल नहीं, टल सकता सारे भूमि फर्पों का।
अति महा बुरा है कारागार, यह घोर असंख्यों वर्षों का॥
सीतेन्द्र के कहने से कुछ, इतना हुआ मुलाला है।
आपस में लड़ने भिड़ने का, सब ऊपर का दुःख टाला है॥
चौ०—दश विध क्षेत्र वेदना भारी, भुगत रहे कर्मन अनुसारी।
राग द्वेष ने करी ख्वारी, सीतेन्द्र ने गिरा उचारी॥

देख तुम्हारा कष्ट यह, मुझ को कष्ट अपार।
किन्तु अनादि नियम के, आगे हूँ लाचार॥

तुम सब को यहां से लेजा कर, पहुंचा दूं स्वर्ग ठिकाने में।
न हुआ न है न होगा। ऐसा, आगे किसी जमाने में॥
भ्रम मिटाने के लिये अभी, यह लो कर के दिखलाता हूँ।
अब स्वर्ग पुरी में ले जाने को, निज कर पर बिठलाता हूँ॥

दोहा—ऐसा कह सीतेन्द्र ने, तीनों लिये उठाय।
पारे की मानिन्द पड़े, ढलक तले को जाय॥

पुरुषार्थ किया उठाने को, फिर उसी जगह पर पाये हैं।
और उल्टी अधिक वेदना, होने से तीनों घबराये हैं॥
अशुभ कर्म के भोगे बिन, न हुआ कभी छुटकारा है।
लाचार फेर उन दुःखितों ने, तजं आशा वचन उचारा है॥

शेर—रावण आदि

दिल तो समझता था विपत्ति, आज सारी जायेगी।
क्या खबर थी ऐसा करने से, अधिकतर आयेगी॥

दोहा—जो करता सो भोगता कर्म शुभा शुभ बन्ध।
टाल कोई सकता नहीं भाप गये भगवन्त॥

आप के करुणा करने में, बिल्कुल न कोई कसर रही।
कर्मों का कर्जा दिये बिना छुट सकता सुर या बशर नहीं॥
फिर यह तो चौथी पृथ्वी है, चल सकती कोई अपील नहीं।
प्रपंच झूठ को चला सके, ऐसा कोई यहां वकील नहीं॥

दोहा—तुमने हम पर कर दिया, अद्‌भुत करुणा दान।
हमने देना है सभी, कर्मों का भुगतान॥

बस कारण हमारे तुमने भी, अपना सब सुख भुलाया है।
और भूत भविष्यत् के जन्मों का, आकर हाल सुनाया है॥
सुर पुर को प्रस्थान करो, अब विनती यही हमारी है।
ऊपर का दुःख हटाया कुछ, यह भी सब कृपा तुम्हारी है॥

दोहा—देवकुरू में फिर गये, सीतेन्द्र तत्काल
भामंडल के जीव कों, बतलाया सब हाल॥
रावण शम्पूक लखन यह, तीनों बल के द्वार।
सीता सुख में लीन है, अच्युत स्वर्ग मंझार॥

श्रीराम ऋषि केवल ज्ञानी ने, दुनिया में प्रचार किया।
संसार समुद्र से बेड़ा कर, भव्य जनों का पार दिया॥
पच्चीस वर्ष तक केवल की, पर्याय जिन्होंने पाली थी।
चाली गती हंस निराली सम, और छवि अति मतवाली थी॥

दोहा—पन्द्रह सहस्र वर्ष की, सब आयु का जोड़।
तप जप संयम से दिये, कर्म अनादि तोड़॥

स्थिर कर सब योग अयोगी बनें फिर मोक्ष नगर जा वास किया॥
ना बाण काल का पहुंच सके, वह शुद्ध ठिकाना ख़ास लिया॥
रोग शोक का नाम नहीं, ना मृत्यु जन्म वहां पर है।
जैसा है परमानन्द वहां ऐसा, न कहीं जहां पर है॥

दोहा—राम ऋषिवर हो गये, सादी और अनन्त।
काट मल निर्मल बने, पूर्ण सच्चिदानन्द ॥

नमो नमो श्री राम ऋषिवर, अजर अमर पद पाया है।
अरिहन्त देव की शिक्षा ने ही, सच्चिदानन्द बनाया है ॥
जिनवाणी सुखदानी को, जो हृदय "शुक्ल" जमावेगा।
तो समझ लेवो सच्चिदानन्द, बस वही परम पद पावेगा ॥

गाना शिक्षा

शिक्षा दे रही जी हमको, रामायण सुखदाई ॥टेक॥

सीता सती ने पति धर्म पर, अपनी जान लगाई।
वनवास में गई पति संग, राज्य मोह छीटकाई ॥१॥

लालच और तलवार के डर से, जरा नहीं घबराई।
इसीलिये श्री रामन्द्र के, प्रथम दर्जे आई ॥२॥

रामचन्द्र ने पितु की आज्ञा, अपने शीश उठाई।
राज्य तिलक को छोड़ दिया, प्रतिज्ञा खूब निभाई ॥३॥

राम लखन का प्रेम था कैसा, दूध नीर सम भाई।
गये साथ में रामचन्द्र के, सेवा खूब बजाई ॥४॥

सुग्रीव भूप की मित्रता ने सर्वस्व दिया लगाई।
पक्ष भूप रावण का छोड़ा, हुवा राम अनुयायी ॥५॥

स्वामी भक्ति में हनुमत पूरा, न्याय नीति मन लाई।
विपत्त समय में रामचन्द्र की, कीनी खूब सहाई ॥६॥

विभीषण की निष्पक्षता प्रसिद्ध जगत् में भाई।
अन्यायी बंधु को तज के, न्याय नीति चित्त लाई ॥७॥

बुद्धिमती मंदोदरी रानी, समझाया अधिकाई।
नरम गर्म कह वचन पति को, जरा नहीं घबराई ॥८॥

सिया हरण के समय जटायु, स्वामी भक्ति दिखलाई ।
गया रावण के सम्मुख लड़ने, अपनी जान गवाई ॥९॥
युद्ध वीरता में था पूरा, हट धर्मी अधिकाई ।
राज काज में लुब्ध था रावण, पहुँचा दुर्गति माई ॥१०॥
शूर्पनखा सी बनो न नारी, दुष्टन वन में आई ।
विषय भोग की करी विनती, राम लखन ठुकराई ॥११॥
भरत राम ने राज तिलक की, कैसी गेंद बनाई ।
आज कल के मनुष्य सुनो, दोनों ने ठोकर लाई ॥१२॥
लाचार चतुर्दश वर्ष भरत ने, सेवा राज्य बजाई ।
फेर त्याग संसार "शुक्ल" तप जप से मुक्ति पाई ॥१३

गान:—अरिहन्त देव के सत्य धर्म पर, जो जन चित्त लगावेंगे ।
रामचन्द्र की तरह काट सब, कर्म-मोक्ष पद पावेंगे ॥टेक॥
वचन पिता का पाला जिसने, राज्य निछावर कर डारा ।
बनवास का जिसने महाकष्ट, कैसा अपने सिर पर धारा ॥
सीता हर के दशकंधर ने, फिर किया जिगर पारा पारा ।
बांह पकड़े की लाज रक्खी, रघुवंशी नहीं धर्म हारा ॥
माता पिता गुरुजन के सेवक, अमर लोक में जावेंगे ॥१॥
लगा विभीषण को जब मारण, रावण शक्ति कर में तान ।
मित्र बचाया निज भाई को, दिया मौत के मुख में जान ॥
आपत्ति जो सही उस समय, दुनिया को है इसका ज्ञान ।
किया वचन पूरा मित्र को, लंका का दिया ताज महान ॥
पालें जो इस तरह मित्रता, वही परम सुख पावेंगे ॥२॥

तीन खंड की तज प्रभुताई, धार लिया फिर संयम भार।
केवल पाया धर्म दिपाया, तप जप कर आगम अनुसार॥
अष्ट कर्म दल को संहारा, क्षमा खड्ग निज कर में धार।
गौरव पाया कर्म खपाया, तरे आप औरों को तार॥
सम दम क्षम को धार हृदय में, सच्चिदानन्द कहावेंगे ॥३॥
कष्ट सहे पर शील न त्यागा, यह था निज शिक्षा का असर।
कर्म भोगने पड़े सभी को, बच नहीं सकता कोई बशर
अग्नि कुंड में पड़ी नीर हो गया सभी को पड़ा नजर॥
स्वर्ग बारहवें पहुँच गई तप संयम में न रक्खी कसर।
सत्य शील इस भव पर भव में सुख अतुल्य दिखलावेंगे ॥४॥
दशरथ के पुत्रों में देखो कैसा प्रेम निराला था।
मानिन्द गेंद के अवधपुरी का राज तिलक कर डारा था॥
प्राणों से भी बढ़ करके भाई का भाई प्यारा था।
तीन खंड को जीत तभी तो ताज शीश पर धारा था॥
प्रेम शील सन्तोष 'शुक्ल' यह शुभ गुण सभी बढ़ावेंगे ॥ ५ ॥
श्री पुज्य श्री सोहनलाल जी भक्त जनों के तारन हार।
वर्तमान में परम पूज्य श्री काशीराम जी का आधार॥
सांगीत पढ़ो श्रीरामचन्द्र का 'शुक्ल' मुनि शुभ हुआ तैयार।
भूल चूक रह गई सभी सज्जन गण गुण लख करें सुधार।
इस भव पर भव में सुखदाई जो जन पढ़े सुनावेंगे।
रामचन्द्र की तरह काट सब कर्म मोक्ष पद पावेंगे ॥ ६ ॥

दोहा—सम्वत् शुभ चौबीस सौ और पिछतर जान।
ठीक असल सम्वत् यह। प्रभु वीर निर्माण॥

वासट उत्तर और चौवीस सो सम्वत् यह प्रचलित कहाता है।
उन्नीस सौ छत्तीस यहां पर सन् लिखने में आता है ॥
१६३६ ई० स०

कार्तिक छव्वीस प्रविष्ठा यहां और दश तारीख नवम्बर है।
तिथि द्वादशी मंगलवारी शोभन शरद ऋतुवर है॥

सम्वत् शशि ग्रह समझ यहां न्यून एक दिशि जान।
वहि अङ्क उत्तर धरो विक्रमादित्य प्रमाण

नहीं बुद्धि नहीं वचन बल साहित्य का नहीं ज्ञान।
क्षमा भूल सब कीजियो सुजन कवि गुणवान ॥

गुरु कृपा से होश्यारपुर किया प्रथम चौमास।
'शुक्लचन्द्र' चाहता सदा अक्षय मोक्ष सुखवास ॥
सिद्ध हुए श्री राम जी कर्मों का कर अन्त।
गुरु कृपा से होगया आज समाप्त ग्रन्थ ॥

ओम् (ॐ) महिमा

(तर्ज—ओम् अनेक वार बोल)

ओम् में हो नित्य लीन प्रेम के पुजारी ॥ टेक ॥
बीज मंत्र यही सार । प्राणी मात्र का आधार ॥
पांचों पदे इस में सार । शुद्ध निर्विकारी ओम् ॥१ ॥
सर्वज्ञ शास्त्र को पहिचान । अर्थ योजना व्याख्यान ॥
गाते गुण गण सुजान । कर्म विष हारी ॥ ओम् ॥२॥
ध्यानी ध्याते हैं हमेश । काटने को सब क्लेश ॥
इसके वश में है सुर सुरेश । काल पाश हारी । ओम ॥३॥
मोक्ष गामी करते जाप । काटने को कर्म पाप ॥
आत्मा स्वयं ही आप, ओम् हित कारी ॥ ओम् ॥४॥
प्राणी मात्र इसका नाम । जो जपे हो सिद्ध काम ।
अन्त पावे मोक्ष धाम । "शुक्ल" ध्यान धारी ॥ओम् ॥

—***—

शुक्ल मोती

मनुष्य जन्म अनमोल है, वीतराग गुण गाया कर ।
ज्ञानअमृत छिड़काव कर, आत्म गुण विकसाया कर । टेर ।
निज गुण तज कर अय प्राणी तू क्यों परगुण में राच रहा ,
नाशवान वैभव संग्रह कर, गरज मोरवत नाच रहा ।
झूठी ममता छोड़ कर; नर तन सफल बनाया कर ॥ १ ॥

चौरासी कर पार मनुष्य, तन का पाना कोई खेल नहीं,
पूर्व संचित पुण्य उदय का, होता जब तक मेल नहीं,
दुर्गति भव जंजाल से, अपना आप बचाया कर ॥२॥

जननी-जन्मभूमि-जिनवाणी, ने कितना उपकार किया,
सच बतला तूने भी कब, कितना सेवा सम्मान दिया,
कृतघ्नों की लाइन में मत, अपना नाम लिखाया कर ॥३॥

देश धर्म संग गुरु सेवा बिन, तैंने मौज उड़ाई क्या,
स्वधर्मी भूखा अनाथ फिर, तैंने रोटी खाई क्या,
परमार्थ कुछ भी किये बिन, भोजन तू मत खाया कर ॥४॥

खेल तमाशा गायन सिनेमा, विषयों में गलतान रहा,
खान पान मञ्जन शृङ्गार कर, बाग सैर सुख मान रहा,
इन झगड़ों को छोड़ कर, सत्संग में आया कर ॥५॥

छः द्रव्यों में चेतन द्रव्य तू, निश्चय खास अनूपम है,
त्रियोग शुद्ध या शुभ बरताना, योगाभ्यास अनूपम है,
तज विभाव को बावरे, निज स्वभाव में आया कर ॥६॥

करुणा प्रमोद मैत्री मध्यस्थ का, जिस घट में संचार नहीं,
दान शील तप भाव बिना, होगा हरगिज भव पार नहीं,
रत्न त्रय आराध कर, दृष्टि सम बरताया कर ॥७॥

देख शास्त्र इतिहास छान कर, वैभव किसके साथ गया,
राव रंक जिस जिसको देखा, अन्त पसारे हाथ गया,
पर परणति को त्याग कर, 'शुक्ल' ध्यान शुद्ध ध्याया कर ॥८॥

इति रामायणस्योत्तरार्धः समाप्तः

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः

प्राप्ति स्थान

१—पूज्य श्री सोहनलाल
पुस्तक धर्मोपगरण सामग्री भण्डार अम्बाला शहर

२—लाला प्यारेलाल ओमप्रकाश चौड़ी वाले
नया बांस देहली